UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178713

UNIVERSAL
LIBRARY

Call No. H302/T655 Accession No. H2976
Author तोमर, रामबिहारी सिंह
Title समाज और उसकी समस्याएं 1958

This book should be returned on or before the date last marked below.

समाजशास्त्र की रूपरेखा भाग १

★

लेखक की अन्य रचनायें

१. समाजशास्त्र की रूपरेखा भाग २

२. सामाजिक मनोविज्ञान भाग १ व २

३. सरल समाजशास्त्र

४. समाजशास्त्र के अध्ययन के पूर्व (प्रेस में)

५. समाजशास्त्र के अध्ययन के उपरान्त ? (प्रेस में)

६. सामाजिक मानवशास्त्र (प्रेस में)
(प्रोफेसर ओम प्रकाश शर्मा के साथ)

७. Socio-Economic Survey of Beawar.
(*In Collabration with Dr. R. N. Bagchi & Prof. O. P. Sharma*) *Under Preparation.*

८. Employment Trends of Sociology Graduates in India (*Under Preparation*)

९. A Plea for Sex Education (*Under Preparation*)

★

प्रकाशक :

दत्त ब्रदर्स, अजमेर

समाजशास्त्र की रूपरेखा

OUTLINE OF SOCIOLOGY

प्रथम भाग

भूमिका लेखक :

एम० एस० गोरे,

प्रिंसिपल,

दिल्ली स्कूल ऑफ सोशियल वर्क,

दिल्ली विश्वविद्यालय,

दिल्ली ८.

●

लेखक :

राम बिहारी सिंह तोमर,

एम. ए. (समाजशास्त्र)

अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग

एस. डी. गवर्नमेंट कॉलेज,

ब्यावर.

●

प्रकाशक—

दत्त ब्रदर्स, अजमेर.

प्रकाशक—
दत्त ब्रदर्स, अजमेर.

प्रथम संस्करण अगस्त १९५७
द्वितीय संशोधित संस्करण
जुलाई १९५८

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य आठ रुपये पचास नये पैसे

मुद्रक :
पं० भगवानस्वरूप *'न्याय भूषण'*
प्रबन्धकर्ता :
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर.

१८५७

के

उन अमर शहीदों

को

जिन्होंने

भारतीय स्वतन्त्रता की अर्चना के हेतु अपने
रक्त की अंतिम बूँद से वसुन्धरा को सींच
कर आदर्श भारतीय-समाज की
संस्थापना की प्रेरणा प्रदान की

सादर समर्पित

★★
★

प्रकाशकीय

पुस्तक के विषय में हम अपने मुँह से क्या कहें। यह तो इसी से स्पष्ट है कि प्रथम संस्करण हमारे अनुमान के पूर्व ही समाप्त हो गया और विद्यार्थियों को दूसरे संस्करण का इन्तज़ार करना पड़ा। अब दूसरा संस्करण आवश्यक संशोधनों सहित आपके सम्मुख है, आशा है प्रथम संस्करण के समान ही विद्यार्थी-गण इसका स्वागत कर कृतार्थ करेंगे।

हमें खेद है कि लेखक की अन्य कृत्तियाँ जिनकी आप लोग आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे हैं, अभी तैयार न हो पाईं, इसका मुख्य कारण लेखक की व्यक्तिगत प्रबल परिस्थितियां रही हैं। परन्तु अब आपको अधिक प्रतीक्षा न करनी होगी, और शीघ्र ही हम उन्हें आपके सामने लेकर प्रस्तुत हो रहे हैं। आशा है जिस प्रकार विद्यार्थियों एवं प्राध्यापकों ने लेखक की प्रकाशित रचनाओं का स्वागत किया है उसी प्रकार आगामी प्रकाशनों को अपनाकर लेखक को अपने विषय पर अन्य उपयोगी आवश्यक ग्रन्थ लिखने को उत्साहित कर उसकी (लेखक की) प्रतिभा का लाभ उठाएँगे।

—प्रकाशक

FOREWORD

If Hindi is to become an effective medium of instruction in colleges and universities, it is a prime necessity that introductory text-books on the various subjects of instruction be made available in that language. So long as such books are not available students will be unable to develop their thinking in Hindi. They will inevitably tend to read and think in a different medium and then attempt to translate their thoughts into Hindi. Such a procedure cannot be conducive to the understanding of the subject on the part of the students nor can it be helpful in the vigorous growth of the particular discipline they are attempting to study and master.

By writing this book Mr. R. B. Tomar is attempting to meet this crucial need in the field of Sociology. He has adopted a simple and direct mode of presentation and his book should serve as a useful introduction to the subject. Writers of Introductory texts in the humanities have to face the difficult problem of presenting, on the one hand, the various points of view held by different authorities on a given subject in the interests of authenticity and, on the other, of ensuring that the essential simplicity of the over-all presentation is not lost. Mr. Tomar has been able to meet these conflicting requirements.

M. S. GORE,
Director,
Delhi School of Social Work,
Delhi University, Delhi 8.

प्रस्तावना

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त समाजशास्त्र का महत्व एवं इसके प्रति लोगों की अभिरुचि हमारे देश में दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह विज्ञान अभी शैशवावस्था में ही है। कभी कभी ऐसा लगता है कि समाजशास्त्र स्वतन्त्रता के क्षण की बाट जोह रहा था। जिसकी प्राप्ति के साथ ही इसके निजी गौरवशाली इतिहास के प्रथम चरण का सूत्रपात किया। कहने को तो इस विज्ञान का पठन पाठन बम्बई विश्वविद्यालय में सन् १९१९ से ही प्रारम्भ हो चुका था किन्तु इसका वास्तविक विकास सन् १९४७ के पश्चात् ही हुआ है।

स्वतन्त्रता के उपरान्त अध्ययन का माध्यम हिन्दी हो गया, पर राष्ट्र भाषा हिन्दी में इस विषय की पुस्तकों की उपलब्धि कहाँ ? प्रस्तुत पुस्तक इसी आवश्यकता के अनुभव का प्रतिफल है। भाषा की सरलता एवं रोचकता को बनाये रखने के लिये क्लिष्ट संस्कृत शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। मेरा ऐसा विश्वास है कि राष्ट्र भाषा के विकास के लिए यह आवश्यक है कि सरल बोल चाल के शब्दों का प्रयोग तो किया ही जाय साथ ही साथ विदेशी भाषाओं के उन शब्दों को भी पचा लिया जाय जो हमारी संस्कृति के अभिन्न अंग बन गये हैं। यह संधि काल है और हम आँग्ल से हिन्दी की ओर आ रहे हैं। इस हेतु पारिभाषिक शब्दों के आँग्ल पर्यायवाची शब्द भी स्थान स्थान पर कोष्टक में देने की चेष्टा की गयी है।

इस पुस्तक को प्रस्तुत करने में और भी अनेक बातें ध्यान में रखी गयी हैं। मैंने इस पुस्तक में उन सभी असुविधाओं को दूर करने की चेष्टा की है जो मेरे सम्मुख एक समाजशास्त्र के विद्यार्थी एवं अध्यापक होने के नाते आई और आती रहती है। अनुमानतः समाजशास्त्र के सिद्धान्तों पर हिन्दी में यह प्रथम पुस्तक है जो एक समाजशास्त्र के विद्यार्थी एवं अध्यापक के द्वारा लिखी गई है। कुछ विशेषताओं की ओर संकेत करना अत्यन्त आवश्यक है। प्रथम मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यह पुस्तक आँग्ल पुस्तकों का भाषान्तर नहीं है, यद्यपि उनका आधार अवश्य लिया गया है। इसमें प्रत्येक विषय को स्पष्ट रूप से व्याख्या एवं विश्लेषण करते हुये समझाया गया है। यदि कहीं आँग्ल

पुस्तकों से कतिपय अंश लिये गये हैं तो उसी स्थान पर प्रासंगिक विवरण भी दे दिया गया है, बल्कि विद्यार्थी उन पुस्तकों की सहायता से इस विषय का गहन अध्ययन भी कर सके। उन पुस्तकों के अध्ययन के उपरान्त ही इस पुस्तक की विषय-सामग्री एवं शैली की मौलिकता का अनुभव हो सकेगा। द्वितीय, सिद्धान्तों का स्पष्ट ज्ञान कराना अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा गया है, इसलिए प्रत्येक विषय को कई प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया है। विशेषतया प्राथमिक परिभाषायें इत्यादि को अत्यन्त सरल रीति से समझाया गया है और भाषा की कृत्रिमता और जादूगरी से दूर रहने का प्रयत्न किया गया है। तृतीय, विषय की निरन्तरता को बनाये रखने के लिये सम्बन्धित अध्यायों का गठन किया गया है और पुस्तक को सात खण्डों में विभाजित किया गया है। चतुर्थ, किसी भी स्थान पर यह मान कर नहीं चला गया है कि सम्बन्धित विषय विद्यार्थी को ज्ञात होगा या अमुक विषय समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र से बाहर है। उदाहरण के लिए अधिकांश भारतीय एवं विदेशी लेखक वंशानुसंक्रमण के अर्थ पर कोई प्रकाश नहीं डालते। इसका परिणाम यह होता है कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण का विवाद विद्यार्थियों के समझ में नहीं आता। इसी असुविधा को दूर करने के लिए मैंने इस विवाद के अध्याय के पूर्व पर्यावरण का अर्थ, वंशानुसंक्रमण का अर्थ और मेंडल का सिद्धान्त नामक अध्याय दिये हैं। इसी प्रकार पंचम खण्ड में पहाड़ों, मैदानों एवं रेगिस्तानों में सामाजिक जीवन का अध्याय जोड़ दिया है। सामाजिक परिवर्तन को समझने लिए सामाजिक प्रक्रियाओं को समझना अत्यन्त आवश्यक है, परन्तु विवरण पत्रिकाओं में इसका उल्लेख न होने के कारण किसी भी हिन्दी की पुस्तक में इस पर प्रकाश नहीं डाला गया है। इस पुस्तक में सामाजिक प्रक्रियाओं का, सामाजिक परिवर्तन के खण्ड के पूर्व एक सम्पूर्ण खंड जिसमें तीन अध्याय हैं, दिया गया है। पंचम, पुस्तक भारतीय पर्यावरण में लिखी गयी है और यथासम्भव उदाहरण एवं आंकड़े अपने देश के ही दिये गये हैं, जो विषय को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक हैं, क्योंकि हमारे समाज का ताना बाना तथा हमारी सामाजिक समस्यायें अन्य देशों से सर्वथा भिन्न हैं। षष्टम, मौलिक अनुसंधान-कर्त्ताओं एवं प्रमुख समाजशास्त्रियों के विचार प्रत्येक स्थान पर देने का प्रयत्न किया गया है और साथ ही साथ पृष्ठतल में सम्पूर्ण अवतरण दे दिया गया है, जिससे अनुवाद के दोषों से बचा जा सके और विद्यार्थी उन लेखकों की प्रतिभा का प्रत्यक्ष अनुभव कर सके।

मैं आशा करता हूँ कि यह पुस्तक विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की कठिनाइयों को दूर कर इस विषय का प्रारम्भिक ज्ञान कराने में सहायक हो सकेगी और इस विषय के गहन अध्ययन के लिये उनमें रुचि उत्पन्न कर सकेगी। यदि ऐसा करने में पुस्तक सहायक हो सकी तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूँगा। आशा है सभी अध्यापकवृन्द, विद्यार्थी एवं पाठक समय समय पर इस पुस्तक की त्रुटियों की ओर संकेत करने अथवा इसमें कोई सुधार का सुझाव देने का कष्ट करते रहेंगे जिससे पुस्तक और भी अधिक उपयोगी हो सके। इसके लिए मैं उन सबका सदैव कृतज्ञ रहूँगा।

अपने गुरुवर श्री एम. एस. गोरे, प्रिंसिपल देहली स्कूल आफ सोशल वर्क, दिल्ली विश्वविद्यालय का मैं बड़ा आभारी हूँ जिन्होंने मुझे समय समय पर सुझाव देकर इस पुस्तक के स्तर को उच्चता प्रदान की है और इसकी भूमिका लिखकर तो उन्होंने इसके महत्व को और भी अधिक बढ़ा दिया है। डा० आर० एन० बागची आचार्य गवर्नमेंट कालेज ब्यावर की सुप्रेरणा एवं सहायता से ही मैं इस पुस्तक को प्रस्तुत करने में समर्थ हो सका हूँ। प्रोफेसर ओम प्रकाश शर्मा ने अध्याय आठ के लिये सामग्री एकत्रित की है। श्री राम मोहन मिश्र 'बावरा' ने कविताओं द्वारा इस पुस्तक की रोचकता बढ़ाई है। श्री रामस्वरूप मालू और भगवानदास गुप्ता ने चित्र एवं चार्ट बनाकर पुस्तक की उपयोगिता को बढ़ाया है। पुस्तकाध्यक्ष श्री बी. जी. हरपे एवं श्री बिन्देश्वर भार्गव ने भी बड़ी सहायता की है। सर्व श्री प्रेमराज पीपाड़ा, बलराज कटारिया एवं रामेश्वरलाल रायपुरिया ने पुस्तक की पांडुलिपि लिखने में बड़ा परिश्रम किया है। श्री प्रेमराज पीपाड़ा ने इस पुस्तक के प्रूफ पढ़ने में बड़ी दक्षता का प्रदर्शन किया है और यह उनके ही परिश्रम का फल है कि पुस्तक इतनी शीघ्र छप कर तैयार हो गयी। मैं इन सबका अत्यन्त आभारी हूँ।

मैसर्स दत्त ब्रदर्स, अजमेर ने इस पुस्तक के प्रकाशन में जिस तत्परता का परिचय दिया है और वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धकों ने जिस परिश्रम से इस पुस्तक को समय में छापा है उसके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

६ जुलाइ १९५८
ब्यावर (राजस्थान)

राम बिहारी सिंह तोमर

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

अध्याय पृष्ठ

समाज शास्त्र का महत्व १–१२
(Value of Sociology)

१. समाजशास्त्र की उत्पत्ति (Origion of Sociology) ३–६
समाजशास्त्र का महत्व (Value of Sociology) ७–१२

द्वितीय खण्ड

समाजशास्त्र की भाषा १३–६४
(Language of Sociology)

३. प्राथमिक भाषाएँ : समूह, समिति और समुदाय १५–३१
(Primary Concepts : Group, Association and Community)

समाजशास्त्र की समस्या—समूह, संगति समूह, समिति, परिभाषायें, आवश्यक तत्व, प्रमुख विशेषतायें समुदाय, परिभाषाएँ, आवश्यक तत्व, बड़े समुदायों के अन्तर्गत छोटे समुदाय, स्थापक बन्दीगृह एक समुदाय है ? क्या जाति एक समुदाय है, समिति और समुदाय की तुलना, वर्ग, जाति, प्रजाति, राष्ट्रीयता, राष्ट्र ।

४. प्राथमिक परिभाषाएँ : जन रीतियाँ, प्रथायें, रूढ़ियाँ संस्थायें तथा समाज संस्थायें (Primary Concepts : Folkways, Customs, Mores Institutions and Society.) ३२–६४

आदत—जनरीतियाँ, बड़ी शक्तिशाली होती हैं। संस्कृति की आधार संस्कृति की आधार भूत शिलायें हैं—प्रथायें—प्रथायें और जनरीतियाँ, रूढ़ियाँ, परिभाषा, विशेषतायें, प्रकार—संस्थायें, आवश्यक तत्व, कार्यसंस्था और समिति, समानताएँ, भिन्नतायें—मनुष्य समिति के सदस्य होते हैं—संस्था और सम्बन्धित अत्यधिक संबन्धित हैं—समाज दैनिक भाषा में

समाज का अर्थ, कुछ अन्य महत्वपूर्ण सहायक शब्द—सामाजिक सम्बन्ध मानसिक सम्बन्ध, समाज की परिभाषायें, समाज अमूर्त है, समाज और व्यक्तियों का एक समूह नहीं है, समाज और एक समाज में अन्तर, समानता, भिन्नता या असमानता, समानता मुख्य है, अन्योन्याश्रितता, सहयोग, समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं, समाज और समुदाय और समुदाय में अन्तर, समिति और समाज में अन्तर।

तृतीय खण्ड

विषय-प्रवेश ६५–१२२
(Introduction)

५. समाजशास्त्र का अर्थ एवं विषय-क्षेत्र ६७–८३
(Meaning and Scope of Sociology)

समाजशास्त्र का अर्थ—विषय क्षेत्र—यथा रूपेण सम्प्रदाय, जार्ज सिमल, टॉनीज, वान विजे, वीरकान्त, आलोचना—सामान्य विज्ञान के रूप में—विषय—सामग्री—जार्ज सिमल, दुर्खेम - गिन्सबर्ग—मोटवानी—र्यूटर और हार्ट—सारोकिन।

६. समाजशास्त्र की प्रकृति (Nature of Sociology) ८३–९८

वैज्ञानिक पद्धति—वैज्ञानिक धारणा—विज्ञान क्या है ?—समाजशास्त्र की प्रकृति—वैज्ञानिक प्रकृति पर आपत्तियाँ।

७. समाजशास्त्र तथा अन्य शास्त्र ९९–११८
(Sociology and other Sciences)

एक मात्र विज्ञान—स्वतन्त्र विज्ञान—मानवशास्त्र, भौतिक मानवशास्त्र प्रागैतिहासिक पुरातत्व—सामाजिक मानवशास्त्र—राजनीतिशास्त्र, अर्थ-शास्त्र—मनोविज्ञान—न्यायशास्त्र, अपराधशास्त्र, दण्डशास्त्र, भूगोल, इतिहास, आचारशास्त्र, सांख्यिकी से सम्बन्धित।

८. समाजशास्त्र की वैज्ञानिक पद्धतियाँ ११९–१२२
(Methods of the Study of Sociology)

सांख्यिकीय पद्धति, केस स्टडी पद्धति, समाजमिति, सामाजिक पर्यालोकन।

चतुर्थ खण्ड

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण १२३–१६६
(Heredity and Environment)

९. पर्यावरण का अर्थ १२५–१३६
(Meaning of Environment)
पर्यावरण का अर्थ—जीवन और पर्यावरण—पर्यावरण का वर्गीकरण—स्वरूप—मानव और अनुकूलन—मनुष्य और पर्यावरण का सम्बन्ध।

१०. वंशानुसंक्रमण का अर्थ (Meaning of Heredity) १३७–१४३
उत्पत्ति की विधि, कोष्ट सिद्धान्त, वर्णसूत्र, उत्पादन प्रक्रिया, माइटोसिस, वर्णसूत्र के व्यक्तित्व का सिद्धान्त, वाहकाणु मूल जीवाणु, की निरन्तरता—वंशानुसंक्रमण का अर्थ।

११. मेंडल का सिद्धांत (Mendel's Principle) १४४–१५०
अन्तर, वर्णसंकर, मेंडल की खोज—वाहकाणु और लक्षण—उत्परिवर्तन।

१२. वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण १५१–१६१
(Heredity and Environment)
अनियन्त्रित परीक्षण—नियन्त्रित परीक्षण—अपृथक्ता—विवाद।

१३. वंशानुसंक्रमण और मानव जीवन १६२–१६६
(Heredity and Human Life)
लिंग भेद—शारीरिक लक्षण—स्वभाव—बुद्धि—व्यक्तित्व—समाजशास्त्री और वंशानुसंक्रमण का अध्ययन।

पंचम खण्ड

समाज और भौगोलिक पर्यावरण १७१–१७४
(Society and Geographical Environment)

१४. भौगोलिक पर्यावरण का अर्थ १७३–१८३
(Meaning of Geographical Environment)
अर्थ-भौगोलिक सम्प्रदाय भौगोलिक निर्णायकवाद का अर्थ—आलोचना।

१५. भौगोलिक पर्यावरण और सामाजिक जीवन १८४–२०५
(Geographical Environment and Social Life)
प्रत्यक्ष प्रभाव—जन-संख्या, भौतिक आवश्यकताएँ, मौलिक व्यवसाय, शारीरिक लक्षण, सामाजिक व्यवहार—अप्रत्यक्ष प्रभाव—शारीरिक लक्षण और प्रकार, उच्च आवश्यकतायें, मानव व्यवहार।

१६. भौगोलिक पर्यावरण और सभ्यता एवं संस्कृति २०६–२२५
(Geographical Environment and Civilization and Culture)
मानव-शक्ति और कुशलता–अनुकूलतम जलवायु–जलवायु और मानव-शक्ति-जलवायु और सभ्यता, हंटिंगटन का सिद्धान्त–आधुनिक सभ्यता और भौगोलिक पर्यावरण-भौगोलिक पर्यावरण का वास्तविक महत्व–भौगोलिक पर्यावरण और संस्कृति।

१७. पहाड़ों, मैदानों, एवं रेगिस्तानों में सामाजिक जीवन २२५–२४०
(Social life in Mountains, Plains and deserts.)
सामाजिक जीवन, पहाड़ों में–मैदानों में–रेगिस्तानों में–ध्रुवी क्षेत्रों में।

१८. ग्रामीण एवं नागरिक जीवन २४१–२७३
(Rural and Urban Life)
ग्रामीण जीवन-ग्राम का जीवन–ग्रामीण जीवन के आधार–भारत में ग्रामों का विकास–नागरिक जीवन—नगर का जन्म, विकास, नागरिक जीवन के आधार–नगरों का वर्गीकरण—भारत में नगरों का विकास—ग्रामीण एवं नागरिक जीवन में अन्तर–तुलना में कठिनाइयाँ—ग्रामीण और नागरिक जीवन के भेद—सामाजिक संगठन—सामाजिक नियन्त्रण, सामाजिक सम्बन्ध, सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी कार्य, सामाजिक दृष्टि-कोण—सामाजिक गतिशीलता—सामाजिक स्थायित्व-आर्थिक जीवन-सांस्कृतिक जीवन–सामाजिक विघटन-नागरिक प्रभुत्व

षष्टम खण्ड

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया २७५–३१७
(Social Interaction)

१९. सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया २७७–२८२
(Social Interaction)
अर्थ—मौलिक दशाएं-स्वरूप–सामाजिक प्रक्रियाओं का अर्थ—मौलिक सामाजिक प्रक्रियाएं।

२०. पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं : प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष (Disintegrative Social Processes: Competition and Conflict) २८३–३०१

२१. एकीकरक करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं : सहयोग, व्यवस्थान और आत्मसात (Integrative Social Processes : Co-opration, Accommodation and Assimilation) ३०२–३१७

सहयोग–सहयोग की प्रकृति–सहयोग के प्रकार–व्यवस्थान—व्यवस्थान की प्रकृति—व्यवस्थान के यन्त्र—व्यवस्थान की पद्धतियाँ, व्यवस्थान और सामाजिक यन्त्र–आत्मसात ।

सप्तम खण्ड

सामाजिक परिवर्तन (Social Change) ३१९–३८१

२२. सामाजिक परिवर्तन (Social Change) ३२१–३२८

अर्थ–सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक परिवर्तन में अन्तर–सामाजिक परिवर्तन के कारक—पारस्परिक संबंध—सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिकता ।

२३. सामाजिक परिवर्तन के जन-संख्यात्मक कारक (Demographic Factors of Social Change) ३२९–३३६

जन संख्या के आकार का प्रभाव–जन संख्या की बनावट और वितरण ।

२४. सामाजिक परिवर्तन के प्राणीशास्त्रीय कारक (Biological Factors of Social Change) ३३७–३४६

प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त–सिद्धान्त की आलोचना–प्राकृतिक प्रवरण और मानव समाज–सामाजिक प्रवरण–सामाजिक प्रवरण के प्रकार–सामाजिक प्रवरण के स्वरूप–प्राकृतिक और सामाजिक प्रवरणों में भेद–प्राणीशास्त्रीय परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन ।

२५. सामाजिक परिवर्तन के सांस्कृतिक कारक (Cultural Factors of Social Change) ३४७–३५६

भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति—सांस्कृतिक विलम्बना—सांस्कृतिक

विलम्बना के सिद्धांत की आलोचना—सांस्कृतिक सामाजिक परिवर्तन की निश्चायक।

२६. **सामाजिक परिवर्तन के प्रौद्योगिकीय कारक** (Technological Factors of Social Change) ३५७–३७६

प्रौद्योगिकी का अर्थ–सामाजिक परिवर्तन और प्रौद्योगिकी–निकट भविष्य में विकसित होने वाली प्रौद्योगिकी–सामाजिक परिवर्तन की मार्क्स के अनुसार व्याख्या मार्क्स के सिद्धान्त की आलोचना–मार्क्स के सिद्धान्त की वास्तविक शक्ति–वेबलन का सिद्धान्त–वेबलन के सिद्धान्त की आलोचना–वेबलन और मार्क्स के सिद्धान्तों में अंतर–आर्थिक दशाएं और सामाजिक प्रक्रियाएं।

२७. **सामाजिक उद्विकास** (Social Evolution) ३७७–३८५

सामाजिक परिवर्तन के प्रकार–सामाजिक उद्विकास–जातिगत प्रथा से विशिष्ट समितियाँ–समितियों की अवस्था का महत्व—धार्मिक समिति का उद्विकास।

२८. **सामाजिक प्रगति** (Social Progress) ३८६–३९३

उद्विकास और प्रगति—मूल्यों की आत्मीयता–प्रगति की दशायें–प्रगति की कसौटियाँ–प्रगति की प्रकृति।

शब्दानुक्रमणिका (Word Index)

प्रथम खण्ड

समाजशास्त्र का महत्व

(Value of Sociology)

अध्याय १ : समाजशास्त्र की उत्पत्ति
(Origin of Sociology)

अध्याय २ : समाजशास्त्र का महत्व
(Importance of Sociology)

अध्याय १

समाजशास्त्र की उत्पत्ति

(Origin of Sociology)

समाज शास्त्र की उत्पत्ति कब हुई, यह निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता। सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य अपने चारों ओर की वस्तुओं को समझने का प्रयत्न करता रहा है। सर्व प्रथम मनुष्य ने उन वस्तुओं का अध्ययन प्रारम्भ किया जो उससे अत्यधिक दूर थी। नक्षत्रविद्या (Astronomy) की उत्पत्ति सर्वप्रथम हुई। मनोविज्ञान (Psychology) और समाजशास्त्र (Sociology) इत्यादि की उत्पत्ति अभी हाल ही में हुई हैं।

समाजशास्त्र का प्रारम्भ (Beginning of Sociology)

समाजशास्त्र को विशेष प्रोत्साहन आगस्ट कोम्टे (Auguste Comte) ‡ से मिला। वह एक ऐसे विज्ञान की स्थापना करना चाहता था जो कि मानवजीवन और उसकी क्रियाओं को पूर्ण रूप से अध्ययन करे। उसने इस शास्त्र का नाम समाजशास्त्र रखा। समाजशास्त्र (Sociology) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग कोम्टे ने ही किया। कोम्टे को समाजशास्त्र का पिता कहा जाता है।

समाजशास्त्र पर अन्य विद्वानों ने बड़ा प्रभाव डाला है। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न विज्ञानों की पद्धतियों के द्वारा सामाजिक प्रक्रिया के अध्ययन का प्रयत्न किया। इनके विभिन्न सम्प्रदाय (Schools) समाजशास्त्र में हैं। समाजशास्त्र अपनी समाजशास्त्रीय (Sociological) पद्धति है, न कि प्राणीशास्त्रीय (Biological) या मनोवैज्ञानिक (Psychological)। शनैः शनै समाजशास्त्र एक स्वतंत्र विज्ञान बन गया।

---

‡ See his work 'Cours de philosophie positive', 6 Volumes, Paris (1830-42); translated by H. Martineau, 2 Vols., London (1893).

टॉनीज ने भी समाजशास्त्र के विकास में बड़ी सहायता दी है। उसका जेमिनशाफ्ट (Gemeinschaft) और जेसलशाफ्ट (Gesellschaft) का अन्तर बड़ा महत्वपूर्ण है। टॉनीज का अनुसरण अन्य जर्मन समाजशास्त्रियों ने किया। उन्होंने अपनी रुचि सामाजिक सम्बन्धों (Social Relationships) पर केन्द्रित रखी। उनमें से जार्ज सिमल (Georg Simmel), वान विजे (Von Wiese) और वीरकान्ट (Vierkandt) प्रमुख हैं। समाजशास्त्र के सिद्धान्तों के आधार के विषय में जर्मन समाजशास्त्रियों ने बड़ी रुचि ली है। अमेरिका में समाजशास्त्र को बड़ा प्रोत्साहन मिला है।

समाजशास्त्र एक पृथक् विज्ञान के रूप में आधुनिक युग में ही उपस्थित हो सका है। अभी इसने अपना शैशवकाल (Infant Stage) भी पार नहीं किया है, परन्तु इसका महत्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है।

समाज-शास्त्र का अध्ययन एक विज्ञान के रूप में—

समाजशास्त्र का इतिहास एक या दो शताब्दी तक ही सीमित है। एक दृष्टि से देखा जाय तो समाजशास्त्र के इतिहास को उस समय से प्रारम्भ हुआ बताया जा सकता है जबसे कि मनुष्य ने सामाजिक समस्याओं पर विचार करना प्रारम्भ किया। एक सुनिश्चित एवं व्यवस्थित ज्ञान के रूप में समाजशास्त्र बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही हो पाया है। इसे एक विज्ञान के रूप में मान्यता तो अभी हाल ही में प्राप्त हुई है। विद्यालयों और महाविद्यालयों में समाजशास्त्र के अध्ययन को आजकल भी कोई विशेष प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाजशास्त्र का अध्ययन विश्वविद्यालयों में १८७६ ई० में प्रारम्भ हुआ। इस देश में इसका महत्व बढ़ता जा रहा है और अधिकतर विश्वविद्यालय इसे अपने पाठ्यक्रमों में स्थान दे रहे हैं। इङ्गलैण्ड में इसका अध्ययन १६०७ ई० से प्रारम्भ हुआ। फ्रांस में १८८६ ई० में विश्वविद्यालयों ने इस विषय का अध्ययन प्रारम्भ किया।

पोलैण्ड में १६२० मिस्र में १६२४ और स्वीडन में १६४७ में इसका अध्ययन प्रारम्भ हुआ। आस्ट्रेलिया में अभी भी समाजशास्त्र नाम का विषय नहीं पढ़ाया जाता है। यद्यपि मानवशास्त्र के अन्तर्गत कुछ समाजशास्त्र के अंशों को सम्मिलित कर लिया गया है।

दक्षिणी एशिया में भी दशा सोचनीय है। लङ्का (Ceylon) में सन् १६४७ में इस विषय को प्रारम्भ किया गया। रंगून विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र सन्

१९५४ में प्रारम्भ हुआ। इण्डोनेशिया एवं थाइलैण्ड में अभी भी यह विषय प्रारम्भ नहीं किया गया है। मलाया में समाजशास्त्र सामाजिक कार्यकर्त्ता एवं अध्ययन प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में अवश्य रखा गया है परन्तु पृथक् विषय नहीं है। पाकिस्तान में समाजशास्त्र अभी तक पृथक् विषय के रूप में नहीं पढ़ाया जाता। सन् १९५२ में हालैण्डर ने ढाका विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र विभाग प्रारम्भ करने का परामर्श दिया था परन्तु अभी तक कोई क्रियात्मक कदम नहीं उठाया गया है।

भारतवर्ष में समाजशास्त्र सन् १९१९ में बम्बई विश्वविद्यालय में प्रोफेसर पैट्रिक गिडिस (Patrick Geddes) की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। १९२४ ई० में डाक्टर घुरिये प्रथम भारतीय समाजशास्त्री थे जिन्होंने इस विभाग की अध्यक्षता ग्रहण की। वे आज भी अध्यक्ष हैं। समाजशास्त्र पृथक् विषय के रूप में बम्बई विश्वविद्यालय में १९३० के उपरान्त हो सका। स्वतन्त्रता के पूर्व दक्षिणी भारत के अधिकांश विश्वविद्यालयों ने समाजशास्त्र को पृथक् विषय के रूप में अपने पाठ्यक्रम में रखा। इस समय समाज-शास्त्र पृथक् विषय के रूप में आगरा, बड़ौदा, बम्बई, गुजरात, कर्नाटक, लखनऊ, मैसूर, नागपुर, उस्मानिया, पटना, राजस्थान, बिहार तथा एस. एन. डी. टी. महिला विश्वविद्यालय में पढ़ाया जाता है। उत्तरी भारत में यह विषय अधिक प्रोत्साहन नहीं प्राप्त कर सका है यद्यपि जहां २ भी इसे प्रारम्भ किया गया है वहां २ पर तीव्र गति से इसका विकास हो रहा है। आगरा विश्वविद्यालय उत्तरी भारत में अग्रगामी रहा है। कलकत्ता, इलाहाबाद, वाराणसी, अलीगढ़, दिल्ली, उकुल, सागर, पञ्जाब, गोहाटी तथा जम्मू एवं काश्मीर विश्वविद्यालयों में अभी तक इस विषय की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया है। दक्षिणी भारत में मद्रास, आन्ध्र, अन्नामलाई, त्रावनकोर, पूना और श्रीवैङ्कटेश्वर विश्वविद्यालयों में इसे पृथक् रूप नहीं प्रदान किया गया है।

राजस्थान में सर्वप्रथम एम. ए. कक्षायें अजमेर राज्य के भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री बृजमोहनलाल शर्मा के प्रयत्नों से राजकीय महाविद्यालय, ब्यावर में लेखक की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुईं। १९५७ में महाराणा भूपाल कॉलेज, उदयपुर में भी एम. ए. कक्षायें प्रारम्भ हो गई हैं।

अतः यह स्पष्ट होगया होगा कि समाजशास्त्र अभी कुछ वर्षों पूर्व ही व्यवस्थित ज्ञान के रूप में प्रारम्भ हुआ है। इसके पूर्व हर अनुशासन के व्यक्ति ने समाजशास्त्री होने का दावा किया है। समाजशास्त्र के कुछ २ निकट पहुंचने का प्रथम प्रयास यूनानी विचारकों ने किया था। प्लेटो और अरस्तु (Aristotle) ने

समाज के विषय में कुछ लिखा है। प्लेटो (Plato) ने अपनी पुस्तक 'रिपब्लिक' (Republic) में समाजशास्त्रीय उच्च कोटि का साहित्यिक वर्णन किया है। यूनानी विचारकों का सब से बड़ा दोष यह था कि वे समुदाय और राज्य में कोई अन्तर नहीं समझते थे। इस कारण से समाज के विषय में ठीक विचार-धारा स्पष्ट समाजशास्त्रीय स्वरूप धारण नहीं कर सकी, बल्कि यह विचार-धारा बिखरे हुए विचारों तक ही सीमित रही, इन्होंने रीति-रिवाज, प्रथायें, लिङ्ग सम्बन्ध, पारिवारिक जीवन, मित्रता, सामाजिक सहयोग एवं संघर्ष, श्रम-विभाजन, वर्ग विभेद स्त्रियों की दशा इत्यादि विषयों पर प्रकाश डाला है।

प्राकृतिक विज्ञान का विकास आधुनिक युग से प्रारम्भ हुआ। इनके साथ २ समाज के विभिन्न अङ्गों का भी अध्ययन स्वतन्त्र रूप से प्रारम्भ हुआ। सामाजिक संविदा सिद्धान्त के मानने वालों ने समाज को कुछ महत्व दिया। माल्थस (Malthus) यद्यपि एक अर्थशास्त्री माना जाता है परन्तु वह समाजशास्त्री भी था। उसने समाज की प्रगति को आर्थिक दृष्टिकोण के स्थान पर सामाजिक दृष्टिकोण से बताया। १६ वीं शताब्दी के प्रारम्भ के विचारकों का स्पष्ट वर्गीकरण नहीं किया जा सकता कि वे अर्थशास्त्री थे या समाजशास्त्री ? उदाहरण के लिये लेप्ले (LePlay) ने परिवार को अपने अध्ययन का प्रमुख केन्द्र बनाया परन्तु वह आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक सुधार में रुचि रखता था। इस प्रकार इस विशिष्ट क्षेत्र के अध्ययन के कारण वह समाजशास्त्री नहीं कहा जा सकता परन्तु यह निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि समाजशास्त्र के विकास में उससे बड़ी सहायता मिली।

अध्याय २

समाजशास्त्र का महत्व

(Importance of Sociology)

समाजशास्त्र के अध्ययन से हमें क्या लाभ है ? इतने विज्ञानों के होते हुए भी इसकी क्या आवश्यकता है ? ऐसे अनेक प्रश्न हमारे सन्मुख आते हैं और आ सकते हैं। इन प्रश्नों का उत्तर स्पष्ट एवं सरल है। समाजशास्त्र के अध्ययन से हमें अनेक लाभ होते हैं। लाभ को हम चाहे किसी भी मापदण्ड से मापने का प्रयत्न करें। यदि यह कहें कि समाजशास्त्र आधुनिक युग के लिये अत्यन्त आवश्यक है और उसके बिना हमारा कार्य ही नहीं चल सकता, तो अतिशयोक्ति न होगी।

समाज के विभिन्न आदर्श एवं उद्देश्य होते हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति तब अधिक कुशलता एवं शीघ्रता से हो सकती है जब कि समाज के सदस्य जिन्हें इन उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिये प्रयत्न करने होते हैं, इन उद्देश्यों से सहमत हों। वे इन उद्देश्यों से तभी सहमत हो सकते हैं, जब कि उन्हें इन उद्देश्यों के विषय में ज्ञान हो। यह ज्ञान समाजशास्त्र के अध्ययन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। आधुनिक जटिल समाज में इस ज्ञान की ओर भी अधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। साधारण समाज में सामाजिक आदर्शों की पूर्ति प्रथाओं और भावनाओं के द्वारा कराई जा सकती है, परन्तु जटिल समाज में केवल उन आधारों पर ही सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कराई जा सकती। प्रथाओं और भावनाओं के अतिरिक्त समाज के विषय में कुछ न कुछ ज्ञान की भी आवश्यकता पड़ती है। समाज जितना ही जटिल होता है उतनी ही ज्ञान की अधिक आवश्यकता होती है। आदर्श जितने ही बड़े होते हैं उतनी ही समाजशास्त्र के अध्ययन की आवश्यकता प्रतीत होती है। उदाहरण के लिये जन्म दर घटाने की नीति को लीजिये। इस उद्देश्य की पूर्ति केवल आर्थिक एवं राजनैतिक ज्ञान के द्वारा नहीं की जा सकती, क्योंकि यह आदर्श सामाजिक सङ्गठन, पारिवारिक सङ्गठन जनसंख्या की गतिशीलता, उत्पत्ति सम्बन्धी प्रथाओं और परम्परात्मक मूल्यों से सम्बन्धित है। ये वस्तुयें समाजशास्त्र के क्षेत्र की हैं।

समाजशास्त्र की आवश्यकता एक दूसरे महत्वपूर्ण कारक के कारण भी है। आधुनिक विशेषोपयुक्त (Specialized) एवं जटिल समाज में प्रत्यक्ष रूप से सम्पूर्ण सङ्गठन एवं संस्कृति के एक अति न्यून अंश का हम अनुभव करते हैं। समाज के जीवन के अति न्यून भाग का अनुभव हमें प्राप्त हो पाता है। उदाहरण के लिये ग्रामों में रहने वाले कृषक केवल अपने ही जीवन का अनुभव करते हैं। समाज में अनेक स्थितियां (Statuses) और उनसे सम्बन्धित कार्य (Roles) होते हैं, किसान की स्थिति उनमें से एक है। वे अपने अन्य राष्ट्र बन्धुओं के विषय में अधिक नहीं जान सकते। जीवन के व्यवहारिक दृष्टिकोण से वह ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इस ज्ञान के द्वारा शत्रुता एवं वैमनस्य को समाप्त किया जा सकता है और सहिष्णुता की वृद्धि की जा सकती है। भारतवर्ष में इस समय विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों में बड़ा संघर्ष पाया जाता है। इस संघर्ष को समाप्त करने का केवल एक ही उपाय है कि वे एक दूसरे के विषय में अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करें। यह ज्ञान समाजशास्त्र का क्षेत्र है। संसार में शान्ति स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि संसार के लोग एक दूसरे के जीवन के विषय में अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करें।

समाजशास्त्र नवीन परिस्थितियों से अनुकूलन करना सिखा देता है। आधुनिक युग में नवीन परिस्थितियों से अनुकूलन करने की क्षमता एक महत्वपूर्ण गुण है। एक शिक्षित व्यक्ति के लिये इसे कसौटी कहा जाय तो अनुचित न होगा। व्यक्तित्व के विकास में यह एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। आधुनिक युग में नित्य नये परिवर्तन होते रहते हैं। जो लोग इन परिवर्तनों से अनुकूल न करने की क्षमता रखते हैं, वे ही अपना जीवन सफल बना पाते हैं। अतः जीवन को, समाजशास्त्र के बिना सफल एवं सुखी बनाना कठिन है।

समाजशास्त्र के अध्ययन के उपरान्त ग्राह्यता (Perceptiveness) अधिक विकसित हो जाती है। व्यक्ति बाह्य आचरण के स्थान पर आन्तरिक आधार को समझने लगता है। वह समाज के आधारभूत सिद्धान्तों पर विचार करने की शक्ति रखता है। इस प्रकार उसका जीवन और अधिक पूर्ण एवं सम्पन्न हो जाता है। समाजशास्त्र के अध्ययन के बिना यह संभव नहीं।

समाजशास्त्र अहंवाद के प्रभाव को कम करता है। अहंवाद, अपनी वस्तुओं को ही उचित एवं प्राकृतिक समझने की प्रवृत्ति को कहते हैं। साधारणतया सब ही अपनी संस्कृति को सर्वोच्च मानते हैं। लॉवी (Lowie) ने भी इस ओर उचित संकेत किया है, "हम में से अधिकांश इस सुखदायक भ्रांति की शरण

लेते हैं कि हमारी कार्य प्रणाली चाहे केवल संभव प्रणाली न भी हो परन्तु एक मात्र विवेकपूर्ण अवश्य है।"* यही धारणा विभिन्न संस्कृतियों एवं समूहों में संघर्ष का मूल कारण है। इस धारणा को बहुत कुछ समाजशास्त्र के अध्ययन से परिवर्तित किया जा सकता है।

आधुनिक युग में जिस प्रकार विभिन्न निर्माण कार्यों में अभियन्ता का महत्व होता है, उसी प्रकार सामाजिक निर्माण (Social Construction) कार्यों में सामाजिक अभियन्ता (Social Engineer) या समाजशास्त्री का महत्व होता है। समाजशास्त्र आधुनिक संसार की माँग है। समाज भयंकर विपदा में फंसा रहेगा यदि हम भौतिक जटिल संसार के प्राकृतिक विज्ञान (Natural Sciences) एवं प्रौद्योगिकी (Technology) जैसा ही मानव सम्बन्धों का विज्ञान प्रस्तुत न कर सके। मानव सम्बन्धों का विज्ञान ही समाज-शास्त्र है। श्री राममोहन मिश्र 'बावरा' ने इसी विचार को बड़ी सुन्दरता से निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है:—

"कितना पैसा राकेट बम में फूंका जाता,
फूंका जाता कितना उन अनुसंधानों में।
जिनके कारण सब मानव मर मिट जायेंगे,
धिक्कार उन्हें कह पवन उन्हीं के कानों में।
हाँ चाँद दूसरा चमकाना हो गया सरल,
हर प्राणों में भरना प्रकाश, पर मुश्किल है।"

यही कारण है, कि इसका महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और इसे किसी न किसी रूप में अनिवार्य किया जा रहा है। भारत के सामाजिक वैज्ञानिकों ने इसे एक अनिवार्य विषय घोषित करने का परामर्श भारत सरकार को दिया है। †

* "Most of us harbour the comfortable delusion that our way of doing things is the only sensible if not the only possible one." Lowie Robert H. 'Are we Civilized ?' p. 3, Harcourt, Brace, New York (1929).

† It is gratifying to note that at a conference, convened by the government of India at Delhi of all the Social Scientists in the country, in which the author had the privilege to participate, it was unanimously agreed that Sociology should be introduced as a compulsory subject in the under-graduate course in the Faculty of Arts " R. N. Saxena, in the article, Trends in the Teaching of Sociology and Social Rerearch in India published in The Journal of Social Sciences' Vol. I No. I., Institute of Social Sciences, Agra University., p. 8.

आधुनिक समाज में समाजशास्त्र का महत्व व्यवसाय (Profession) की दृष्टि से भी बढ़ता जा रहा है। निम्न क्षेत्रों में समाजशास्त्र के विद्यार्थियों को व्यवसाय मिलता है †:—

(१) सरकार एवं उद्योगों में परिचर वृन्द (Personnel) और मानव सम्बन्धों को उचित रखने वाले कार्य। उदाहरण के लिये श्रम अधिकारी (Labour Officer), श्रम कल्याण अधिकारी (Labour Walfare Officer), मानव.सम्बन्ध अधिकारी (Human Relations Officer), परसनल अधिकारी (Personnel Officer) इत्यादि।

(२) सामाजिक सुरक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में। उदाहरण के लिये सामाजिक बीमा योजना, पुनर्स्थापन विभाग, बेकारी बीमा योजना, काम दिलाऊ कार्यालय इत्यादि।

(३) अपराधियों के सुधारविभागों में। उदाहरण के लिये प्रोबेशन (Probation) और पेरोल अधिकारी (Parole Officer), मान्यता प्राप्त स्कूल या बाल सुधारगृह के अधिकारी, बाल न्यायालय के न्यायाधीश इत्यादि।

(४) सामाजिक सेवा के प्रत्येक क्षेत्र में। उदाहरण के लिये बाल कल्याण कार्यकर्त्ता, युवक परामर्श अधिकारी, परिवार परामर्श कार्यकर्त्ता इत्यादि।

(५) क्षेत्रीय योजना विभागों में।

(६) वन्य जाति विभाग में। वन्य जाति कल्याण के लिये सरकार अनेक प्रयत्न कर रही है। भारत सरकार ने वन्य जाति कल्याण विभाग (Tribal Welfare Department) खोल रखा है।

(७) हरिजनों के सुधार विभाग में। भारत सरकार ने हरिजनों के कल्याण एवं सुधार के लिये भी समुचित व्यवस्था की है।

(८) ग्रामीण पुनर्निर्माण विभाग में। उदाहरण के लिये खण्ड विकास अधिकारी (Block Development Officer), सामुदायिक विकास योजना अधिकारी इत्यादि।

---

† For Careers for Sociology Graduates, see Author's book "समाजशास्त्र के अध्ययन के उपरान्त ?"

(९) सामाजिक एवं वयस्क शिक्षा विभाग में। उदाहरण के लिये सामाजिक शिक्षा अधिकारी (Social Education Officer), वयस्क शिक्षा अधिकारी (Adult Education Officer), इत्यादि।

(१०) परिवार, शिशु, तथा महिलाओं के कल्याण के लिये कार्य करने वाले सामाजिक कार्यकर्त्ता।

(११) नागरिक कल्याण के लिये कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता।

(१२) असहाय स्त्रियों के निकेतन के प्रबन्धकर्त्ता।

(१३) अनाथालय अधिकारी तथा वृद्धों के निवास गृहों के अधिकारी।

(१४) अपाहिजों के कल्याण के लिये कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता जैसे लंगड़े, लूले, अन्धे इत्यादि की सहायता करना एवं जीविकोपार्जन का प्रबन्ध करने वाले कार्यकर्त्ता।

(१५) परिवार नियोजन के क्षेत्र में सामाजिक कार्यकर्त्ता।

(१६) सामाजिक एवं नैतिक स्वास्थ्य विज्ञान के क्षेत्र में (Social and moral hygiene)।

(१७) सामाजिक अनुसन्धानकर्त्ता (Soeial Research)।

(१८) योजना आयोग (Planning Commission) के विभिन्न क्षेत्रों में।

इन क्षेत्रों के अतिरिक्त सार्वजनिक सेवा के प्रत्येक क्षेत्र में समाजशास्त्र के ज्ञान की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा है। अभी कुछ दिन पूर्व भारत सरकार के गृह मन्त्री माननीय गोविन्द बल्लभ पन्त ने अपने एक भाषण में कहा था, कि भारतीय प्रशासन सेवा (I. A. S.) तथा अन्य सेवाओं के परीक्ष्यमाणों (Probationers) के प्रशिक्षण में अधिक बल समाजशास्त्र एवं समाज कल्याण के अध्ययन पर दिया जावेगा। समाजशास्त्र नेताओं एवं राजनीतिज्ञों के लिये भी बड़ा आवश्यक है।

इनके अतिरिक्त भी अनेक क्षेत्र हैं जिनके समाजशास्त्र के स्नातकों को व्यवसाय प्राप्त होता है। तात्पर्य यह है कि मानव सम्बन्धों का ज्ञान अर्थात् समाजशास्त्र अत्यन्त आवश्यक है। इनके बिना मनुष्य का विकास पूर्ण नहीं कहा जा सकता। जैसे २ कल्याणकारी राज्य (Welfare state) के उद्देश्यों की ओर हम बढ़ते जायेंगे वैसे २ समाजशास्त्र का महत्व भी बढ़ता जायगा।

समाजशास्त्र सुख और शान्ति की वृद्धि करता है। अब हम समाजशास्त्र को समझने का प्रयत्न करेंगे। अग्रिम खण्ड में समाजशास्त्र में प्रयोग होने वाले महत्व-पूर्ण शब्दों पर हम प्रकाश डालेंगे।

SELECTED READINGS.

R. B. Tomar: Employment Trends of Sociology Graduates in India.

R. B. Tomar: After the Study of Sociology ?

UNESCO: The University teaching of Social Sciences-Sociology, Psychology and Anthropology (1954).

द्वितीय खण्ड

समाजशास्त्र की भाषा

(Language of Sociology)

अध्याय ३ : प्राथमिक परिभाषायें : समूह, समिति, और समुदाय
(Primary Concepts: Group, Association and Community)

अध्याय ४ : प्राथमिक परिभाषायें : जनरीतियां, प्रथायें, रूढ़ियें, संस्थायें और समाज
(Primary Concepts: Folkways, Customs, Mores, Institutions & Society)

अध्याय ३

प्राथमिक परिभाषाएं: समूह, समिति और समुदाय

(Primary Concepts: Group, Association and Community)

भाषा शब्दों का संगठित संग्रह है। मनुष्य भाषा के अस्त्र के ही कारण संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माण करने में समर्थ हो सका है। प्रत्येक शब्द का एक विशिष्ट अर्थ होता है। प्रत्येक विज्ञान के पास अपनी शब्द सूची होती है। इन्हीं शब्दों की सहायता से मनुष्य अपने अनुभवों एवं विचारों को प्रकट करता है। श्री रामचन्द्र वर्म्मा ने लिखा है:—

"शब्दों में भी आत्मा तथा जीवन—ब्रह्म का व्यक्त और स्पष्ट अंश—होता है। उनका भी जन्म और विकास होता है; कुल, गोत्र और परिवार होते हैं। उनका महत्व उन प्राणियों से भी बढ़कर होता है, जो उनका प्रयोग करते हैं।"*

कुछ समय तक प्रयोग होने के उपरान्त प्रत्येक शब्द अपनी संस्कृति की सृष्टि कर लेता है। उसका एक विशिष्ट इतिहास निर्मित हो जाता है। स्थान काल एवं अन्य तथ्यों का शब्द के अर्थ में घनिष्ट सम्बन्ध हो जाता है। अतः जो शब्द काफी समय से प्रयोग होते आये हैं उन्हें सूक्ष्म, वैज्ञानिक एवं स्पष्ट अर्थ में प्रयोग करने में बड़ी कठिनता होती है।

समाजशास्त्र की समस्या

समाजशास्त्र की सबसे कठिन समस्या यही है कि उसकी शब्द सूची में वे ही शब्द अधिकांश रूप से ग्रहण किये गये हैं जो कि साधारण बोलचाल में प्रचलित हैं। उन शब्दों के अर्थ स्थान-स्थान पर भिन्न हैं—उदाहरण के लिए समाज (Society), समुदाय (Community), प्रथाएं (Customs),

---

* रामचन्द्र वर्म्मा, 'शब्द-साधना', साहित्य रत्न माला प्रकाशन, २० धर्म कूप बनारस।

संस्थाएं (Institutions), समितियां (Associations), जाति (Caste), प्रजाति (Race), संस्कृति (Culture), सभ्यता (Civilization) इत्यादि। अन्य विज्ञानों ने नवीन शब्दों की रचना कर ली है। इसके कारण उनके अर्थों पर अधिक विवाद नहीं होता—उदाहरणस्वरूप भौतिक विज्ञान (Physics) में अणु (Atom), कण (Molecule) इत्यादि।

दूसरी समस्या यह है कि कुछ समाजशास्त्रियों ने अन्य विज्ञानों के पारिभाषिक शब्दों (Technical terms) को समाजशास्त्र में ग्रहण किया है। विशेषतया उन्होंने प्राणिशास्त्र (Biology), भौतिक विज्ञान (Physics) और मनोविज्ञान (Psychology) के शब्दों को लिया है। ऐसे सामाजिक व्यवस्था (Social organism), सामाजिक सन्तुलन (Social equilibrium) और सामाजिक मस्तिष्क (Social mind) सरीखे शब्द यद्यपि कुछ विशिष्ट अर्थ सुझाते हैं तथापि इन शब्दों के प्रयोग से समस्या सुलझने के स्थान पर उलझती जाती है।

अब पाठकगण के मन में प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि समाजशास्त्री अन्य विज्ञानों की भांति नवीन शब्दों की रचना क्यों नहीं कर लेते हैं जिससे कि ये समस्याएं ही न उत्पन्न हों। यह विचार बड़ा उत्तम है और इस ओर नवीन युग के समाजशास्त्रियों को प्रयत्न भी करना चाहिए। फिर भी हमें स्मरण रखना चाहिए कि किसी भी विज्ञान का विकास क्रमशः होता है और जो कुछ पहले का होता है उस पर ही नवीन रचना करनी होती है। उदाहरण के लिए एक मकान को ही लीजिए। जैसी उसकी नींव होगी उसी आधार पर ऊपर की मंजिलें बनानी होंगी। यदि कोई व्यक्ति उसे सम्पूर्णतया नष्ट करके बनाना चाहे तो पुरानी वस्तुओं का कोई लाभ नहीं हो सकता। विज्ञान के लिए तो यह बात और भी कठिन है। अनेक विद्वानों ने इस ढांचे को सैकड़ों वर्षों के प्रयत्नों से खड़ा किया है इसलिए इसे एक दिन में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

अब इसका एक ही उपाय है कि जो शब्द समाजशास्त्र में प्रयोग किये जाते हैं उन्हें हम सब एक ही अर्थों में समझें। इस अध्याय में हम कुछ अत्यन्त आवश्यक शब्दों की परिभाषा करेंगे जिससे कि पाठकगण आगे के अध्याय भली प्रकार समझ सकें। इसमें हम समाज, समुदाय, समितियाँ, जनरीतियाँ, प्रथाएं, रूढ़ियाँ एवं संस्थाओं पर प्रकाश डालेंगे।

समूह (Group)

समूह शब्द से हमारा साधारण अभिप्राय व्यक्तियों के झुण्ड से होता है। इस स्थान पर हमें एक बात ध्यान में रखनी चाहिये, कि केवल व्यक्तियों के झुण्ड को ही समूह नहीं कहा जा सकता। झुण्ड को समूह बनने के लिये एक और आवश्यक तत्व की आवश्यकता होती है। वह तत्व है परस्पर सम्बन्धी क्रिया (Interaction) एवं प्रभाव। समूह बनने के लिये यह आवश्यक है कि झुण्ड का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे पर प्रभाव डाले। इसी प्रभाव डालने वाली प्रक्रिया को मैकाइवर और पेज ने सामाजिक सम्बन्ध (Social relationship) कहा है। सामाजिक सम्बन्ध के लिये दो आवश्यक तत्व होने चाहिये। प्रथम उनमें पारस्परिक सम्बन्ध या पारस्परिकता (Reciprocity) और द्वितीय एक दूसरे के प्रति जागरूकता।

समूह की परिभाषा मैकाइवर एवं पेज ने इस प्रकार की है, "समूह से हमारा तात्पर्य व्यक्तियों के उस सङ्कलन से है जो कि एक दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध रखते हैं।"

समूह के आवश्यक तत्वों को निम्नलिखित समीकरण द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

समूह=व्यक्तियों का झुण्ड+परस्पर सम्बन्धी क्रिया *।

(Group)=(Physical Aggregation of Human Beings) +(Interaction)

पेड़ों के एक झुण्ड को, जिसमें शारीरिक निकटता तो पाई जाती है परन्तु पारस्परिक सम्बन्ध द्वारा वे एक दूसरे को प्रभावित नहीं करते, हम समूह नहीं, बल्कि झुण्ड (Aggregation) कहते हैं। यह अत्यन्त कठिन है, कि मनुष्य एकत्रित हो और एक दूसरे पर प्रभाव नहीं डालें। नवजात शिशुओं का अलग प्रश्न है। वे एक ही स्थान पर रहते हुये भी एक दूसरे पर कोई प्रभाव नहीं डालते क्योंकि जन्म के कुछ समय उपरान्त न तो वे सुनने योग्य ही होते हैं और न देखने योग्य ही। अतः साधारणतया जब भी मनुष्य एकत्रित होते हैं, समूह का निर्माण हो जाता है † क्योंकि उनमें सदैव जागरूकता रहती है।

---

*"..... by group we mean any collection of human beings who are brought into social relationships with one another." MacIver, R. M., and Page C, H. 'Society' p. 213

† सामाजिक परस्पर संबंधी क्रिया वह प्रक्रिया होती है, जिसके द्वारा मनुष्य एक दूसरे के मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट होते हैं और पारस्परिकता एवं जगरूकता उत्पन्न होती है।

संगठित समूह (Organised group)

सङ्गठित समूह वह समूह होता है, जिसमें संगठन पाया जाता है ।

संगठित समूह = समूह + संगठन

समिति (Association)

संसार में मनुष्य साथ २ रहते हैं । यह प्रवृत्ति सहयोगी सम्बन्धों की झलक है । मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कई प्रकार से कर सकता है परन्तु किसी में अधिक कठिनाई होगी और किसी में असीम सरलता । प्रथम मार्ग यह है, कि मनुष्य आवश्यकताओं की पूर्ति अकेले ही करने की चेष्टा करे और समूह के किसी भी सदस्य से न तो सहयोग प्राप्त करे और न संघर्ष ही करे । दूसरा मार्ग यह है कि वह अन्य मनुष्यों से संघर्ष करके अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति करता रहे और दूसरों से वे वस्तुएं छीनता रहे, जिनकी उसे आवश्यकता है । हम जानते हैं कि यह मार्ग कितना दुर्गम एवं कठिन है । तीसरा मार्ग यह है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये अपने साथियों से सहयोग करे और उन आवश्यकताओं की प्राप्ति में अपने साथियों की भांति कार्य में रत रहे ।

अन्तिम मार्ग अधिकांशतः जीवन का साधारण अंग बन गया है । इसी पारस्परिक सहयोग की भावना से ही समिति का प्रारम्भ होता है । बोगर्डस ने लिखा है, 'सहयोगी सम्बन्ध' ※ प्रायः किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये मिलकर कार्य करना है ।"

समिति की परिभाषाएं—

गिन्सवर्ग ने समिति की परिभाषा इन शब्दों में की है, "समितियाँ उन मनुष्यों के समूह से बनी हुई हैं, जो किसी विशिष्ट कार्य अथवा कार्यों के पूर्ण करने के लिये संगठित होते हैं । जैसे व्यापारिक संघ, राजनैतिक दल या विद्वानों की समितियाँ ।" मैकाइवर व पेज लिखते हैं कि एक समिति, "किसी सामान्य उद्देश्य या उद्देश्यों के समूह की प्राप्ति के लिये संगठित समूह है ।"×

※ **सहयोगी संबंध के संगठित मूर्तिमान स्वरूप को समिति कहते हैं ।**

"※Association is usually a working together of people to achieve some purpose." Bogardus, Emory S. 'Sociology.' The Macmillam Co., New York, Fourth Ed. Second printing (1954), p. 526.

× "as a group organized for the pursuit of an interest or group of interests in Common." MacIver and Page, 'Society: An Introductory Analysis,' Macmillan and Co., Ltd. London, p. 12.

समिति मनुष्यों का वह संगठित समूह है जो विचारपूर्वक एक उद्देश्य या उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये मनुष्यों द्वारा निर्माण किया जाता है। समिति मनुष्यों का समूह † है। समूह से हमारा तात्पर्य व्यक्तियों के सङ्कलन से है जो कि एक दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध रखते हैं।

समिति के आवश्यक तत्व—

(१) मानव समूह (Human group)—समिति का सबसे आवश्यक तत्व है। जब तक मनुष्य एक दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध नहीं स्थापित करें, तब तक समिति का निर्माण नहीं हो सकता।

(२) समान उद्देश्य या स्वार्थ (common aims or interests)—जब तक कुछ मनुष्यों के उद्देश्य या स्वार्थ समान न हो, तब तक वे एक दूसरे से सामाजिक सम्बन्ध स्थापित न करेंगे। जब तक सामाजिक सम्बन्ध स्थापित न होंगे, समिति का निर्माण नहीं हो सकता।

(३) सहयोग की भावना (Cooperative spirit)—समिति का एक परम आवश्यक तत्व सहयोग की भावना है। सहयोग की भावना के लुप्त होते ही स्थापित समितियाँ भी भिन्न २ हो जाती हैं।

(४) संगठन (Organisation)—संगठन भी समिति का एक आवश्यक तत्व है। संगठन ही सफलता के निकट ले जाता है।

समिति की प्रमुख विशेषतायें—

(१) समिति मूर्तिमान होती है—समिति समान उद्देश्यों से प्रेरित एक संगठन सूत्र में बंधे हुए मनुष्यों का समूह है। समूह प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। अतः मूर्तिमान (Concrete) है। जब समूह मूर्तिमान है तो समिति भी मूर्तिमान हुई।

(२) निश्चित उद्देश्य—समिति किन्हीं न किन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये स्थापित की जाती है। उद्देश्यहीन समूह को हम समिति नहीं कह सकते। प्रत्येक समिति का निश्चित उद्देश्य होता है।

(३) अस्थायी स्वभाव—समिति का स्वभाव अस्थायी होता है क्योंकि वह किन्ही उद्देश्यों की पूर्ति के लिये बनाई जाती है। जैसे ही ये उद्देश्य प्राप्त हो

---

† विस्तार में अर्थ समझने के लिये भाग २ का अध्याय २ "सामाजिक समूह" पढ़िये।

जाते है, समिति का कार्य समाप्त हो जाता है। इसका यह तात्पर्य नहीं कि समिति सदैव अस्थिर प्रकृति की होती है। इसमें सन्देह नहीं कि बहुलता अस्थिरता की ही रहती है।

(४) स्थापना की जाती है—समिति की मनुष्य स्थापना करता है। यह विचारपूर्वक आवश्यकताओं के अनुसार स्थापित की जाती है। इसका समुदाय की भाँति स्वतः जन्म नहीं होता।

(५) ऐच्छिक होती है—समिति मनुष्यों के कुछ उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये बनाई जाती है इसलिये यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मनुष्य अनिवार्य रूप से इसकी सदस्य ही हो। प्रथम तो यह है कि एक विशिष्ट समिति जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये बनाई गई है, वे उद्देश्य कुछ मनुष्यों के न हो। द्वितीय एक समिति के कार्य करने की पद्धतियों से कुछ लोग सहमत न हों। इन कारणों से समिति की सदस्यता किसी पर लादी नहीं जा सकती। अतः समिति का सदस्य बनना अनिवार्य न होकर ऐच्छिक होता है। हमें यह न भूलना चाहिये कि कभी २ किन्हीं समितियों का सदस्य होना अनिवार्य होता है। व्यवहारिक जीवन इस तथ्य की पुष्टि करता है। परिवार और राज्य इसके उदाहरण हैं।

(६) एक निश्चित संगठन होता है—समिति एक संगठित समूह है। असंगठित समूह कभी भी समिति नहीं बन सकता क्योंकि संगठन ही एकता को उत्पन्न करता है और एकता की ही शक्ति से मनुष्य अपने वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करता है? लम्ले ने उचित लिखा है, "संगठन एकता है और एकता संगठन है।"×

(७) नियमों पर आधारित होती है—संगठन बिना नियमों के कभी नहीं हो सकता। प्रत्येक समिति के कुछ नियम होते हैं। ये नियम लिखित या अलिखित दोनों ही प्रकार के हो सकते हैं।

(८) साधन है—समिति एक साधन है। इन उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता करती है।

समुदाय (Community)

व्यक्तियों का समूह एक बहुत महत्वपूर्ण वस्तु है।

× "Organisation is unity: and unity is organisation." Lumley, F. E. 'Principles of Sociology', p. 146.

भिन्न-भिन्न प्रकार के मानव समूहों को ग्राम, नगर, पड़ौस, प्रदेश, देश इत्यादि शब्दों से संबोधित किया जाता है। ये शब्द व्यक्तियों के समूह की ओर तो संकेत करते ही हैं, साथ-साथ इनका प्रमुख रूप से संकेत एक निश्चित भू-भाग (Territory) की ओर होता है। समाजशास्त्र में ऐसे ही समूहों को समुदाय कहा जाता है।

समुदाय का अर्थ (Meaning of Community)

समुदाय शब्द दो अंगों की ओर संकेत करता है—प्रथम भौगोलिक अंग (Geographical aspect) और द्वितीय सामाजिक या सांस्कृतिक अङ्ग (Social or Cultural aspect)। समुदाय एक स्थानीय भू-भाग है (यह इसका भौगोलिक अंग है) और समुदाय मनुष्यों का योग है जो कि साथ साथ रहते हैं और एक दूसरे को प्रभावित करते हैं (यह इसका सामाजिक या सांस्कृतिक अंग है)। समुदाय के लिये इन दोनों अंगों का होना नितान्त आवश्यक है।

समुदाय की कुछ परिभाषाएं

गिन्सबर्ग ने समुदाय की परिभाषा करते हुये लिखा है, "समुदाय को एक निश्चित भू-भाग पर रहने वाली उस समस्त जनसंख्या के रूप में (या, साथ-साथ भ्रमण करने वाले भ्रमणकारियों के रूप में) वर्णित किया जा सकता है जो उनके जीवन को नियंत्रित करने वाले नियमों की सामान्य व्यवस्था से बंधी हुई होती है।"* डासन और गेटिस ने समुदाय की परिभाषा इस प्रकार की है, "समुदाय का अर्थ एक ऐसे भू-भाग की इकाई से किया जाता है जिस पर एक जनसंख्या वितरित (रहती) है, जिसके पास ऐसी मौलिक संस्थाएं (अपने साधारण या अधिक विशिष्ट स्वरूप में) होती हैं जिनके द्वारा सामान्य जीवन संभव होता है।" † ग्रीन ने लिखा है, "समुदाय संकीर्ण प्रादेशिक घेरे में रहने वाले उन

---

*"The community may be described as the entire population occupying a certain territory (or, in the case of nomads, habitually moving in association) held together by a common system of rules regulating the intercourse of life." Ginsberg, M. 'Sociology,' p 41.

†"By community is meant a unit of territory within which is distributed a population which possesses the basic institutions (in their simple or more specialized forms) by means of which a common life is made possible." Dawson and Gettys, 'An Introduction to Sociology', p. 220

व्यक्तियों का समूह है जो जीवन के सामान्य ढंग को अपनाते हैं। एक समुदाय एक स्थानीय क्षेत्रीय समूह है।" * डेविस के अनुसार, "समुदाय सबसे छोटा ऐसा क्षेत्रीय समूह होता है जिसके अन्तर्गत सामाजिक जीवन के समस्त पहलू आ सकते हैं।" + मेंजर लिखता है, "वह समाज, जो एक निश्चित भू-भाग में रहता है, समुदाय कहलाता है!" = राइट, वर्न और एल्मर ने समुदाय को इस प्रकार परिभाषित किया है, "समुदाय उन व्यक्तियों से जो एक निर्दिष्ट क्षेत्र में निवास करते हैं, और कार्य करते हैं, बनी हुई एक आधारभूत सामाजिक इकाई है।" † यंग ने लिखा है, "(समुदाय) एक ऐसा समूह है जो एक ही संस्कृति के अन्तर्गत एक स्थान या क्षेत्र में रहता है और अपनी प्रमुख क्रियाओं के लिये कोई सामान्य भौगोलिक केन्द्र रखता है।" ‡ सदरलैंड, वुडवर्ड और मेक्सवेल ने समुदाय की परिभाषा इन शब्दों में की है, "समुदाय एक ऐसा स्थानीय क्षेत्र है जिस पर कि व्यक्ति एक ही भाषा का प्रयोग करते हैं समान रूढ़ियों का

---

* "A community is a cluster of people, living within a narrow territorial redius, who share a common way of life. A community is a local territorial group." Green, A. W. 'Sociology: An Analysis of life in Modern Society' McGraw-Hill Book Co. Inc. (N.Y.), 1952, p. 193.

+ "The community is the smallest territorial group that can embrace all aspects of Social life." Davis. K. 'Human Society', The Macmillan Co. (N.Y.) Sixth Printing (1954) p. 312.

= "A society that inhabits a definite geographic area is known as a community."Manzer H. C. 'Practical Sociology and Social Problems,' p. 9.

† "Community is a social unit of a basic character made up of the people who function and reside in a given locality." Wright, Verne. and Elmer, 'General Sociology,' Farrar & Rinehart, New York (1939), p. 627.

‡ "A group living in one locality or region under the same culture and having some common geographical focus for their major activities." Young, K 'An Introductory Sociology' Rev. Ed. American Book Co. N. Y. (1939), p. 595.

अनुकरण करते हैं व अधिक या न्यून मात्रा में समान भावों का अनुभव करते हैं और समान धारणाओं पर चलते हैं।" * ऑसबर्न और न्यूमियर के अनुसार समुदाय "मनुष्यों का एक समूह है, जो एक निकटवर्ती भौगोलिक क्षेत्र में रहता है, जो हितों एवं क्रियाओं के केन्द्र रखता है और जीवन के प्रमुख अवसरों पर मिल कर कार्य करता है।" † बोगर्डस ने इसकी परिभाषा इस प्रकार की है, "एक ऐसा सामाजिक समूह होता है जो कुछ अंशों में 'हम की भावना' रखता है और एक निर्दिष्ट क्षेत्र में निवास करता है।" +

समुदाय के आवश्यक तत्व (Essential elements of Community)

समुदाय समाज की भांति अमूर्त वस्तु नहीं है अपितु इसे यथार्थ रूप से देखा जा सकता है। समुदाय के कुछ आवश्यक तत्व होते हैं। वे भौतिक एवं मानसिक दोनों ही प्रकार के होते हैं। अब हम उन पर प्रकाश डालेंगे।

(१) निश्चित भू-भाग (Definite locality)

समुदाय का परम आवश्यक तत्व निश्चित भू-भाग है। भू-भाग के बिना समुदाय का भौगोलिक अंग पूर्ण नहीं होता। कोई भी मानव समूह समुदाय न बन पाता यदि एक स्थान पर रहने का अवसर न प्राप्त होता। इस निश्चित भू-भाग के कारण समूह के सदस्यों में शारीरिक एवं मानसिक संबंध स्थापित

*"A community is a local area over which people are using the same language, conforming to the same mores, feeling more or less the same sentiments, and acting upon the same attitudes." Sutherland, Woodward and Maxwell, 'Introductory Sociology' Fourth Ed. (1952), J. B. Lippincott Co. (N. Y.), p 316.

†"A group of people living in a contiguous geographic area, having centers of interests and activities, and functioning together in the chief concerns of life." Loren D. Osborn and Martin H. Neumeyer, 'The Community and Society,' American Book Co. (N. Y.), p. 8.

+"A community is a social group with some degree of 'We feeling' and living in a given area." Bogardus Emory S. 'Sociology,' The Macmillan Co (N. Y.) Fourth Ed. (1954) p.122.

होते हैं और इन्हीं सम्बन्धों के फलस्वरूप समूह के प्रति 'हम की भावना' (We sentiment) उत्पन्न होती है। इस भावना के अभाव में कभी भी समुदाय का निर्माण नहीं हो सकता। मनुष्य एक पशु है। उसका भी पृथ्वी से अन्य पशुओं की भांति ही संबंध है। प्रत्येक मनुष्य अपनी भूमि से प्रेम करने लगता है। सेम्पिल ने उचित ही लिखा है, "मनुष्य पृथ्वी के धरातल की उपज है।.....उसने (पृथ्वी ने) उसकी (मनुष्य की) हड्डियों एवं नसों में, मस्तिष्क एवं आत्मा में, घर कर लिया है।" * अनेक लेखकों एवं कवियों ने अपनी मातृभूमि के प्रति इस प्रेम को अनेक प्रकार से प्रदर्शित किया है। "जननि जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" जननी और जन्म भूमि स्वर्ग से भी महान है।

(२) मनुष्यों का समूह (Group of human beings)

समुदाय मनुष्यों का समूह होता है। बिना मनुष्यों के समुदाय का निर्माण नहीं हो सकता।

(३) सामुदायिक भावना (Community sentiment)

केवल मनुष्यों के योग से ही समुदाय का निर्माण संभव नहीं है। मनुष्य अपने समूह के प्रति 'हम की भावना' (We feeling) का विकास कर लेते हैं। इस भावना के ही कारण समूह में एकता की भावना की सृष्टि होती है। इसी एकता की भावना का फल सामान्य जीवन के रूप में दृष्टिगोचर होता है। समूह के प्रति अपनेपन की भावना को ही सामुदायिक भावना (Community sentiment) कहते हैं। किसी समूह को समुदाय बनने के लिये सामुदायिक भावना का होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

(४) समानताओं के क्षेत्र (An area of likenesses)

एक समुदाय में अनेक प्रकार की समानतायें पाई जाती हैं। इन समानताओं में भाषा की समानता प्रमुख है। स्थानीय कथाएं एवं अन्य रूढ़िवादी विचार भी समान पाये जाते हैं। इनके रीति रिवाज भी समान होते हैं। प्रत्येक समुदाय अपने उत्सव एक अनोखे ढंग से मनाता है।

---

*"Man is a product of the earth's surface. She has entered into his bone and tissue, into his mind and soul." Semple. Ellen Churchill, 'Influences of Geographic Environment,' Henry Holt and Company, N. Y., p. 1.

(५) सामान्य जीवन (Common life)

समुदाय का कोई विशिष्ट उद्देश्य नहीं होता। उसका यही उद्देश्य है कि सम्पूर्ण जीवन उसमें बिताया जावे। मनुष्य अपना सामान्य जीवन समुदाय में बिताते हैं।

(६) स्थान का स्थायित्व (Permanency of locality)

समुदाय भीड़ के समान अस्थायी नहीं होता है। उसका अपनी भूमि से घनिष्ट सम्बन्ध रहता है। समुदाय अपनी जड़ें शक्तिशाली पेड़ों के समान भूमि में रखते हैं।

(७) स्वतः जन्म (Spontaneous birth)

समुदाय का जन्म स्वतः होता है। हम पहले लिख चुके हैं कि समुदाय का कोई प्रमुख उद्देश्य नहीं होता। अतः मनुष्य इनकी स्थापना जानबूझ कर नहीं करता। मनुष्य न केवल परिवार में जन्म लेता है बल्कि समुदाय में भी जन्म लेता है। समुदाय मनुष्य की सृष्टि करता है। समुदाय मनुष्य को वे सारी सुविधायें प्रदान करता है जिसके द्वारा मनुष्य अपने जीवन की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। जिस किसी स्थान पर भी मनुष्य थोड़े समय तक अपना जीवन व्यतीत करते हैं। वहीं पर समुदाय स्वतः उत्पन्न हो जाता है।

(८) आत्म- निर्भरता (Self-sufficiency)

भूतकाल में समुदाय आत्म-निर्भर हुआ करते थे अर्थात् जीवन की सारी आवश्यकतायें समुदाय में ही पूर्ण हो जाती थीं। वर्तमान युग में ऐसा संभव नहीं है। एक समुदाय दूसरे समुदाय पर आश्रित रहता है। यह आधुनिक युग की विशेषता है। आत्म-निर्भरता आजकल समुदाय का आवश्यक तत्व नहीं माना जा सकता।

(९) विशिष्ट नाम (Particular name)

प्रत्येक समुदाय का कुछ न कुछ नाम होता है। यह नाम समुदाय का एक आवश्यक तत्व है। नाम के विषय में लम्ले ने क्या ही सुन्दर लिखा है, "यह सारूप्यता को इंगित, वास्तविकता को प्रदर्शित, व्यक्तित्व को साबित करता है। यह प्रायः व्यक्तित्व वर्णित करता है-और प्रत्येक समुदाय किसी न किसी अंश में एक व्यक्तित्व है।" *

*"It points to identity; it indicates reality; it points out individuality; it often describes personality—and each community is something of a personality" Lumley, F E. 'Principles of Sociology' McGraw-Hill Book Co. Inc. (N.Y.) p. 208.

समुदाय के आवश्यक तत्वों को निम्न समीकरण द्वारा भी व्यक्त किया जा सकता है।

समुदाय=समूह+निश्चित भू-भाग+सामुदायिक भावना

(Community)=(Group)+(Definite Locality)+(Community Sentiment)

बड़े समुदायों के अन्तर्गत छोटे समुदाय—

समुदाय छोटे और बड़े दोनों ही प्रकार के होते हैं। एक ग्राम एक छोटा सा समुदाय है। इसी प्रकार नागरिक जीवन में कस्बा होता है। क्षेत्र एवं प्रवेश मध्यम वर्ग के समुदाय हैं। राष्ट्र एवं महाद्वीप बड़े समुदायों के उदाहरण हैं। सम्पूर्ण संसार एक समुदाय कहला सकता है यदि सम्पूर्ण मानव जाति में 'हम की भावना' उत्पन्न हो जाय। स्पष्ट है कि यदि हम विश्व समुदाय की भावना का निर्माण करना चाहते हैं तो सम्पूर्ण मानव जाति में सामुदायिक भावना उत्पन्न करनी होगी।

उदाहरण—एक कस्बा, ग्राम, नगर, प्रदेश, देश इत्यादि समुदाय के उदाहरण हैं। इन समूहों के सदस्य अपना सम्पूर्ण जीवन इन समुदायों में व्यतीत कर सकते हैं।

क्या एक बन्दीगृह एक समुदाय है ?

बन्दीगृह एक समुदाय है या नहीं, इसका निश्चय करने के लिये हमें इसे समुदाय के आवश्यक तत्वों की कसौटी पर कसना होगा। समुदाय के तीन परमाश्यक तत्व हैं—एक निश्चित भू-भाग, 'हम की भावना', और सामान्य जीवन। बन्दीगृह एक भू-भाग पर बसा होता है और वहां के निवासी अपना सम्पूर्ण जीवन सामान्य रूप से व्यतीत करते हैं। बन्दियों में 'हम की भावना' भी पाई जाती है। जब ये सारे तत्व उपस्थित हैं तो बन्दीगृह को एक समुदाय कहना अनुचित न होगा।

क्या जाति एक समुदाय है ?

जाति में 'हम की भावना' तो अवश्य पायी जाती है, परन्तु निश्चित भू-भाग और सामान्य जीवन नहीं पाया जाता। जाति के सदस्य अनेक भागों में बिखरे हुए रहते हैं। सामान्य जीवन भी नहीं होता। एक बङ्गाली ब्राह्मण का रहन सहन एवं रीति-रिवाज काश्मीरी ब्राह्मण से बिल्कुल भिन्न होता है। 'हम की भावना' भी उतनी मजबूत नहीं होती। एक पञ्जाबी ब्राह्मण बङ्गाली ब्राह्मण की अपेक्षा

पञ्जाबी बनिये के प्रति अधिक अपनत्व की भावना प्रदर्शित करता है। अतः जाति को समुदाय कहना उचित न होगा।

समिति और समुदाय की तुलना

समिति (Association)	समुदाय (Community)
समानतायें	
(१) समिति मनुष्यों का समूह है।	(१) समुदाय मनुष्यों का समूह है।
(२) समिति मूर्तरूप है।	(२) समुदाय मूर्तरूप है।
(३) सहयोग की भावना एक आवश्यक तत्व है।	(३) इसमें भी सहयोग की भावना अत्यन्त आवश्यक है।
असमानतायें	
(१) समिति की विचारपूर्वक स्थापना की जाती है।	(१) समुदाय की स्थापना नहीं होती बल्कि स्वतः जन्म होता है।
(२) इसका निर्माण किया जाता है।	(२) इसका विकास होता है।
(३) यह एक उद्देश्य या कुछ उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु स्थापित की जाती है।	(३) यह सम्पूर्ण सामान्य जीवन का आलिंगन करता है। वह किन्हीं स्वार्थों या उद्देश्यों के कारण स्थापित नहीं किया जाता। उसमें सम्पूर्ण जीवन ही व्यतीत होता है।
(४) इसकी सदस्यता ऐच्छिक होती है।	(४) इसकी सदस्यता अनिवार्य होती है।
(५) समिति समुदाय की तुलना में अस्थायी होती है।	(५) समुदाय स्थायी होता है।
(६) समिति के प्रति अपनत्व की भावना स्वार्थ से लिप्त होती है। स्वार्थ के पूर्ण होते ही हम उसे प्रायः भूल जाते हैं।	(६) समुदाय के प्रति अपनत्व की भावना स्वार्थरहित होती है। वह नस-नस एवं रोम-रोम में समा जाती है।
(७) समिति साधन है।	(७) समुदाय साध्य है।
(८) समिति समुदाय का एक भाग है। एक समुदाय में अनेक समितियां होती हैं।	(८) समुदाय समिति से अपने उद्देश्यों की पूर्ति कराता है और साधन रूप में प्रयोग करता है।

वर्ग (Class)

वर्ग भी एक प्रकार का समूह होता है। साधारणतया हम कह सकते हैं कि वर्ग वह समूह है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का सामाजिक स्तर समान होता है। सामाजिक वर्ग की परिभाषा ऑगबर्न और निम्कॉफ ने निम्न शब्दों में की है, "एक सामाजिक वर्ग उन व्यक्तियों का योग है, जिनकी कि आवश्यक रूप से एक निश्चित समाज में समान सामाजिक स्थिति है।" * लेपियर सामाजिक वर्ग की परिभाषा इन शब्दों में करता है, "एक सामाजिक वर्ग सुस्पष्ट सांस्कृतिक समूह है जिसे सम्पूर्ण जनसंख्या में एक विशिष्ट स्थान या स्थिति प्रदान की जाती है।" †

वर्ग के लिये दो आवश्यक तत्वों की आवश्यकता होती है। प्रथम समूह, द्वितीय समान स्थिति (Common Status) इसे निम्न समीकरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :—

वर्ग=समूह+समान स्थिति

(Class)=(Group)+(Common status)

जाति (Caste)

जाति भी एक प्रकार का समूह होता है। जाति वह वर्ग है, जो जन्म से निश्चित होता है। इसकी परिभाषा करते हुये कूले ने लिखा है, "जब एक वर्ग पूर्णतया वंशानुसंक्रमण पर आधारित होता है, तो हम उसे जाति कहते हैं।" × मजूमदार और मदन ने लिखा है "एक जाति एक बन्द वर्ग है।" +

जाति को निम्न समीकरण द्वारा समझा जा सकता है:—

जाति = समूह+समान स्थिति (जो जन्म के द्वारा निश्चित होती है।)

(Caste)=(Group)+(Common Status, which is determined by birth)

---

*"A social class is the aggregate of persons having essentially the same social status in a given society." Ogburn and Nimkoff, ' A Handbook of Sociology,'p.210.

†"A social class is a culturally defind group that is accorded a particular position or status within the population as a whole." Lapiere, 'Sociology' p. 452.

×"When a class is some what strictly hereditary we may call it a Caste". Cooley, C. H. 'Social Organisation,' p. 11.

+"A Caste is a closed class". Mazumdar D. N. and Madan, T.N. 'An Introduction to Social Anthropology' Asia, Buklishing House Bombay, 1956, p. 221.

प्रजाति (Race)

प्रजाति भी एक समूह होता है। प्रजाति वह समूह होता है, जो वंशानुसंक्रमण या पितृ-गुणों द्वारा निश्चित होता है। प्रजाति की परिभाषा करते हुये क्रोबर ने स्पष्ट लिखा है, "प्रजाति एक सप्रमाणित प्राणीशास्त्रीय विचार-धारा है। यह एक समूह है जो कि वंशानुसंक्रमण, वंश या पितृ-गुण या उपजाति के द्वारा जुड़ा हुआ है।" † बीसेंज और बीसेंज लिखते हैं, "प्रजाति उन व्यक्तियों का एक बड़ा समूह होता है जो कि जन्मजात शारीरिक लक्षणों द्वारा पहचाने जाते हैं।"§

प्रजाति के आवश्यक तत्व निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किये जा सकते हैं:—

प्रजाति = समूह+प्राणीशास्त्रीय समानता

(Race)=(Group)+(Biological Identity)

राष्ट्रीयता (Nationality)

राष्ट्रीयता भी एक प्रकार का समूह होता है। लार्ड ब्राइस (Lord Bryce) ने लिखा है "राष्ट्रीयता एक जन समूह है, जो कि कुछ निश्चित बन्धनों द्वारा बंधा हुआ होता है, उदाहरण के लिये भाषा और साहित्य, विचार-धाराओं, रीति-रिवाजों और परम्पराओं द्वारा एक अटूट एकता का इस प्रकार अनुभव करते हैं कि दूसरे जन समूहों से अपने को पृथक् समझते हैं।" * डासन और गेटिस (Dawson and Gettys) ने लिखा है, "एक आन्तरिक एकता, समूह के सदस्यों में अपनेपन की भावना और सामान्य संस्कृति एवं

† "A race is a valid biological concept. It is a group united by heredity; a breed or genetic strain or sub-species." Kroeber, A. L. 'Anthropology.'

§ "A race is a large group of people distinguished by inherited physical differences." Biesanz, J. and Biesanz, M. 'Modern Society,' Prentice-Hall Inc, New York, 1954, p. 159.

* "A nationality is a population held together by certain ties, as for example, language and literatur, ideas, customs and traditions, in such a way as to feel itself a coherent unity distinct from other populations held together by like ties of their own." Lord Bryce, 'South America', p. 24.

सामान्य जीवन में भागीदार होने की भावना राष्ट्रीयताओं के प्रमुख लक्षण हैं।" +

राष्ट्रीयता के आवश्यक तत्व निम्न समीकरण द्वारा स्पष्ट हो जाते हैं:—

राष्ट्रीयता = समूह + समान संस्कृति*

(Nationality)=(Group)+(Common Culture)

अतः राष्ट्रीयता वह समूह होता है, जिसमें प्रजाति, भाषा, भूगोल, धर्म, संस्कृति व ऐतिहासिक परम्परा, सार्वजनिक परम्परा, राजनैतिक आकांक्षा एवं भावना की एकता पाई जाती है।

राष्ट्र (Nation)

राष्ट्र भी एक प्रकार का समूह होता है। लार्ड ब्राइस ने राष्ट्र की परिभाषा इन शब्दों में की है, "राष्ट्र एक राष्ट्रीयता है, जिसने अपने को एक राजनैतिक समूह में सङ्गठित कर लिया है चाहे यह समूह स्वतन्त्र हो, या स्वतन्त्रता की उत्कंठा रखता हो।" † आशीर्वादम् ने लिखा है, "एक राष्ट्र या राष्ट्र-राज्य राष्ट्रीयता, राजनैतिक एकता तथा सर्वोपरि स्वतन्त्रता के बराबर होता है।" §

राष्ट्र के आवश्यक तत्वों को निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है:—

राष्ट्र = राष्ट्रीयता + राजनैतिक एकता

(Nation)=(Nationality)+(Political Unity)

इस अध्याय में हमने समूह, समिति, समुदाय, वर्ग, जाति, प्रजाति और राष्ट्र पर विचार किया। ये मनुष्यों के समूह थे। अगले अध्याय में हम मनुष्यों के व्यवहार

+ "Nationalities are characterized by an internal cohesiveness, a sense of belonging together on the part of the members of the group and a feeling of being sharers in a common culture and a common way of life." Dawson, Carl, A. and Gettys, Warner E, 'An Introduction to Sociology' Third edition, p. 313

*समान संस्कृति का अर्थ होता है प्रजाति की एकता, भाषा की एकता, भौगोलिक एकता, धर्म की एकता, संस्कृति और ऐतिहासिक परम्परा की एकता, सार्वजनिक इच्छा, राजनैतिक आकाँक्षाओं की एकता और सामुदायिक भावना।

† "A nation is a nationality, which has organised itself into a political body either independent or desiring to be independent." Lord Bryce. 'South America,' p. 24.

§ "A nation or nation-state equals nationality plus political unity and sovereign independence." Asirvatham E. 'A. New Social order,' Indian Christian Book club, Kilpank Madras (1942) p. 167.

का नियंत्रण करने वाले नियमों एवं साधनों-जनरीतियाँ, प्रथायें, रूढ़ियाँ, संस्थायें और समाज इत्यादि-पर प्रकाश डालेंगे।

प्रश्न

१. एक समिति के निर्माण में स्वार्थ और नेतृत्व द्वारा जो भाग लिया जाता है, उसकी विवेचना कीजिए। (राजपूताना, १९५५)

(Examine the part played by interest and leadership in the formation of an association.)

२. आप समुदाय से निश्चित रूप से क्या समझते हैं ? उसका समाज से क्या विभेद है ? (आगरा १९५३)

(What exactly do you mean by community ? Distinguish it from society.)

३. एक समुदाय के आवश्यक तत्व क्या होते हैं ? आप समुदाय और पड़ौस में किस प्रकार अन्तर करेंगे ? (आगरा १९५५), (राजस्थान १९५८)

(What are the essentials of a community ? How would you distinguish between a neighbourhood and community ?)

अध्याय ४

प्राथमिक परिभाषायें: जनरीतियां, प्रथायें, रूढ़ियां, संस्थायें तथा समाज

(Primary Concepts : Folkways, Customs, Mores, Institutions and Society)

"मानव मन में उत्पत्ति विचारों की होती,
कृति बार बार करने से आदत बन जाती।
जब जनता शनैः शनैः उसको अपना लेती,
जनरीत जगत् में बन वह स्थिर हो जाती।
फिर एक दूसरे को हस्तान्तरित हुआ करती,
पीढ़ी दर पीढ़ी बाद प्रथा वह कहलाती।
उपयोगी, अभिमति से वह प्रथा रूढ़ि बनती,
आवरण पहन ढांचे का संस्था कहलाती।"

—'बावरा'

मानव व्यवहार बड़ा ही रोचक है। मनुष्य भूला बैठा है कि वह अपने अन्तः करण (Conscience) के अनुसार स्वतन्त्र व्यवहार करता है। और किन्हीं भी बाह्य कारकों (Factors) द्वारा प्रभावित नहीं होता है। उसे क्या पता कि उसका अन्तःकरण ही सामाजिक परम्पराओं (Social Traditions) का फल (Product) मात्र है। जागरूक एवं अजागरूक प्रत्येक अवस्था में मनुष्य का व्यवहार समाज द्वारा नियन्त्रित होता रहता है। यह नियन्त्रण अति जटिल प्रक्रियाओं द्वारा होता है। कल्पित अतीत के किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में उत्पन्न विचार वर्तमान मनुष्यों पर शासन करता है। पाठकगण कुछ चौंके होंगे परन्तु चौंकने का कोई प्रश्न नहीं है। हमें ज्ञात होना चाहिये कि ये नियन्त्रण के

यह कविता इस पुस्तक के लिये श्री राम मोहन मिश्र 'बावरा' ने विशेष रूप से रची है। उनकी कहानी संग्रह 'शैवाल' और कविता संग्रह 'भोली किरण' (बावरा प्रकाशन, ब्यावर) अति प्रसिद्ध हैं।

साधन राज्य जैसी सत्ता से भी अधिक बलवान हैं, परन्तु हमें दृष्टिगोचर नहीं होते। ये मानव व्यवहार के नियन्त्रक आदत (Habit), जनरीतियां (Folkways), प्रथायें (Customs), रूढ़ियां (mores) और संस्थायें (Institutions) इत्यादि—हैं! अब हम इन पर प्रकाश डालेंगे।

आदत (Habit)

जब किसी कार्य को हम बार-बार दोहराते हैं तो हमारे शरीर एवं मस्तिष्क दोनों पर प्रभाव पड़ता है। दैहिक प्रक्रिया का विवरण हमारे क्षेत्र से बाहर है, इसलिये उसका विवरण हम यहां पर नहीं देंगे, परन्तु किसी कार्य को बार-बार करने से वह कार्य बिना किसी प्रयत्न के अचेतन अवस्था में ही हो जाता है। यह बार-बार दोहराने का परिणाम है। यह परिणाम क्यों होता है, यह हमारे क्षेत्र से बाहर है। स्वतः किसी कार्य को शरीर के किसी अङ्ग द्वारा करने को हम स्वाभाविक कहते हैं। जो कार्य होता है उसे हम अपना स्वभाव या आदत (Habit) कहते हैं।

जनरीतियाँ (Folkways)

जब किसी मनुष्य की आदत बहुत से मनुष्यों की आदत या समूह की आदत हो जाती है तो उसे जनरीति (Folkways) कहते हैं। जनरीति समूह की आदत को कहते हैं। जन+रीति=वह रीति जो जन (समूह) की हो। इससे स्पष्ट है कि जो कार्य समूह द्वारा मान्य होते हैं और अधिकांश व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं वे जनरीतियां कहलाते हैं। (जनरीति) 'Folkways' † शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम समनर (Sumner) ने किया।

मैकाइवर और पेज ने जनरीतियों की परिभाषा इन शब्दों में की है, "जनरीतियां समाज में मान्यता प्राप्त या स्वीकृत व्यवहार करने की पद्धतियां हैं।" * ग्रीन ने लिखा है, "कार्य करने की वे रीतियां, जो एक समाज या समूह में सामान्य होती हैं और जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को परम्परागत चली आती हैं, जन-

† See William Graham Sumner, 'Folkways', Ginn and Company, Boston. See also Sumner and Keller, 'The Science of Society' I, p. 20., (New Haven).

* "The folkways are the recognized or accepted ways of behaving in society." MacIver and Page 'Society,' p. 19.

रीतियों के नाम से जानी जाती हैं।" † ओडम ने लिखा है, "साधारणतया जनरीतियां व्यक्ति की आदतें और रीति-रिवाज हैं जो स्वाभाविक रूप से स्वतः उत्पन्न होते हैं और जीवन के विभिन्न परिवर्तनों के साथ साथ शनैः शनैः विकसित होते हैं।" * बोगर्डस ने जनरीति की परिभाषा इस प्रकार की है, "एक समूह की जनरीतियों में रूढ़ियों और व्यवहार की अन्य सभी रीतियां सम्मिलित होती हैं जो रोचक समझी जाती हैं परन्तु वे समूह के कल्याण के लिये आवश्यक नहीं हैं।" + रयूटर और हार्ट ने लिखा है "जनरीतियाँ केवल कार्य करने की वे आदतें मात्र होती हैं जो समूह के सदस्यों में सामान्य होती हैं, वे जनसाधारण की रीतियां हैं जो कुछ अंशों में प्रमापित होती हैं और अपने स्थायित्व के लिये कुछ अंशों में परम्परात्मक अभिमति रखती हैं।" × इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि जनरीतियां समूह की सामूहिक व्यवहार की प्रतिमान (Patterns) हैं। ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती रहती हैं। जो व्यवहार भूतकाल में हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति सबसे सरल प्रकार से करते आये हैं उन्हें हमने अपना लिया है और वही समूह की आदतें बन गई हैं। इसे हम और अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं यदि उनकी उत्पत्ति का अध्ययन करें।

जनरीतियों की उत्पत्ति और विकास

मनुष्य का सर्वप्रथम ध्येय जीवित रहना रहा है और रहेगा। जीवित रहने के लिये एवं जीवन को सर्वाङ्ग रूप से सुन्दर एवं पूर्ण बनाने के लिये अनेक

† "Those ways of acting that are common to a society or a group, and that are handed down from one generation to the next, are known as folkways." Green, A. W. 'Sociology: An Analysis of Life in Modern Society', p. 75.

* "The folkways are, in general, the habits of the individual and the customs of the group, arising naturally and spontaneously and growing up slowly around the different phases of life." Odum, H. W. 'Understanding Society: The Principles of Dynamic Sociology,' The Macmillan Co. New York, p. 225.

+ "The folkways of a group include the mores and all the other ways of behaving that are considered interesting but not essential to the welfare of the group." Bogardus, E. S. 'Sociology', p. 6.

× "The folkways are simply habits of action common to the members of the group; they are the ways of the folk that are somewhat standardized and have some degree of traditional sanction for their persistence." E. B. Reuter and C. W. Hart, 'Introduction to Sociology,' p. 147.

आवश्यकतायें होती हैं। आवश्यकता नवीनता की जननि है। जैसे-जैसे आवश्यकतायें मार्ग रोक कर खड़ी होती गईं, वैसे-वैसे मनुष्य नयी खोज में जुटता गया। कुछ समय में वह तुलनात्मक दृष्टि से सरल मार्ग निकालता गया। मनुष्य अनुभव से सीखता है, यह उसका विशेष गुण है। अनुकरण उसका स्वभाव है। वह अचेतन अवस्था में तो अनुकरण करता ही है परन्तु चेतन अवस्था में जानबूझ कर अनुकरण करना उसका स्वाभाविक गुण है। मनुष्य अनुभव से सीखता है और दूसरों के सफल प्रयासों का अनुकरण करता है। वह जीवन को सुखी बनाने वाली प्रत्येक वस्तु का अनुकरण करता है। हमारी शिक्षा इसका अद्वितीय उदाहरण है। जो मार्ग सरलतम लगते हैं उनका हम अनुकरण कर लेते हैं। यही सरलतम व्यवहार समूह का सामान्य व्यवहार बन जाता है जिसे हम जनरीति के नाम से पुकारते हैं। ये व्यवहार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते हैं और समूह के सभी सदस्यों द्वारा व्यवहार में लाये जाते हैं। इनको जन्म देने वाले अज्ञात होते हैं परन्तु इनकी रक्षा स्वयं समूह द्वारा की जाती है। इनकी संख्या किसी भी समूह में अगणित होती है। हमारे प्रत्येक व्यवहार के लिए कोई न कोई जनरीति उपस्थित रहती है। इनमें परिवर्तन भी होते रहते हैं।

समनर ने इनकी उत्पत्ति एवं विकास का निम्न शब्दों में सुन्दर चित्रण किया है:—

"वे प्राकृतिक शक्तियों की उपज के समान होती हैं जिनको मनुष्य अचेतनावस्था में प्रारम्भ करते हैं या वे पशुओं की नैसर्गिक अवस्थाओं के समान होती हैं जो अनुभव से विकसित होती हैं, जो किसी स्वार्थ के लिए अधिकतम अनुकूलन के अन्तिम स्वरूप तक पहुँचती हैं, जो परम्परा से चली आती हैं और जो किसी भी अपवाद या भिन्नता को स्वीकार नहीं करती परन्तु नई परिस्थितियों का अनुकूलन करने के लिए उन्हीं सीमित पद्धतियों के अन्तर्गत परिवर्तित होती हैं और जो विवेकपूर्ण मनन या उद्देश्य से रहित होती हैं।"*

* "They are like products of natural forces which men unconsciously set in operation, or they are like the instinctive ways of animals, which are developed out of experience, which reach a final form of maximum adaptation to an interest, which are handed down by tradition and admit of no exception or variation, yet change to meet new conditions, still within the same limited methods, and without rational reflection or purpose." Sumner, W. G. 'Folkways'.

उदाहरण:—जनरीतियों के अगणित उदाहरण दिये जा सकते हैं। ये विभिन्न संस्कृतियों में विभिन्न होते हैं। खाने के ही ढङ्ग को लीजिये। इंगलैंड में लोग मेज कुर्सी का प्रयोग करते हैं, भारतवर्ष में स्वच्छ चौके में आसन तथा चौकी अति सुविधाजनक लगती है। अभिवादन के ही प्रकारों को लीजिये भारतवर्ष में जय राम जी की एवं नमस्ते की जनरीति है, तो इंगलैंड में हाथ मिलाने की, न्यूजीलैंड में नाक से नाक रगड़ने की, चीन में अपने सम्पूर्ण शरीर को हिलाने की और फ्रांस में सार्वजनिक स्थान में भी चुम्बन करने की। वस्त्रों में भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। कोई पेंट पहनता है, तो कोई पजामा और कोई धोती में ही मस्त रहता है। इसी प्रकार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से उदाहरण दिये जा सकते हैं।

जनरीतियाँ बड़ी शक्तिशाली होती हैं

जनरीतियों की शक्ति अत्यधिक होती है। समूह में प्रत्येक मनुष्य को इनका अनुसरण करना पड़ता है। ये राज्य जैसी शक्ति को भी हिला देती हैं। गिडिंग्स ने लिखा है कि मानव समाज के पच्चीस वर्ष के गहन एवं सतर्क अध्ययन के उपरान्त वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जब कभी भी विधि (राज्य द्वारा निर्मित) और जनरीति में संघर्ष हुआ है तब तब विधि ही पराजित हुई है जनरीति एक बार भी नहीं हारी। जनरीति के आगे बड़ी-बड़ी शक्तियों को नतमस्तक होना पड़ा है। जब जब राज्य नियम (विधि) और जनरीति का सामंजस्य रहा है तब तब उनका कोई भी शक्ति सामना नहीं कर पाई।

जनरीतियाँ संस्कृति की आधारभूत शिलाएं हैं

किसी भी संस्कृति को समझने के लिए उस समूह की जनरीतियों को समझना अत्यन्त आवश्यक है। कोई संस्कृति एक विशिष्ट प्रकार की क्यों निर्मित हुई है, इसका उत्तर उस समूह की जनरीतियों से ही प्राप्त हो सकता है। मनुष्यों के व्यवहारों को समझने के लिए भी इनका अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। किसी भी देश के नव-निर्माण एवं विकास की योजना तभी सफल हो सकती है जब योजना और जनरीतियों में सामन्जस्य हो।

प्रथायें (Customs)

प्रथाएं जनरीतियों का ही विकसित स्वरूप है। जब जनरीतियां अधिक स्थायित्व प्राप्त कर लेती हैं तब उन्हें प्रथायें कहते हैं। मैकाइवर और पेज ने

इनकी परिभाषा इस प्रकार की है, "समाज से मान्यता प्राप्त कार्य करने की विधियां ही समाज की प्रथाएं हैं।"† बोगर्डस ने लिखा है, "प्रथाएं और परम्पराएं समूह के द्वारा स्वीकृत नियंत्रण की वे पद्धतियां हैं जो सुव्यवस्थित हो जाती हैं और जिन्हें बिना सोचे विचारे मान्यता दे दी जाती है और जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती हैं।"* प्रथाएं वे सामूहिक व्यवहार होते हैं जो समाज में मान्यता प्राप्त कर लेते हैं और जिन्हें लोग बिना सोचे विचारे स्वीकार कर लेते हैं। इस स्वीकृति के पीछे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्य निहित है। लोग यह सोचते हैं कि ये व्यवहार हमारे पूर्वज करते आये हैं और उन्हें इससे लाभ हुआ है। इस उपयोगिता की भावना के अतिरिक्त उनका यह भी विचार रहता है कि इन्हें स्वीकार न करना अपने पूर्वजों का अपमान करना एवं रुष्ट करना है। इन्हीं कारणों से वे इन्हें बिना सोचे विचारे स्वीकार कर लेते हैं।

प्रथायें और जनरीतियाँ (Customs and Folkways)

अधिकाँश समाजशास्त्रियों ने प्रथाओं और जनरीतियों में कोई भी अन्तर नहीं माना है। उदाहरण के लिए रयूटर और हार्ट के निम्न वाक्य पर विचार कीजिये: —

'Out of the habits develop the uniformities in habit which are called customs or folkways.'=

इस वाक्य से यह स्पष्ट है कि उन्होंने दोनों में कोई अन्तर नहीं माना है। इन्हें पर्यायवाची शब्दों का रूप देने का प्रयत्न किया है। मेरे दृष्टिकोण से यह उचित नहीं है। दोनों ही शब्दों को यदि पृथक् अर्थों में प्रयोग किया जाए तो उचित होगा। इन दोनों में अंशों का अन्तर है। जनरीतियां सामूहिक व्यवहार का प्रथम पग है। प्रथाएं इनका द्वितीय पग कहा जा सकता है। जब जनरीतियां अधिक स्थायित्व एवं मान्यता प्राप्त कर लेती हैं तो उन्हें प्रथाएं

---

† "The socially accredited ways of acting are the customs of society." MacIver and Page, 'Society', p. 18.

* "Customs and traditions are group-accepted techniques of control that have become well established, that are taken for granted, and that are passed along from generation to generation." Bogardus, E. S. 'Sociology' p. 475.

= Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology', p. 147.

कहना उचित होगा। इस विचार का अधिक स्पष्टीकरण हम उस स्थल पर करेंगे जहां पर इनका अन्तिम पग 'संस्था' (Institution) का विवरण देंगे। पाठक मेरे साथ सहमत होंगे कि मानव व्यवहारों की विभिन्न स्थितियों का बोध कराने लिए विभिन्न शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। जनरीति, प्रथा, रूढ़ि और संस्था मान्यताप्राप्त सामूहिक व्यवहार के विभिन्न पहलुओं का बोध कराते हैं।

रूढ़ियाँ (Mores)

'Mores' शब्द का प्रयोग भी सर्व प्रथम समनर (Sumner) ने ही किया था। कुछ समाजशास्त्रियों को इस शब्द के प्रयोग पर आपत्ति है। रॉस (Ross) ने लिखा है कि 'Mores' के स्थान पर 'Standard' शब्द का प्रयोग किया जाय। इसका कारण बतलाते हुए उन्होंने लिखा है, "मैं इस शब्द (Standard) को 'Mores' (प्रो० डब्लू० जी० समनर द्वारा प्रस्तावित) से अधिक उचित समझता हूँ क्योंकि बाद का शब्द (Mores) एक अपरिचित विदेशी शब्द है और इसके अतिरिक्त उसका एक वचन उपलब्ध नहीं है।"* रॉस का यह विचार मेरे दृष्टिकोण से उचित नहीं है। जहां तक इस शब्द (Mores) के एक वचन का प्रश्न है वह 'Mos' है। यदि कोई शब्द न भी होता तो निर्माण किया जा सकता था। भाषा गतिशील है, उसे सीमाओं में बाँधने की चेष्टा उचित नहीं। उनका दूसरा आरोप, कि यह एक विदेशी एवं अपरिचित शब्द है, उनकी संकीर्णता का बोध कराता है। यद्यपि वह शब्द अपरिचित है तथापि इस शब्द ने समाजशास्त्र की भाषा में एक प्रमुख स्थान बना लिया है। देखा जाय तो इस शब्द का सबसे बड़ा गुण वही सिद्ध हुआ है जिसे श्री रॉस ने दोष बताया है। समाजशास्त्र में उन शब्दों का प्रयोग, जो साधारण बोलचाल में प्रयोग में आते हैं, बड़ा विवाद उत्पन्न कराते हैं। उदाहरण के लिए 'समाज' शब्द को ही ले लीजिये। वास्तव में नये शब्दों का प्रयोग पारिभाषिक शब्दों के रूप में अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुआ है और होगा। इस अध्याय को लिखने की आवश्यकता इसीलिए पड़ी कि अधिकांश पारिभाषिक

---

* "I prefer this word to mores (Suggested by Professor W. G. Sumner), because the latter is an alien unfamiliar word, and besides, its singular is unavailable." E. A. Ross, 'Principles of Sociology', Appleton—Century—Crofts, Inc. New York, Third Edition, p. 667.

शब्द समाजशास्त्र में साधारण बोलचाल की भाषा से लिये गये हैं। वास्तव में प्रो० समनर ने इन शब्दों का समाजशास्त्र में प्रयोग करके अपने विज्ञान की महान सेवा की है। इस सेवा का पुरस्कार भी प्रो० समनर को मिला है। अधिकांश समाजशास्त्रियों ने इन शब्दों के प्रयोग की उपयोगिता को समझा है और प्रो० समनर की सराहना की है। साथ ही साथ ये शब्द समाजशास्त्र के ऐसे अभिन्न अंग बन गये हैं कि इन्हें कभी भी पृथक् नहीं किया जा सकता। प्रो० रॉस ने 'Standard' शब्द को प्रस्तावित किया है। यह शब्द उन क्रियाओं एवं मानव व्यवहारों का बोध नहीं कराता जिसके लिए इसका प्रयोग किया गया है। इस शब्द का साधारण भाषा में विभिन्न अर्थों में प्रयोग होता है, इसलिए मुझे इस शब्द के प्रयोग से कोई विशेष लाभ या सुविधा दिखाई नहीं पड़ती।

परिभाषा

रूढ़ियों की परिभाषा करते हुए डॉसन और गेटिस ने लिखा है, "रूढ़ियां (वे) जनरीतियां हैं जिन्होंने अपने साथ किसी प्रकार (ऐसे) निर्णय (भावना), जिन पर कि समूह का कल्याण मुख्यतया निर्भर है, जोड़ लिये हैं।"† इससे स्पष्ट है कि रूढ़ियां वे जनरीतियां हैं जिनमें कल्याण की भावना निहित होती है। लम्ले ने इस तत्व को और भी स्पष्ट रूप से इस प्रकार लिखा है, "एक जनरीति, उसी समय रूढ़ियों में से एक (रूढ़ि) हो जाती है जब कि उसके साथ 'कल्याण' तत्व जोड़ दिया जाता है।"* मैकाइवर और पेज ने भी इसी भाव की पुष्टि इन शब्दों में की है, "इसलिए, ऐसा तर्क किया जाता है कि जब जनरीतियां अपने साथ समूह के कल्याण की भावना व सही और गलत के

† "Mores are folkways which have added to them, through some reflection, the judgement, that group welfare is particularly dependent upon them." Carl A. Dawson and Warner E. Gettys, 'An Introduction to Society,' The Ronald Press Co., New York (1948), p. 50.

* "A folkway becomes one of the mores, then, when this welfare element is added;....." F. E. Lumley, 'Principles of Sociology', p. 170.

प्रमापों को जोड़ लेती हैं, वे रूढ़ियों में परिवर्तित हो जाती हैं।"† समनर ने स्पष्ट करते हुये लिखा है, "जब सत्य और औचित्य के तत्व कल्याण के सिद्धान्तों में विकसित हो जाते हैं, जनरीतियां दूसरे (उच्च) क्षेत्र (रूढ़ियां) में उठ जाती हैं।"‡ सदरलैंड तथा अन्य ने भी इसी भाव का प्रकट किया है, "परन्तु रूढ़ियां (वे) जनरीतियां हैं जो एक समूह के लिए महत्वपूर्ण समझी जाती हैं—(विशेष रूप से) उस (समूह) के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण समझी जाती हैं।"* ग्रीन ने रूढ़ियों की परिभाषा करते हुए लिखा है, "कार्य करने की वे सामान्य रीतियां रूढ़ियां होती हैं जो जनरीतियों की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक सही व उचित समझी जाती हैं और जो अधिक निश्चित और कठोर दंड (समूह द्वारा) दिलवाती हैं यदि (कोई उनका) उल्लंघन करे।"+ इन परिभाषाओं से हमें यह स्पष्ट हो गया होगा कि रूढ़ियाँ जनरीतियों से भिन्न नहीं होती बल्कि दोनों में अंशों का अन्तर है। जब राम बालक होता है तो उसका महत्व कुछ कम रहता है और जब वह युवावस्था को प्राप्त करता है तो समाज में उसका महत्व बढ़ जाता है और लोग उसे श्रीमान राम कह कर पुकारते हैं। जनरीतियाँ और रूढ़ियां एक ही वस्तु या धारणा की क्रमशः बाल तथा युवा स्वरूप हैं। इसे हम निम्न समीकरण के द्वारा और भी भली प्रकार से समझ सकेंगे:—

† "Thus, it is reasoned, that when the folkways have added to them conceptions of group welfare, standards of right and wrong, they are converted into mores." MacIver and Page, 'Society,' p. 20.

‡ "When the elements of truth and right are developed into doctrines of welfare, the folkways are raised to another plane." Sumner, W. G. 'Folkways', p. 30.

* "But mores are folkways that are considered to be important to the group—important to its welfare." Sutherland, Woodward and Maxwell, 'Introductory Sociology' J. B. Lippincott Co., New York, Fourth Edition (1952), 23.

+ "Common ways of acting which are more definitely regarded as right and proper than the folkways and which bring greater certainty and severity of punishment if violated are the mores." Green, 'Sociology', p. 76.

*रूढ़ि=जनरीति+समूह के कल्याण की भावना+उपयोगिता का दृष्टिकोण+समूह की अधिक अभिमति।

रूढ़ियाँ वे व्यवहार की प्रतिमान हैं जिन्हें समूह कल्याणकारी, उचित एवं उपयोगी समझता है और जिनके उल्लंघन किये जाने पर समूह अपना अपमान समझ कर दंड देने के लिए तत्पर रहता है। इन्हें समूह की अभिमति (Sanction) प्राप्त होती है और ये बिना सोचे विचारे स्वीकार कर ली जाती हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्वाभाविक रीति से हस्तान्तरित होती रहती हैं।

रूढ़ियों की विशेषताएं

(१) रूढ़ियां सदैव सत्य होती हैं

रूढ़ियां सदैव सत्य समझी जाती हैं। ये व्यवहार हमारे पूर्वजों द्वारा पालन होते आये हैं इसलिए इनके पीछे हमारे पूर्वजों के अधिकार निहित हैं। इनको पालन करने के पीछे यही तत्व रहता है कि हमारे पूर्वजों ने इनसे लाभ उठाया है अतः हम भी लाभान्वित होंगे। ये उस पुराने नौकर के समान होती हैं जिसने हमें गोदी में खिलाया हो। इनमें भूत का गहन विश्वास निहित होता है। इतनी शक्ति किसमें है जो इनका विरोध करे। समूह का समूह टूट न पड़े ?

(२) वे सदैव उचित होती हैं

रूढ़ियां कभी भी अनुचित नहीं होती क्योंकि समूह इन्हें उचित कहता है। एक बालिका अपने पति की चिता पर सती होने के लिए श्रृङ्गार करके बैठी हुई है। उसकी भावनाओं की कौन चिंता करता है। सती होना एक रूढ़ि है और वह अनुचित नहीं हो सकती। अनेक वर्षों तक इस रूढ़ि के अनुसार व्यवहार करते हुए लाखों अबोध बालिकाएं एवं अरमानों से भरे हुए हृदय रखने वाली कोमल युवतियां भस्मसात् होती रहीं। कोई भी व्यवहार उचित होता है जब तक कि उस स्थान एवं काल की रूढ़ियां उसका संरक्षण करती हैं। हम किसी कार्य को उचित क्यों कहते हैं क्योंकि समूह उस कार्य को उचित कहता है। हमारी उचित और अनुचित की भावना ही रूढ़ियों पर

---

*Mos = Folkway + Feeling of group welfare + Utility + More Group sanction.

आधारित है। अतः जो कुछ भी स्थान एवं काल की रूढ़ियों के अनुसार होता है, वह उचित है।

(२) रूढ़ियाँ रूढ़िवादी (Conservative) होती हैं

रूढ़ियों की प्रकृति रूढ़िवादी होती है, इन्हें शीघ्र परिवर्तित नहीं किया जा सकता। एक रूढ़ि कम से कम २०–२५ वर्ष समय की गति से साधारणतया पीछे रहती है। हमारे अवलोकन करने का यह दृष्टिकोण होना चाहिए कि कहीं वे २००–३०० वर्ष पीछे तो नहीं हैं।

रूढ़ियों के प्रकार

रूढ़ियां दो प्रकार की होती हैं—प्रथम अस्त्यात्मक (Positive) और द्वितीय निषेधात्मक (Prohibitive or Negative)।

(१) अस्त्यात्मक रूढ़ियां या आचार (Morals)

आचार उन रूढ़ियों को कहते हैं जो उचित व्यवहार करने की ओर संकेत करती हैं—जैसे सत्य बोलना चाहिए, विद्वानों की संगति में बैठना चाहिए, दान करना चाहिए, माता पिता का आदर करना चाहिए, गुरुजनों की सेवा करनी चाहिए इत्यादि।

(२) निषेधात्मक रूढ़ियां या टेबू (Taboo)

निषेधात्मक रूढ़ियां वे रूढ़ियां हैं जो इन्हीं व्यवहारों को न करने की ओर संकेत करती हैं—जैसे बहू को जेठ (पति के बड़े भाई) से बातचीत नहीं करनी चाहिए, झूठ नहीं बोलना चाहिये, चोरी न करना चाहिए इत्यादि।

संस्थाएं (Institutions)

संस्थाओं की समाजशास्त्रियों ने अनेक परिभाषायें की हैं। बोगर्डस ने संस्था की इन शब्दों में परिभाषा की है, "एक सामाजिक संस्था समाज का वह ढांचा होता है जो मुख्य रूप से सुव्यवस्थित विधियों द्वारा लोगों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए संगठित किया जाता है।" † सदरलैंड तथा अन्य ने लिखा है "समाजशास्त्रीय सम्भाषण में एक संस्था उन जनरीतियों और रूढ़ियों का समूह है जो मानवीय साध्य या उद्देश्य की प्राप्ति में केन्द्रित

† "A social institution is a structure of society that is organised to meet the needs of people chiefly through well-established procedures." Bogardus, E. S. 'Sociology', p. 478.

हो जाता है।" * रॉस ने लिखा है, "सामाजिक संस्थाएं सामान्य इच्छा से स्थापित या अभिमति प्राप्त संगठित मानव सम्बन्धों के समूह हैं।" +

ग्रीन भी इन्हीं विचारों को प्रकट करता हुआ लिखता है, "एक संस्था किसी इकाई में जनरीतियों और रूढ़ियों (और प्रायः अधिकतर, परन्तु आवश्यक नहीं, विधियों) का ऐसा संगठन होता है जो अनेक सामाजिक कार्यों की सेवा करता है।"× मैकाइवर ने भी लिखा है संस्था "एक ऐसा निश्चित संगठन होता है जो किसी विशेष स्वार्थ का अनुसरण करता है या एक विशिष्ट ढङ्ग से साधारण स्वार्थों का अनुसरण करता है।" †

इस प्रकार इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि एक संस्था किसी विशिष्ट मानव आवश्यकता की पूर्ति के निमित्त जनरीतियों एवं रूढ़ियों का समूह है। प्रो० समनर ने इसे भली प्रकार समझाने का प्रयत्न किया है। उसने लिखा है, "एक संस्था एक विचारधारा (विचार, मत, सिद्धान्त या स्वार्थ) और एक ढाँचे से मिलकर बनती है।" ‡ किसी भी संस्था का प्रारम्भ एक विचार या स्वार्थ (मानव आवश्यकता) से होता है। यह विचार (idea) किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के मस्तिष्क में उत्पन्न होता है। वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में इस विचार का प्रयोग करते हैं। यदि प्रयोग सफल होता है तो समूह इस

* 'In sociological parlance, an institution is a set of folkways and mores that center in the achievement of some human end or purpose" Sutherland, Woodward and Maxwell, 'Introductory Sociology', p. 26.

+ "Social institutions are sets of organized human relationships established or sanctioned by the common will." Ross, E. A. 'Principles of Sociology', p. 686.

× "An institution is the organization of several folkways and mores (and most often, but not necessarily, laws) into a unit which serves a number of social functions." Green, A. W. 'Sociology', p. 79.

† As a "definite organisation pursuing some specific interest or pursuing general interests in a specific way." MacIver, R. M. 'Community', The Macmillan Co. Chapter IV.

‡" An institution consists of a concept (idea, notion, doctrine or interest) and a structure." Sumner, W. G. 'Folkways' p.53.

विचार को अपनी आदत (Habit) बना लेता है या वह विचार जनरीति (Folkway) का स्वरूप धारण कर लेता है। यह जनरीति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती है और उसके पीछे अनुभव की शक्ति निहित हो जाती है। अब जनरीति ने प्रथा (Custom) का रूप धारण कर लिया। शनैः शनैः प्रथा (Custom) की उपयोगिता की भावना समूह के व्यक्तियों में बढ़ती जाती है और समूह यह अनुभव करने लगा है कि ये व्यवहार समूह के कल्याण के लिए है। इस भावना से प्रेरित होकर समूह अपनी अभिमति (Sanction) इन व्यवहारों को प्रदान कर देता है और अपनी आज्ञा का उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड देता है। इस प्रक्रिया से सफल निकलने के उपरान्त प्रथा (Custom) रूढ़ि (Mores) का स्वरूप धारण कर लेती है। इस निखरी हुई विचारधारा की पूर्ति के लिए एक ढांचा ऐसा निर्मित हो जाता है या कर लिया जाता है जिसके द्वारा यह विचार आवश्यकता की पूर्ति कर देता है। ढांचा एक प्रकार का यन्त्र या व्यवस्था होती है। ढाँचा कार्यों और तथ्यों की दुनियां में ऐसे ढङ्ग के साधन प्रदान करता है जिनसे आवश्यकता की पूर्ति हो सके। कहने का तात्पर्य यह है कि उस विचार के चारों ओर ऐसी व्यवस्था बन जाती है जो स्वार्थों की पूर्ति में सहायता करती है। इसी व्यवस्था को हम समाजशास्त्र में ढांचा (Structure) कहते हैं। जैसे ही एक रूढ़ि के चारों ओर उसका ढांचा खड़ा हुआ वैसे ही उसका स्वरूप परिवर्तित हो जाता है और हम उसे संस्था (Institution) कहने लगते हैं।

हम निम्नप्रकार से भलीभांति समझ सकेंगे कि एक संस्था का विकास एक विचार से कैसे होता है।

(१) **विचार** (Idea or Concept)

(२) **मनुष्य की आदत** (Habit of an individual) [मनुष्य इस विचार के अनुसार कार्य करता है। सफलता प्राप्त होती है, अतः बार बार करता है। वह इस विचार के अनुसार बार बार व्यवहार करता है, इसलिये वह उसकी आदत हो जाती है।]

(३) **समूह की आदत या जनरीति** (Habit of the Group or Folkway) [एक मनुष्य की सफलता दूसरे मनुष्यों को अनुकरण के लिये प्रेरित करती है और समूह के अधिकांश सदस्य इसे ग्रहण कर लेते हैं।]

(४) प्रथा (Custom) [यह जनरीति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है। भूत का सफल अनुभव इसका आधार बन जाता है। समूह इन व्यवहारों को प्राथमिकता देता है। जो इन व्यवहारों को करते हैं उनका समूह अधिक आदर करता है और जो इनका उल्लंघन करते हैं उन्हें समूह तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखता है।]

(५) रूढ़ि (Mos) [समूह अपनी अभिमति प्रदान करता है और उल्लंघन करने वालों के लिये दण्ड निर्धारित करता है। इनके प्रति कल्याण एवं उपयोगिता की भावना समूह में विकसित हो जाती है।]

(६) संस्था (Institution) [रूढ़ि के चारों ओर एक ढांचे का निर्माण हो जाता है। ढांचा विधियों, व्यवस्थाओं एवं पद्धतियों का योग होता है।]

या

आदत=विचार+बार बार क्रिया को दोहराना

जनरीति=आदत समूह की

प्रथा=जनरीति+भूत का सफल अनुभव+समूह की ओर से प्राथमिकता

रूढ़ि=प्रथा+समूह की अभिमति+समूह कल्याण की भावना+उपयोगिता की धारणा

संस्था=रूढ़ि+ढांचा

उदाहरण—इसे हम विवाह की संस्था (Institution of marr age) के द्वारा भली प्रकार से समझ सकते हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में लिंग सम्बन्धों पर कोई नियंत्रण न होगा। यह समाज की प्राकृतिक अवस्था मानी जा सकती है। संस्कृति और सभ्यता का विकास बाद में हुआ है। हम कल्पना कर सकते हैं कि क्या अवस्था रही होगी। जो पुरुष चाहे वह कर सकता होगा। एक स्त्री है, ऐसा हमने मान लिया। अनेक पुरुष उसके साथ लिंग सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं। किसी पर भी रोकटोक नहीं है। इसका स्वाभाविक फल आपसी फूट, कलह, झगड़ा, शत्रुता इत्यादि है। इससे लोगों को अत्यन्त कष्ट होता होगा।

किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में यह विचार उत्पन्न हुआ कि लिंग सम्बन्धों पर नियंत्रण होना चाहिए और समूह सनद (Licence) प्रदान करे। जिन्हें अनुमति प्राप्त हो वे ही लिंग सम्बन्ध स्थापित करें, अन्य पुरुषों और स्त्रियों को यह अधिकार न होगा।

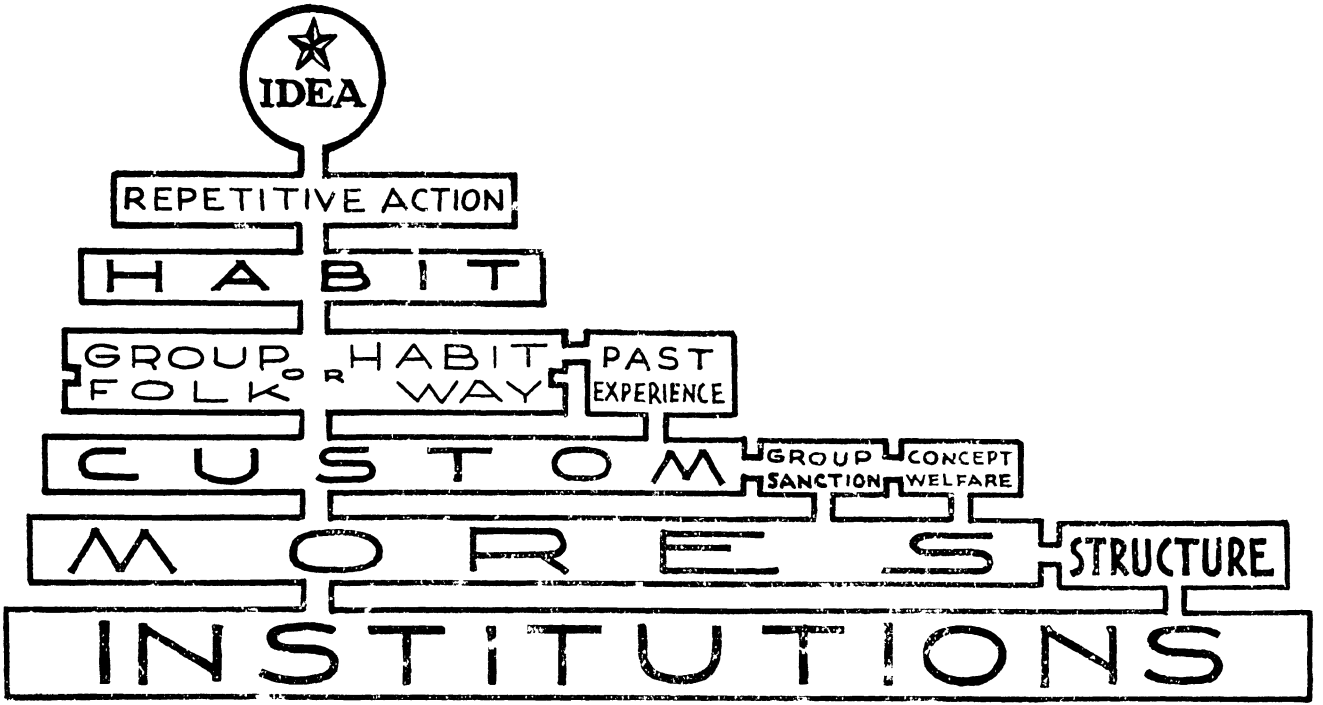

Fig. 1. Development of an idea into an institution.

विवाह का अभिप्राय समूह द्वारा एक पुरुष और एक या अनेक स्त्रियों या एक स्त्री और एक या अनेक पुरुषों या कुछ स्त्रियों और पुरुषों को एक दूसरे के साथ लिंग सम्बन्ध स्थापित करने की अनुमति (Sexual licence) है।+ उस व्यक्ति का विचार समूह ने स्वीकार किया। सफलता के कारण वह व्यवहार समूह के सदस्यों की आदत बन गई। यह जनरीति का स्वरूप हुआ कि लोग उन्हीं व्यक्तियों के साथ लिंग सम्बन्ध स्थापित करते हैं जिनके लिए उन्हें समूह से अनुमति मिली है।

युक्ति की सफलता के कारण यह जनरीति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती रही। अनुभव से यह सिद्ध हुआ कि ऐसा करना बड़ा सुगम है। इसलिए समूह उन व्यक्तियों को आदर देने लगा जो इन जनरीतियों के अनुसार व्यवहार करते थे। अब इन जनरीतियों ने प्रथा का रूप ले लिया।

शनैः शनैः समूह यह सोचने लगा कि ये नियम समूह के कल्याण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और समूह का अस्तित्व इन नियमों के अभाव में खतरे से खाली नहीं है। इन नियमों की उपयोगिता समूह को अनुभव होने लगी। इन तत्वों से प्रेरित होकर समूह ने अपनी अभिमति (Sanction) इन नियमों को प्रदान कर दी और इनका उल्लंघन करने वालों के लिए दंड निर्धारित कर दिया। लिंग सम्बन्धी नियंत्रण के ये नियम अब रूढ़ियां बन गयीं।

इन नियमों के पालन करने के लिए अनेक व्यवस्थाएं उत्पन्न हुईं। किस प्रकार से समूह अनुमति प्रदान करेगा और उसके लिए क्या क्या उत्सव करने होंगे, यह निश्चित होता गया। मंगनी, तिलक, लगन, बरात, विवाहोत्सव, द्वारचार, भोज, बिदा, गौना इत्यादि अनेक यंत्र बन गये। ये सब रूढ़ि के चारों ओर उसका विकसित ढांचा है। संस्था उस विचार और इस विकसित ढांचे का योग है। इस प्रकार संस्था का क्रमिक विकास होता है।

संस्था के आवश्यक तत्व
(Essential elements of an institution)

(१) धारणा (Concept)

संस्था का परम आवश्यक तत्व धारणा है। संस्था का विकास किसी न किसी ऐसी धारणा से प्रारम्भ होता है जिसे समूह अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक

+ इस विषय में अधिक 'विवाह एवं परिवार' के अध्यायों में पढ़िए।

समझता है। यह धारणा किसी न किसी सामाजिक आवश्यकता या हित की पूर्ति करती है।

(२) उद्देश्य (Purpose)

संस्था किसी न किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए विकसित होती है। बिना उद्देश्य के कोई भी संस्था नहीं होती और जिन संस्थाओं का उद्देश्य से सामंजस्य समाप्त हो जाता है वे धीरे धीरे नष्ट होने लगती है। अतः प्रत्येक संस्था का उद्देश्य होता है।

(३) स्थिरता (Permanence)

प्रत्येक संस्था स्थिर मानव व्यवहारों की परिणाम है। हम लिख ही चुके हैं कि कई पीढ़ियों के उपरान्त संस्था बन पाती है यह उनमें स्थिरता एवं स्थायित्व को जन्म देती है।

(४) ढांचा (Structure)

प्रत्येक संस्था के लिए एक ढांचे की अत्यन्त आवश्यकता होती है। बिना ढांचे के विचार को कार्यरूप में परिणित नहीं किया जा सकता।

(५) अभिमति एवं अधिकार (Sanction and authority)

प्रत्येक संस्था के पीछे समूह की अभिमति होती है। समूह इन संस्थाओं को कुछ अधिकार प्रदान कर देता है जिससे कि इन्हें प्रभावपूर्ण बनाया जा सके और वे उद्देश्य की पूर्ति कर सकें।

(६) प्रतीक (Symbol)

प्रत्येक संस्था का कोई न कोई प्रतीक भी विकसित हो जाता है। ये प्रतीक भौतिक और अभौतिक दोनों ही प्रकार के होते हैं।

संस्था के कार्य (Functions of an Institution)

(१) मानव आवश्यकता की पूर्ति (Satisfaction of human need)

संस्थाओं का सर्वप्रथम कार्य मानव आवश्यकताओं की पूर्ति है। वे साध्य नहीं, साधन हैं। वे मानव व्यवहार को नियंत्रित अवश्य करती हैं परन्तु वे मनुष्य की स्वामी नहीं। मैकाइवर ने उचित लिखा है, "(सामाजिक संस्थाएं) मनुष्य को पराजित करने के अपने अधिकार पर जीवित नहीं हैं अपितु केवल उनकी (मनुष्यों की) सेवा करने के लिए और जब वे सेवा करना बंद कर

देती है तो कोई भी प्राचीनता और कोई भी पवित्रता उन्हें मरने से नहीं बचा सकती।"*

(२) संस्कृति की वाहक (Vehicle of culture)

संस्थाएं संस्कृति की वाहक हैं। वे संस्कृति के तत्वों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करती रहती है।

(३) अनुरूपता उत्पन्न करना (To conform)

संस्थाएं मनुष्यों के व्यवहार में अनुरूपता उत्पन्न करती हैं। इनके कारण मनुष्य एक सा व्यवहार करते हैं और इससे एकता की भावना उत्पन्न होती है।

(४) मनुष्यों के व्यवहारों पर नियंत्रण (Control over the behaviour of persons)

संस्थाएं मनुष्यों के व्यवहारों का नियंत्रण रखती हैं। इनकी शक्ति अत्यधिक होती है। सामाजिक नियंत्रण के साधनों में इनका प्रमुख स्थान है।

(५) मार्ग प्रदर्शन करना (To guide)

संस्थाएं मनुष्य का प्रत्येक परिस्थिति में मार्ग प्रदर्शन करती हैं। मनुष्य समय समय पर इनका सहारा लेता रहता है।

संस्था और परिवर्तन (Institution and change)

संस्थाएं रूढ़िवादी होती हैं। वे समय से बहुत पिछड़ी हुई होती हैं। परिवर्तन समाज का नियम है। संस्थाएं परिवर्तन के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करती हैं। जब जब भी नवीन परिवर्तन हुए हैं, संस्थाएं उनका विरोध करती रही हैं।

संस्था और समिति (Institution and association)

संस्था और समिति एक ही वस्तु के दो पक्ष हैं। इनकी तुलना से यह स्पष्ट हो जायगा—

---

*"(Social Institutions) do not exist in their own right to overpower men but only to serve them and when they cease to serve no antiquity and no sanctity can save them from condemnation." MacIver, R. M. 'Community', pp. 162-163.

समानतायें

संस्था (Institution)	समिति (Association)
१. यह मनुष्यों द्वारा निर्मित है।	१. यह भी मनुष्यों की कृति है।
२. यह मानव स्वार्थ की पूर्ति के लिए बनती है।	२. यह भी मानव हित के लिए संगठित की जाती है।

भिन्नताएं

१. संस्था नियमों एवं व्यवस्थाओं का संग्रह है।	१. समिति मनुष्यों का समूह है।
२. यह अमूर्त है।	२. यह मूर्त है।
३. यह अधिकांशतः स्वतः विकसित होती है।	३. यह प्रायः स्थापित की जाती है
४. यह तुलनात्मक दृष्टि से अधिक स्थायी होती है।	४. यह इतनी स्थायी नहीं होती।

मनुष्य समिति के सदस्य होते हैं (Men belong to associations)

मनुष्य समिति की स्थापना करता है। समिति मनुष्यों के समूह को कहते हैं। समिति के दो अंग होते हैं। प्रथम उसके सदस्य—ये मनुष्य होते हैं। द्वितीय समिति के नियम, विधि एवं व्यवस्थाएं होती हैं जिन पर ये मनुष्य कार्य करते हैं। यह द्वितीय वस्तु संस्था (Institution) कहलाती है।

मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा है, "हम समितियों के सदस्य हैं न कि संस्थाओं के।"§ संस्थाएं मनुष्यों का समूह नहीं होती। वे नियमों एवं विधियों की समूह होती हैं। हम उनके सदस्य किस प्रकार हो सकते हैं, क्योंकि हम नियम या विधि तो है नहीं। हम मनुष्य हैं। हमारा रूप भौतिक मूर्त रूप है। संस्थाएं अमूर्त हैं। मूर्त वस्तुएं अमूर्त समूह की सदस्य किस प्रकार हो सकती हैं। अतः स्पष्ट है कि हम समिति के सदस्य होते हैं न कि संस्था के।

इन दोनों के अन्तर को एक उदाहरण द्वारा बड़ी सरलता से समझाया जा सकता है। एक शिक्षण संस्था एवं शिक्षण समिति को लीजिए। एक महाविद्यालय

---

§"We belong to associations but not to institutions." MacIver and Page, 'Society,' p. 15.

है। जब हम महाविद्यालय के आचार्य, प्राध्यापक, विद्यार्थी इत्यादि की ओर संकेत करते हैं तो महाविद्यालय एक समिति है, क्योंकि हम मनुष्यों के समूह की ओर संकेत कर रहे हैं। जब हम महाविद्यालय के नियमों, परीक्षा की विधि, शिक्षा की पद्धति इत्यादि की ओर संकेत करते हैं तो महाविद्यालय एक संस्था है। मैकाइवर और पेज ने इसको स्पष्ट रूप से इन शब्दों में समझाया है, "यदि हम किसी वस्तु को एक संगठित समूह के रूप में विचार कर रहे हैं तो वह समिति है, यदि कार्य करने की पद्धति के एक स्वरूप का विचार कर रहे हैं तो वह संस्था है। समिति सदस्यता का बोध कराती है, और संस्था एक पद्धति या सेवा के साधन का।"*

संस्था और समिति अत्यधिक सम्बन्धित हैं

संस्था और समिति एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। यदि कहा जाय कि एक शरीर है तो दूसरी आत्मा तो अनुचित न होगा। संस्था शरीर रूपी समिति के लिए आत्मा के समान है कोई भी समिति बिना नियमों एवं कार्य पद्धतियों के कार्य नहीं कर सकती या यों कहें कि अपना अस्तित्व नहीं रख सकती। एक स्वार्थ (Interest) की पूर्ति के लिए मनुष्य संगठित होते हैं और समिति की स्थापना करते हैं। उसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए नियम एवं व्यवस्थाएं बन जाती हैं जिन्हें हम संस्थाएं कहते हैं। समिति और संस्था एक दूसरे की पूरक हैं।

समाज (Society)

'समाज' शब्द का साधारण बोलचाल की भाषा में और समाजशास्त्र में भी अत्यधिक प्रयोग होता है। इस शब्द का विभिन्न स्थानों एवं समयों पर विभिन्न अर्थों में प्रयोग किया जाता है। समाजशास्त्र में इस शब्द का अत्यधिक महत्व है क्योंकि समाजशास्त्र समाज का शास्त्र है। अतः समाज शब्द का अर्थ हमें भली प्रकार समझ लेना चाहिये।

---

*"If we are considering something as an organized group, it is an association; if as a form of procedure, it is an institution. Association denotes membership; institution denotes a mode or means of service." MacIver and Page, 'Society,' p. 16.

दैनिक भाषा में समाज का अर्थ

साधारणतया 'समाज' शब्द से व्यक्तियों के समूह को समझा जाता है। अधिकांश सामाजिक दार्शनिकों ने भी इसका प्रयोग इसी अर्थ में किया है। आज भी समाजशास्त्रियों के अतिरिक्त अन्य विद्वान इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में करते हैं। इस अर्थ में प्रयोग करने से इस शब्द का कोई भी निश्चित अर्थ उस समय तक स्पष्ट नहीं होता जब तक कि किसी विशेषण का प्रयोग न किया जाय। 'समाज' शब्द का अर्थ हम किसी भी समूह से ले सकते हैं परन्तु जब हम भारतीय समाज, राजनैतिक समाज, मुस्लिम समाज, मानव समाज इत्यादि शब्दों का प्रयोग करते हैं तो समाज शब्द का अर्थ स्पष्ट हो जाता है कि समाज इन विशिष्ट व्यक्तियों का समूह है। इतना होने पर भी वास्तविक अर्थ स्पष्ट नहीं होता। कोई समूह केवल व्यक्तियों का झुण्डमात्र नहीं होता। समाजशास्त्र में समूह शब्द का भी एक विशिष्ट अर्थ होता है।*

'समाज' शब्द को हम दो रूप से समझाने का प्रयत्न करेंगे—प्रथम समाज का सामान्य स्वरूप (General form of society) और द्वितीय समाज का विशिष्ट स्वरूप (Particular form of society)। आगे चलकर हम देखेंगे कि 'समाज' और 'एक समाज' या 'विशेषणयुक्त समाज' के अर्थों में महान अन्तर होता है।

कुछ अन्य महत्वपूर्ण सहायक शब्द

समाज के अर्थ को समझने के पूर्व हमें कुछ अन्य शब्दों को भी समझना पड़ेगा।

सामाजिक (Social)

'सामाजिक' शब्द से हमारा अभिप्राय उन व्यक्तियों से होता है जो कि समूह में अधिक व्यक्तियों से मिलते जुलते हैं, परन्तु इस अर्थ में प्रयोग उचित नहीं है। जो व्यक्ति समूह के अन्य व्यक्तियों से अधिक मिलता जुलता है उसे मिलनसार (Sociable) कहते हैं और जो अधिक मिलता जुलता नहीं है उसे अमिलनसार (Unsociable) कहते हैं।

'सामाजिक' शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयोग होता है। अरस्तू ने लिखा है, "मनुष्य एक सामाजिक पशु है।" 'सामाजिक' शब्द का अर्थ है अपने समूह के

---

* विस्तार में पढ़ने के लिए भाग २ का अध्याय २ पढ़िए।

प्रति जगरूकता (Consciousness)। गिडिंग्स ने इसी जागरूकता को जाति के प्रति जागरूकता (Consciousness of kind) कह कर सम्बोधित किया है। जो व्यक्ति अपने समाज के प्रति जागरूक रहते हैं अर्थात् उसके सम्बन्धों को सुलभ एवं सरल बनाते हैं और उसके हितों की रक्षा करते हैं, उन्हें हम सामाजिक (Social) व्यक्ति कहते हैं। जो व्यक्ति समाज के हितों की ओर जागरूक नहीं होते उन्हें असामाजिक (Unsocial) व्यक्ति कहते हैं। जो व्यक्ति समाज के सम्बन्धों को सुलभ एवं सरल बनाने के स्थान पर विध्वंस करने की चेष्टा करते हैं एवं समाज के हितों को हानि पहुँचाते हैं उन्हें समाज-विरोधी (Anti-social) व्यक्ति कहते हैं।

इसको एक उदाहरण के द्वारा भली प्रकार समझाया जा सकता है। एक डाकू लोगों से बड़े प्रेम से मिलता है। उसका काम लोगों को लूटना और सामाजिक नियमों को तोड़ना है। एक वैज्ञानिक मानव हित के लिए अपनी अनुसन्धानशाला में दिन और रात व्यस्त रहता है और किसी से नहीं मिलता। डाकू मिलनसार (Sociable) अवश्य है परन्तु समाज विरोधी, वैज्ञानिक सामाजिक (Social) है परन्तु अमिलनसार (Unsociable)।

सामाजिक सम्बन्ध (Social Relation)

सम्बन्ध (Relation) का अभिप्राय है दो वस्तुओं की स्थिति। यह स्थिति भौतिक अर्थ में होती है। सामाजिक सम्बन्ध का अभिप्राय जागरूकता की स्थिति से है। इसको स्पष्ट रूप से समझने के लिए हमें भौतिक एवं सामाजिक सम्बन्ध में अन्तर समझना पड़ेगा। एक अलमारी है, उसमें पुस्तकें कॉपियाँ एवं अन्य वस्तुएं रखी हुई हैं। इनमें भौतिक सम्बन्ध स्थापित है अर्थात् अलमारी का पुस्तकों, कॉपियों एवं अन्य वस्तुओं से भौतिक सम्बन्ध है। एक कतार में दस मूर्तियां रख दी गई हैं और अन्त में एक बिजली का बल्ब इन मूर्तियों पर अपना प्रकाश डाल रहा है। इन मूर्तियों में आपस में और मूर्तियों एवं बल्ब में एक विशिष्ट प्रकार का सम्बन्ध स्थापित है परन्तु इस सम्बन्ध की प्रकृति भौतिक है। भौतिक सम्बन्ध में सम्बन्ध अवश्य पाया जाता है परन्तु वस्तुओं में एक दूसरे के प्रति जागरूकता नहीं रहती।

मानसिक (Psychical) सम्बन्ध : सामाजिक सम्बन्ध का प्रमुख तत्व

भौतिक सम्बन्ध के विपरीत सामाजिक सम्बन्ध में मानसिक सम्बन्ध का पाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। भौतिक सम्बन्ध में वस्तुओं को एक दूसरे का

ज्ञान नहीं होता परन्तु सामाजिक सम्बन्ध में एक दूसरे का ज्ञान होना परम आवश्यक होता है। सामाजिक सम्बन्ध का यही तत्व मानसिक सम्बन्ध कहलाता है। भौतिक सम्बन्ध कभी भी एक दूसरे की जागरूकता के द्वारा निश्चित नहीं होते। सामाजिक सम्बन्ध कभी इस जागरूकता के अभाव में हो ही नहीं सकता। जो सम्बन्ध एक दूसरे की जागरूकता के आधार पर निश्चित होते हैं, उन्हें हम सामाजिक सम्बन्ध कहते हैं। पिता और पुत्र का सम्बन्ध प्रेमी और प्रेमिका का सम्बन्ध, स्वामी और दास का सम्बन्ध, उम्मीदवार और मतदाता का सम्बन्ध, ये सब ही सामाजिक सम्बन्ध हैं क्योंकि इनमें एक दूसरे के प्रति जागरूकता पाई जाती है। इन्हीं सामाजिक सम्बन्धों को हम आर्थिक सम्बन्ध, राजनैतिक सम्बन्ध, व्यक्तिगत सम्बन्ध, प्रेमपूर्ण सम्बन्ध, अवैयक्तिक सम्बन्ध, द्वेषपूर्ण सम्बन्ध इत्यादि कहते हैं, परन्तु यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इन सब में एक दूसरे के प्रति जागरूकता पाई जाती है। यह आवश्यक नहीं है कि सामाजिक सम्बन्ध सहयोगी ही हों, वे द्वेष एवं ईर्ष्या से पूर्ण भी हो सकते हैं। दो सेनाएं आपस में युद्ध के लिए तत्पर हैं, उनके सम्बन्ध द्वेष एवं घृणा से परिपूर्ण हैं, परन्तु वे एक दूसरे के प्रति अत्यन्त जागरूक है। इस जागरूकता के होने के कारण ये सम्बन्ध सामाजिक कहलायेंगे। इसी कारण से समाजशास्त्री दोनों ही प्रकार के सम्बन्धों एवं दशाओं का अध्ययन करते हैं जो मानव समाज को एकसूत्र में बांधती अथवा पृथक् करती हैं।

कुछ समाजशास्त्रियों ने इस जागरूकता की दशा को सामाजिक सम्बन्ध के लिए आवश्यक नहीं माना है। उनमें मॉरिस जिन्सवर्ग* प्रमुख है। आपने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि कभी कभी मनुष्य अनेक सम्बन्धों में अजागरूक रहता है। इसको उन्होंने इस उदाहरण द्वारा समझाने की चेष्टा की है कि आर्थिक जगत में मनुष्यों के जीवन पर संसार के बाजार के सम्बन्धों के परिवर्तनों का प्रभाव पड़ता रहता है जिसका प्रभावित व्यक्तियों को कोई ज्ञान नहीं होता। उन कारणों का विश्लेषण करने के लिए अत्याधिक खोज की आवश्यकता पड़ती है जो साधारण व्यक्तियों की शक्ति के बाहर होती है। गिन्सबर्ग ने लिखा है कि हमें मनुष्य मनुष्य के बीच समस्त सम्बन्धों को समझना चाहिये, चाहे वे प्रत्यक्ष हों या अप्रत्यक्ष, संगठित हों या असंगठित, जागरूक हों या अजागरूक,

---

*See Morris Ginsberg, 'Sociology', Oxford University Press, H. U. Library, Reprinted 1955, p. 39, 40.

सहयोगी हों या द्वेषपूर्ण। गिन्सबर्ग ने उचित लिखा है परन्तु मनुष्य मनुष्य का सम्बन्ध अजागरूकता की अवस्था में हो ही नहीं सकता। वह भौतिक वस्तुओं के समान व्यवहार नहीं कर सकता। यह हो सकता है कि वह संसार के बाजार की गति विधि को न समझ सके, परन्तु इतनी जागरूकता उसमें सदैव रहती है कि कहीं न कहीं परिवर्तन हो रहा है। जिसका प्रभाव उसके जीवन पर पड़ रहा है। अतः जागरूकता की मानसिक अवस्था सामाजिक सम्बन्ध का एक प्रमुख तत्व है। जहाँ जीवन है, वहाँ जागरूकता का पाया जाना निश्चित है। जहाँ जागरूकता पाई जायेगी वहाँ सामाजिकता भी पाई जायेगी, और जहाँ सामाजिकता पाई जायेगी वहां समाज भी पाया जायेगा। अतः जहां जीवन पाया जाता है वहाँ समाज का पाया जाना निश्चित है।

समाज की परिभाषा (Concept of Society)

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। सामाजिक सम्बन्ध अमूर्त हैं। सामाजिक सम्बन्धों को न तो कोई देख सकता है, न सुन सकता है और न छू सकता है, केवल अनुभव कर सकता है। इसलिए समाज भी अमूर्त (Abstract) है।

गिडिंग्स ने समाज की परिभाषा इस प्रकार की है। "समाज स्वयं एक संघ है, एक संगठन है, औपचारिक सम्बन्धों का योग है जिसमें सहयोगी व्यक्ति परस्पर आबद्ध हैं।"*

मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "समाज व्यवहारों एवं प्रक्रियाओं की, अधिकार एवं पारस्परिक सहयोग की, अनेक समूहों और भागों की, मानव व्यवहार के नियंत्रणों एवं स्वाधीनताओं की व्यवस्था है।"† रयूटर लिखते हैं, "(समाज) एक अमूर्त शब्द है जो कि एक समूह के दो अथवा अधिक सदस्यों

---

*"Society is the union, itself, the organisation, the sum of formal relations, in which associating individuals are bound together." Giddings, F. H. 'Principles of Sociology'.

†"Society is a system of usages and procedures, of authority and mutual aid, of many groupings and divisions, of controls of human behaviour and of liberties." Maciver, R. M. and Page, C. H. 'Society. An Introductory Analysis,' Macmillan and Co. Ltd., London (1952), P. 5

के बीच स्थिति पारस्परिक सम्बन्धों की जटिलता का बोध कराता है।"† कूले ने समाज की परिभाषा इन शब्दों में की है, "समाज रीतियों या प्रक्रियाओं का जटिल ढांचा है जिनमें से प्रत्येक जीवित है और जो एक दूसरे के प्रभाव के कारण बढ़ती रहती है एवं पूर्ण अस्तित्व में इस प्रकार की एक रूपता पाई जाती है कि जो कुछ एक भाग में होता है, वह शेष पर प्रभाव डालता है।"¶ मैकाइवर ने और स्पष्ट करते हुए लिखा है, "हम 'समाज' शब्द का अत्यधिक विस्तृत अर्थ में प्रयोग करेंगे कि समाज प्रत्येक प्रकार एवं हर अंश के सम्बन्धों का समावेश करता है जो कि मनुष्यों द्वारा किसी दूसरे सामाजिक प्राणी से या परस्पर सम्बन्ध स्थापित किए जाते हैं।.....'समाज' शब्द जब विशेषणरहित प्रयोग किया जाता है तो उसका अभिप्राय सामाजिक सम्बन्धों की सम्पूर्ण व्यवस्था से होता है ("§ पारसन्स ने लिखा है, "समाज उन मानव सम्बन्धों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो क्रियाओं के करने से उत्पन्न हुए हैं और वे कार्य साधन व साध्य के सम्बन्धों के रूप में किये गये हों, चाहे वे यथार्थ हों या चिन्हित)"× ओडम ने समाज की परिभाषा करते हुए लिखा है, "दूसरे दृष्टिकोण से समाज को, मानव व्यवहार एवं उसी के परिणाम

†"An abstract term that connotes the complex of interrelations that exist between and among the members of the group, ..." Reuter, E. B. 'Handbook of Sociology', The Dryden Press, New York (1941), P. 157.

¶ Society is a complex of forms or processes each of which is living and growing by interaction with the others, the whole being so unified that what takes place in one part affects all the rest." Cooley C. H. 'The social Proess', Charles Scribner's sons, New York (1918) P. 28.

§"Society we shall use in the very widest sense, to include every kind and degree of relationship entered into by men—and any other social creatures—with one another..... Society, when used without qualification, means the whole system of social relationships." MacIver, R. M. 'The Elements of Social Science,' Methuen & Co. Ltd., London (1952) p. 7.

×"Society may be defind as the total complex of human relationships in so far as they grow out of action in terms of means-end relationship, intrinsic or symbolic." Talcot Parsons, 'Encyclopaedia of Social Sciences', Vol. XIV, P. 231.

स्वरूप उत्पन्न सम्बन्धों की समस्याओं और सामन्जस्यों से, चित्रित किया जा सकता है।"§

समाज अमूर्त है (Society is Abstract)

समाज अमूर्त है क्योंकि वह मनुष्य के व्यवहारों का योग, सामाजिक सम्बन्धों का, रीति रिवाजों एवं नियमों की सम्पूर्ण व्यवस्था है। कुछ समाज-शास्त्रियों ने समाज की परिभाषा करते हुए मनुष्यों को भी समाज में सम्मिलित कर लिया है। उनके अनुसार समाज का एक समूह भी है। कुछ ऐसे समाज-शास्त्रियों द्वारा की गई परिभाषाओं को अवतरित करना अनुचित न होगा। गिलिन ने लिखा है, "एक समाज सबसे अधिक तुलनात्मक दृष्टि से स्थायी समूह है जो कि सामान्य स्वार्थ, सामान्य भू भाग, सामान्य प्रकार का रहन सहन और सामान्य पारस्परिक सहयोग या अपनत्व की भावना रखता है, जिसके आधार पर वे अपने को बाहर वालों से पृथक् करते हैं।"* हेनकीन्स (Hankins) लिखता है, "हम अपने अभिप्राय के लिए समाज की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं कि वह पुरुषों, स्त्रियों एवं बालकों का कोई स्थायी या अविराम समूह है जो कि अपने सांस्कृतिक स्तर पर स्वतंत्र रूप से प्रजाति की उत्पत्ति एवं उसके पोषण की प्रक्रियाओं का प्रबन्ध करने में समर्थ होता है।"+

---

§ "In another aspect, society may be visualized as the behaviour of human beings and the consequent problems of relationships and adjustments that arise." Odum, H. W. 'Understanding Society', The Macmillan Co. New York (1947) p. 9.

* "A society is "the largest relatively permanent group who share common interest, common territory, a common mode of life, and a common 'esprit de corps' or 'belongingness' whereby they distinguish themselves from outsides." Gillin, J. 'The Ways of Men,' Appleton-Century-Crofts, New York (1948) p. 340.

+ "We may for our purposes here define a society as any permanent or continuing grouping of men, women and children, able to carry on independently the processes of racial perpetuation and maintenance, on their own cultural level." Hankins, Frank H. 'An Introduction to the Study of Society," The Macmillan Co., New York (1928), p. 444.

समाज व्यक्तियों का एक समूह नहीं है
(Society is not group of persons)

जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं कि समाज अमूर्त है और सामजिक सम्बन्धों का जाल है न कि व्यक्तियों का एक समूह। राइट (Wright) ने लिखा है, "यह (समाज) व्यक्तियों का एक समूह नहीं है। यह समूह के सदस्यों के बीच स्थापित सम्बन्धों की व्यवस्था है।"† राइट (Wright) ने और भी अधिक स्पष्ट शब्दों में लिखा है, "यद्यपि समाज एक वास्तविक वस्तुहै, वह सार रूप में एक अवस्था या दशा एवं एक सम्बन्ध है और इसीलिए वह अनिवार्य रूप से एक अमूर्त रूप है।"§ लेपियर और फ्रान्सवर्थ ने इसी प्रकार का विचार इन शब्दों में प्रकट किया है, "वह (समाज) व्यक्ति नहीं बल्कि उस प्रकार का प्रतिमान है जिसे हम समाज कहते हैं।"¶ रयटर ने लिखा है, "जिस प्रकार जीवन एक वस्तु नहीं है बल्कि जीवित रहने की एक प्रक्रिया है, उसी प्रकार समाज एक वस्तु नहीं तथा सम्बन्ध स्थापित करने की एक प्रक्रिया है।"*

इस प्रकार स्पष्ट है कि समाज व्यक्तियों का समूह नहीं है। आगे चलकर देखेंगे कि व्यक्तियों के समूह के लिए समाजशास्त्र में अनेक दूसरे शब्दों का प्रयोग होता है।

समाज और एक समाज में अन्तर
(Difference between Society and a society)

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है एवं अमूर्त हैं। उसे सीमित नहीं किया जा सकता। यह समस्त मानव व्यवहारों का बोध कराता है। इस

---

† "It is not a group of people; it is the system of relationships that exists between the individuals of the group." Wright, F. J. 'Elements of Sociology.'

§ "Though Society is a real thing, it means in essence a state or condition, a relationship and is therefore necessarily an abstraction." Wright, 'Elements of Sociology'.

¶ "It is that pattern, not the people, which we term 'Society'." Lapiere, R. T. and Fransworth, P. R. 'Social Psychology' McGraw-Hill Book Co., New York (1936), p. 55.

* "Just as life is not a thing but a process of living, so Society is not a thing but a process of associating." Reuter, E. B. 'Hand book of sociology'. The Dryden Prees (New York), p. 19.

दृष्टिकोण से उसका बड़ा व्यापक स्वरूप है। उसका व्यक्तियों के सम्बन्धों से सम्बन्ध है न कि व्यक्तियों से।

एक समाज (A society) का अभिप्राय व्यक्तियों के समूह से लिया जा सकता है। र्यूटर ने स्पष्ट रूप से लिखा है, "एक समाज, समाज से बिल्कुल भिन्न, एक ऐसा संगठन है जिसके द्वारा लोग अपना सामान्य जीवन व्यतीत करते हैं।"§ गिन्सबर्ग (Ginsberg) ने एक समाज की परिभाषा इन शब्दों में की है, "एक समाज, कुछ सम्बन्धों या व्यवहारों के स्वरूपों द्वारा जुड़े हुए व्यक्तियों का संग्रह है, जो उन्हें दूसरे उन लोगों से पृथक् करता है जो कि इन सम्बन्धों में अन्तर्विष्ट नहीं हैं या उनसे व्यवहार में भिन्न है।"†

समाज के आवश्यक तत्व (Essential elements of society)

समाज को जन्म देने के लिए कुछ आवश्यक तत्व होते हैं। अब हम उन पर विचार करेंगे।

समानता (Likeness)

समानता अथवा एकरूपता (Similarity) अत्यन्त आवश्यक तत्व है। शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार की समानता आवश्यक है। समाज का निर्माण प्रमुखतया इसी तत्व पर आधारित है। यदि मानवमात्र का शारीरिक ढाँचा समान न होता तो उनकी आवश्यकताएँ भी एक न होतीं। जब आवश्यकताएँ ही समान न होतीं तो किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए मनुष्य एक दूसरे से मिलते जुलते एवं सहयोग देते? समान होने के कारण ही वे एक दूसरे से मिलते जुलते हैं। समानता के ही कारण उनके अन्दर इस प्रकार की चेतना उत्पन्न हुई है कि वे सब एक है। अपनत्व का आधार समानता है। समाज उन्हीं लोगों में उत्पन्न हो सकता है और जीवत रह सकता है जो कुछ

---

§ "A society, as distinct from Society, is any organisation by means of which people carry on a life." ibid, p. 157.

† "A society is a collection of individual united by certain relations or modes of behaviour which mark them off certain reiations or modes of behaviour which mark them off from others who do not enter into those relations or who differ from them in behaviour." Ginsberg, M. 'Sociology', Oxford University Press, London, p. 40.

न कुछ अंशों में एक दूसरे के समान होते हैं। गिडिंग्स ने इसी तत्व को जाति के प्रति जागरूकता (Consciousness of kind) कह कर पुकारा है।

प्राचीन काल में लोग अपने रक्त सम्बन्धियों को ही समान समझते थे, अतः छोटी २ वन्य जातियों का निर्माण हुआ। शनैः शनैः समानता की भावना राष्ट्र की सीमा तक पहुंची। यदि हम 'एक संसार' के सिद्धान्त को लाना चाहते हैं तो इसी मूलभूत सिद्धान्त के प्रति जागरूकता उत्पन्न करनी होगी। जब सब लोग संसार के समस्त मनुष्यों को समानता की दृष्टि से स्वीकार करने लगेंगे, तभी संसार की एकता संभव है।

भिन्नता या असमानता (Difference)

भिन्नता यद्यपि समानता के बिल्कुल विपरीत है फिर भी असमानता भी समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक है। असमानता स्वयं समाज का निर्माण नहीं कर सकती, फिर भी समाज के निर्माण में समानता के साथ बड़ा सहयोग दे सकती है। मान लीजिए सारे मनुष्य शत प्रतिशत समान होते और उनमें कोई भी अन्तर न पाया जाता तो सामाजिक सम्बन्धों का क्षेत्र अति सीमित होता। कल्पना कीजिए कि पुरुष ही पुरुष होते तो जीवन कितना नीरस और उत्साहहीन होता। स्त्रियों एवं पुरुषों की भिन्नता एक दूसरे के लिए कितनी रोचक है। वे एक दूसरे के पूरक हैं। जो भिन्नता की अवस्था लिंग भेद पाई जाती है, वह प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था में भी पाई जाती है। ये भिन्नताएं एक दूसरे की पूरक होती हैं। मनुष्य अपनी विशेष वे असमर्थता के कारण दूसरों पर आश्रित है और अपनी विशेष योग्यताओं के कारण दूसरों का आश्रय बनता है। एक दूसरे पर आश्रित रहना योग्यताओं की भिन्नता के कारण होता है। सामाजिक व्यवस्था में मनुष्य भिन्न २ कार्यों में लगे हुए हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जैसे जैसे श्रम का विभाजन बढ़ता जाता है वैसे वैसे सभ्यता का स्तर उच्च होता जाता है। मैकाइवर ने लिखा है, "यह (श्रम विभाजन) सभ्यता का घाताङ्क है।"*

समानता तथा भिन्नता दोनों की आवश्यकता

समाज के निर्माण में समानता और भिन्नता दोनों ही आवश्यक तत्व हैं। समानता के कारण अपनत्व एवं जागरूकता की भावना उत्पन्न होती है और

---

* "It is an index of civilization." MacIver, R. M. 'Elements of Social Science'. p. 6.

भिन्नता एक दूसरे को आपस में अश्रित बनाती है। भिन्नता मित्रता की नींव है।

समानता मुख्य है

समानता और भिन्नता में समाज के लिए समानता मुख्य है। भिन्नता समानता की केवल सहायकमात्र होती है। भिन्नता केवल वाह्य रूप से होती है परन्तु समानता एवं एकरूपता इसका आधार है। श्रम-विभाजन को ही लीजिए। इसका मौलिक सिद्धान्त सहकारिता है। एक साइकिल के विभिन्न भाग विभिन्न व्यक्तियों द्वारा बनाये जाते हैं परन्तु यह प्रक्रिया तब ही प्रारम्भ होती है जब कि यह पूर्व निश्चित होता है कि सब भाग मिलकर एक साइकिल का रूप धारण करेंगे। अतः समानता मुख्य है। प्रथम समानता तथा द्वितीय भिन्नता का क्रम रखना चाहिए। समाज में ऐसा ही होता है। प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था में मौलिक रूप से समानता पाई जाती है, चाहे उद्देश्य पूर्ति के लिए विभिन्न स्वरूप विकसित हो जाय।

अन्योन्याश्रितता (Interdependance)

अन्योन्याश्रितता भी समाज का मूल (root) है। समाज का जन्म इसी कारण हुआ है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये ही एक दूसरे से सम्बन्ध रखता है। उसकी प्राणीशास्त्रीय आवश्यकताएँ (Biologolical needs) उसे सामाजिक प्राणी बनने के लिये वाध्य करती हैं। मनुष्य अपनी शिशु अवस्था में अपने परिवार वालों पर बाल्य अवस्था में अपनें परिवार एवं मित्र मंडली पर निर्भर होता है, जैसे जैसे वह बड़ा होता जाता है, उसकी आवश्यकताएं बढ़ती जाती हैं और वह अनेक व्यक्तियों पर अधारित होता जाता है। मनुष्य अपने जीवन को अकेले रह कर नहीं बिता सकता। सम्भावतया मनुष्य का सबसे बड़ा दण्ड एकान्तवास ही है।

सहयोग (Cooperation)

सहयोग भी समाज निर्माण में एक प्रमुख तत्व है। पारस्परिक सम्बन्ध सहयोग की भावना पर आधारित हैं। सहयोग समाज का जीवन है।

समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं

समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि जहाँ भी जीवन है, वहाँ समाज पाया जाता है। समाज पशुओं में भी पाया जाता है। संसार में अनेक पशु समाज मिलते हैं। इनमें से चींटियों और मधु मक्खियों के सामाजिक

संगठन से हममें से प्रत्येक अवगत है। जीवन के निम्न स्तर पर जागरूकता अत्यधिक न्यून मात्रा में पाई जाती है, इसलिए उनमें समाज का निर्माण नहीं हो पाता, परन्तु उच्च स्तर के जीवन वाले पशुओं में निश्चित रूप से समाज पाया जाता है। सामाजिक संगठन की मात्रा उनकी प्राणी शास्त्रीय एवं शारीरिक विकास पर आधारित होती है।

समाज और समुदाय में अन्तर

समाज	समुदाय
(१) समाज सामाजिक बंधनों का जाल है।	(१) समुदाय मनुष्यों का एक निश्चित भू-भाग पर योग है।
(२) सम्बन्धों के अमूर्त होने के कारण उनका योग समाज भी अमूर्त है।	(२) समुदाय मूर्तिमान है, क्योंकि मनुष्य भौतिक है।
(३) समाज के लिये 'हम की भावना' होना आवश्यक नहीं है। समाज में सहयोग व असहयोगी दोनों ही प्रकार के सम्बन्ध हो सकते हैं।	(३) समुदाय के लिये 'हमकी भावना' का होना अत्यन्त आवश्यक है।
(४) समाज के लिये निश्चित भू-भाग की कोई आवश्यकता नहीं है।	(४) समुदाय के लिये निश्चित भू भाग एक परम आवश्यक तत्व है।

समिति और समाज में अन्तर

समिति (Association)	समाज (Society)
(१) समिति मनुष्यों का समूह है।	(१) समाज सामाजिक सम्बन्धों का योग है।
(२) समिति मूर्त है।	(२) समाज अमूर्त है।
(३) समिति की विचार पूर्वक स्थापना होती है।	(३) समाज का जन्म स्वतः होता है जहाँ मनुष्य वहाँ सामाजिक सम्बन्ध।
(४) समिति अस्थायी होती है।	(४) समाज तुलनात्मक दृष्टिकोण से स्थायी होता है।

(५) समिति सहयोग की भावना पर आधारित है।	(५) समाज के लिये सहयोग और असहयोग दोनों ही भावनाएं आवश्यक हैं।
(६) समिति संगठन पर आधारित है।	(६) समाज के लिये ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है।
(७) समिति चेतन भावनाओं एवं विचारों पर आधारित है।	(७) समाज के अन्तर्गत चेतन, अचेतन एवं अर्ध चेतन सभी सम्बन्ध आ जाते हैं।

प्रश्न

१. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए:—

(अ) समिति (राजपूताना १९५३)

(ब) रूढ़ियाँ (राजपूताना १९५५)

(स) जनरीतियाँ (आगरा १९५१, राजपूताना १९५७)

[Write short notes on the following:—
(a) Association (b) Mores (c) Folkways]

२. निम्न में स्पष्टतया अन्तर बताइए:—

(अ) समिति और संस्था

(ब) समिति और समुदाय

(स) संस्था और समुदाय

(आगरा १९५६)

[Distinguish clearly between the following:—
(a) Association and Institution;
(b) Association and Community;
(c) Institution and Community;]

३. "हम समितियों के सदस्य होते हैं, संस्थाओं के नहीं"—इस कथन की व्याख्या कीजिए और समितियों तथा संस्थाओं के अन्तर की विवेचना कीजिए। (राजपूताना १९५९, आगरा १९५७)

("We belong to associations, but not to institutions." Comment and discuss the differences between associations and institution.)

४. समाज रीतियों और कार्य प्रणालियों, प्रभुत्व एवं पारस्परिक सहयोग, अनेक समूहों और वर्गों की, मानव व्यवहार के नियंत्रणों और स्वतंत्रता की व्यवस्था है।" व्याख्या कीजिये। (आगरा १९५६)

("Society is a system of usage and procedures, of authority and mutual aid, of many groupings and divisions, of controls of human behaviour and of liberties" Explain.)

SELECTED READINGS

1. MacIver and Page, 'Society' chapter I and pages V, VI.
2. W. G. Sumner, 'Folkways'.
3. Green, A. W. 'Sociology' (1957 Ed.) chapter III.
4. Renter, E. B, 'Handbook of sociology' The Dryden Press, New York.
5. F. J. Wright, Elements of sociology' chapters I to III

तृतीय खंड

विषय-प्रवेश
(Introduction)

अध्याय ५ : समाजशास्त्र का अर्थ एवं विषय-क्षेत्र
(Meaning and scope of Sociology)

अध्याय ६ : समाजशास्त्र की प्रकृति
(Nature of Sociology)

अध्याय ७ : समाजशास्त्र तथा अन्य शास्त्र
(Sociology and other Sciences)

अध्याय ८ : समाजशास्त्र के अध्ययन की पद्धतियाँ
(Methods of study of Sociology)

अध्याय ५

समाजशास्त्र का अर्थ एवं विषय-क्षेत्र

(Meaning and scope of Sociology)

समाजशास्त्र के अर्थ एवं विषय-क्षेत्र के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से समाजशास्त्रियों के विचार एकमत नहीं हैं। उनमें अत्यधिक मतभेद पाया जाता है। फिर भी समाजशास्त्र ने एक दिशा की ओर प्रगति की है और उसी के आधार पर उसकी परिभाषा निर्धारित करना उपयुक्त होगा। प्रथम हम कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा की गई परिभाषाओं पर विचार करेंगे।

समाजशास्त्र का अर्थ

समाजशास्त्र की परिभाषा करते हुए कुछ लेखकों ने अस्पष्ट शब्दों का प्रयोग किया है। वार्ड (Ward) ने लिखा है, "समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है" ‡। गिडिंग्स (Giddings) ने समाजशास्त्र की परिभाषा पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "समाजशास्त्र समाज का वैज्ञानिक अध्ययन है"* । फेयरबैंक्स (Fairbanks) ने इन शब्दों में परिभाषा की है, "समाजशास्त्र (एक ऐसा) नाम है जिसका प्रयोग (कुछ अंशों में) किंचित पदार्थों के अपरिपक्व ढेर के लिए किया जाता है जिसमें समाज के ज्ञान का समावेश होता है" †। गिन्सबर्ग (Ginsberg) ने लिखा है, "समाजशास्त्र समाज के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है अर्थात् मानवीय पारस्परिक कार्यों और पारस्परिक

---

‡"Sociology is a science of society." L. F. Ward, 'Popular Science Monthly', June 1902, p. 113.

*"Sociology is the scientific study of society." F. H, Giddings, 'Inductive Sociology,' The Macmillan Co, New York (1901), p. 9.

†"Sociology is the name applied to a somewhat inchoate mass of materials which embodies our knowledge of society." Arthur Fairbanks, 'Introduction to Sociology.' p. 1.

सम्बन्धों का तानाबाना या जाल का अध्ययन है" । + ओडम (Odum) ने भी लिखा है, "समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो समाज का अध्ययन करता है" *। ब्लेकमार (Blackmar) और गिलिन (Gillin) ने इस प्रकार लिखा है, "समाजशास्त्र मानव-जाति के सम्बन्ध से उत्पन्न समाज की घटनाओं का अध्ययन करता है" ‡। वेनबर्ग और शाबत (Weinberg and Shabat) ने समाज-शास्त्र की परिभाषा इन शब्दों में की है, "समाजशास्त्र समाज के मौलिक ढांचे का और उन कारकों का, जो कि उस ढांचे को निर्बल या सशक्त बनाने में भाग लेते हैं, अध्ययन है" †।

इन समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्र को समाज का विज्ञान माना है। हो सकता है कि इन विद्वानों के बीच समाज के अर्थ पर मतभेद हो। समाज शब्द स्वयं एक बड़ा विवादास्पद विषय है। अतः समाजशास्त्र के विद्यार्थी के लिए समाजशास्त्र की भाषा में ये परिभाषाएं भले ही कुछ अर्थ रखती हों, परन्तु साधारण व्यक्ति को इन परिभाषाओं से कोई भी ज्ञान नहीं होता है। समाज शब्द का विश्लेषण हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं।

+ "Sociology may be defined as the study of society, that is, of the web or tissue of human interactions and inter-relations."

M. Ginsberg, in his article, 'The Problems & Methods of Sociology' in the book, 'The Study of Society' edited by Sir F. Bartlett, M. Ginsberg, E. J. Lindgren and R. H. Thouless, (Routledge & Kegan Paul London) Fourth Impression (1949), p. 436.

* "Sociology, then is the science which studies society." H. W. Odum, 'Understanding Society: The Principles of Dynamic Sociology,' The Macmillan Co. New York (1947),p.5.

‡ "Sociology treats of the phenomena of society arising from association of mankind." F. W. Blackmar and J. L. Gillin, 'Outlines of Sociology' p. 14.

† "Sociology is the study of the basic structure of society, and of the factors that play a part in weakening or strengthening that structure." Meyer Weinberg and Oscar E. Shabat, 'Society and Man,' Prentice-Hall, Inc. (1956), p. 14.

समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। इस आधार को लेते हुए कुछ समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्र की परिभाषा सामाजिक सम्बन्धों की भूमिका पर आधारित की है। मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "यहां पर इतना लिखना पर्याप्त होगा कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों के विषय में है (और) सम्बन्धों के जाल को हम समाज कहते हैं"।* मैकाइवर ने लिखा है, "समाजशास्त्र की विषय-सामग्री सामाजिक सम्बन्ध ही है"।† ग्रीन ने समाजशास्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है, "इस प्रकार समाजशास्त्र मनुष्य का उसके समस्त सामाजिक सम्बन्धों के रूप में, समन्वय करने वाला और सामान्य अनुमान निकालने वाला विज्ञान है"।§ एबल ने लिखा है, "समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों, उनके प्रकारों, उनके स्वरूपों, जो कोई भी उनको प्रभावित करता है और जिसको वे प्रभावित करते हैं, का वैज्ञानिक अध्ययन है।"× मेक्सवेबर ने लिखा है, "समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो सामाजिक कार्यों की व्याख्या करते हुए समझाने का प्रयत्न करता है"।+

---

*" It may suffice to state here that sociology is 'about' social relationships, the network of relationships we call society." R. M. MacIver and C. H. Page, 'Society: An Introductory Analysis,' Macmillan and Co., Ltd. (1952),p.v.

†" .....the subject matter of sociology is social relationships as such." R. M. MacIver, 'Society: A Textbook of sociology,' Farrar and Rinehart, New York (1937), p. vii.

§"Sociology is thus the synthesizing and generalizing science of man in all of his social relationships." Arnold. W. Green, 'Sociology: An Analysis of life in Modern Society,' McGraw-Hill Book. Co., (1952), p. 1.

×"Sociology is the scientific study of social relationships, their variety, their forms, whatever affects them and whatever they affect." T. Abel, 'Sociology: Its Nature and Scope' published in Social Forces, December 1932.

+"Sociology is the science which attempts the interpretive understanding of social action." Max Weber, 'Theory of Social and Economic Organisation' (a translation of pt. I of Max Weber's Writscraft and Gessellschaft) Hodge (1947), p. 80.

इन परिभाषाओं से हमें कुछ ज्ञान अवश्य होता है परन्तु 'सामाजिक' शब्द का प्रयोग कुछ जटिलता उत्पन्न कर देता है। 'सामाजिक' शब्द का विश्लेषण हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं।

कुछ समाजशास्त्रियों ने इसे परिभाषित करने के लिये कुछ मूर्तिमान विचारों को अन्तर्विष्ट किया है। बेनट (Bennet) और ट्यूमिन (Tumin) ने समाज की परिभाषा करते हुये सामाजिक जीवन पर प्रकाश डाला है। उन्होंने लिखा है, 'समाजशास्त्र सामाजिक जीवन के ढांचे और कार्यों का विज्ञान है।"* किंबाल यङ्ग ने लिखा है, "समाजशास्त्र समूह में मनुष्यों के व्यवहार का अध्ययन करता है"। † सारोकिन ने समाजशास्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है, "यह प्रथम तो सामाजिक घटनाओं के विभिन्न वर्गों के बीच सम्बन्धों और सह-सम्बन्धों (आर्थिक व धार्मिक, पारिवारिक और नैतिक, न्यायिक व आर्थिक, गतिशीलता और राजनैतिक घटनाओं और इसी प्रकार की अन्य सामाजिक घटनाओं के बीच सह-सम्बन्धों) का अध्ययन प्रतीत होता है, द्वितीय सामाजिक और असामाजिक (भौगोलिक, प्राणीशास्त्रीय इत्यादि) घटनाओं के बीच (सम्बन्ध), तृतीय सामाजिक घटनाओं के समस्त वर्गों के सामान्य लक्षणों का अध्ययन है जो सभी में सामान्य रूप से मिलते हैं"।+

¶ "Action is social in so far as, by virtue of the subjective meaning attached to it by the acting individual (or individuals) it takes account of the behaviour of others and is thereby orientated in its course." Max Weber, ibid, p. 80.

*"Sociology is the science of the structure and functions of social life." John W. Bennet and Melvin M. Tumin, 'Social Life: An Introductory General Sociology,' Alfred. A. knopf, New York (1949), p. 196.

†"Sociology deals with the behavior of men in groups." Kimball Young, 'An Introductory Sociology' Revised Edition (1939), American Book Co., p. XIII.

+"It seems to be a study, first, of the relationships and correlations between various classes of social phenomena, (correlations between economic and religious; family and moral; juridical and economic; mobility and political phenomena and so on); second, that between the social and the non-social (geographic, biological etc.) phenomena; third the study of the general characteristics common to all classes of social phenomena." Sorokin, P. 'Contemporary Sociological Theories,' Harper and Bros, New York and London (1928). p. 760-761.

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों या घटनाओं का अध्ययन है। कुछ समाजशास्त्रियों का मत है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों या घटनाओं का अध्ययन नहीं है बल्कि उनके स्वरूपों का अध्ययन (Study of forms of social relationships) है। इनके मत पर अधिक प्रकाश हम बाद में डालेंगे। यहां पर उनके अनुसार समाजशास्त्र की परिभाषा करना ही पर्याप्त होगा। जॉर्ज सिमल (Georg Simmel) ने लिखा है, "समाजशास्त्र मानवीय अन्तः सम्बन्धों के स्वरूपों का विज्ञान है।"* इस सम्प्रदाय के समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्र को सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन या सामाजिक प्रक्रियाओं (Social processes) का अध्ययन माना है।

समाजशास्त्र का विषय-क्षेत्र
(Scope of Sociology)

किसी भी विज्ञान का विषय-क्षेत्र निर्धारित करना बड़ा कठिन होता है। इसी कठिनाई का अनुभव समाजशास्त्र में भी होता है। समाजशास्त्र का विषय-क्षेत्र दो सम्प्रदायों के अनुसार बिल्कुल विभिन्न है। एक सम्प्रदाय का मत है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का सामान्य अध्ययन (General study) है और दूसर सम्प्रदाय का मत है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों (Study of forms) का अध्ययन है।

(१) यथा रूपेण सम्प्रदाय (Formal School) या विशेष विज्ञान (Special Science)

सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन करना ही समाजशास्त्र का विषय-क्षेत्र है। यथा रूपेण सम्प्रदाय (Formal School) इसी दृढ़ मत का है।

इस सम्प्रदाय के समाजशास्त्रियों का यह मत है कि समाजशास्त्र को एक विशिष्ट विज्ञान होना चाहिये। जिस प्रकार अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, आचार-शास्त्र, मानवशास्त्र इत्यादि विशिष्ट विज्ञान (Special Sciences) हैं उसी प्रकार समाजशास्त्र को भी होना चाहिये। इनका मत है कि समाज का

---

*"Sociology is the science of the forms of human inter-relations." Georg Simmel. His original works are in German language. In English, read N. J. Spykman, 'The Social Theory of Georg Simmel.'

अध्ययन विभिन्न सामाजिक विज्ञानों द्वारा किया जाता है। समाजशास्त्र के लिये कोई भी क्षेत्र नहीं बचा है। लोग समाजशास्त्र के अन्तर्गत किसी भी वस्तु का अध्ययन प्रारम्भ कर देते हैं। यह प्रवृत्ति इनके अनुसार उचित नहीं है। वे समाजशास्त्र को एक अव्यवस्थित विज्ञान नहीं बनाना चाहते। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने यह विचार प्रकट किया कि समाजशास्त्र को सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों (Forms of Social Relationships) का अध्ययन करना चाहिये, क्योंकि इनका अध्ययन कोई भी विशिष्ट विज्ञान नहीं करता है।

स्वरूप और अन्तरवस्तु (Form and Content)

इस समुदाय के समाजशास्त्रियों ने स्वरूप (Form) तथा अन्तरवस्तु (Content) में भेद किया है। उदाहरण के लिये बोतल का एक प्रकार (From) है। बोतल का आकार या स्वरूप एक निश्चित प्रकार का होता है। इसे हम नाप सकते हैं। रेखागणित (Geometry) इसी प्रकार के स्वरूपों का अध्ययन करती है।

एक बोतल शीशे, टीन या प्लास्टिक की बनी हुई हो सकती है परन्तु इन विभिन्न तत्वों का प्रभाव बोतल के स्वरूप पर कुछ भी नहीं पड़ता है। इसी प्रकार एक बोतल के स्वरूप पर उनमें भरी हुई अन्तरवस्तु (Content) का भी कोई प्रभाव नहीं होता। एक बोतल के अन्दर मदिरा भरी हो या विष, अमृत, शरबत या अन्य कोई वस्तु, पर बोतल का स्वरूप वही रहता है। इस प्रकार हमने देखा कि स्वरूप और अन्तरवस्तु दो विभिन्न वस्तुयें हैं।

सामाजिक सम्बन्धों के भी स्वरूप और अन्तरवस्तु होती है, ऐसा यथा-रूपेण सम्प्रदाय का मत है। उदाहरण के लिये (Co-operation) के सामाजिक सम्बन्ध को लीजिये। सहयोग सामाजिक सम्बन्ध का एक स्वरूप है। यह स्वरूप विभिन्न अन्तरवस्तुओं से भरा जा सकता है। परिवार, आर्थिक समिति, फैक्ट्री, राजनैतिक दल और फुटबॉल की टीम इन सब में ही हम सहयोग के सामाजिक सम्बन्ध को पाते हैं। इन अन्तरवस्तुओं का अध्ययन न करके हमें केवल सामाजिक सम्बन्ध के स्वरूप का अध्ययन करना चाहिये।

यथा रूपेण सम्प्रदाय के प्रमुख विद्वान—

इस सम्प्रदाय को प्रमुख रूप से मानने वाले समाजशास्त्री निम्न हैं—

टॉनीज (Tonnies), जॉर्ज सिमल (Georg Simmel), स्टेम्लर (Stammler), रिचर्ड (Richard), वानविजे (Von Wiese),

वीरकान्त (Vierkandt), रॉस (Ross), पार्क (Park), और बरगस (Burgess) । अब हम इनमें से कुछ समाजशास्त्रियों पर प्रकाश डालेंगे ।

जॉर्ज सिमल (Georg Simmel)

समाजशास्त्र को वास्तविक रूप में एक विशिष्ट विज्ञान बनने के लिये अपने अध्ययन के लिये एक ऐसे क्षेत्र को चुनना होगा जिसका अध्ययन अन्य सामाजिक विज्ञान नहीं करते हों । अन्तरवस्तु (Content) के दृष्टिकोण से सामाजिक घटनाओं के सब क्षेत्रों का अध्ययन किसी न किसी सामाजिक विज्ञान द्वारा किया जाता है अतः जहां तक अन्तरवस्तु का सम्बन्ध है समाजशास्त्र के लिये कुछ भी नहीं बचता है । अन्य विज्ञानों द्वारा एक क्षेत्र का अध्ययन नहीं किया जाता है । वह क्षेत्र ही समाजशास्त्र के अध्ययन का क्षेत्र हो सकता है । वह समाजीकरण के स्वरूप (Forms of Socialization) या मानवीय सम्बन्धों के स्वरूपों (Forms of Human relationships) या सामाजिक प्रक्रियाओं (Social Processes) का क्षेत्र है ।

सिमल के अनुसार समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से वही सम्बन्ध है जो रेखागणित (Geometry) का प्राकृतिक विज्ञानों के साथ है । रेखागणित भौतिक वस्तुओं के स्थान-सम्बन्धी (Spatial) स्वरूपों का अध्ययन करती है न कि उनके वास्तविक अन्तरवस्तुओं का । समाजशास्त्र भी इसी प्रकार सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है । स्वरूप और अन्तरवस्तु विभिन्न वस्तुयें हैं । अतः ये दोनों विभिन्न विज्ञानों द्वारा अध्ययन किये जाते हैं ।

सिमल के अनुसार समाजशास्त्र एक विशिष्ट सामाजिक विज्ञान है और जिसका उद्देश्य मानवी सम्बन्धों के स्वरूपों, समाजीकरण के स्वरूपों या सामाजिक सङ्गठन के स्वरूपों का वर्णन, वर्गीकरण, विश्लेषण एवं व्याख्या करना है, न कि उन स्वरूपों की अन्तरवस्तुओं का, जिनका अध्ययन इस समय अन्य विज्ञान करते हैं ।

सिमल ने सामाजिक सम्बन्धों का वर्णन किया है जैसे प्रतिस्पर्द्धा (Competition), प्रभुत्व (Domination), अनुकरण (Imitation), श्रमविभाजन (Division of labour), आधीनता (Subordination) इत्यादि ।

टॉनीज (Tonnies)

टॉनीज ने भी शुद्ध समाजशास्त्र (Pure Sociology) के लिये आवाज उठाई है। उसने समाज और समुदाय में सम्बन्धों के स्वरूपों के आधार पर अन्तर किया है।

वान विजे (Von Wiese)

वान विजे ने सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों को विभिन्न भागों में वर्गीकृत किया है। उसने सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों को ६५० प्रकारों में विभाजित किया है। उसने मनुष्य और मनुष्य के बीच के सम्बन्धों को समूह और समूह के बीच के सम्बन्धों से विभिन्न बतलाया है। वान विजे द्वारा किया गया वर्गीकरण बड़ा ही लाभदायक है।

वीरकान्त (Vierkandt)

वीरकान्त का भी यही मत है कि समाजशास्त्र की उन मनः सम्बन्धी सम्बन्धों का अध्ययन करना चाहिये क्योंकि समाज में मनुष्यों को एक दूसरे से बांधते हैं। विशिष्ट समाजों का अध्ययन समाजशास्त्र के क्षेत्र के बाहर है। वीरकान्त के अनुसार समाजशास्त्र को सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करना चाहिये।

यथा रूपेण सम्प्रदाय की आलोचना

(अ) इस सम्प्रदाय के विद्वानों का यह दावा कि सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन समाजशास्त्र के अतिरिक्त कोई भी अन्य विज्ञान नहीं करता, बिल्कुल निराधार है। तथ्य इसकी पुष्टि नहीं करते हैं। इनका अध्ययन अन्य विज्ञान समाजशास्त्र से कहीं अच्छी प्रकार करते हैं। उदाहरण के लिये विधि विज्ञान (Science of Law) को लीजिये। अन्तर्राष्ट्रीय विधि में संघर्ष (Conflict), युद्ध (War), विरोध (Opposition), समझौता (Agreement), प्रसंविदा (Contract) सम्पर्क (Contact), इत्यादि सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन बड़े ध्यान पूर्वक किया जाता है। इसी प्रकार दीवानी और दण्ड विधान में अनेक सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन किया जाता है। राजनैतिक विज्ञान में प्रभुत्व (Sovreignty), इत्यादि का विश्लेषण किया जाता है। अतः यह कहना निराधार है कि सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का अध्ययन अन्य सामाजिक विज्ञानों द्वारा नहीं किया जाता।

(ब) सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों एवं अन्तरवस्तु के बीच किया गया विभेद अस्पष्ट है। इन्हें पूर्ण रूप से कभी भी पृथक् नहीं किया जा सकता।

(स) सामाजिक स्वरूप अन्तरवस्तु से स्वतन्त्र हो ही नहीं सकता।

(द) सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों को रेखागणित के स्वरूपों के समान लम्बाई, चौड़ाई या स्थान सम्बन्धी आकार नहीं होता है। जब उनका आकार ही नहीं होता तो उनका रेखागणित की तरह किस प्रकार अध्ययन किया जा सकता है।

(य) एक बोतल है। इसमें कोई भी वस्तु भर दीजिये, बोतल के स्वरूप में कोई अन्तर न होगा, परन्तु सामाजिक सम्बन्ध के स्वरूपों के साथ ऐसा सम्भव नहीं है। सदस्यों (अन्तरवस्तु) के परिवर्तित होते ही सामाजिक सम्बन्धों का स्वरूप परिवर्तित हो जायेगा। सारोकिन ने उचित ही लिखा है, "हम एक गिलास को मदिरा, जल या शक्कर से बिना उसके स्वरूप को परिवर्तित किये हुये भर सकते हैं, परन्तु मैं एक सामाजिक संस्था के विषय में कल्पना भी नहीं कर सकता, कि उसका स्वरूप परिवर्तित न होगा जब कि उसके सदस्य (परिवर्तित) हों"। †

(र) मनुष्यों की संख्या में परिवर्तन ही समूह के स्वरूप को परिवर्तित कर देता है।

(ल) समाजीकरण के स्वरूपों और सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों में उन्होंने कोई भी अन्तर नहीं माना है, परन्तु ऐसा उचित नहीं है। सामाजिक सम्बन्ध के स्वरूपों में समाजीकरण तथा असमाजीकरण दोनों के ही स्वरूप सम्मिलित हैं।

(व) ये शुद्ध समाजशास्त्र निर्माण करने का स्वप्न देखते रहे हैं। इन्होंने सैकड़ों पुस्तकें इसी विषय पर लिख डाली कि समाजशास्त्र का निर्माण किस प्रकार किया जाय किस प्रकार शुद्ध एवं स्वतन्त्र विज्ञान हो। यह अच्छा होता कि उन्होंने युक्तियाँ बताने के स्थान पर अपनी कल्पना के अनुसार समाजशास्त्र

---

†"We may fill a glass with wine, water or sugar without changing its form; but I cannot conceive of a social institution whose 'form' would not change when its members (change)." Sorokin, P. 'Contemporary Sociological Theories', p. 500.

का निर्माण किया होता। यह वाद-विवाद उनकी विवशता का चिह्न है। वास्तविकता यह है कि कोई भी विज्ञान स्वतन्त्र नहीं है, उसे दूसरे विज्ञान से कुछ न कुछ लेना ही पड़ता है।

सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों या सामाजिक प्रक्रियाओं (Social Processes) का अध्ययन समाजशास्त्र द्वारा अवश्य किया जाना चाहिये, क्योंकि यह समाजशास्त्र का एक अङ्ग है परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि समाजशास्त्र को केवल इनका ही अध्ययन करना चाहिये। यदि हम यथा रूपेण सम्प्रदाय के अनुसार केवल सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों का ही अध्ययन करते, तो समाजशास्त्र एक नीरस एवं अनुपयोगी मृत विज्ञान के रूप में होता।

(२) सामान्य विज्ञान के रूप में (General Science)

हमने अभी उस सम्प्रदाय पर प्रकाश डाला था जो समाजशास्त्र को एक विशेष विज्ञान (Special Science) बनाना चाहता था। दूसरे सम्प्रदाय के अनुसार समाजशास्त्र समस्त विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों (Special Social Sciences) का समन्वय (Synthesis) है और सामान्य विज्ञान (General Science) के रूप में सामाजिक सम्बन्धों के सामान्य स्वरूपों एवं विभिन्न प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों के बीच स्थगित सम्बन्धों का अध्ययन करता है।

इनका भी यह मत है कि विशेषीकरण और श्रम-विभाजन अवश्य होना चाहिये। एक सामान्य सामाजिक विज्ञान (General Social Science) की अत्यन्त आवश्यकता है, जिसका कार्य यह होगा कि विभिन्न विशेष सामाजिक विज्ञानों के द्वारा प्राप्त परिणामों को एक दूसरे के संबंध में लाना और सामाजिक जीवन की उन सामान्य परिस्थितियों का अध्ययन करना जिन्हें उनकी अत्यधिक सामान्यता के कारण सामाजिक विशेषज्ञ अध्ययन नहीं करते। इस सामान्य सामाजिक विज्ञान का नाम उन्होंने समाजशास्त्र बताया है। इनका कहना है कि जब हम 'क' प्रकार की घटनाओं का अध्ययन करते हैं तो हमें 'क+१' प्रकार के विज्ञानों की आवश्यकता होती है। 'क' विशेष विज्ञान में से प्रत्येक विज्ञान एक विशिष्ट प्रकार की घटनाओं का अध्ययन करता है। 'क+१' विज्ञान उन सामान्य लक्षणों का अध्ययन करेगा जो कि सब 'क' प्रकार की घटनाओं के लिये सामान्य हैं। पौधों का अध्ययन वनस्पतिशास्त्र (Botany) और पशुओं का अध्ययन प्राणीविज्ञान (Zoology) करता है। तीसरा (२+१) विज्ञान उन लक्षणों का अध्ययन करता है जो इन दोनों में सामान्य हैं और इनके

बीच के संबंधों का भी अध्ययन करता है इसे सामान्य जीव विज्ञान (General Biology) कहते हैं। इसी प्रकार मान लीजिये सामाजिक घटनाओं को वर्गों में वर्गीकृत कर दिया जाय और प्रत्येक वर्ग का अध्ययन एक विशेष सामाजिक विज्ञान करे, तो इन विशेष विज्ञानों के अतिरिक्त एक विज्ञान की आवश्यकता होगी जो सामान्य लक्षणों एवं विभिन्न विज्ञानों के संबंधों का अध्ययन करे। +

दुर्खैम (Durkheim), हॉबहाउस (Hobhouse), सारोकिन (Sorokin) इत्यादि इसी मत के मानने वाले हैं।

समाजशास्त्र सामान्य विज्ञान तो है ही क्योंकि यह विभिन्न सामाजिक सम्बन्धों के वर्गों में सम्बन्ध स्थापित करता है और उन सामान्य लक्षणों का का अध्ययन करता है जो सब वर्गों के सामाजिक सम्बन्धों के लिये सामान्य हैं।

समाजशास्त्र एक विशेष विज्ञान (Special Science) भी है क्योंकि यह समाज की पूर्णता है। उसे विभिन्न भागों में बांट कर बिल्कुल पृथक् रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता। सम्पूर्ण समाज को एक मान कर ही अध्ययन करना पड़ता है। मोटवानी ने उचित लिखा है "अतः समाजशास्त्र पूर्ण जीवन को देखने की चेष्टा करता है और सम्पूर्ण इकाई को देखता है।" *

किसी भी विज्ञान का विषय-क्षेत्र उस विज्ञान के दृष्टिकोण द्वारा निश्चित होता है न कि समस्याओं द्वारा। समस्त सामाजिक विज्ञान समाज का ही अध्ययन करते हैं परन्तु प्रत्येक का दृष्टिकोण भिन्न होता है। अर्थशास्त्री समाज का अध्ययन आर्थिक दृष्टिकोण से करता है और वह इसके अन्तर्गत सम्पत्ति को उत्पत्ति एवं वितरण का विश्लेषण करता है। राजनीतिशास्त्री शक्ति और राज्य का अध्ययन करता है। इतिहासकार भूतकाल का जितना सुन्दर वृत्तान्त दे सकता है, देता है। सांस्कृतिक मानवशास्त्री मनुष्य की क्रियाओं एवं वस्तुओं का सम्पूर्ण रूप से अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र ही केवल सामाजिक सम्बन्धों या स्वयं समाज का अध्ययन करता है। इससे स्पष्ट है कि दृष्टिकोण ही एक विज्ञान को दूसरे विज्ञान से पृथक् करता हैं न कि विषय-सामग्री। मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा

+ See Sorokin 'Contemporary Sociological Theories', p. 761

* "Sociology thus seeks to see life full and see it whole." Motwani, K. 'Sociology: A comparative Outline,' New Book Co., Ltd. Bombay (1947), p. 50.

है, "एक दूसरे से जो पृथक् करती है वह निर्वाचित अभिरुचि है," † ग्रीन ने भी इसी विचार का समर्थन करते हुये लिखा है, "सामाजिक सम्बन्धों पर ध्यान का केन्द्रित होना समाजशास्त्र को एक पृथक् क्षेत्र बना देता है चाहे वह कुछ अन्य (विषयों) से कितना ही निकटतम सम्बन्धित क्यों न हो।" ‡ बेनेट और ट्यूमिन ने लिखा है, "कोई भी अन्य अनुशासन (विज्ञान) यह दावा नहीं करता कि उसका प्रारम्भिक तथ्य मनुष्यों का सामाजिक संग्रह है।" *

समाजशास्त्र पर यह आरोप लगाया जाता है कि वह विभिन्न विज्ञानों का सङ्कलन है। वास्तव में समाजशास्त्र विभिन्न विज्ञानों का सङ्कलनमात्र नहीं है। एक मकान विभिन्न वस्तुओं की सहायता से बनाया जाता है जैसे ईंटें, पत्थर, लकड़ी, सीमेंट, चूना, लोहा इत्यादि। मकान इन वस्तुओं का संकलनमात्र नहीं है बल्कि एक नवीन सृष्टि एवं रचना है। इञ्जीनियर अपनी बुद्धि के द्वारा इन विभिन्न वस्तुओं को एक नवीन वस्तु बना देता है और हमें सुख देने वाला गृह प्रदान करता है जो हमें सूर्य की तपन, वर्षा की बौछार एवं शीत ऋतु की ठण्डक से रक्षा करता है उसी प्रकार समाजशास्त्र सामाजिक जीवन को पूर्णता में अध्ययन करता है और एक गृह के समान समाज में मनुष्यों की सेवा करता है। मोटवानी ने लिखा है, "समाजशास्त्र, एक भवन के समान, सामाजिक जीवन के तथ्यों का सुव्यवस्थित पूर्ण समवन्य का सिद्धान्त और एक स्वतन्त्र विज्ञान जो कि विलीनीकरण का अन्तिम परिणाम होता है, दोनों ही है।" §

समाजशास्त्र की विषय-सामग्री (Subject matter of Sociology)

विभिन्न समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्र की विषय-सामग्री निर्धारित की है उनमें से कुछ पर हम प्रकाश डालेंगे:—

---

†"What distinguishes each from each is the selective interest". MacIver and Page, 'Society', p. v. ('A word about Sociology itself.')

‡" The focus of attention upon social relationships makes Sociology a distinctive field, however clearly allied to certain others it may be." Green. 'Sociology,' p. 1.

*" No other discipline states or claims that its primary datum is that of the social aggregation of men." Bennett and Tumin, 'Social Life,' p. xv.

§"Sociology, like an edifice, is both the principle of coordination of facts of social life into an organic whole and also an independent science, the end result of such integration." Motwani, K. 'Sociology,' p. 50

(१) जॉर्ज सिमल (Georg Simmel)

जॉर्ज सिमल तथा उनके अनुयायियों के अनुसार समाजशास्त्र की विषय-सामग्री, सामाजिक प्रक्रियायें (Social Processes) हैं।

(२) दुर्खेम (Durkheim)

दुर्खैम ने समाजशास्त्र की विषय सामग्री को निम्न तीन प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया है—

(अ) सामाजिक रचनाकार (Social Morphology)— इसके अन्तर्गत लोगों के जीवन के भौगोलिक आधार एवं इसके सामाजिक संगठन के प्रकारों से संबंध का अध्ययन है। जनसंख्या की समस्यायें एवं वितरण इत्यादि भी इसी के अन्तर्गत आते हैं।

(ब) सामाजिक दैहिकी (Social Physiology)— सामाजिक दैहिकी बड़ी ही जटिल है और विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा इसके विभिन्न भाग किये गये हैं। ये अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से होते हैं। उदाहरण के लिए धर्म का समाजशास्त्र (Sociology of Religion), विधि का समाजशास्त्र (Sociology of Law), परिवार का समाजशास्त्र (Sociology of Family), आर्थिक जीवन का समाजशास्त्र (Sociology of Economic Life) इत्यादि। ये सारे शास्त्र समाजशास्त्र के अंग है क्योंकि वे सामाजिक जीवन के विभिन्न अंगों का अध्ययन करते हैं। परिवार के समाजशास्त्र से हमारा अभिप्राय यह है कि परिवार का सम्पूर्ण समाज में क्या स्थान एवं महत्व है।

(स) सामान्य समाजशास्त्र (General Sociology)—सामान्य समाजशास्त्र सामान्य सामाजिक नियमों को निर्धारित करता है। दुर्खैम इस भाग को समाजशास्त्र का दार्शनिक अंग कहता है।

(३) गिन्सवर्ग* (Ginsberg)

गिन्सवर्ग ने समाजशास्त्र की विषय-सामग्री को चार प्रमुख भागों में बांटा है:—

---

*See Ginsberg's 'Sociology' or 'Studies in Sociology,' or his article 'The Problems and Methods of Sociology' in the book, 'The Study of Society' edited by Bartlett and others, pp. 436-437, Routledge and Kegan Paul Ltd. London.

(अ) सामाजिक रचनाकर (Social Morphology)—इसके अन्तर्गत (i) जन-संख्या की मात्रा एवं गुण का उस सीमा तक विश्लेषण होता है जहाँ तक कि वे सामाजिक संबंधों और सामाजिक समूहों के गुणों को प्रभावित करते हैं, (ii) सामाजिक ढांचे का अध्ययन या सामाजिक समूह और संस्थाओं के प्रमुख स्वरूपों का वर्णन एवं वर्गीकरण आता है।

(ब) सामाजिक नियंत्रण (Social Control)- इसके अन्तर्गत विधि, आचार, धर्म, फैशन, रूढ़ियां इत्यादि तथा अन्य नियंत्रण करने वाले कारकों का अध्ययन होता है।

(स) सामाजिक प्रक्रियायें (Social Processes)— इसके अन्तर्गत उन अन्तर सम्बन्धों का अध्ययन होता है जो मनुष्यों के बीच या समूहों के बीच पाये जाते हैं। उदाहरण के लिये सहयोग, संघर्ष, प्रभुत्व, अनुकरण, आधीनता, प्रतिस्पर्द्धा इत्यादि।+

(द) सामाजिक व्याधिकी (Social Pathology)—इसके अन्तर्गत सामाजिक अव्यवस्थाओं एवं विघटन एवं उनको सुधारने की पद्धतियों का अध्ययन होता है !

(४) मोटवानी * (Motwani)

मोटवानी ने लिखा है कि समाजशास्त्र उन सिद्धांतों की खोज करता है जिनके कारण सामाजिक जीवन के मौलिक तत्वों में सामंजस्य स्थापित है, द्वितीय सामाजिक संस्थाओं के विकास, प्रकृति, कार्य और अन्तर सम्बन्धों की परिभाषा करता है, तृतीय सामाजिक ढांचे के उन तत्वों की ओर इशारा करता है जो साम्यावस्था बनाये रखते हैं और उन तत्वों का अध्ययन करता है जो सामाजिक परिवर्तन की दिशा निर्धारित करते हैं, चतुर्थ वह सामाजिक विघटन के आह्वान को स्वीकार करते हुये उस योजना की क्रियात्मक विधि को प्रदान करता है जिसके द्वारा विघटन को समाप्त कर दिया जाता है और पंचम वह उन तत्वों एवं सामाजिक कारकों के समन्वय पर जोर देता है जिनके कारण व्यक्ति और समूह की प्रगति हो।

+ सामाजिक प्रक्रियाओं के विषय में अधिक जानकारी के लिये पुस्तक का खंड सप्तम पढ़िये !

* Motwani, 'Sociology'.

(५) रयूटर और हार्ट †(Reuter and Hart)

रयूटर और हार्ट के अनुसार समाजशास्त्र की विषय-सामग्री निम्न है:—

(अ) सामाजिक सम्पत्ति (Social Heritage)—समाजशास्त्र का सबसे प्रमुख कार्य सामाजिक सम्पत्ति की व्याख्या करना है।

(ब) व्यक्तित्व और उसका विकास (Personality and its development)—दूसरी आवश्यक अध्ययन की वस्तु मानव व्यक्तित्व एवं उसका विकास है।

(स) सामाजिक प्रक्रियायें (Social Processes)—सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करना समाजशास्त्र का मौलिक कार्य है। उन्होंने लिखा है, "जीव विज्ञान जीवन की प्रक्रियाओं का विश्लेषण करते हैं, मनोविज्ञान चेतन प्रक्रियाओं का और समाजशास्त्र सामाजिक प्रक्रियाओं का *।"

(६) सारोकिन + (Sorokin)

सारोकिन ने समाजशास्त्र की विषय-सामग्री निम्न बतायी है:—

(अ) सामाजिक घटनाओं के विभिन्न वर्गों में संबंध तथा सह-संबंधों का अध्ययन जैसे आर्थिक और धार्मिक, पारिवारिक और आचार-संबधी, राजनैतिक और आर्थिक इत्यादि।

(ब) सामाजिक और असामाजिक के बीच-संबंध जैसे भौगोलिक, प्राणीशास्त्रीय इत्यादि का सामाजिक घटनाओं पर प्रभाव।

(स) समस्त सामाजिक घटनाओं के सामान्य लक्षणों का अध्ययन।

इसी प्रकार कुछ अन्य समाजशास्त्रियों ने भी समाजशास्त्र की विषय-सामग्री की ओर इशारा किया है परन्तु इनमें से कोई भी समाजशास्त्र की सम्पूर्ण विषय-सामग्री की ओर इंगित नहीं करता है। समाजशास्त्र एक गतिशील विज्ञान है

---

† Reuter and Hart, 'Intorduction to Sociology,' pp. 3-6

*"The biological sciences undertake an analysis of the life processes; psychology, the conscious processes; and sociology, the social processes." Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology', McGraw-Hill Book Co. Inc., p. 6.

+Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories', pp. 760-761.

इसलिये उसे इन सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता है। स्प्रोट (Sprott) ने बड़े सुन्दर शब्दों में लिखा है, यह "अनिश्चित पदार्थ के बहुत बड़े ढेर को, कबूतरखाने की, तुलनात्मक दृष्टि से, सरल पद्धति में सीमित करने का साहसपूर्ण प्रयत्न है।"† इससे यह स्पष्ट है कि समाजशास्त्र की विषय-सामग्री इस प्रकार से निश्चित नहीं की जा सकती। प्रत्येक सामाजिक विज्ञान विकसित हो रहा है और नवीन क्षेत्रों में प्रवेश कर रहा है। किसी भी विज्ञान को एक परिभाषा के अन्तर्गत बांधा नहीं जा सकता क्योंकि वे अत्यधिक गतिशील एवं जीवनयुक्त हैं। समाजशास्त्र भी अन्य सामाजिक विज्ञानों की भांति विकसित हो रहा है। इसको निश्चित सीमाओं में बांधने का प्रयत्न करना, इसका गला घोंटना है। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि जिस विषय-सामग्री को भी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (Sociological point of view) से अध्ययन किया जाय वही समाजशास्त्र की विषय-सामग्री है।

---

†"A brave attempt to confine an enormous mass of slippery material into a relatively simple system of pigeonholes." Sprott W. J. H. 'Sociology', Hutchinson's University Library, London, p. 7.

अध्याय ६

समाजशास्त्र की प्रकृति

(Nature of Sociology)

आधुनिक युग विज्ञान का युग है। रहस्यपूर्ण जादू के युग से विश्वासपूर्ण धर्म के युग का विकास हुआ। विश्वासपूर्ण युग से तर्कसंगत विज्ञान के युग का पदार्पण हुआ। विज्ञान शब्द में अद्भुत चमत्कार है। आधुनिक मस्तिष्क विज्ञान की वेदी की पूजा करता है। आखिर यह विज्ञान है क्या ?

साधारणतया विज्ञान शब्द से लोग विशिष्ट प्रकार की विषय-सामग्री समझते है। इंजीनियरिंग (Engineering) और प्रौद्योगिकी (Technology) को भी विज्ञान का पर्यायवाची समझा जाता है। कुछ लोग विज्ञान उन वस्तुओं के ज्ञान को समझते हैं जिसे कृत्रिम प्रयोगशाला में प्राप्त किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि विज्ञान से लोग विषय-सामग्री ही समझते हैं, परन्तु यह दृष्टिकोण उचित नहीं है। विज्ञान का विषय-सामग्री से कोई सम्बन्ध नहीं है। कोई भी विषय-सामग्री विज्ञान हो सकती है यदि उसे वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा प्राप्त किया गया हो। बिसन्ज और बिसन्ज ने लिखा है, "वह पद्धति है न कि विषय-सामग्री, जो कि विज्ञान की कसौटी है।" § ग्रीन ने स्पष्ट रूप से लिखा है, "विज्ञान अनुसन्धान की एक पद्धति है।"* गिलिन और गिलिन ने भी इसी विचार का समर्थन इन शब्दों में किया है, "जिस क्षेत्र का हम अनुसन्धान करना चाहते हैं, उसकी ओर एक निश्चित प्रकार की पद्धति ही विज्ञान का

---

§"..... It is approach rather than content that is the test of science." Biesanz, J. and Biesanz, M. 'Modern Society; An Introduction to Social Science,' Prentice-Hall Inc., New York (1954), p. 3.

*"Science," is a way of investigation." Green, Sociology,' p. 2.

वास्तविक चिह्न है। † वेनबर्ग और शेबत ने लिखा है, "विज्ञान संसार की ओर देखने की एक निश्चित पद्धति है।" + चर्चमेन और एकॉफ ने लिखा है, "विज्ञान कार्यदक्ष अनुसन्धान है।" * व्हाइट ने लिखा है, "विज्ञान वैज्ञानीकरण है।" ×

भौतिकशास्त्र (Physics) पदार्थों के भौतिक अंगों का अध्ययन करता है। वनस्पतिशास्त्र पेड़ पौधों का अध्ययन करता है। प्राणीशास्त्र (Zoology) पशु जीवन का अध्ययन करता है। ऋतुशास्त्र (Meteorology) ऋतुओं का अध्ययन करता है। ये सब ही विज्ञान हैं। इनकी विषय-सामग्री भिन्न भिन्न है। फिर वह कौनसी वस्तु है जो इन्हें विज्ञान की इकाई के रूप में लाती है ? वह है अध्ययन की पद्धति-वैज्ञानिक पद्धति। कार्ल पियर्सन ने लिखा है, "समस्त विज्ञान की एकता केवल उसकी पद्धति में है न कि उसकी विषय-सामग्री में।" ¶

अध्ययन की पद्धति ही यह निश्चित करती है कि कोई ज्ञान कला है या विज्ञान। यदि अध्ययन करने में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया गया है तो इस अध्ययन से प्राप्त ज्ञान विज्ञान कहलाएगा। कार (Carr) ने लिखा है, "प्रत्येक विज्ञान संसार की ओर एक ढङ्ग, दृष्टिकोण, एक प्रमाणित एवं व्यवस्थित ज्ञान और खोज करने की पद्धति है।" §

---

†"The true sign of science is a certain type of approach toward the field which we wish to investigate." Gillan and Gillin, 'Cultural Sociology,' p. 7.

+"Science is a certain way of looking at the world." Weinberg and Shabat, 'Society and Man,' Prentice-Hall Inc., (1956), p. 11.

*'Science is efficient inquiry.' C. West Churchman and Russel L. Ackoff, 'Methods of Inquiry; An Introduction to Philosophy and Scientific Method,' Educational Publishers, St. Louis (1950), p. 10

×'Science is Scientcing' Leslie A. White 'The Science of Culture, 'Farrar, Straus, and Company New York. (1949),p.1;

¶"The unity of all science consists alone in its method, not in its material." Karl Pearson, 'The Grammar of Science.

§' Every Science is at once an attitude toward the world, a point of view, a systematic body of verifiable knowledge, and a way of finding out." Carr, Lowell J. 'Analytical Sociology,'p.1.

वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)

वैज्ञानिक पद्धति एक व्यवस्थित पद्धति है। इस पद्धति के अनुसार कुछ निश्चित प्रकारों से अध्ययन किया जाता है। इस पद्धति के प्रमुख चरण (Steps) निम्न हैं:—

(१) उपकल्पना का निर्माण (Making a hypothesis)

किसी भी अनुसन्धानकर्त्ता के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह उस वस्तु को स्पष्ट रूप से परिभाषित करे जिसका कि वह अनुसन्धान कर रहा है। एक उपकल्पना का अर्थ होता है—समस्या की सूक्ष्म व्याख्या। यह उपकल्पना वैज्ञानिक को आगे अनुसन्धान करने में सहायता करती है। यह उसे भटकने से बचाती है।

(२) यन्त्र या साधन (Apparatus)

उपकल्पना निश्चित होने के उपरान्त यन्त्रों या साधनों को चुनना पड़ता है जिनके द्वारा आगे का अध्ययन किया जाता है।

(३) अवलोकन (Observation)

इसके उपरान्त अध्ययन प्रारम्भ होता है। इसका बड़ी सावधानी से अवलोकन किया जाता है। इसके लिए मानव इन्द्रियों को यथाशक्ति प्रयोग में लाया जाता है। कभी कभी ऐसे यन्त्रों का भी प्रयोग किया जाता है जिनसे सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तुओं का भी अवलोकन किया जा सके।

(४) अवलोकन को लिखना (Recording)

जो कुछ भी अवलोकन किया है, उसे वैसा का वैसा ही लिख लिया जाता है। लिखने में बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है।

(५) वर्गीकरण (Classification)

इसके उपरान्त एकत्रित सामग्री का वर्गीकरण एवं संगठन किया जाता है। उन्हें इस ढङ्ग से तार्किक समूहों में व्यवस्थित कर लिया जाता है कि सम्बन्ध और प्रतिमान उत्पन्न हो जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि एक बिखरे हुए असम्बन्धित तथ्यों के ढेर को एक वैज्ञानिक स्वरूप दे दिया जाता है जिसमें प्रत्येक का निश्चित सम्बन्ध होता है। ये सम्बन्ध तर्क द्वारा सिद्ध होते हैं। अब इस व्यवस्थित विषय-सामग्री को स्वीकृत तत्व (Data) कहते हैं। यह इसका वैज्ञानिक नाम है।

सामान्य अनुमान (Generalization)

इन स्वीकृत तत्वों (Data) से सामान्य नियम निर्धारित किया जाता है। इस सामान्य नियम को वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Law) कहते हैं। वैज्ञानिक सिद्धान्त की परिभाषा करते हुए मैकाइवर ने लिखा है, "ऐसे सिद्धान्त का दूसरा नाम केवल सावधानीपूर्वक वर्णित और नियत रूप से आवर्तक घटनाओं का अनुक्रम है।"* इन सामान्य सिद्धान्तों के द्वारा स्वीकृत तत्वों के व्यवहार का कुछ निश्चित दशाओं में वर्णन कर दिया जाता है। यह वर्णन एक औपचारिक कथन (Formalized Statement) के रूप में होता है। साधारणतया ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये सिद्धान्त कभी भी परिवर्तित नहीं किये जा सकते परन्तु यह एक भ्रामक कल्पना है। वैज्ञानिक सिद्धान्त सदैव कसौटी पर कसे जाते हैं और उन पर पुनर्विचार एवं प्रयोग होते रहते हैं। इनके वैज्ञानिक होने की सबसे बड़ी कसौटी यह है कि भविष्य में जो भी चाहे उनकी सत्यता को प्रमाणित कर सके। ये सिद्धान्त प्रमाणित होते हैं।

वैज्ञानिक पद्धति इन कठोर क्रमागत पदों का जोड़ है। जो भी ज्ञान इस पद्धति के द्वारा प्राप्त किया है, वह विज्ञान कहलाता है। आगे चलकर हम विचार करेंगे कि समाजशास्त्र वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है या नहीं। यदि समाजशास्त्र की विषय सामग्री वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा प्राप्त की गई है तो समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है।

वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करने के लिए वैज्ञानिक दृङ्ग (Scientific attitude) या धारणा होना अत्यन्त आवश्यक है। यह वैज्ञानिक भावना या धारणा क्या होती है, अब हम इस पर विचार करेंगे।

वैज्ञानिक धारणा या भावना (Scicntific attiutde or spirit)

विज्ञान वैज्ञानिक पद्धति के अतिरिक्त और भी कुछ कसौटियों पर आधारित होता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि वैज्ञानिक पद्धति से सम्बन्धित कुछ और भी कार्य प्रणालियां (Procedures) हैं, जिनके अभाव से वैज्ञानिक पद्धति आत्माहीन एवं निर्जीव रहती है। इन कार्य प्रणालियों को वैज्ञानिक धारणा या भावना कहते हैं। इसके प्रमुख तत्व निम्न हैं:—

---

* "Such a law is simply another name for a carefully described and uniformly recurring sequence of conditions." MacIver, R. M, 'Social Causation,' Ginn & Co. Boston, p. 5.

(१) जिज्ञासा (Curiosity)

जिज्ञासा उस प्रवृति को कहते हैं जो जानने के लिए या अनुसन्धान करने के लिए प्रेरित करती है। यह जिज्ञासा अत्यधिक अनुशासित एवं व्यवस्थित प्रकार की होती है। ज्ञान केवल ज्ञान के लिए प्राप्त किया जाता है, वह स्वार्थ रहित होता है।

(२) कर्म विषयता (Objectivity)

कर्म विषयता वैज्ञानिक धारणा का महत्वपूर्ण अङ्ग है। जो भी तथ्य एकत्रित किये जाते हैं उन पर एकत्रित करने वाले को अपने दृष्टिकोण से न देखकर जैसे भी वे हैं, उसी रूप में देखना चाहिए। अवलोकन करते समय वैज्ञानिक को भय और आशाओं से दूर रहना चाहिए। अपने पूर्वनिश्चित विचारों का प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहिए। कर्म विषयता (Objectivity) उस स्थिति या दशा को कहते हैं जब कि अवलोकन पक्षपात रहित (Unprejudiced) होता है। कार (Carr) ने कर्म विषयता की व्याख्या करते हुए लिखा है, "सत्य की कर्म विषयता से यह अभिप्राय है कि दृष्टि-विषयक संसार किसी व्यक्ति के विश्वासों, आशाओं या भय से स्वतन्त्र एक वास्तविकता है—जिसे हम सहजज्ञान एवं कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविक अवलोकन के द्वारा प्राप्त करते हैं।"* इस परिभाषा से स्पष्ट है कि संसार एक वास्तविकता है और घटनाएं किन्हीं सामान्य नियमों से संचालित होती हैं। कर्म विषयता का अभिप्राय है कि इन घटनाओं का उसी रूप में वर्णन करना, जैसा कि मानव इन्द्रियाँ अवलोकन करती हैं। ग्रीन ने इसे और भी सुन्दर शब्दों में समझाने का प्रयत्न किया है। उसने लिखा है, "कर्म विषयता प्रमाण का निष्पक्षता से परीक्षण करने की इच्छा एवं योग्यता है।"† प्रथम तो व्यक्ति की यह इच्छा होनी चाहिये कि वह प्रमाण का अवलोकन एवं विश्लेषण पक्षपातरहित होकर करेगा।

---

* "Objectivity of truth means that the phenomenal world is a reality independent of the beliefs, hopes or fears of any individual—all of which we find out not by intuition and speculation but by actual observation." Lowell J. Carr, 'Analytical Sociology', Haper & Bros, New York. (1955) p. 1.

† "Objectivity is the willingness and ability to examine evidence dispassionately." Green, 'Sociology', p. 2.

वह उन सारे प्रभावों से वीरतापूर्वक युद्ध करेगा जो उसे पक्षपात की ओर ले जाने का प्रयत्न करेंगे। इस इच्छा का निर्माण तभी हो सकता है जब कि व्यक्ति साहसी, बुद्धिमान, स्वार्थरहित एवं तीक्ष्ण दृष्टि वाला हो। द्वितीय व्यक्ति को कर्म विषयक विश्लेषण करना तभी आ सकता है जब कि वह एक विशिष्ट प्रकार की योग्यता एवं क्षमता रखता हो। इस योग्यता एवं क्षमता का निर्माण एक विशिष्ट प्रकार के प्रशिक्षण द्वारा ही हो सकता है।

(३) धैर्य (Patience)

एक वैज्ञानिक को अत्यधिक धैर्य से कार्य लेना चाहिये। उसे बड़ी ही सावधानी एवं सर्तकता से कार्य करना चाहिये।

(४) साहस (Courage)

एक वैज्ञानिक को अत्यधिक साहसी होना चाहिये। उससे ऐसी आशा की जाती है कि वह वही कहेगा जो कि उसने अवलोकन किया है। इस कथन से चाहे जिसको भी लाभ या हानि होती हो। वह किसी की प्रसन्नता एवं अप्रसन्नता की चिन्ता नहीं करता है।

(५) कठोर परिश्रम (Hard Work)

उपरोक्त गुणों की प्राप्ति के लिये कठोर परिश्रम की आवश्यकता होती है, इसलिये कठोर परिश्रम करने की इच्छा होना अत्यन्त आवश्यक है।

(६) निर्माणक विचार शक्ति (Creative imagination)

प्रत्येक वैज्ञानिक के पास निर्माणक विचारशक्ति होनी चाहिये जिससे कि वह गहन एवं जटिल तथ्यों का विश्लेषण कर सके। सिद्धान्त का निर्माण इसी शक्ति के द्वारा होता है। कार्ल पियर्सन ने लिखा है, "इसलिये सिद्धांत का अविष्कार निर्माणक विचारशक्ति की विशिष्ट एवं असाधारण शक्ति है *।"

इस प्रकार वैज्ञानिक भावना बड़ी जटिल है। वैज्ञानिक पद्धति के लिये यह भावना आत्मा के समान है वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा अध्ययन करते समय इन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिये। वैज्ञानिक धारणा को समझाते हुए

---

* "The discovery of law is therefore the peculiar function of the creative imagination," Karl Pearson. 'The Grammar of Science,' Black and Co. London (1900), p. 31.

सीर्ल्स ने बड़े ही सुन्दर शब्दों में लिखा है, "तथ्यों के सामने एक छोटे बच्चे के समान बैठ जाओ और उन्हें वहां ले जाने दो जहां कि वे ले ही जायेंगे।"†

विज्ञान की व्याख्या एवं विश्लेषण अभी तक हमने किया है। पाठकगण अब विज्ञान की कल्पना कर सकते हैं परन्तु 'विज्ञान क्या है' प्रश्न का उत्तर हमने अभी तक स्पष्ट रूप से नहीं दिया है। अब हम उस पर प्रकाश डालेंगे।

विज्ञान क्या है ? (What is Science ?)

अब हम इस अवस्था में हैं कि विज्ञान क्या है, का उत्तर दे सकें। विज्ञान की निम्न व्याख्या की जा सकती है:—

विज्ञान, वह ज्ञान है,

(i) जो कि वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा अध्ययन करके प्राप्त किया गया हो;

(ii) जो कि क्या है का वर्णन मात्र हो;

(iii) जिसकी बिना किसी अपवाद के सार्वभौमिक व्याख्या हो;

(iv) जो कि किसी भी तथ्यों (Facts) के द्वारा प्रमाणित हो;

(v) जो कि सदैव प्रमाण (Verification) और पुनः प्रमाण (Reverification) की कसौटी पर सत्य सिद्ध हो;

(vi) जो कि कार्य-कारण के सम्बन्ध (Cause-effect relationship) स्थापित करता हो और उनकी व्याख्या करता हो;

(vii) जो कि 'क्या है' के आधार पर भविष्य के विषय में संकेत करता हो।

समाजशास्त्र की प्रकृति
(Nature of Sociology)

समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है और समाजशास्त्र विज्ञान है क्योंकि समाजशास्त्र के रूप में जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उन्हें ऊपर वर्णित सात कसौटियों पर कसा जा सकता है। अब हम समाजशास्त्र को क्रमशः प्रत्येक कसौटी पर कसने का प्रयत्न करेंगे:—

---

† "Sit down before the facts as a little child, and let them lead you where they will." Herbert L. Searles, 'Logic and Scientific Methods.' The Ronald Press Company, New York (1948), p. 126.

(i) समाजशास्त्र वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है।

समाजशास्त्र के रूप में जो भी ज्ञान प्राप्त किया जा रहा है वह वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा ही प्राप्त किया जा रहा है और किया गया है और भविष्य में और अधिक मात्रा में इसका प्रयोग होगा ऐसी आशा की जाती है। समाजशास्त्र की अध्ययन रीतियां, वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर विकसित हो रही है। इन अध्ययन पद्धतियों में प्रमुख हैं—सामाजिक सांख्यिकी पद्धति (Social Statistical Method), सामाजिक पर्यालोकन (Social Survey), सामाजिक वैयक्तिक जीवनी के अध्ययन की पद्धति (Social case study Method) सामुदायिक अध्ययन पद्धति (Community study Method), समाजमिति (Sociometry), प्रयोगात्मक पद्धति (Experimental Method) इत्यादि।

इन पद्धतियों में कठौर रूप से वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण किया जाता है। सर्वप्रथम एक उपकल्पना (Hypothesis) का निर्माण किया जाता है। इसके उपरान्त यन्त्रों या साधनों (Apparatuses) को चुना जाता है। जिस प्रकार से प्राकृतिक विज्ञानों में थर्मामीटर, टेलिस्कोप, माइक्रोस्कोप, मेग्नेटोमीटर, पोस्ट ऑफिस बॉक्स, टेस्ट ट्यूब्स इत्यादि का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार समाजशास्त्र में भी समाजमिति के पैमाने (Scales of Sociometry), अनुसूचि (Schedule), प्रश्नावली (Questionnaire), साक्षात्कार (Interview), जीवन इतिहास (Life history) इत्यादि यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। यन्त्र के चुनने के उपरान्त अवलोकन (Observation) किया जाता है और जो कुछ भी मानव इन्द्रियां द्वारा अवलोकन किया जाता है उसे वैसा का वैसा ही क्रमबद्ध सावधानी से लिख (Recording) दिया जाता है। इसके उपरान्त इस एकत्रित विषय-सामग्री का व्यवस्थितरूप में वर्गीकरण (Classification) कर दिया जाता है। स्वीकृत तत्वों (Data) के आधार पर सामान्य नियम निर्धारित कर लिया जाता है। यदि उपकल्पना और सामान्य सिद्धांत समान होते हैं तो उपकल्पना को वैज्ञानिक नियम के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है।

(ii) समाजशास्त्र 'क्या है' का वर्णन करता है।

समाजशास्त्र सामाजिक घटनाओं एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। वह जो कुछ भी सामाजिक प्रक्रियाएं हैं उनका केवल वर्णन करता है। जिस प्रकार भौतिकशास्त्र (Physics) भौतिक नियमों एवं प्रक्रियाओं का वर्णन

करता है, उसी प्रकार समाजशास्त्र सामाजिक नियमों एवं प्रक्रियाओं का वर्णन करता है। शायद इसलिये कॉम्टे ने इसे पहली बार सामाजिक भौतिकशास्त्र (Social Physics) का नाम दिया था। रयूटर और हार्ट ने भी लिखा है, "समाजशास्त्र ने साजाजिक प्रक्रिया का वर्णन करना ही अपने लिये सामान्य समस्या रखी है।" †

(iii) समाजशास्त्रीय सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं।

समाजशास्त्र जिन सिद्धांतों का निर्माण करता है वे सार्वभौमिक होते हैं। उन में अपवाद नहीं पाया जाता। यदि परिस्थितियाँ परिवर्तित न हों तो ये सिद्धांत सदैव खरे उतरते हैं।

(iv) समाजशास्त्र की विषय-सामग्री तथ्यों द्वारा प्रमाणित की जा सकती है।

समाजशास्त्र की विषय-सामग्री किसी समय भी और किसी के भी द्वारा प्रमाणित की जा सकती है। वह सदैव इन प्रमाणों के लिये तत्पर रहती है।

(v) समाजशास्त्र के सिद्धान्तों की परीक्षा।

समाजशास्त्र के सिद्धान्त परीक्षा और पुनर्परीक्षा (Verification and reverification) में सदैव सत्य निकलते हैं। उनकी सत्यता की परीक्षा कभी भी की जा सकती है।

(vi) समाजशास्त्र कार्य-कारण सम्बन्धों की व्याख्या करता है।

समाजशास्त्र कार्य-कारण सम्बन्धों की व्याख्या करता है और स्थापित करता है। घटनायें किस प्रकार होती हैं इसकी व्याख्या करता है। संक्षेप में हम यों कह सकते हैं कि 'कैसे' का उत्तर दिया जाता है।

(vii) समाजशास्त्र 'क्या है' के आधार पर 'क्या होगा' की ओर सङ्केत करता है।

समाजशास्त्र 'क्या है' का तो अध्ययन करता ही है साथ साथ उस 'क्या है' के आधार पर भविष्यवाणी भी करता है कि क्या होगा, परन्तु 'क्या होना चाहिये' पर समाजशास्त्र कोई प्रकाश नहीं डालता।

इससे स्पष्ट है कि समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है या दूसरे शब्दों में समाजशास्त्र एक विज्ञान है। हमारे विश्लेषण की समस्या यहीं पर समाप्त नहीं हो

---

† "The general problem that sociology gets for itself is a description of the social process", Reuter & Hart, 'Introduction to Sociology', p. 6.

जाती। प्राकृतिक वैज्ञानिकों को इसमें अनेक आपत्तियां हैं। अब हम उनकी आपत्तियों का वर्णन करेंगे।

समाजशास्त्र की वैज्ञानिक प्रकृति पर आपत्तियां
(Objections against the scientific nature of Sociology)

(१) कर्म-विषयता का अभाव (Lack of Objectivity)

अन्य वैज्ञानिकों का प्रथम आरोप यह है कि समाजशास्त्रीय स्वीकृत तत्व (data) पक्षपातरहित नहीं हो सकते। समाजशास्त्र की विषय-सामग्री का अवलोकन उतनी अधिक कर्म-विषयता से नहीं हो सकता जितना कि भौतिक विज्ञानों में होता है। इसका पहला कारण यह है कि अनुसंधानकर्त्ता स्वयं विषय-सामग्री का एक अंश होता है। समाजशास्त्र सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है और सामाजिक संबंधों से अनुसंधानकर्त्ता का घनिष्ट संबंध होता है। समाजशास्त्री के उद्वेग विषय-सामग्री से पृथक् नहीं किये जा सकते। इनमें तटस्थ रहना असम्भव सा प्रतीत होता है। चार्ल्स वियर्ड ने लिखा है कि सामाजिक वैज्ञानिक कभी भी अपने सामाजिक संसार में तटस्थ नहीं रह सकता। समाजशास्त्री धर्म, परिवार, आर्थिक व्यवस्था इत्यादि समस्याओं का विश्लेषण करता है और इन सब के ही विषय में उसके अपने दृष्टिकोण होते हैं। इन कारणों से वह पक्षपातरहित अवलोकन नहीं कर सकता।

यह सत्य है कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति बड़ी जटिल है परन्तु यह तर्क प्रस्तुत करना, कि उनका अवलोकन कर्म-विषयता से किया ही नहीं जा सकता है, उचित नहीं है। जिस प्रकार एक डॉक्टर तापमापक यंत्र के द्वारा अपना तापमान माप सकता है उसी प्रकार समाजशास्त्री भी अपने धर्म, परिवार या समाज का अध्ययन कर सकता है। समाजशास्त्री ऐसे यंत्रों की खोज में लगे हुये हैं जिनके द्वारा वे अत्यधिक कर्म-विषयता से अवलोकन कर सकें। इसके लिये इच्छा और योग्यता की आवश्यकता है।

(२) समाजशास्त्र के पास प्रयोगशालायें नहीं हैं
(Sociology has no Laboratories)

इनका दूसरा आरोप यह है कि समाजशास्त्र की विषय-सामग्री का अध्ययन प्रयोगशाला (Laboratory) में नहीं किया जा सकता और इसके अभाव में समाजशास्त्र विज्ञान नहीं बन सकता।

यह तर्क भी थोथा ही है। प्रथम तो यह कल्पना ही भ्रामक एवं निरर्थक है कि वही ज्ञान वैज्ञानिक हो सकता है जिसे प्रयोगशाला में अध्ययन किया जावे। कुछ लोगों की ऐसी कल्पना है कि कांच की नली (Test tube) में पड़ी लाल हरे रङ्ग के रसायन या मैग्नेटोमीटर (Magnetometer) द्वारा प्रमाणित सिद्धान्त ही केवल विज्ञान हो सकते हैं परन्तु यह कल्पना कल्पित, निरर्थक एवं भ्रामक है। किसी विषय को कहां पर अध्ययन किया जाता है यह इस बात का निर्णायक नहीं होता कि कोई ज्ञान वैज्ञानिक है अथवा नहीं।

द्वितीय प्रयोगशाला में किस प्रकार से अध्ययन किया जाता है या हम यों कह सकते हैं कि प्रयोगशाला पद्धति क्या है ? वास्तव में प्रयोगशाला पद्धति में निम्न कार्य प्रणालियां प्रयोग में लाई जाती हैं:—

(अ) जिस ज्ञान को प्राप्त करना है उसे स्पष्टतया सूक्ष्मातिसूक्ष्म बना लेते हैं।

(ब) दूसरी परिस्थितियों एवं कारकों (Factors) को बदल-बदल कर स्थिर वस्तु के विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि घटनाओं पर नियंत्रण रखा जाता है।

(स) ज्ञान प्राप्त करने में अवलोकन करते समय वस्तु के वास्तविक चित्रण को ही चित्रित करते हैं और उस पर किसी प्रकार का भी आन्तरिक या बाह्य प्रभाव नहीं पड़ने देते।

(द) यदि उन्हीं दशाओं एवं परिस्थितियों में वह प्रयोग फिर से दोहराया जाय तो उसी प्रकार के प्रमाण मिलने चाहिये या हम यों कह सकते हैं कि यह प्रयोग किसी के भी द्वारा दोहराया जा सकता है।

यदि तीक्ष्ण दृष्टि से देखा जाय तो प्रयोगशाला पद्धति (Laboratory Method) और वैज्ञानिक पद्धति में कोई भी मौलिक अन्तर नहीं है। प्रयोगशाला में वैज्ञानिक पद्धति का ही प्रयोग किया जाता है। हम पहले ही विवेचन कर चुके हैं कि समाजशास्त्र वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है।

समाजशास्त्र की भी प्रयोगशाला है और वह भी प्रयोगशाला-पद्धति का प्रयोग करता है। जिस प्रकार से एक भौतिकशास्त्री (Physicist) की प्रयोगशाला किसी विश्व-विद्यालय या अनुसंधान केन्द्र के किसी भाग में होती है इसी प्रकार

समाजशास्त्रियों की प्रयोगशाला संसार का वह भाग होता है जिसमें उनके विषय का अध्ययन चलता रहता है। यदि हम यह कहें कि समस्त संसार ही समाजशास्त्री की प्रयोगशाला है तो अतिशयोक्ति न होगी।

प्राकृतिक वैज्ञानिकों को यह न भूलना चाहिये कि न्यूटन (Newton), आर्कमेडीज (Archimedes), मारकोनी (Marconi) इत्यादि वैज्ञानिकों ने अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन बनावटी प्रयोगशालाओं में नहीं किया था। दूसरी बात उन्हें यह भी स्मरण रखनी चाहिये कि उनकी भी प्रयोगशालायें, जिन पर कि उनको इतना गर्व है, अत्यधिक लम्बे समय के उपरान्त इस रूप में प्रस्तुत हो सकी हैं। सामाजिक विज्ञानों को भी प्रयोगशाला स्थापित करने की ओर ध्यान केन्द्रित है। बोगर्डस* ने समाजशास्त्रीय प्रयोगशाला की स्थापनार्थ निम्न सुझाव दिये हैं:—

(अ) टाइप राइटर्स (Type writers), जोड़ने वाली मशीनें (Adding Machines), हिसाब लगाने वाली मशीनें (Calculating Machines) इत्यादि होनी चाहिये।

(ब) विशेष प्रकार की बनी हुई अलमारियाँ होनी चाहिये जिनमें व्यवस्थित रूप से फाइलें रखी जा सकें।

(स) साक्षातकार (Interview) के लिये एक विशिष्ट प्रकार का कमरा होना चाहिये।

(द) ड्राइङ्ग टेबल्स एवं अन्य ड्राइङ्ग का सामान होना चाहिये।

(य) एक विशेष अनुसंधान पुस्तकालय होना चाहिये।

(र) कॉंफ्रेन्स एवं सेमीनार (Seminar) के लिये पृथक् कमरे होने चाहिये।

(ल) प्रयोगशाला में मानचित्र और चार्ट होने चाहिये जिनमें स्थानीय समुदाय की दशाओं का चित्रण हो।

यदि हम यह भी मान लें कि समाजशास्त्रीय प्रयोगशाला (Sociological Laboratory) का निर्माण नहीं हो सकता तो भी समाजशास्त्र की

---

* See Bogardus, 'Sociology', The Macmillan Co, New York, Fourth Edition (1954), Chapter 'A Sociological Laboratory', pp. 597-601.

वैज्ञानिक प्रकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बर्फीली और संरचनात्मक भू-तत्वशास्त्र (Glacial and structural geology) का अध्ययन प्रयोगशाला में नहीं किया जा सकता, फिर भी उनके विज्ञान होने में कोई शंका नहीं करता। उसी प्रकार समाजशास्त्र भी अपने अध्ययन के क्षेत्र में नियन्त्रण रखता है, क्या हुआ यदि प्रयोगशाला में अध्ययन नहीं करता।

प्रयोगशाला पद्धति की आत्मा क्या है ? गिलिन और गिलिन ने लिखा है, "प्रयोगशाला पद्धति सूक्ष्म अवलोकन की एक सामान्य कार्य प्रणाली मात्र है।"† क्या हुआ यदि समाजशास्त्र के पास एक कृत्रिम प्रयोगशाला नहीं, यदि वह सूक्ष्म अवलोकन करने में सफल हो तो उसके विज्ञान की ओर बढ़ते हुए चरण को कोई शक्ति नहीं रोक सकती। अतः समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है और समाजशास्त्र एक विज्ञान है।

(३) समाजशास्त्र अपनी विषय-सामग्री को मापने में असमर्थ है। (Sociology is incapable of measuring its subject matter)

समाजशास्त्र के विरुद्ध एक आरोप यह भी लगाया जाता है कि समाजशास्त्र प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति अपनी विषय-सामग्री को माप नहीं पाता, इसलिए इसे विज्ञान नहीं कहा जा सकता। यह एक भ्रांति है। विज्ञान का और माप का कोई भी प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। ग्रीन ने उचित ही लिखा है," विज्ञान और माप के बीच वास्तव में कोई भी प्रत्यक्ष संबंध नहीं है।" * भूतत्वशास्त्री (Geologist) और जीवशास्त्री (Biologist) जो बहुत कम मापने का कार्य करते हैं, वैज्ञानिक कहलाते हैं, परन्तु बढ़ई (Carpenter) जो दिन भर मापा करता है वैज्ञानिक नहीं है। अतः समाजशास्त्र को अपनी विषय सामग्री के मापने के अभाव में विज्ञान न स्वीकार करना कहाँ तक न्यायसंगत है।

(४) समाजशास्त्र यथार्थ विज्ञान नहीं है (Sociology is not an exact science)

चूंकि समाजशास्त्र यथार्थ ज्ञान नहीं है, इसलिए उसे विज्ञान नहीं कहा जा सकता। प्राकृतिक विज्ञान यथार्थ विज्ञान है क्योंकि उनमें जिन सिद्धांतों का

---

† "……the laboratory method is only one general procedure of accurate observation." Gillin and Gillin, 'Cultural Sociology', p. 15.

* "There is actually no direct relationship between science and measurement," Green, 'Sociology' p. 2.

प्रतिपादन किया जाता है वे सदैव सत्य निकलते हैं। उदाहरण के लिए आकर्षण शक्ति का सिद्धांत (Law of gravitation) को ही लीजिए—यदि एक गेंद आकाश की ओर फेंकी जाय तो कुछ दूर जाने के उपरांत पृथ्वी पर गिर पड़ेगी। इस गेंद को चाहे रामू ने फेंका हो या श्यामू ने, इंगलैंड में या अमेरिका में, रात में या दिन में, गेंद आकर्षण शक्ति के कारण पृथ्वी पर ही आकर गिरेगी। ऐसे ही अनेक यथार्थ सिद्धांतों के कारण प्राकृतिक विज्ञान यथार्थ विज्ञान कहलाते हैं, परन्तु यथार्थता और विज्ञान का कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। प्रथम तो यथार्थता और अयथार्थता (Inexactness) सापेक्ष शब्द हैं, इसलिए यह भेद केवल अंशों का है। द्वितीय यह भी दावा नहीं किया जा सकता है कि समस्त प्राकृतिक विज्ञान यथार्थ विज्ञान ही होते हैं। अंतरिक्ष विद्या (Meteorology) और खगोल विद्या (Astronomy) अयथार्थ विद्यायें हैं फिर भी उन्हें विज्ञान माना जाता है तो फिर समाजशास्त्र को विज्ञान मानने में क्या आपत्ति है?

तृतीय विज्ञान की ही प्रकृति गतिशील एवं नवीन है और कोई भी ज्ञान पूर्ण नहीं कहा जा सकता। विज्ञान कहे जाने वाले समस्त ज्ञान केवल अनुमान (Approximations) हैं। नित्यप्रति नवीन अविष्कार होते रहते हैं और नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन होता रहता है इसलिए किसी भी विज्ञान को यथार्थ विज्ञान नहीं कहा जा सकता।

(५) समाजशास्त्र भविष्यवाणी नहीं कर पाता।
(Unpredictability of Sociology)

समाजशास्त्र के विरुद्ध एक यह भी आरोप है कि समाजशास्त्र सामाजिक व्यवहार के विषय में कोई भी भविष्यवाणी नहीं कर पाता है। यह आरोप भी मिथ्या ही है। सामाजिक व्यवहार के बारे में हम भविष्यवाणी इसलिए नहीं कर पाते कि हमारा वर्तमान ज्ञान सीमित है, न कि इसलिए कि ऐसा करना संभव ही नहीं है। बहुत से भौतिक नियम एवं रसायनिक प्रतिक्रियायें जो कि आजकल बड़ी सरल है, कुछ शताब्दियों पूर्व उनके विषय में कोई भी भविष्यवाणी करना असंभव था। कठोर परिश्रम के उपरांत अब वह संभव हो पाया है। समाजशास्त्र में भी ऐसा करना प्रारम्भ हो रहा है और ऐसा विश्वास किया जाता है कि भविष्य में संभावनाओं की घोषणा करना अत्यधिक सरल हो जायगा।

लुन्डबर्ग ने लिखा है, "ऐसा विश्वास करने का प्रत्येक कारण है कि हम इस शक्ति (Predictability) को अत्यधिक बढ़ा सकते हैं।"*

समाजशास्त्र की वैज्ञानिक प्रकृति के विरुद्ध लगाये गये आरोपों का हमने विश्लेषण किया। इस विश्लेषण के द्वारा पाठकों को यह ज्ञात हो गया होगा कि ये मिथ्या आरोप थे। अतः समाजशास्त्र एक विज्ञान है। एक बात स्मरण रखनी चाहिए कि ये आरोप मिथ्या अवश्य हैं, परन्तु समाजशास्त्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों की विषय-सामग्री बड़ी जटिल है और सामाजिक संबंधों के वैज्ञानिक अध्ययन में अनेक कठिनाइयां सामने आती हैं।

सामाजिक स्वीकृत तत्व (Social data) बड़ा ही जटिल प्रतीत होता है। वास्तव में इसकी जटिलता का प्रमुख कारण हमारी अज्ञानता है। किसी समय प्रकृतिक विज्ञानों के साधारण सिद्धांत भी अत्यधिक जटिल प्रतीत होते थे। रेडियो, वायुयान, और परमाणु बम असम्भव प्रतीत होते थे। बच्चे के लिए चलना भी एक समस्या है। जटिलता एक सापेक्ष शब्द है। उसे विषयक शब्दों में परिभाषित नहीं किया जा सकता। लुन्डबर्ग ने जटिलता की परिभाषा करते हुए बड़े सुन्दर शब्दों में लिखा है, 'कोई भी दशा या घटना का व्यवहार जटिल होता है जब कि हम उसे नहीं समझते हैं।"†

प्रश्न

१. समाजशास्त्र कैसे वैज्ञानिक हो सकता है जब कि इसमें प्रयोगशाला पद्धति का प्रयोग कभी २ या बिल्कुल नहीं हो सकता ? कारण लिखिये।

(आगरा, १९५५)

(How can Sociology be scientific when the laboratory method can seldom or never be applied ? Give reasons.)

---

*"There is every reason to believe that we can vastly extend this power," Lundberg, G. A. 'Social Research' Longmans, Green and Co. (1951), p. 22.

† "Any situation or behavior of phenomena is complex when we do not understand it." Lundberg, 'Social Research,' p. 18.

२. वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग मानव समाज के अध्ययन के लिए अनुपयुक्त है। (आगरा, १९५४)

(Scientific method is inapplicable to the study of human society.)

३. समाजशास्त्र की प्रकृति क्या है ?

(What is the nature of Sociology ?)

४. समाजशास्त्र विज्ञान है या कला ?

(Is Sociology science or Art ?)

अध्याय ७

समाजशास्त्र तथा अन्य शास्त्र

(Sociology and other sciences)

समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, यह हमने पिछले दो अध्यायों में सिद्ध किया है। समाजशास्त्र समाज का वैज्ञानिक अध्ययन करता है, परन्तु अन्य सामाजिक विज्ञान भी हैं जो समाज का अध्ययन करते हैं। इनमें से प्रमुख मानवशास्त्र (Anthropology), राजनीतिशास्त्र (Political Science) अर्थशास्त्र (Economics), मनोविज्ञान (Psychology), आचारशास्त्र (Ethics) इत्यादि है। इस अध्याय में हम समाजशास्त्र का अन्य विज्ञानों एवं विषयों से क्या सम्बन्ध है, पर प्रकाश डालेंगे।

समाजशास्त्र के विषय-क्षेत्र का विवेचन करते समय हमने देखा था कि समाजशास्त्रियों में बड़ा मतभेद है, इसी प्रकार अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध के विषय में भी अत्यधिक विविध दृष्टिकोण पाये जाते हैं, उदाहरण के लिए हम निम्न विचारकों के दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं।

समाजशास्त्र—एक मात्र विज्ञान (Sociology—the only science)

कॉम्टे के विचार से समाज का केवल एक ही विज्ञान होना चाहिए और वह समाजशास्त्र है। अतः अन्य सामाजिक विज्ञानों की कोई आवश्यकता नहीं है। कॉम्टे का तर्क यह है कि समाज एक पूर्णता (Totality) है और इसे विभिन्न भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता। समाज का अध्ययन पूर्णता में ही होना चाहिए। चूंकि अन्य समाजिक विज्ञान समाज को विभिन्न भागों में विभाजन करके एक भाग का अध्ययन करते हैं इसलिए वे व्यर्थ हैं और उनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

कॉम्टे का विचार कहाँ तक उचित है इस विवाद में हम नहीं पड़ना चाहते, क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं है, परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि ऐसा विचार कॉम्टे का उत्साहपूर्ण उद्वेग रहा होगा और उसने समाज की जटिलता पर

विचार नहीं किया होगा। आज के युग में कोई भी इस विचार का समर्थन नहीं करेगा।

समाजशास्त्र—अन्य विज्ञानों का समन्वय
(Sociology—Synthesis of other sciences)

कुछ विद्वानों का मत है कि समाजशास्त्र अन्य विज्ञानों का समन्वयमात्र है। इन विचारकों में स्पेन्सर (Spencer) प्रमुख है। इनके अनुसार अन्य सामाजिक विज्ञान पूर्णतया स्वतंत्र हैं और समाजशास्त्र ने थोड़ा थोड़ा प्रत्येक विज्ञान से ग्रहण किया है। इसलिए उसने समाजशास्त्र को एक समन्वयमात्र बतलाया है।

समाजशास्त्र अन्य विज्ञानों का समन्वय नहीं है बल्कि एक स्वतंत्र विज्ञान है। इस पर हम पिछले अध्यायों में प्रकाश डाल चुके हैं। यहाँ पर इतना लिखना पर्याप्त होगा कि एक विज्ञान और दूसरे विज्ञान के बीच विषय-सामग्री के आधार पर सीमा निर्धारित करना असंभव है। एक दूसरे को पृथक् करने वाली वस्तु अध्ययन का दृष्टिकोण (Point of view) है। समाजशास्त्र का भी अन्य विज्ञानों की भांति एक स्पष्ट दृष्टिकोण—समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (Sociological point of view) है, इसलिए उसका एक स्वतंत्र विज्ञान के रूप में अस्तित्व है।

समाजशास्त्र अन्य विज्ञानों की भांति एक स्वतंत्र विज्ञान है
(Sociology is an independent science like other sciences)

समाजशास्त्र एक स्वतंत्र विज्ञान है इस विचार का समर्थन विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से किया है।

वार्ड (Ward) ने लिखा है कि समाजशास्त्र अन्य विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों का समन्वय अवश्य है परन्तु यह ऐसा समन्वय है कि विशिष्ट सामाजिक विज्ञान अपने को बिल्कुल इस प्रकार मिला देते हैं कि उनका स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो जाता है और एक नवीन वस्तु निर्मित हो जाती है। यह नवीन वस्तु विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों से पूर्णतया भिन्न होती है। उनका कहने का तात्पर्य यह है कि वे ऐसे घुल मिल जाते हैं कि उन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता, जैसे नीला और पीला रंग मिलकर एक नवीन रंग-हरा-की सृष्टि करते है जो कि उन दोनों से भिन्न है।

मोटवानी (Motwani) ने भी इसी विचार का समर्थन किया है। उसने लिखा है कि समाजशास्त्र उस भवन के समान है जो ईंट, पत्थर, लकड़ी, लोहा इत्यादि से मिलकर बनता है और जो इनमें से कुछ भी नहीं है बल्कि एक नवीन सृष्टि है।

गिडिंग्स (Giddings) ने भी समाजशास्त्र को एक स्वतंत्र विज्ञान माना है। गिडिंग्स का कहना है कि समाजशास्त्र सम्पूर्ण समाज का अध्ययन करने के कारण समस्त विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों के विषय-क्षेत्रों का अध्ययन करता है, परन्तु वह इन विषय-क्षेत्रों की मौलिक घटनाओं का ही अध्ययन करता है। उसका अपना विशिष्ट दृष्टिकोण है और यह सामाजिक विज्ञानों का योग या समन्वय नहीं है अपितु अन्य सामाजिक विज्ञान इसके सिद्धान्तों पर आधारित हैं।

सॉरोकिन (Sorokin) ने भी समाजशास्त्र को एक विशिष्ट विज्ञान माना है उनका कथन है कि समाजशास्त्र अन्य विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों की भाँति एक स्वतंत्र विज्ञान है। इसके अतिरिक्त समाजशास्त्र न केवल समाज के सामान्य सिद्धान्तों का अध्ययन करता है, अपितु विभिन्न विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है और उन्हें पूर्णता का प्रकाश दिखलाता है।

बार्न्स (Barnes) और बेकर (Becker) ने भी इसी तथ्य का समर्थन करते हुए उचित ही लिखा है, "समाजशास्त्र न तो अन्य सामाजिक विज्ञानों की गृहस्वामिनी मानी जाती है और न उनकी दासी अपितु उनकी भगिनी मानी जाती है।" *

विभिन्न समाजशास्त्रियों के मतों पर हमने अभी तक प्रकाश डाला। पाठकों के मन में यह शंका होगी कि किस विचार को स्वीकार करना चाहिए। इस कठिनाई में सामाजिक विज्ञानों का विकास हमारा मार्ग प्रदर्शन करता है। प्रत्येक समाजिक विज्ञान (समाजशास्त्र भी) स्वतंत्र विज्ञानों के रूप में विकसित हो चुके हैं और अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखते हैं। कोई भी सामाजिक विज्ञान पूर्णतया स्वतंत्र नहीं है। हमारा अभिप्राय यह है कि वे एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित है। आधुनिक युग श्रम-विभाजन (Division of Labour) एवं विशिष्टकरण (Specialization) का है। श्रम-विभाजन एवं विशिष्टीकरण

---

* "Sociology is regarded neither as the mistress nor as the handmaid of the Social sciences but as their sister." Barnes and Becker 'Social Thought from Lore to Science' Vol. I,p. x.

का आधार एकता पर है। विभिन्न विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों का भी इसी प्रकार विभाजन किया गया है, परन्तु उनका आधार एकता पर ही है। अब हम विभिन्न सामाजिक विज्ञानों तथा समाजशास्त्र के वास्तविक सम्बन्ध पर प्रकाश डालेंगे।

समाजशास्त्र और मानवशास्त्र (Sociology and Anthropology)

समाजशास्त्र और मानवशास्त्र का एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध है। क्रोबर § ने इन्हें जुड़वा बहिनें (Twin sisters) कहा हैं। राबर्ट रेडफिल्ड ने लिखा है, "एक (व्यक्ति), संयुक्त राज्य पर दृष्टिपात करते हुए, देखता है कि समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के पारस्परिक सामाजिक सम्बन्ध, मानवशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्धों की तुलना में अधिक निकट हैं। यह कुछ अंशों में कार्य करने की पद्धतियों को अधिक समानता के कारण है।"* बॉस (Boas) ने लिखा है कि सामाजिक गतिशीलता और अनुक्रम (Sequence) के सिद्धांतों का प्रतिपादन करना मानवशास्त्र का प्रमुख कार्य है और ये सिद्धांत समाजशास्त्रीय सिद्धांत हैं, इसलिए समाजशास्त्र और मानवशास्त्र में घनिष्ट संबंध है।

मानवशास्त्र विशेषतया आदिवासियों एवं वन्य जातियों का अध्ययन करता है और समाजशास्त्र वर्तमान युग के समाजों का। दोनों में केवल दृष्टिकोण का अन्तर है। मानवशास्त्र समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न नहीं करता है परन्तु समाजशास्त्र सामाजिक समस्याओं का अध्ययन भी करता है और उन्हें सुलझाने के सुझाव भी देता है। इन साधारण भिन्नताओं के होते हुए भी दोनों में घनिष्ट सम्बन्ध है। क्रोबर ने उचित लिखा है, "तो भी पूर्णतया ये

§ A. L. Kroeber, Anthropology' p. 7.

*"Viewing the whole United States, one sees that the social relations between Sociology and Anthropology are closer than those between Anthropology and Political Science; this is partly due to greater similarity in ways of work." Robert Redfield, in his article 'Relations of Anthropology to the Social Sciences and the Humanities' in the book "Anthropology To day: An Encyclopedic Inventory" prepared under the chairmanship of A, L, Kroeber, The University of Chicago Press, Second Impression (1954.) p. 729.

अन्तर केवल बल (Emphasis) के हैं। सिद्धांतः समाजशास्त्र और मानवशास्त्र को दूर रखना कठिन है।" †

मानवशास्त्र और समाजशास्त्र के सामान्य संबंध पर हमने अभी तक प्रकाश डाला है। मानवशास्त्र बड़ा ही विस्तृत विज्ञान है। इसके तीन प्रमुख भाग किए जा सकते हैं—(१) भौतिक मानवशास्त्र (Physical Anthropology) (२) प्रागैतिहासिक पुरातत्व (Prehistoric Archaeology) और (३) सामाजिक मानवशास्त्र (Social Anthropology)

समाजशास्त्र और भौतिक मानवशास्त्र
(Sociology and Physical Anthropology)

समाजशास्त्र और भौतिक मानवशास्त्र का घनिष्ट सम्बन्ध है। भौतिक मानवशास्त्र मनुष्य के शारीरिक लक्षणों का अध्ययन करता है। मानव जातियों एवं मानव उत्पत्ति इत्यादि इसके प्रमुख अध्ययन के विषय हैं। समाजशास्त्र भौतिक मानवशास्त्र के अध्ययनों का अत्यधिक लाभ उठाता है।

इन दोनों में अन्तर भी है। अन्तर अध्ययन पद्धतियों, विषय-सामग्री एवं दृष्टिकोण तीनों का ही है। भौतिक मानवशास्त्र एक प्राकृतिक विज्ञान के रूप में विकसित हो गया है और उनकी अध्ययन पद्धतियां प्राकृतिक विज्ञानों से अधिक मिलती जुलती हैं। समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और वह भिन्न पद्धतियों का प्रयोग करता है। दोनों के दृष्टिकोण भी भिन्न हैं। भौतिक मानवशास्त्र सूक्ष्मतम शारीरिक लक्षणों का अध्ययन करता है, जब कि समाजशास्त्र के अध्ययन का दृष्टिकोण यह है कि इन शारीरिक लक्षणों की भिन्नता या समानता के कारण सामाजिक सम्बन्धों पर क्या प्रभाव पड़ता है। भौतिक मानवशास्त्र प्रजातियों का गहन अध्ययन करता है परन्तु समाजशास्त्र प्रजातियों का केवल सामाजिक सम्बन्धों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है।

समाजशास्त्र और प्रागैतिहासिक पुरातत्व
(Sociology and Prehistoric Archaeology)

प्रागैतिहासिक पुरातत्व और प्रागैतिहासिक युग की संस्कृतियों का अध्ययन करता है। इसका संबंध समाजशास्त्र की तुलना में इतिहास से अधिक है, फिर

†"All in all, however, these are only differences of emphasis. In principle Sociology and Anthropology are hard to keep apart. "Kroeber, A. L. 'Anthropology' p. 7.

भी समाजशास्त्र को इससे बड़ी सहायता मिलती है, क्योंकि वर्त्तमान सामाजिक ढांचे के तत्वों का सम्बन्ध अति प्राचीन काल से है।

समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र *

(Sociology and Social Anthropology)

समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र एक दूसरे से इतने अधिक सम्बन्धित हैं कि दोनों में अन्तर करना बड़ा कठिन है। सामाजिक मानवशास्त्र की परिभाषा इन शब्दों में की गई है, "सामाजिक मानवशास्त्र सामाजिक परिस्थितियों में मनुष्यों के व्यवहार का अध्ययन करता है।" † समाजशास्त्र की परिभाषायें हम अध्याय ५ में दे ही चुके हैं। किंबाल यङ्ग की परिभाषा विशेष रूप से देखिये, इनसे स्पष्ट है कि समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र दोनों ही समान वस्तुओं का अध्ययन करते हैं। इसी कारण से दीर्घ काल तक दोनों के विषयक्षेत्रों के विषय में बड़ा वाद-विवाद रहा। डा० दुबे की निम्न पंक्तियों से यह स्पष्ट है कि उन्होंने समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र में कोई भी अन्तर नहीं माना है—

"In this connection it will be futile to revive the old controversy regarding the legitimate spheres of sociology and social anthropology, for I feel that time has now come for us to attempt a systematic study of Indian social systems and this being a part of the wider study of social structure i.e. of social forms and social processes, belongs rightly to the domain of both sociology and social anthropology."§

---

*अधिक विस्तार में पढ़ने के लिए देखिए प्रो० तोमर और प्रो० शर्मा की पुस्तक 'सामाजिक मानव शास्त्र'।

†"Social Anthropology deals with the behaviour of man in social situations." A. Committee of the Royal Anthropological Institute of Gr. Britain and Ireland, "Notes and Querrieson Anthropology' p. 36.

§Dr. S. C. Dube in his article 'Methods and Problems of Social Anthropology in India' in "The Anthropologist" of March 1955, published by Department of Anthropology, Delhi Varsity, Managing Editor Dr. P. C. Biswas.

ऐसे ही विचार अन्य प्रसिद्ध समाजशास्त्रियों ने भी प्रकट किये हैं। हॉबेल (Hoebel) ने तो यहां तक लिखा है कि इन दोनो में कोई अन्तर नहीं है। वह लिखता है, कि "विस्तृत अर्थों में समाजशास्त्र और मानवशास्त्र बिल्कुल समान और एक हैं।" + इवांस प्रीचर्ड (Evans-Pritchard), हावेल से भी एक कदम आगे बढ़ गये हैं और उन्होंने लिखा है, "इसलिये सामाजिक मानवशास्त्र समाजशास्त्रीय अध्ययनों की एक शाखा मानी जा सकती है—वह शाखा जो कि प्रमुखतया अपने को आदिम समाजों के अध्ययन में लगाती है।" ×

समाजशास्त्र और समाजिक मानवशास्त्र में कुछ महत्वपूर्ण अन्तर भी है। उनमें से प्रमुख निम्न हैं—

(१) समाजशास्त्र वर्त्तमान समाज का अध्ययन करता है और सामाजिक मानवशास्त्र विशेषतया आदिम समाजों का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र सुधार के कुछ सुझाव भी देता है परन्तु सामाजिक मानवशास्त्र ऐसा नहीं करता क्लखौन ने लिखा है, "समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण व्यवहारिक तथा वर्त्तमान की ओर झुका है, और मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण शुद्ध ज्ञान और भूत की ओर।" §

(२) सामाजिक मानवशास्त्र सम्पूर्ण समाज का पूर्णता में अध्ययन करता है। वह एक समाज की आर्थिक व्यवस्था राजनैतिक एवं विधि सम्बन्धी संस्थाओं पारिवारिक सङ्गठन, धर्म, कला और उद्योग-धन्धे इत्यादि प्रत्येक वस्तु का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र एक विशेषज्ञ के समान विशिष्ट समस्याओं का अध्ययन करता है। जैसे विवाह, विवाह-विच्छेद अपराध, वैश्यावृत्ति, श्रमिक हड़ताल इत्यादि।

(३) समाजशास्त्र एक और सामाजिक दर्शन (Social Philosophy) और दूसरी ओर सामाजिक नियोजन (Social Planning) से सम्बिन्धित

+ "Sociology and social Anthropology are, in their broadest senses, one and the same." E. A, Hoebel, 'Man in the Primitive World'.

× "Social Anthropology can therefore, be regarded as a branch of Sociological studies, that branch which chiefly devotes itself to primitive societies." Evans-Pritchard. 'Social Authropology', p. 12, Cohen & West Ltd. London (1951).

§ "The sociological attitude has tended towards the practical and present, the anthropological towards pure understanding and the past." C. Kluckhohn, 'Mirror for Man', p. 269.

है। इसका अभिप्राय यह है कि समाजशास्त्र न केवल यह खोज करता है कि संस्थायें किस प्रकार कार्य करती है बल्कि उन्हें किस प्रकार कार्य करना चाहिये इसके विषय में भी सुझाव देता है। वह भविष्य की योजना के लिये सुझाव नहीं देता है। सामाजिक मानवशास्त्र इस प्रकार के कोई सुझाव नहीं देता।

(४) इन दोनों की अध्ययन पद्धतियां भी भिन्न हैं। समाजशास्त्रीय अध्ययन अधिकतर प्रलेख (Documents), सांख्यिकी (Statistics) और पर्यालोकन (Survey) पर आधारित है। सामाजिक मानवशास्त्रीय पद्धतियां भिन्न हैं। इसमें अवलोकनकर्त्ता स्वयं उन समाजों में जाकर रहता है और उनके कार्यों में भाग लेता है। वह विशेषतः फंक्शनल पद्धति (Functional Method) का प्रयोग करता है।

ये अन्तर बड़े साधारण हैं। वास्तव में समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र में कोई भी अन्तर नहीं है। दोनों का क्षेत्र ही भिन्न २ है— समाजशास्त्र का वर्त्तमान समाज और सामाजिक मानवशास्त्र का आदिम समाज। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि सामाजिक मानवशास्त्र आदिम समाजों का समाजशास्त्र (Sociology of primitive societies) हैं।

समाजशास्त्र तथा राजनीतिशास्त्र
(Sociology and Political Science)

समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। राजनीतिशास्त्र एक प्रकार से समाजशास्त्र का एक अङ्ग है। राजनीतिशास्त्र की परिभाषा करते हुये बेनवर्ग और शेबत ने लिखा है, "राजनीतिशास्त्र उन पद्धतियों का अध्ययन है जिनमें कि एक समाज अपने को सङ्गठित करता है और राज्य का सञ्चालन करता है।" § इस परिभाषा से हमें ज्ञात होता है कि राजनीतिशास्त्र केवल सङ्गठित सम्बन्धों का अध्ययन करता है। इन सम्बन्धों को राजनैतिक सम्बन्ध कहा जाता है। राजनैतिक सम्बन्ध सामाजिक सम्बन्ध के अङ्ग हैं। गार्नर ने लिखा है, "राजनीतिशास्त्र मानव सम्बन्धों के केवल एक प्रकार 'राज्य' से सम्बन्ध रखता है; परन्तु समाजशास्त्र सब प्रकार के मानव सम्बन्धों

---

§" Political Science is the study of the ways in which a society organizes and operates a state." Weinberg and Shabat, 'Society and Man,' p. 13.

का अध्ययन करता है।" + राजनीतिशास्त्र मनुष्य को राजनैतिक प्राणी मान कर अध्ययन करता है परन्तु वह समाजशास्त्र की भाँति इन विषयों की व्याख्या नहीं करता कि मनुष्य क्यों और कैसे राजनैतिक प्राणी बना।§ राजनीतिशास्त्र का अध्ययन समाजशास्त्र के सिद्धान्तों के ज्ञान के बिना उचित रीति से नहीं किया जा सकता। गिल्क्राइस्ट ने लिखा है, "राजनीतिशास्त्र में हमें मानव सम्बन्धों के तथ्यों एवं सिद्धान्तों को अवश्य ग्रहण करना होगा, जिन सिद्धांतों एवं तथ्यों का अध्ययन एवं प्रतिपादन करना समाजशास्त्र का कर्त्तव्य है।" * राजनीतिशास्त्र समाजशास्त्र पर इतना अधिक निर्भर है कि गिडिंस ने लिखा है, "समाजशास्त्र के प्राथमिक सिद्धांतों से अनभिज्ञ व्यक्तियों को राज्य के सिद्धांतों का पढ़ाना ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार कि न्यूटन के गति सिद्धांत से अनभिज्ञ व्यक्ति को खगोल अथवा ऊष्म विज्ञान पढ़ना।" † राजनीतिशास्त्र समाजशास्त्र की अपेक्षा सङ्कीर्ण है और साधारणतया समाजशास्त्र का एक उपांग ही माना जाता है। राजनीतिशास्त्र एक विशिष्ट सामाजिक विज्ञान है और समाजशास्त्र सामान्य एवं मौलिक सामाजिक विज्ञान है। राजनीतिशास्त्र और समाजशास्त्र एक दूसरे से पृथक् इसलिये नहीं है कि उन दोनों की विषय-सामग्री को स्पष्ट रूप से विभाजित की जा सकती है बल्कि इसलिये है कि समाज का क्षेत्र इतना लम्बा चौड़ा है जिसका समाजशास्त्र अकेले अध्ययन नहीं कर सकता और विशेषज्ञों की सहायता लेनी ही पड़ती है ×।

+ "Political science is concerned with only one form of human association, the state; sociology deals with all forms of association." James Wilford Garner, 'Political Science and Government,' The World Press Ltd. calcutta (1952), p. 30.

§ See Barker, 'Political Thought from Spencer to the Present Day', p. 159.

* "In Political Science we must assume the facts and laws of human association, which facts and laws it is the duty of Sociology to study and determine." R. N. Glichrist, 'Principles of Political Science,' Orient Longmans Ltd., seventh Ed. (1955), p. 11.

† "to teach the theory of the state to men who have not learned the first principles of sociology, is like teaching astronomy or thermodynamics to men who have not learned the Newtonian laws of motion." F. H. Giddings, 'Principles of Sociology,' p. 37

× See Ross 'Foundations of Sociology' p. 22 and Small's article in American jnournal of Sociology, July, 1906, pp. 11-31.

उपर्युक्त वर्णन से यह न समझ लेना चाहिये कि राजनीतिशास्त्र ही समाजशास्त्र से ग्रहण करता है। समाजशास्त्र भी राजनीतिशास्त्र से अनेक प्रकार की सहायता लेता है। कुछ लोगों का ऐसा मत है कि समाजशास्त्र का जन्म ही राजनीतिशास्त्र के कारण हुआ है। गिन्सवर्ग ने लिखा है, "यह कहा जा सकता है कि समाजशास्त्र की उत्पत्ति राज्य के अतिरिक्त अन्य संस्थाओं के अध्ययन करने के लिए राजनैतिक अन्वेषण के क्षेत्र के विकास के फलस्वरूप हुई, उदाहरणतः परिवार या सम्पत्ति के स्वरूप और संस्कृति और सभ्यता के अन्य तत्व जैसे आचार, धर्म और कला जो सामाजिक उपज माने जाते हैं और एक दूसरे के सम्बन्ध में अवलोकन किए जाते हैं।"§ समाजशास्त्र राजनीतिशास्त्र से उन सिद्धांतों के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है जो संगठित संबंधों से उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र में पारस्परिक आदान प्रदान होता रहता है। + पिछले तीस वर्षों में जो भी परिवर्तन राजनीतिशास्त्र के सिद्धांतों में हुए हैं, वे उन्हीं पदचिन्हों पर हैं, जिनकी ओर समाजशास्त्र ने संकेत किया।†

उपरोक्त वर्णन का यह अर्थ नहीं है कि दोनों शास्त्रों में कोई अन्तर नहीं है। दोनों के बीच में स्पष्ट अन्तर रेखा खींची जा सकती है यद्यपि कहीं कहीं पर ऐसा करना संभव नहीं होता। गिल्क्राइस्ट ने उचित लिखा है, "दोनों विज्ञानों की यथार्थ सीमाएं दृढ़ता से प्रस्थापित नहीं की जा सकतीं। वे कभी कभी एक दूसरे की सीमा का अतिक्रमण करती हैं, परन्तु (दोनों के बीच) एक स्पष्ट

---

§"Sociology may be said to have arisen as an extension of the filed of political inquiry to cover other institutions than the state, for example, the family, or the forms of property and other elements of culture and civilization such as morals, religion and art, regarded as social products and seen in their relations to each other." Ginsberg, 'Sociology,' p 25.

+ See Barnes, 'Sociology and Political theory' p. 24 and Elwood, 'Sociology in its Psychological Aspects,' pp. 36-37.

†Barnes, 'Some contributions of Sociology to Modern Political Theory' in Merriam, Barnes and others 'History of Political Theories, Recent Times,' p. 399.

सामान्य भेद है।"* समाजशास्त्र और राजनीतिशास्त्र मे निम्न प्रमुख भेद किए जा सकते हैं:—

(१) समाजशास्त्र समस्त सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है जब कि राजनीतिशास्त्र केवल राजनैतिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। राजनैतिक सम्बन्ध सामाजिक सम्बन्धों के केवल एक अङ्ग हैं।

(२) इस प्रकार समाजशास्त्र समाज के समस्त स्वरूपों का अध्ययन करता है और राजनीतिशास्त्र केवल राजनैतिक समाज का। समाजशास्त्र समस्त समुदाय का अध्ययन करता है और राजनीतिशास्त्र समुदाय की एक समिति—राज्य का। राज्य भी अन्य समितियों के समान एक समिति है। समाज और राज्य पर्यायवाची शब्द नहीं हो सकते। दोनों में महान् अन्तर है।

(३) समाजशास्त्र केवल संगठित सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन नहीं करता अपितु संगठित व असंगठित दोनों ही प्रकार के सम्बन्धों का अध्ययन करता है। राजनीतिशास्त्र केवल असंगठित संबंधों का ही अध्ययन करता हैं।

(४) समाजशास्त्र सामाजिक नियंत्रण के समस्त साधनों का अध्ययन करता है—जैसे प्रथा, रूढ़ियाँ, संस्थायें, आचार, परम्परा, विधान, विधि, इत्यादि, जब कि राजनीतिशास्त्र केवल उन्हीं नियन्त्रणों का अध्ययन करता है जिन्हें राज्य ने अपनी अभिमति (Sanction) प्रदान कर दी होती है।

(५) समाजशास्त्र जागरूक एवं अजागरूक दोनों ही अवस्थाओं में किये गये कार्यों की व्याख्या करता है जबकि राजनीतिशास्त्र केवल उन्हीं कार्यों का विश्लेषण करता है जो जागरूक अवस्था में किये जाते हैं।

समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र (Sociology and Economics)

"अर्थशास्त्र मनुष्य की उन क्रियाओं का अध्ययन करता है जो कि आवश्यकताओं को सन्तुष्टि के लिये भौतिक साधनों की प्राप्ति के लिये की जातीं हैं †।" अर्थशास्त्र आर्थिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। अर्थशास्त्र

---

*"The exact boundaries of the two sciences cannot be rigidly defined. They occasionally overlap; but there is a clear general distinction." R. N. Gilchrist, 'Principels of Political Science,' p. 11.

†"Economics is the study of man's activities devoted to obtaining the material means for the satisfaction of his wants." F. R. Fairchild, N. S. Buck and R. E. Slesinger, 'Principles of Economics,'the Macmillan Co. New York (1954), p. 2.

और समाजशास्त्र में घनिष्ट सम्बन्ध है क्योंकि कोई भी आर्थिक सम्बन्ध सामाजिक दशाओं से स्वतन्त्र नहीं है। उदाहरण के लिये मांग के नियम (Law of demand) सरीखे साधारण सिद्धान्त को ही लीजिये। मार्शल ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन इस प्रकार किया है, जितनी अधिक मात्रा में (किसी वस्तु को) बेचना हो, उतनी ही कम कीमत (होनी चाहिये) जिस पर कि उसे ग्राहक पाने के लिये प्रस्तुत हो " + यह सिद्धान्त शून्य (Vacuum) में काम नहीं करता है। मूल्य और बिक्री की संख्या का अनुपात अनेक तथ्यों पर आधारित है जो कि आर्थिक क्षेत्र से बिल्कुल परे है—जैसे यह वस्तु विलासिता, आवश्यकता या सुखकर वर्गों में से कौनसी है: प्रथाओं और फैशन का उससे क्या सम्बन्ध है और उस समाज की सभ्यता में उसका क्या स्थान है। ये सारे तथ्य आर्थिक क्षेत्र से बाहर हैं और समाजशास्त्र के क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार आर्थिक सम्बन्धों का पर्यावरण सामाजिक सम्बन्ध है। अर्थशास्त्र समाज-शास्त्र से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता है। मैकाइवर ने उचित लिखा है, "इस तरह से आर्थिक घटनायें सदैव सामाजिक आवश्यकताओं और क्रियाओं के समस्त स्वरूपों द्वारा निश्चित होती हैं और वे (आर्थिक घटनायें) सदैव प्रत्येक प्रकार की सामाजिक आवश्यकताओं और क्रियाओं को पुनर्निश्चित—सृजन स्वरूपीकरण एवं परिवर्तित करती रहती हैं।" †

अर्थशास्त्र भी राजनीतिशास्त्र के समान समाजशास्त्र का एक अङ्ग है। थॉमस ने लिखा है, "वास्तव में अर्थशास्त्र समाजशास्त्र के विस्तृत विज्ञान की एक शाखा है·····× सिल्वरमैन ने भी इसी विचार को व्यक्त किया है, "साधारण कार्यों

+"The greater the amount to be sold, the smaller must be the price at which it is offered in order to find purchasers," Marshall, Principles of Economics,' 6th. Ed., p. 99

†"Thus economic phenomena are constantly determind by all kinds of social need and activity, and in turn they are constantly re-determining-creating, shaping and transforming, social need and activitv of every kind." R. M. MacIver, 'Community: A Sociological Study', Macmillan & Co. Ltd. London (1928), pp. 50-51,

×"Economics is, in fact, but one branch of the comprehensive science of Socioiogy, .."S Evelvn Thomas 'Elements of Economics' Sir Isaac Pitman & Sons Ltd. Tenth Ed. (1952), p. 7.

के लिये इसे (अर्थशास्त्र) पितृ विज्ञान समाजशास्त्र जो कि सामाजिक सम्बन्धों के सामान्य सिद्धान्तों का अध्ययन करता है, कि एक शाखा माना जा सकता है।"*

समाजशास्त्र भी अर्थशास्त्र से सहायता लेता है। समाजशास्त्र आर्थिक विश्लेषण से लाभ उठाता है। अर्थशास्त्र एक विकसित विशिष्ट विज्ञान है इसलिये उसकी अध्ययन पद्धतियों का लाभ समाजशास्त्र उठाता है। यद्यपि अर्थशास्त्र समाजशास्त्र की एक शाखा है तथापि उसके उद्देश्य और उसकी व्यापकता समाजशास्त्र के उद्देश्य एवं व्यापकता से बिल्कुल भिन्न है। उसकी अध्ययन की पद्धति, परिमिति और उद्देश्य विशिष्ट और विभिन्न हैं। अतः अर्थशास्त्र, यद्यपि समाजशास्त्र की एक शाखा है फिर भी वह एक पृथक् विज्ञान है।

समाजशास्त्र और मनोविज्ञान (Sociology and Psychology)

मनोविज्ञान और समाजशास्त्र में घनिष्ट सम्बन्ध है। आधुनिक युग में मानव समाज की समस्याओं को सुलझाने के लिये मनोवैज्ञानिक युक्तियों का प्रयोग एक फैशन हो गया है। समाजशास्त्रीय अध्ययनों में वैज्ञानिक विश्लेषण का विशेष महत्व है।

मनोविज्ञान मस्तिष्क का विज्ञान है। थाउलस ने मनोविज्ञान की परिभाषा करते हुये लिखा है, "मनोविज्ञान मानव अनुभव एवं व्यवहार का यथार्थ विज्ञान है।" + समाजशास्त्र मनुष्यों के समूहों के व्यवहार का विज्ञान है। इससे स्पष्ट है कि समाजशास्त्र और मनोविज्ञान एक ही प्रकार की प्रक्रियाओं का अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोण से करते हैं। मैकाइवर ने लिखा है, "यह केवल सामान्य सामग्री की ओर दृष्टिकोण का अन्तर है।" †

पहले यह सोचा जाता था कि मनुष्य जो भी व्यवहार करता है उसे बड़े मनन के बाद करता है और वह इन कार्यों से दूर भागता है जिनमें उसे अधिक दुःख दिखाई पड़ता है और उन कार्यों को करता है जिसमें उसे सुख मिलता है

---

*"It may be regarded for ordinary purposes, as an offshoot of the parent science of Sociology, which studies the general principles of all social relations." H. A. Silverman, 'The Substance of Economics,' Sir Isaac Pitman & Sons Ltd. London, Thirteenth Ed. (1955) p. 2.

+"Psychology is the positive science of human experience and behaviour." R. H. Thouless, 'General and Social Psychology,' p, 1., University Tutorial Press Ltd. London. (1944).

†"It is a difference of attitude in regard to a common material." MacIver, 'Community', p. 65.

है। इसे सुख और दुःख का सिद्धान्त' (Theory of pleasure and Pain) कहते हैं। मनोविज्ञान ने इस सिद्धान्त को ठीक नहीं माना और मानव प्रकृति का सूक्ष्म विश्लेषण किया है। मनोविज्ञान की खोज मूल प्रवृतियां (Instincts), प्रतिक्षेप वृत-खण्ड (Reflex arc), सहानुभूति (Sympathy), सुझाव (Suggestion), अनुकरण (Imitation), उद्वेग (Emotions) इत्यादि के द्वारा मानव व्यवहार को अधिक सरलता से समझा जा सकता है। समाजशास्त्र को इनसे बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। इसी प्रकार समाजशास्त्र के सामान्य सिद्धान्तों के द्वारा मनोविज्ञान ने भी लाभ उठाया है। मैकाइवर ने उचित ही लिखा है, "समाजशास्त्र विशेष रूप से मनोविज्ञान को सहायता देता है जिस प्रकार कि मनोविज्ञान समाजशास्त्र को विशेष सहायता देता है।" ¶

समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के सम्बन्धों के कारण एक और विज्ञान उत्पन्न हो गया है जिसे हम सामाजिक मनोविज्ञान (Social Psychology) कहते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा करते हुए क्रच और क्रचफिल्ड ने लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति के व्यवहार का विज्ञान है।" + समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान में कार्ल पियरसन १ ने कोई अन्तर नहीं माना है और वार्ड२ ने इन्हें अत्यधिक समान घोषित किया है। इसमें सन्देह नहीं कि सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के विषय-क्षेत्रों में अन्तर की रेखा खींचना कठिन है फिर भी इन्हें समान नहीं कहा जा सकता। क्लाइनबर्ग ने इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "इसी समय यह भी सत्य है कि समाजशास्त्री का मौलिक सम्बन्ध समूह के व्यवहार से है और सामाजिक

§" इन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के सुन्दर एवं विस्तृत विश्लेषण के लिये प्रो० तोमर द्वारा लिखित 'समाजशास्त्र' की रूपरेखा भाग २'या 'सामाजिक मनोविज्ञान भाग १' (प्रकाशक दत्त ब्रदर्स, अजमेर) पढ़िये।

¶ "Sociology in especial gives aid to psychology, just as psychology gives special aid to sociology." MacIver, 'Community', p. 65

+ 'Social Psychology is the science of the behaviour of the individual in society.' Krech and Crutchfield, 'Theory and Problems of Social Psychology'. p. 7.

1 See Kari Pearson 'The Grammer of Science,' p. 527.

2 See Ward, 'Pure Sociology', p. 59.

मनोवैज्ञानिक का सामूहिक परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार से।"* सामाजिक मनोविज्ञान को समाजशास्त्र और मनोविज्ञान दोनों ही अपनी शाखा मानते हैं।

और इस विषय पर समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिकों दोनों ही ने पुस्तकें लिखी हैं परन्तु दृष्टि कोण का अन्तर उनकी पुस्तकों में पाया जाता है यद्यपि विषय-वस्तु समान होती है, उदाहरण के लिए मैकड्गल (मनोवैज्ञानिक) और रॉस (समाजशास्त्री) की पुस्तकें "सोशियल साइकॉलॉजी" देखिए।

सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के बीच की शृङ्खला है। मोटवानी ने उचित लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के बीच एक कड़ी है।" † लेपियर और फ्रान्सवर्ग ने उपमा देते हुये समझाने का इस प्रकार प्रयत्न किया है, "सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के लिये उसी प्रकार है जिस प्रकार शारीरिकरसायनशास्त्र, जीवशास्त्र और रसायनशास्त्र के लिये है।" ¶

इतना सम्बन्ध होते हुये भी दोनों के दोनों विषय-क्षेत्र भिन्न है। वोगर्डस ने लिखा है, 'जैसे मनोविज्ञान मानसिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण करता है वैसे ही समाजशास्त्र सामाजिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण करता है।" × मनोविज्ञान मस्तिष्क को अभिव्यक्ति का अध्ययन करता है चाहे व्यक्ति को शून्य में मानकर करे, और चाहे सामाजिक समूह में। कोई भी व्यक्ति शून्य में कार्य नहीं करता है। किसी भी सम्बन्ध को सामाजिक सम्बन्ध से पृथक् नहीं किया जा सकता। अतः यह कहना कि मनोविज्ञान विचारों का अध्ययन करता है और समाजशास्त्र सामूहिक विचारों का, एक महान् भूल है। दोनों की विषय सामग्री एक होते हुये भी अध्ययन करने का दृष्टिकोण भिन्न है।

---

* "At the same time it remains true that the primary concern of the sociologist is group behavior, and that of the social psychologist is the behavior of the individual in the group situation." Otto Klineberg, 'Social Psychology,' Henry Holt and Co. New york, Rev. Ed. (1956), pp. 6-7.

† 'Social Psychology is a link between Psychology and Sociology." Motwani; 'Sociology,' p. 53

¶ "Social Psychology is to Sociology and Psychology as Bio-chemistry is to Biology and Chemistry." Lapiere and Fransworth, Social Psychology'

× "As psychology analysis mental processes, so sociology analysis social processes." Bogardus, 'Sociology', p.564 .

समाजशास्त्र और न्यायशास्त्र (Sociology and Jurisprudence)

न्यायशास्त्र समस्त न्याय के सिद्धान्तों के अध्ययन को कहते हैं। यह न्याय के भौतिक सिद्धान्तों का विवेचन करता है। डा० सेथना ने लिखा है, "जिस प्रकार मानव ढाँचे के लिए रीढ़ की हड्डी है, उसी प्रकार समस्त न्याय के ज्ञान के संग्रह के लिए तर्क है। बिना तर्क के एक कानून का अस्तित्व नहीं रहेगा और जब कानून का तर्क समाप्त हो जाता है तो कानून स्वयं भी समाप्त हो जाता है।"×समाजशास्त्र सामाजाकि सम्बन्धों का अध्ययन है और न्यायिक संबंध सामाजिक संबंधों के अंग हैं, इसके कारण इन दोनों में घनिष्ठ संबंध है।

न्यायशास्त्री उन विधियों का विवेचन करता है जिनका पालन नागरिक को करना ही चाहिए, परन्तु समाजशास्त्री यह अध्ययन करता है कि समाज में इन विधियों का पालन क्यों, कहा तक और किस प्रकार होता है। विधि का समाजशास्त्र (Sociology of Law) इन्हीं घटनाओं का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र में विधि से संबंधित एक विशिष्ट समाजशास्त्र का विकास हुआ है जिसे अपराधशास्त्र (Criminology) और दंड शास्त्र (Penology) कहते हैं। अपराधशास्त्र अपराध और अपराधी व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है। वह उन मौलिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है जो मान्य एवं स्थापित व्यवहार से भिन्न व्यवहार, असामाजिक एवं समाजविरोधी व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती हैं। इस क्षेत्र में समाजशास्त्र ने न्यायशास्त्र की बड़ी सहायता की है।

दंडशास्त्र † दंड व्यवस्थाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। समाजशास्त्र ने इस क्षेत्र में बड़ी प्रगति की है। दकियानूसी दंड पद्धतियाँ समाजशास्त्र के ज्ञान के कारण अब व्यर्थ प्रतीत होती है। समाजशास्त्र ने इस क्षेत्र में न्यायशास्त्र को इतना प्रभावित किया है कि न्यायशास्त्र अब समाजशास्त्र के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों पर आधारित है। बलसारा ने उचित ही लिखा है, "समाजशास्त्र के जन्म एवं विकास के कारण न्यायशास्त्र को एक नवीन जागृति प्रदान की गई

×"Just as the spinal cord is to the human frame, so is reason to the entire body of law. Without reason a law will not stand; and when the logic of it ceases, the law itself ceases." Dr. M. J. Sethna, 'Jurisprudence.'

†विस्तृत अध्ययन के लिए लेखक की पुस्तक, 'समाजशास्त्र की रूपरेखा' भाग २ पढ़िये।

है" * समाजशास्त्र ने न्यायशास्त्र में मानवता भर दी है। आधुनिक न्यायशास्त्र मानवता के दृष्टिकोण से अवलोकन करता है। समाजशास्त्र ने यह अनुभव करा दिया है कि विधियाँ मनुष्य के लिए पारित की जाती हैं न कि मनुष्य विधियों के लिए।

समाजशास्त्र भी न्यायशास्त्र से अनेक वस्तुएं ग्रहण करता है। सामाजिक नियन्त्रण को किस प्रकार तर्क द्वारा प्रभावशाली बनाया जा सकता है, न्यायशास्त्र उन सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति है, जिन्हें समाज पालन करवाना चाहता है और जिनका कि वह आदर करता है। इस प्रकार विभिन्न दशाओं में कार्य करते हुए भी आदान प्रदान होता रहता है।

समाजशास्त्र और भूगोल (Sociology and Geography)

भूगोल और समाजशास्त्र का यद्यपि प्रत्यक्ष सम्बन्ध इतना घनिष्ठ नहीं तथापि अप्रत्यक्ष सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। प्राकृतिक पर्यावरण (Natural environment) और ऋतुओं का समाज पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। कुछ समाजशास्त्रियों का यह मत है कि समाज स्वरूप एवं आकार भौगोलिक पर्यावरण पर पूर्ण रूप से आश्रित है। लेप्ले (Le Play) ने इस विचारधारा को समाजशास्त्र में बड़ा प्रोत्साहन दिया। समाजशास्त्र में एक बलशाली भौगोलिक सम्प्रदाय (Geographical School) स्थापित हो गया। इनका विस्तृत विवेचन हम इसी पुस्तक के चतुर्थ खंड में करेंगे।

समाजशास्त्र सभ्यता एवं संस्कृति का अध्ययन करता है। इनको बिना भौगोलिक दशाओं के समझे हुए नहीं समझा जा सकता। सामाजिक जीवन भौगोलिक पर्यावरण से अत्यधिक प्रभावित होता है। समाजशास्त्र और भूगोल के इस घनिष्ट संबंध के फल स्वरूप सामाजिक भूगोल (Social Geography) या मानव भूगोल (Human Geography) का जन्म हो गया है।

समाजशास्त्र और इतिहास (Sociology and History)

इतिहास और समाजशास्त्र मानव समाज का अध्ययन करते हैं। इतिहास विशिष्ट एवं महत्व पूर्ण घटनाओं का विवरण देता है और समाजशास्त्र उन प्रक्रियाओं का विवेचन करता है, जिनके कारण ये घटनायें घटित होती हैं। पार्क ने

---

* "By the birth and growth of sociology, a new orientation has been given to jurisprudence." F. N. Balsara, 'Sociology', Lakhani Book Depot, Ramchandra Building Girgon, Bombay (1956), p. 73.

उचित लिखा है, "इन अर्थों में इतिहास मानव अनुभव और मानव प्रकृति का मूर्तिमान और समाजशास्त्र अमूर्तिमान विज्ञान है" ।†

इतिहास संस्कृति एवं सभ्यता का विशिष्ट काल के अनुसार अध्ययन करता है और समाजशास्त्र सभ्यता एवं संस्कृति की उत्पत्ति, विकास इत्यादि की प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। इतिहास युद्धों का वर्णन करता है परन्तु समाजशास्त्र उन प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है जो युद्ध को प्रोत्साहन देती हैं। समाजशास्त्र युद्ध को सामाजिक घटना के रूप से अध्ययन करता है। वह इसके प्रभावों का भी अध्ययन करता है।

समाजशास्त्र और आचारशास्त्र (Sociology and Ethics)

समाजशास्त्र और आचारशास्त्र का संबंध भी अटूट है। आचारशास्त्र क्या होना चाहिए, के प्रश्न का अध्ययन करता है। वह उचित एवं अनुचित अच्छा एवं बुरा, के प्रश्नों का अध्ययन करता है। सूक्ष्म रूप से यह कहा जा सकता है कि वह मूल्यों (Values) का अध्ययन करता है। मूल्य सामाजिक संबंधों के स्वरूपों को निश्चित करते हैं। मैकाइवर ने लिखा है, "बिना मूल्यों के (समझे) समाज को नहीं समझा जा सकता।"* समाज को समझने के लिए मूल्यों को समझना अत्यन्त आवश्यक है, इसलिए समाजशास्त्र सदैव आचारशास्त्र से सहायता लेता रहता है। दूसरी ओर आचारशास्त्र भी समाजशास्त्र पर आश्रित है, क्योंकि मूल्य समाज की वर्तमान विचारधारा के अनुसार ही निर्धारित होते हैं। वर्तमान विचारों का अध्ययन समाजशास्त्र का विषय-क्षेत्र है। आचारशास्त्र एक व्यवस्थित दर्शन है जब कि समाजशास्त्र एक विज्ञान है।

समाजशास्त्र और सांख्यिकी (Sociology and Statistics)

समाजशास्त्र सांख्यिकी का अत्यधिक उपयोग करता है। सामाजिक पर्यालोकन एवं परीक्षण में सांख्यिकी के बिना समाजशास्त्र अधूरा ही रह जाता। सांख्यिकी के ही कारण समाजशास्त्र एक यथार्थ विज्ञान (Exact Science) बनता जा रहा है। सांख्यिकी का भी समाजशास्त्र के अभाव में कोई महत्व न होता। समाजशास्त्र का सांख्यिकी पर इतना प्रभाव पड़ा है कि एक विशिष्ट शाखा--

---

†"In the same sence that history is the concrete, Sociology is the abstract, science of human experience and human nature," Park, 'Society', p. 228.

*"Society without value cannot be understood" R. M. MacIver, 'Community.' p. 60.

सामाजिक सांख्यिकी (Social Statistics)—विकसित हो गई है। अतः इन दोनों में घनिष्ट संबंध है।

विभिन्न विशिष्ट विज्ञानों को समाजशास्त्र से सम्बन्ध का हमने अभी तक अध्ययन किया। इस अध्ययन से हमें ज्ञात हुआ होगा की समाजशास्त्र कितना महत्वपूर्ण विज्ञान है और उसके अभाव में अन्य विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों का भी विशेष महत्व नहीं है। वे छोटे २ स्वतंत्र राज्यों के समान आपस में लड़ते रहते और समाज की व्याख्या करने में असमर्थ रहते। समाजशास्त्र एक केन्द्रीय सरकार के समान उन सब की शक्ति को बल देता है और उन्हें शान्ति प्रदान करते हुए अपने ज्ञान को विकसित करने का अवसर प्रदान करता है। मानव नाटक की पूर्णता बड़ी विस्तृत है और इसका अध्ययन किसी एक विज्ञान के द्वारा नहीं किया जा सकता। विशिष्ट सामाजिक विज्ञान उन सरिताओं (Rivers) के समान हैं जो सागर में मिल कर ही शान्ति पाती हैं। समाजशास्त्र इन विशिष्ट सामाजिक विज्ञान रूपी सरिताओं का सागर है। विभिन्न सामाजिक विज्ञान तब ही पूर्णता को प्राप्त होते हैं जब कि उन्हें सामाजिक जीवन के जाल के अन्य भागों से संबधित किया जाता है। समाजशास्त्र ही उन्हें इस सम्बन्ध को स्थापित करने की क्षमता प्रदान करता है। इस संबंध के अभाव में विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों का कोई भी अर्थ नहीं है। मोटवानी ने उचित लिखा है, "वास्तव में, समाजशास्त्र की सहायता से अर्थपूर्ण वास्तविकता में समन्वय के अभाव में, वे कृत्रिम हैं, अपितु सामाजिक जीवन के महत्व को समझने के लिए भयानक यन्त्र हैं।"*

मैकाइवर ने समाजशास्त्र और अन्य विशिष्ट सामाजिक विज्ञानों के संबंध को बड़े सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है। हम समिति और समुदाय के समाजशास्त्री अर्थों का विवेचन खंड दो में कर चुके हैं। समितियाँ समुदाय की अंग होती हैं। इसी आधार पर मैकाइवर ने लिखा है, "जिस प्रकार समितियों का क्षेत्र समुदाय के अंतर्गत होता है, वैसे ही सामाजिक विज्ञान अपना क्षेत्र समाजशास्त्र के अन्तर्गत रखते हैं।"†

---

*"Indeed without their coordination into a meaningful reality with the aid of Sociology, they are artificial, nay, dangerous instruments for grasping the significance of social life." Motwani, 'Sociology' p. 53,

†"The social sciences have their sphere within sociology, just as, associations have their sphere within community." R. M. MacIver, 'Community,' p. 49.

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समाजशास्त्र और विशिष्ट सामाजिक विज्ञान†—अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, सामाजिक मानवशास्त्र सामाजिक मनोविज्ञान इत्यादि एक ही परिवार के सदस्य हैं जिनमें समाजशास्त्र का एक प्रमुख स्थान है। समाजशास्त्र तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों में आदान प्रदान होता रहता है। और उन्हें एक दूसरे से बिल्कुल पृथक् नहीं रखा जा सकता।

प्रश्न

१. समाजशास्त्र का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध बताइए। इसका शैक्षणिक योजना में क्या मूल्य हो सकता है? (आगरा १९५०)
(Show the inter-relation of Sociology to other social sciences and discuss its value in educational programme.)

२. मानवशास्त्र और अर्थशास्त्र से समाजशास्त्र का सम्बन्ध बताइए। इन तीनों विज्ञानों द्वारा कौन सी समान समस्याएं संयुक्त रूप से अध्ययन की जा सकती हैं? (आगरा, १९५६)
(Examine the relationship of Sociology with Anthropology and Economics. What common problems can be studied jointly by the three sciences?)

३. उदाहरण देते हुए समझाइए कि समाजशास्त्रीय सिद्धांतों को कौन सी मानवशास्त्री खोजों ने नवीन प्रकाश दिया है? (राजपूताना, १९५४)
(Explain with examples how some of the findings in Anthropology have given new light to sociological theories.)

४. समाजशास्त्र से अर्थशास्त्र और जीवनशास्त्र के सम्बन्ध की विवेचना कीजिए। (राजपूताना, १९५५)
(Examine the relationship between Economics and Biology with Sociology.)

---

* Dr. S. Radhakrishnan in his inaugural address to the Round-Table Conference on the teaching of Social Sciences in South Asia, See its report, published by UNESCO. South Asia Science Co-operation office, Delhi, p. 11.

अध्याय ८

समाजशास्त्र की वैज्ञानिक पद्धतियाँ

(Methods of the study of Sociology)

समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, इसलिए प्रत्येक विज्ञान की भाँति इसके अध्ययन के लिए भी ऐसी पद्धतियाँ होनी चाहिए जो वैज्ञानिक हों। अध्याय ६ में हम वैज्ञानिक पद्धति पर प्रकाश डाल चुके हैं। यहां पर इतना कहना पर्याप्त होगा कि समाजशास्त्र के अध्ययन की पद्धतियाँ वैज्ञानिक हैं और उन अनेक कसौटियों पर खरी उतरती हैं जिनका विवेचन हम कर ही चुके हैं।

पद्धति का अर्थ (Meaning of Method)

सर्व प्रथम हमें यह जानना चाहिए कि पद्धति का क्या अर्थ होता है। पद्धति का अर्थ है—निश्चित व्यवस्था के अनुसार अध्ययन करना। इसके अन्तर्गत कार्य प्रणालियां (Procedures) और प्रविधियां (Techniques) आती हैं। साधारण भाषा में इसे कार्य करने का ढंग कहा जा सकता है।

वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ (Meaning of Scientific Method)

वैज्ञानिक पद्धति वह पद्धति है जिसे स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जा सके और परीक्षण करने वाले के अतिरिक्त कोई भी अन्य व्यक्ति उसी प्रकार से अध्ययन कर सके। इसके प्रमुख चरण हैं—(१) उपकल्पना का निर्माण (Formulation of a hypothesis) (२) यन्त्रों का निर्वाचन (Selection of tools) (३) अवलोकन (Observation) (४) वर्गीकरण (Classification) (५) विश्लेषण (Analysis) (६) और सामान्य नियम का प्रतिपादन (Generalisation)। इन पर हम विस्तार में अध्याय ६ पर प्रकाश डाल चुके हैं, पाठकगण उसका अनुसरण करें।

समाजशास्त्र की वैज्ञानिक पद्धतियाँ

(Scientific method of Sociology)

अब हम समाजशास्त्र की कुछ प्रमुख वैज्ञानिक पद्धतियों पर प्रकाश डालेंगे।

(१) सांख्यिकीय पद्धति (Statistical Method)

समाजशास्त्र में इस पद्धति का बड़ा उपयोग होने लगा है। इस पद्धति के द्वारा परिमाणात्मक (Quantitative) तथ्यों का सुन्दर संग्रह किया जा सकता है। इसके द्वारा एकत्रित विषय-सामग्री गणित पर आश्रित होती है। बोगर्डस ने लिखा है, "सामाजिक सांख्यिकी वह गणित है जो कि मानव तथ्यों के प्रयोग में लाई गई होती है।"§ गणित पर आधारित पद्धति बड़ी ही स्पष्ट एवं लाभप्रद होती है। सामाजिक विज्ञानों के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है। ओडम ने लिखा है, "सांख्यिकी, जो कि घटनाओं के, विषयक दृष्टि से, मापने और गणना करने का विज्ञान है, अनुसंधान कार्य के लिये एक आवश्यक यंत्र है।"¶

(२) वैयक्तिक जीवन के अध्ययन की पद्धति या केस स्टडी पद्धति (Case study Method)

यह पद्धति समाजशास्त्र की एक नवीन एवं अनुपम पद्धति है। इस पद्धति का मानव व्यवहारों के अध्ययन करने में बड़ा उपयोग किया जाता है। इसी पद्धति को 'सोसियल वर्क' में 'सोसियल केस वर्क' (Social case work) कहते हैं। समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है और सामाजिक सम्बन्ध अधिकांशतः गुणात्मक (Qualitative) होते है। इन्हें सरलता से मापा नहीं जा सकता। इस कठिनाई को यह पद्धति सरल बना देती है। एक प्रकार से व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन की पद्धति सांख्यिकी पद्धति की पूरक है।

इस पद्धति का वर्णन करते हुये बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन की पद्धति गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिसमें एक

---

§ "Social statistics is mathematics applied to human facts." Bogardus, E. S. 'Sociology', p. 546.

¶ "Statistics, which is the science of numbring and of measuring phenomena objectively, is an essential tool of research." H. W. Odum; 'Understanding Society', p. 45.

व्यक्ति, परिस्थिति या संस्था का अति सतर्क एवं पूर्ण अवलोकन किया जाता है।"† इस पद्धति के अन्तर्गत जिस व्यक्ति, समूह या संस्था का अध्ययन किया जाता है उसका पूर्ण इतिहास एवं सम्बन्धित तथ्य एकत्रित किये जाते हैं। जिस प्रकार एक वकील केस तैयार करता है उसी प्रकार इसका अध्ययन किया जाता है जिस तथ्य की खोज की जाती है उससे सम्बन्धित समस्त तथ्यों को एकत्रित किया जाता है। एक प्रकार से यह पद्धति एतिहासिक पद्धति का परिवर्तित स्वरूप है। एतिहासिक पद्धति वर्तमान में प्रयोग की जाती है, यही अन्तर है। इस पद्धति में बड़ी सतर्कता की आवश्यकता होती है। अवलोकन बड़ी सावधानी से करना पड़ता है। बीसंज और बीसंज ने लिखा में, "पूर्णता इस पद्धति का प्रधान सिद्धान्त है।"§

गुडे और हाट ने इनकी परिभाषा इन शब्दों में की है, "यह सामाजिक तथ्यों की व्यवस्था करने की पद्धति है ताकि अध्ययन किये जाने वाले सामाजिक तथ्य की इकाई सम्बन्धी पद्धति की रक्षा हो सके। तनिक भिन्न रूप से यदि व्यक्त किया जाय तो यह एक ऐसा ढङ्ग है जो कि सामाजिक इकाई को पूर्णता मानता है।"¶ यांग ने लिखा है, "व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन की पद्धति एक व्यक्ति के समस्त संयुक्त गहन अध्ययन के रूप में परिभाषित की जा सकती है जिसमें कि अन्वेषक अपनी पूर्ण चतुरता और पद्धतियों का प्रयोग करता है, या (यह) एक व्यक्ति के बारे में पर्याप्त सूचना का व्यवस्थित संग्रह है जिससे कोई भी यह समझ सके कि वह (पुरुष या स्त्री) समाज की इकाई के रूप में किस प्रकार कार्य करता है या करती है।"†

† "The case study is a form of qualitative analysis involving the very careful and complete observation of a person, a situation, or an institution." Biesanz and Biesanz, 'Modren Society,' p. 11.

§ "Thoroughness is the keystone of this method." ibid p.11

¶ "It is a way of organising social data so as to preserve the unitary character of the social object being studied. Expressed somewhat differently, it is an approach which views any social unit as a whole" W J. Goode and P. K. Hatt, "Methods in Social Research", p. 331.

† "The case study method may be defined as an all-inclusive and intensive study of an individual, in which the investigator brings to bear all his skill and methods, or as a systematic gathering of enough information about a person to permit one to understand how he or she functions as a unit of society." Hsin-Pao-Yang. 'F. A. O.' Publication, p. 57.

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन की पद्धति किसी वस्तु के विषय में सूक्ष्म विश्लेषण करती है। बर्गस ने इस पद्धति को सामाजिक सूक्ष्मदर्शक यंत्र (Social Microscope) बताया है।

(३) समाजमिति (Sociometry)

यह पद्धति समाजशास्त्र की विशेष खोज है। मुरेनो (Moreno) इस पद्धति का पिता कहा जाता है। इस पद्धति के द्वारा सामाजिक सम्बन्धों एवं मानव व्यवहारों का परिमाणात्मक अध्ययन किया जाता है। जिस प्रकार ताप मापने के लिये पैमाने निश्चित किये गये हैं उसी प्रकार सामाजिक सम्बन्धों एवं व्यवहारों को मापने के लिये भी पैमाने (Scales) बनाये गये हैं। इन्हीं पैमानों की सहायता से मानव व्यवहारों को मापा जाता है।

(४) सामाजिक पर्यालोकन (Social Survey)

सामाजिक पर्यालोकन अति प्राचीन काल से किसी न किसी रूप में प्रयोग किया जाता रहा है। अब इसे वैज्ञानिक रूप दे दिया गया है। सामाजिक पर्यालोकन सामाजिक संस्थाओं एवं एक समूह के व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन है। इसे वस्तु स्थिति ज्ञात करने का अध्ययन कह सकते हैं। यह अध्ययन विशिष्ट समूह या समुदाय से सम्बन्धित होता है। इस पद्धति के अन्तर्गत परिमाणात्मक तथ्यों (Qantitative facts) को एकत्रित किया जाता है। इन तथ्यों को एकत्रित करने के लिए अनुसूचि (Schedule) और प्रश्नावली (Questionaire) इत्यादि यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक पर्यालोकन किसी न किसी उद्देश्य से किया जाता है।

प्रश्न

१. व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन की पद्धति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।
(राजपूताना १९५५, आगरा १९५६)
(Write a short note on case study.)

चतुर्थ खण्ड

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण
(Heredity and Environment)

अध्याय ९ : पर्यावरण का अर्थ
(Meaning of Environment)
अध्याय १० : वंशानुसंक्रमण का अर्थ
(Meaning of Heredity)
अध्याय ११ : मेंडल का सिद्धांत
(Mendel's Principle)
अध्याय १२ : वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण
(Heredity and Environment)
अध्याय १३ : वंशानुसंक्रमण और मानवजीवन
(Heredity and Human Life)

अध्याय ६

पर्यावरण का अर्थ

(Meaning of Environment)

देश में यदि समय पर वर्षा नहीं होती या आवश्यकता से अधिक हो जाती है, तो चारों ओर हाहाकार मच जाता है। ऐसा क्यों होता है ? क्या आपने कभी इस पर विचार किया है ? नगरों के भव्य महलों में रहने वाले, जगमगाते हुए बल्बों की रोशनी में थिरकने वाले और प्रकृति से दूर रहने वाले इस प्रश्न की समस्या में नहीं पड़ते। फिर भी वे इससे प्रभावित अवश्य होते हैं। आओ, तनिक हम गांवों की ओर चले।

हम गांव की पगडण्डी पर चले जा रहे हैं। दूर कुछ बस्ती सी दृष्टिगोचर हो रही है। हमारे चारों ओर पृथ्वी ही पृथ्वी है। सूर्य उज्ज्वलता से चमक रहा है और अपनी गरिमा से मनुष्य को व्याकुल कर रहा है। फिर भी किसान इस कठोर गर्मी में चिन्तारहित अपना खेत जोतने में व्यस्त है। आकाश पर मेघ छाने लगे हैं। किसान का हृदय पुलकित होने लगा। गांव के पुरुष, स्त्रियां, बच्चे सब इन्द्र भगवान की जय जयकार करते हुए मारे प्रसन्नता के नाच उठते हैं। क्या यह दृश्य देखकर हमें 'दो बीघा जमीन' चलचित्र में बलराज साहनी द्वारा किये हुये किसान के अभिनय का स्मरण नहीं आ जाता ? हम जानते हैं कि वर्षा होने वाली है और उसके उपरान्त क्या होगा—वर्षा होगी, किसान बीज बोयेगा, पृथ्वी में नमी आयेगी, बीज को अपनी खुराक मिलेगी, किल्ले फूटेंगे और खेत हरा भरा हो जायेगा।

बीज के उगने के लिये कुछ वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे पानी, अच्छी मिट्टी, खाद, गर्मी और वायु इत्यादि। इन सब वस्तुओं की बीज को आवश्यकता होती है। बीज के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं को उस बीज का पर्यावरण कहते हैं। इसके पूर्व कि हम और अधिक विवेचन करें, हम पर्यावरण (Environment) के अर्थ पर प्रकाश डालेंगे।

पर्यावरण*का अर्थ (Meaning of Environment)

ऊपर के उदाहरण से एक साधारण पर्यावरण की परीभाषा निर्मित की जा सकती है। बीज के अतिरिक्त और जो कुछ भी उसके चारों ओर है वह उसका पर्यावरण है। पर्यावरण का साधारण अर्थ भी यही होता है—परि+आवरण= पर्यावरण, परि का अर्थ होता है चारों ओर से और आवरण का अर्थ है ढके हुये अर्थात् पर्यावरण वह है जो चारों ओर से ढके हुये हैं।

पर्यावरण को सामान्य परिभाषा काम चलाने के लिये इस प्रकार की जा सकती है—प्राणी को छोड़कर और जो कुछ उसके चारों ओर है वह उसका पर्यावरण है। रॉस ने पर्यावरण की परिभाषा इन शब्दों में की है, "पर्यावरण कोई भी बाह्य शक्ति, जो हमें प्रभावित करती है, होती है।" § पर्यावरण को हमने बीज के उदाहरण से समझाने का प्रयत्न किया था। बीज प्राणी है और इस प्राणी के अतिरिक्त जो कुछ भी है—किसान, खेत, भूमि, अन्य बीज, धूप, पानी, वायु, खाद, आस पास के पेड़, सूर्य, चन्द्र एवं अन्य नक्षत्र, हल, बैल, मशीन, ट्रैक्टर इत्यादि—उसका पर्यावरण है। इसी प्रकार अन्य प्राणियों का भी पर्यावरण होता है। मान लीजिये, आप अपनी बी० ए० की परीक्षा में बैठे हैं तो, प्राध्यापक, अन्य विद्यार्थीगण, मेज, कुर्सियाँ, आपके सर के ऊपर टंगा हुआ बिजली का पंखा, वायु, मस्तिष्क के विचार, कहने का अभिप्राय यह है कि आपको (प्राणी) छोड़ कर शेष सभी बाह्य शक्तियाँ, जो आपको प्रभावित करती हैं, आपका उस समय का पर्यावरण है। पेड़-पौधों, पशुओं, कीड़े-मकोड़ों एवं मनुष्यों—सब ही प्राणियों का कुछ न कुछ पर्यावरण अवश्य होता है। पर्यावरण का प्राणों पर अत्यधिक प्रभाव होता है, इसका विवेचन हम अगले अध्यायों में करेंगे।

हम पहिले ही लिख चुके हैं कि पर्यावरण की परिभाषा केवल काम चलाने के लिये है यद्यपि पर्यावरण और प्राणी (Organism) एक दूसरे से इतने

---

* 'Environment' का हिन्दी पर्यायवाची 'पर्यावरण' शब्द अधिक उपयुक्ति है। कुछ भारतीय लेखकों ने 'परिस्थिति' या 'वातावरण' शब्द का प्रयोग किया है, जिनके अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द क्रमशः 'Situation','atmosphere' हैं।

§"Environment is any external force which influences us." Eva. J. Ross, 'Sociology and Social Problems,' The Bruce Publishing Co. Milwaukee, (1953) p 35.

अधिक सम्बन्धित है कि उन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता। पर्यावरण की जो परिभाषा अभी हमने की है वह पर्यावरण के महत्व को अत्याधिक कम कर देती है। पर्यावरण बड़ा व्यापक है। प्राणी का अस्तित्व पर्यावरण से पृथक् नहीं किया जा सकता। पर्यावरण प्राणी को गर्भ से ही प्रभावित करना प्रारम्भ कर देता है। उदाहरण के लिये मानव को ही लीजिये, बच्चा गर्भ में होता है अर्थात् उत्पादक कोष्ट (Germ cell) के रूप में होता है। यह उत्पादक कोष्ट किस प्रकार का प्राणी बनायेगा, यह पर्यावरण पर आश्रित है। माता का स्वास्थ्य, माता के आचार विचार एवं माता का सम्पूर्ण पर्यावरण उस उत्पादक कोष्ट पर प्रभाव डालता है। यदि यह कहा जाय कि प्राणी पर्यावरण का ही फल है तो अतिश्योक्ति न होगी। मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा है, "स्वयं प्राणी (और) उसके जीवन का ढाँचा बीते हुये जीवन एवं भूत पर्यावरण का फल है। पर्यावरण जीवन के प्रारम्भ से ही, यहाँ तक कोष्टों में भी उपस्थित है।" † मैकाइवर ने अपने कथन के समर्थन में एक उदहरण दिया है। अभी हम पृथ्वी पर हैं और हमारा स्वरूप एक विशिष्ट प्रकार है। मान लीजिये हमें पृथ्वी से एकबहुत बड़े ग्रह (Planet) पर भेज दिया जाय, तो वहां पर हमारा शरीर अत्यधिक भारी हो जायगा और इतना अन्तर हो जायगा कि हम स्वयं को भी पहचानने में असमर्थ हो जायेंगे। इससे स्पष्ट है कि प्राणी और पर्यावरण एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित है, और उन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता। मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा है, "जीवन और पर्यावरण, वास्तव में परस्पर सम्बन्धी है। *

प्राणी और पर्यावरण के सम्बंध को एक उदाहरण द्वारा और भी भली प्रकार समझा जा सकता है। आप में से बहुतों ने हंसी वाली प्रदर्शनी (Laughing Exhibition) देखी होगी। प्राणी का स्वरूप भू-भण्डल पर एक सा रहता है। इस प्रदर्शनी में विभिन्न प्रकार के दर्पण होते हैं, किसी में हम एक दम पतले दुबले, किसी में मोटे भिन्न-भिन्न दर्पणों में भिन्न २ स्वरूप

---

†"The organism itself, the life structure, is the product of past life and past environment. Environment is present from the very beginning of life, even in the germ cells." MacIver and Page, 'Society,' pp. 73-75.

*" Life and environment are, in fact, correlates." MacIver and Page, 'Society,' p. 74.

के दिखाई पड़ते हैं। प्राणी वही है परन्तु तनिक से पर्यावरण के परिवर्तन से भिन्न दिखलाई पड़ता है। हम अपने ही भिन्न स्वरूपों पर हंसते २ लोट पोट हो जाते हैं। यह एक कृत्रिम पर्यावरण का उदाहरण है। इससे स्पष्ट है कि प्राणी (Organism) और पर्यावरण (Environment) दो वस्तुयें नहीं हैं और इन्हें एक दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता। पर्यावरण बड़ा व्यापक है। मैकाइवर ने पर्यावरण की व्यापकता को इन सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है, "वह (पर्यावरण) जीवन के प्रत्येक भाग में अंतर्विष्ट है। वह मनुष्य की शक्तियों को निर्देशित या विमुक्त, उत्साहित या हतोत्साहित करता है। वह उसकी वाणी को ढालता है, वह उसके ढांचे को सूक्ष्म रूप से परिवर्तित करता है। न केवल इतना बल्कि इससे भी अधिक वह (पर्यावरण) उसके (प्राणी) अंतस्थल में निवास करता है। वह उसके मस्तिष्क और भुजाओं में अंकित होता है। वह उसके रक्त में कार्य करता है।"§ प्राणी और पर्यावरण के संबंध के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि पर्यावरण अत्यधिक व्यापक है और प्राणी एवं पर्यावरण सापेक्ष (Relative) तथ्य हैं। इनका पारस्परिक संबंध अत्यधिक है। मैकाइवर ने उचित लिखा है, "यह (पर्यावरण) प्राणी से बिल्कुल अपृथक्नीय है जिस प्रकार कि (पर्यावरण रूपी) ताना, जिसमें कि (प्राणी रूपी) बाना डाल दिया गया हो, समाज के 'सजीव वस्त्र' को बनाता है।"+

जीवन और पर्यावरण (Life and Environment)

जीवन प्रमुखतया तीन प्रकार का होता है:—(१) वनस्पति जीवन (Plant life) (२) पशु जीवन (Animal life) और (३) मानव

---

§" It interpenetrates life everywhere. It directs or diverts, stimulates or depresses, man's energies. It moulds his speech, it subtly changes his frame. Nay, more, it lives within him. It is recorded in his brain and his muscles. It works in his blood," R. M. MacIver, 'Elements of Social Science,' Methuen and Co., Ltd. London, (1952), p. 43.

+"It is utterly inseparable from life, the warp, as it were, accross which the woof is threaded that makes the 'living garment' of society." R. M. MacIver, 'Elements of Social Science,' p. 43.

जीवन (Human life), ये सभी जीवन पर्यावरण से अत्यधिक संबंधित हैं। अब हम इनके पर्यावरण से संबंध विश्लेषण करेंगे।

(१) वनस्पति जीवन और पर्यावरण (Plant life and Environment)

वनस्पति जीवन और पर्यावरण का घनिष्ट सम्बन्ध है। वनस्पति जीवन के अस्तित्व के लिये उचित पर्यावरण अत्यन्त आवश्यक है। मखाना, बिहार व बङ्गाल में अधिक पैदा होता है, पञ्जाब एवं दिल्ली में बिल्कुल नहीं। सन्तरे मध्य-प्रदेश में, लाल सेव काश्मीर में, स्वादिष्ट आमों का राजा दशहरी मलियाबाद में, उङ्गली से भी पतली ककड़ियां लखनऊ में और सुन्दर एवं बड़े तरबूज फरुखाबाद में पैदा होते हैं। अजमेर में गोभी, टमाटर और लाल मिर्च अधिक मात्रा में पैदा होती हैं। ऐसा क्यों ? यह पर्यावरण का प्रभाव है। भिन्न २ प्रकार के पौधों के लिये भिन्न २ पर्यावरण की आवश्यकता होती है। कुछ पौधे गरम स्थानों में पैदा होते हैं तो कुछ ठण्डे स्थानों में। कोई कङ्करीली भूमि में, कोई काई लगी हुई भूमि में, कोई बालू मिट्टी में तो कोई कोमल भूमि में उत्पन्न होते हैं। अपना २ विशिष्ट पर्यावरण होता है। यदि वह विशिष्ट प्रकार का पर्यावरण प्राप्त हो गया तो पौधा फलता फूलता है। इससे सिद्ध होता है कि पेड़ पौधों और पर्यावरण में घनिष्ट सम्बन्ध है। वनस्पतिशास्त्र (Botany) की एक विशेष शाखा वनस्पति-पर्यावरणशास्त्र (Plant Ecology) स्थापित हो गई है जिसमें वनस्पति और पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

(२) पशु जीवन और पर्यावरण (Animal life and Environment)

पशु जीवन और पर्यावरण में भी घनिष्ट सम्बन्ध है, यद्यपि पशु एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रस्थान कर सकते हैं। बड़ी प्रसिद्ध कहावत है कि नाली का कीड़ा नाली में ही रह सकता है।' पशुओं के भी विशिष्ट पर्यावरण होते हैं। मछली पानी में ही जीवित रह सकती है। शेर के लिये अति स्वास्थ्यदायक पर्यावरण घने जङ्गलों का है, उसे पिंजरे में बन्द करके स्वस्थ नहीं रखा जा सकता। राजस्थान के रेगिस्तानों का जहाज़, ऊंट, रूपकुण्ड की सर्दी बर्दास्त नहीं कर सकता। एस्कीमों के कुत्ते हिन्दुस्तान की सड़कों पर गाड़ी नहीं खींच सकते। अतः हम देखते हैं कि पशु जीवन और पयावरण का भी अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है।

(३) मानव जीवन और पर्यावरण (Human life and Environment)

मानव जीवन और पर्यावरण में भी घनिष्ट सम्बन्ध है यद्यपि कभी कभी प्रत्यक्ष रूप से ऐसा प्रतीत नहीं होता है। मनुष्य ही ऐसा विचित्र पशु है जो उत्तरी ध्रुव की कठोर सर्दी तथा बर्फीले मैदानों एवं अफ्रीका के कठोर उष्ण रेगिस्तानों में भी जीवित रहता है, परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि मनुष्य पर पर्यावरण का कोई प्रभाव नहीं होता। मानव जीवन और पर्यावरण का भी घनिष्ट सम्बन्ध है, यद्यपि इसका स्वरूप वैसा नहीं है जैसा वनस्पति एवं पशु जीवन का है। मानव जीवन पर्यावरण से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता है। दोनों ही सक्रिय भाग लेते हैं। मानव जीवन और पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन करने के लिये मानव-पर्यावरणशास्त्र (Human Ecology) विकसित हो गया है।

पर्यावरण का वर्गीकरण (Classification of Environment)

पर्यावरण को कई भागों में बाँटा जा सकता है, यद्यपि ये वर्गीकरण केवल सुविधा के लिये हैं और मन माने ढङ्ग से किये जाते हैं। विभिन्न लेखकों ने विभिन्न वर्गीकरण किये हैं। मुख्यतया इसे निम्न प्रमुख वर्गों में बांटा जा सकता है:—

(१) भौतिक पर्यावरण (Physical Environment)

(अ) भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment)

(ब) जलवायु सम्बन्धी पर्यावरण (Climatic Environment)

(स) नियंत्रित भौगोलिक पर्यावरण (Controlled Geographical Environment)

(२) प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण (Biological Environment)

(३) सामाजिक पर्यावरण (Social Environment)

(अ) आर्थिक पर्यावरण (Economic Environment)

(ब) साँस्कृतिक पर्यावरण (Cultural Environment)

(स) मनः सामाजिक पर्यावरण (Phycho-Social Environment)

(४) समाजोपरि पर्यावरण (Supra-Social Environment)

इस वर्गीकरण को हम निम्न चार्ट द्वारा व्यक्त कर सकते हैं:—

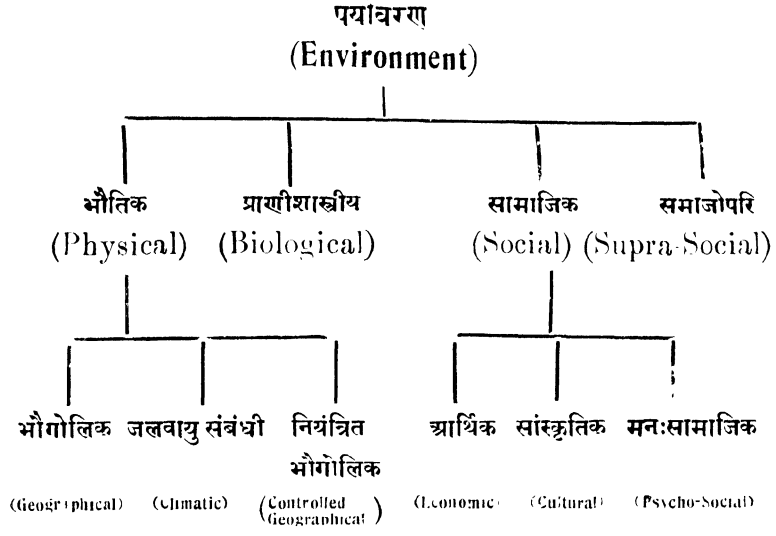

(१) भौतिक पर्यावरण (Physical Environmnet)

भौतिक पर्यावरण के अन्तर्गत समस्त भौतिक वस्तुयें आ जाती हैं। इसके अन्तर्गत पृथ्वी वायु, जल, विद्युत शक्तियां, जलवायु, नदियाँ, पहाड़, झोंपड़ियाँ, महल इत्यादि सब वस्तुयें आती हैं। इसको निम्न तीन भागों में बाँटा जा सकता है:—

(अ) भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment)—भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत वे समस्त भौतिक वस्तुयें आती हैं जो मनुष्य के नियंत्रण के बाहर हैं। इसका अधिक विश्लेषण हम अध्याय १३ में करेंगे।

(ब) जलवायु संबंधी पर्यावरण (Climatic Environment)—इस पर्यावरण के अन्तर्गत जलवायु तथा उससे संबंधित तत्व आते हैं।

(स) नियंत्रित भौगोलिक पर्यावरण (Controlled Geographical Environment)—नियंत्रित भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत वे भौतिक तत्व आते हैं जिन पर मनुष्य ने नियंत्रण कर लिया है। इसके अन्तगत मनुष्य द्वारा निर्मित भौतिक वस्तुओं को भी सम्मिलित किया जा सकता है।

(२) प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण (Biological Environment)

प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण के अन्तर्गत हमारे चारों ओर बसने वाले पशु एवं उगने वाले पेड़ पौधे आते हैं। अनेक सूक्ष्म कीटाणु हमारे शरीर में भी रहते हैं।

(३) सामाजिक पर्यावरण (Social Environment)

सामाजिक पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी वस्तुयें आती हैं जो समाजिक संबंधों से उत्पन्न होती हैं। इसमें प्रथायें, परम्परायें, संस्थायें एवं विधियें इत्यादि सभी आ जाती हैं। सामाजिक पर्यावरण बड़ा शक्तिशाली होता है। यह एक प्रकार का आन्तरिक पर्यावरण है। यह मनुष्यों की जागरूकता में निहित रहता है और सामाजिक अन्तःकरण के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता है। मनुष्य के द्वारा प्राप्त समस्त वस्तुयें इसके अन्तर्गत आ जाती हैं। इसको तीन प्रमुख भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(अ) आर्थिक पर्यावरण (Economic Environment)—आर्थिक पर्यावरण सामाजिक पर्यावरण का एक भाग है, तथापि इसका एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये एक बड़ा महत्वपूर्ण आर्थिक ढांचा खड़ा करता है। सम्पत्ति के उत्पादन, विनिमय, वितरण और उपभोग के संबंध में अनेक आर्थिक संस्थायें खड़ी हो गई हैं। इन सब का मनुष्य पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। आर्थिक पर्यावरण कभी कभी सम्पूर्ण समाज के जीवन को निर्देशित करता है।

(ब) सांस्कृतिक पर्यावरण (Cultural Environment)— सॉंस्कृतिक पर्यावरण के अन्तर्गत संस्कृति एवं सभ्यता के सम्पूर्ण तत्व आ जाते हैं। इसके अन्तर्गत जनरीतियाँ प्रथायें, रूढ़ियाँ, संस्थायें, कलपुर्जे, वैज्ञानिक अन्वेषण, रह-नेसहने का ढंग इत्यादि समस्त वस्तुयें आ जाती हैं।

(स) मनः सामाजिक पर्यावरण (Psycho-Social Environment)— इसके अन्तर्गत वे प्रभाव आते हैं जो चारों ओर अन्य मनुष्यों के कारण मनुष्य पर पड़ते हैं।

(४) समाजोपरि पर्यावरण (Supra-Social Environment)

इसके अन्तर्गत मनुष्य और उसके वे विचार आते हैं जो ईश्वर के विषय में सोचे जाते हैं। ईश्वर है या नहीं इसके विवाद में हम नहीं पड़ना चाहते परन्तु

इतना निश्चत है कि समाजोपरि पर्यावरण का प्रभाव मनुष्य के ऊपर अत्यधिक मात्रा में होता है।

पर्यावरण के स्वरूप (Forms of Environment)

पर्यावरण के दो स्वरूप होते हैं- प्रथम अनुकूल (Favourable) और द्वितीय प्रतिकूल (Unfavourable)। अनुकूल पर्यावरण (Favourable Environment) वह पर्यावरण है जो प्राणी (Organism) के विकास में सहायक होता है और प्राणी को उत्कर्ष की ओर ले जाता है। प्रतिकूल पर्यावरण (Unfavourable Environment) वह पर्यावरण होता है जो प्राणी की आवश्यकताओं के प्रतिकूल होता है और प्राणी के विकास में बाधक एवं हानिप्रद होता है। विभिन्न प्राणियों के लिये भिन्न भिन्न प्रकार का पर्यावरण आवश्यक होता है। एक पर्यावरण एक प्राणी के लिए अनुकूल हो सकता है तो दूसरे के लिए प्रतिकूल।

मानव और अनुकूलन (Man and Adaptation)

मनुष्य पर्यावरण के अनुसार अपने को बनाता रहता है। पर्यावरण के अनुसार प्राणी के बनने की प्रक्रिया को अनुकूलन (Adaptation) कहते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य पर्यावरण के अनुकूल अपने को बनाने की चेष्टा करता है क्योंकि इसी अवस्था में उसका विकास अत्यधिक हो सकता है। मनुष्य सृष्टि के प्रारम्भ से ही अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता रहा है। मनुष्य एक विचित्र पशु है और उसकी सबसे बड़ी विचित्रता यही है कि वह प्रतिकूल पर्यावरण में भी अनुकूलन कर लेता है और अपने जीवन को संभव बना लेता है। इतना ही नहीं, उसने पर्यावरण को भी परिवर्तित करने का कार्य किया है और उस पर विजय प्राप्त करके अपने अनुकूल भी बनने को बाध्य किया है। इस विषय में हम आगे प्रकाश डालेंगे। यहाँ पर मनुष्य पर्यावरण के साथ किस प्रकार अनुकूलन करता है, पर प्रकाश डालेंगे।

मनुष्य अपने पर्यावरण से अनुकूलन कर लेता है यह बड़ी प्रसिद्ध बात है। अनुकूलन के कई स्वरूप होते है। उनमें से प्रमुख निम्न है—

(१) भौतिक अनुकूलन (Physical Adaptation)

(२) प्राणीशास्त्रीय अनुकूलन (Biological Adaptation)

(३) सामाजिक अनुकूलन (Social Adaptation)

(१) भौतिक अनुकूलन (Physical Adaptatiton)

भौतिक अनुकूलन वह अनुकूलन है जो प्राणी अपने भौतिक पर्यावरण से करता है। इस अनुकूलन को करने में कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता। यह अनुकूलन किसी विशिष्ट उद्देश्य से भी नहीं किया जाता। यह अनुकूलन मानव प्रकृति एवं शारीरिक रचना से संबंधित होता है। उदाहरण के लिये सूर्य चमकता है और यदि हम सूर्य में रहते हैं तो हमारी त्वचा पर प्रभाव पड़ता है। शुद्ध वायु हमारे फेफड़ों को बलशाली बनाती है और विषैली गैसें फेफड़ों को नष्ट करती हैं। ये प्रक्रियायें स्वयं होती रहती हैं। यदि हम गैसें सूंघने को मिलती है तो फेफड़े खराब हो जाते हैं। यह भौतिक अनुकूलन सदैव होता रहता है। इस क्षेत्र में प्राकृतिक नियम (Natural Law) सदैव कार्य करता रहता है। किसी को अच्छा लगे या बुरा, किसी को हानि हो या लाभ, इस प्रकार का भौतिक अनुकूलन प्राकृतिक नियमों के अनुसार सदैव होता रहता है। मृत्यु भौतिक अनुकूलन का सबसे बड़ा रूप है। जब शरीर की मशीन निर्बल हो जाती है तो मृत्यु निर्बल शरीर को शान्ति प्रदान करती है, यह एक प्रकार का भौतिक अनुकूलन है।

(२) प्राणीशास्त्रीय अनुकूलन (Biological Adpatation)

प्राणीशास्त्रीय अनुकूलन उस अनुकूलन को कहते हैं जो प्राणी अपने विशिष्ट इच्छित पर्यावरण से करता है। प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण के बाहर प्राणी जीवित नहीं रह सकता। मछली पानी में ही जीवित रह सकती है और मनुष्य ऑक्सीजन के पर्यावरण में ही जीवित रह सकता है। प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण अवश्य होना चाहिये अन्यथा प्राणी जीवित नहीं रह सकता।

(३) सामाजिक अनुकूलन (Social Adaptation)

सामाजिक अनुकूलन कुछ विस्तृत अर्थों में प्रयोग किया जाता है। सामाजिक अनुकूलन में मूल्यों (Values) का समावेश होता है। यह अनुकूलन भौतिक अनुकूलन के समान नहीं होता। भौतिक अनुकूलन के अनुसार मनुष्य को प्रभावित होना ही पड़ता है परन्तु सामाजिक अनुकूलन में वह प्रभावित होता है और प्रभावित करता है। सामाजिक अनुकूलन को सुविधा की प्रक्रिया (Process of adjustment) या व्यवस्थान (Accommodation) § भी कहते हैं।

§ See Section VI on 'Social Processes.'

सामाजिक अनुकूलन की भाँति भौतिक अनुकूलन में दृष्टिकोण का कोई स्थान नहीं होता। भौतिक अनुकूलन एवं प्राणीशास्त्रीय अनुकूलन जन्मजात होते हैं, और प्राकृतिक नियमों (Natural Laws) से निर्देशित होते हैं. परन्तु सामाजिक अनुकूलन मनुष्य के मूल्यों पर आधारित होता है। मान लीजिये सूर्य चमक रहा है और कोई व्यक्ति धूप में बचाव चाहे या न चाहे. सूर्य किसी भी बात की चिन्ता न करते हुये अपना प्रभाव करेगा। हिन्दू धर्म के कुछ सिद्धान्त हैं और कोई व्यक्ति उन्हें उचित नहीं समझता। उस व्यक्ति का दृष्टिकोण भिन्न है तो उसे कोई इन सिद्धान्तों को स्वीकार करने के लिये बाध्य नहीं कर सकता। इसी प्रकार गोश्त खाने की बात है। एक व्यक्ति के मूल्य एवं दृष्टिकोण उस पर प्रभाव डालते हैं। यदि उसके मूल्य गोश्त खाने को प्रोत्साहन देते हैं तो वह माँसाहारी बन जाता है और यदि इसके विपरीत उसके विचार ऐसे होते हैं कि गोश्त खाना पाप है तो वह माँसाहारी नहीं बनता। सामाजिक अनुकूलन मूल्यों पर आधारित होता है, यद्यपि हमें यह सदैव स्मरण रखना चाहिये कि मूल्य सामाजिक पर्यावरण के फल होते हैं। मानव जिस प्रकार के पर्यावरण में रहता है वैसे ही उसके मूल्य बन जाते हैं।

मनुष्य भी अपने पर्यावरण को परिवर्तित करता रहता है और उससे अनुकूलन भी करता रहता है। इससे स्पष्ट है कि अनुकूलन सदैव होता रहता है और दोनों ओर से होता है —प्राणी पर्यावरण से मिलाप करता है और पर्यावरण प्राणी से मिलाप करता है।

मनुष्य और पर्यावरण का सम्बन्ध
(Relation of Man and Environment)

मनुष्य और पर्यावरण एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित है। इसका कुछ विवरण हम पीछे दे चुके हैं। मनुष्य और भौगोलिक पर्यावरण के सम्बन्ध का विस्तार में विश्लेषण हम अध्याय १३ में करेंगे, यहां पर इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि मनुष्य पर भौगोलिक पर्यावरण का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि मनुष्य भौगोलिक पर्यावरण का दास है। प्राणीशास्त्रीय पर्यावरण में तो मनुष्य कोई परिवर्तन कर ही नहीं सकता है। उसके अनुसार तो मनुष्य को कार्य करना ही पड़ता है।

सामाजिक पर्यावरण भी मनुष्य के मूल्य एवं विचार निश्चित करता है। यदि यह कहा जाय कि मनुष्य का प्रत्येक व्यवहार—खाने पीने का ढङ्ग, कपड़ों

की रुचि, बात-चीत की शैली, सम्बन्ध स्थापित करने के मार्ग इत्यादि सामाजिक पर्यावरण ही निर्धारित करता है तो अतिशयोक्ति न होगी, यद्यपि यह हमें कभी न भूलना चाहिए कि सामाजिक पर्यावरण का ताना बाना वर्तमान मनुष्यों के पूर्वजों द्वारा बनाया गया था और वर्तमान मनुष्य भी उसमें परिवर्तन करता रहता है। मनुष्य के जीवन पर समाजोपरि पर्यावरण (Supra-Social Environment) भी अत्यधिक प्रभाव डालता है। कर्म के प्रभाव से एवं समाजोपरि शक्ति (ईश्वर) के भय से भी मनुष्य का व्यवहार नियंत्रित होता रहता है।

इस प्रकार सम्पूर्ण पर्यावरण (Total Environment) मनुष्य पर सदैव प्रभाव डालता रहता है और मनुष्य अपने पर्यावरण का फल मात्र होता है। इसके उदाहरण ढूंढने की आवश्यकता नहीं है। अपने ही समूह को देखिये, वह आपको एक विशिष्ट प्रकार का मिलेगा जो कि अन्य समूहों से भिन्न है; सदस्य अपने समूह के अन्य सदस्यों से अधिक मिलते जुलते हैं और अपने समूह के अन्य सदस्यों की भांति सोचते विचारते हैं एवं व्यवहार करते हैं। ऐसा क्यों ? यही पर्यावरण की महिमा है। इस प्रकार पर्यावरण मनुष्य का रचयिता है यद्यपि मनुष्य सदैव इस पर्यावरण को अपनी सुविधा के अनुसार अपनी बुद्धि के बल से परिवर्तित करता रहता है।

प्रश्न

१. भौतिक अनुकूलन और सामाजिक सामंजस्य में भेद बताइये। उदाहरण देकर समझाइये। (राजपूताना १९५६, आगरा १९५५)
(Distinguish between physical adaptation and social adjustment. Illustrate your answer with examples.)

२. मनुष्य और उसके पर्यावरण के पारस्परिक संबन्ध का विवेचन कीजिये। (लखनऊ १९५३)
(Discuss the inter-relation between man and his environment.)

३. पर्यावरण की परिभाषा कीजिये और उसका जीवन से सम्बन्ध बताइये।
(Define environment and discuss its relation with Life.)

अध्याय १०

वंशानुसंक्रमण का अर्थ

(Meaning of Heredity)

प्रत्येक प्राणी में सन्तानोत्पत्ति की शक्ति होती है और वे अपने विशिष्ट लक्षण अपनी सन्तानों को हस्तान्तरित कर देते हैं। यह प्रक्रिया छोटे से छोटे प्राणी—जैसे भुनगा (Very small insect) और बड़े से बड़े—जैसे हाथी इत्यादि सब में ही पाई जाती है। यह प्रकृति का विधान है और सूक्ष्मतम पूर्णता एवं कुशलता के साथ यह प्रक्रिया चलती रहती है। यह प्रक्रिया बड़ी जटिल है फिर भी वंशानुसंक्रमण का अर्थ समझने के लिए इसका कुछ ज्ञान हमें अवश्य होना चाहिये। अब हम सन्तानोत्पत्ति की प्रक्रिया पर कुछ प्रकाश डालेंगे।

उत्पत्ति की विधि (Fertilization)

उत्पत्ति की विधि बड़ी जटिल है और इसे समझने के लिए कुछ छोटे छोटे सिद्धान्तों को समझना होगा।

कोष्ट सिद्धान्त (The cell theory)

प्रत्येक प्राणी का शरीर कोष्टों (Cells) से बना है। त्वचा त्वचा के कोष्टों (Skin cells) से बनी है, और सम्पूर्ण शरीर पर रक्षा का कार्य करती है नाड़ियां नाड़ियों के कोष्टों से और इसी प्रकार हमारे शरीर का प्रत्येक अङ्ग अपने अपने कोष्टों (Cells) से बना है। यद्यपि प्रत्येक कोष्ट (Cell) का स्वरूप, आकार, कार्य एवं विस्तृत ढांचा भिन्न होता है तथापि ये सब कोष्ट एक प्रकार से समान होते हैं—प्रथम कोशारस (Cytoplasm), मौलिक जीवतत्व, जिसे जीव रस (Protoplasm) कहते हैं, का बना होता है। यह अर्द्ध द्रव (Semi-Liquid) पदार्थ होता है। यह सरेस के समान चिपचिपा होता है और कोष्ट का शरीर कहलाता है। द्वितीय नाभिक (Nucleus) जो कि एक छोटे से बुलबुले के समान कोशारस में पाया जाता है (चित्र १ देखिये)।

कोष्ट प्रारम्भ में समान होते हैं। वास्तव में उत्पादक तत्व में प्रथम एक कोष्ट होता है और यही कोष्ट एक से दो में, दो से चार में, चार से आठ में, आठ से सोलह में, सोलह से बत्तीस में विभाजित होता रहता है। इस कोष्ट विभाजन (Cell division) की प्रक्रिया के कारण हजारों कोष्ट हो सकते हैं। प्रत्येक कोष्ट में समान तत्व पाये जाते हैं।

वर्णसूत्र (Chromosomes)

नाभिक (Nucleus) में छोटी छोटी दानेदार वस्तुएं पाई जाती हैं। इन्हें वर्णसूत्र* कहते हैं। वर्णसूत्र प्राणियों के संसार में सबसे प्रमुख तत्व होते हैं और वंशानुसंक्रमण को समझने के लिए इन्हें समझना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि वंशानुसंक्रमण के रहस्य इसमें छिपे हुए हैं।

कोष्ट विभाजन वर्णसूत्र के कारण होता है, इसे प्राणीशास्त्र में माइटोसिस (Mitosis) कहते हैं।

उत्पादन-प्रक्रिया (Fertilization)

अंडकोष्ट (Egg cell) माता प्रदान करती है और शुक्रकोष्ट (Sperm cell) पिता प्रदान करता है। अंडकोष्ट (Egg cell) मादा (Female) के रज में होता है और शुक्रकोष्ट (Sperm cell) नर के वीर्य में। प्रत्येक मानवी अंडकोष्ट (Egg cell) और शुक्रकोष्ट (Sperm cell) में २४ युग्म (Pairs) वर्णसूत्र पाये जाते हैं (चित्र २ देखिये)।

गर्भाधान के समय अंडकोष्ट (Egg cell) की ओर लाखों शुक्रकोष्ट (Sperm cell) बढ़ते हैं (चित्र ३ ब), परन्तु अंडकोष्ट में केवल एक शुक्रकोष्ट ही प्रवेश कर पाता है (चित्र ३ अ) और जैसे ही वह प्रवेश करता है, अंडकोष्ट में कुछ ऐसी प्रक्रिया होती है कि अन्य शुक्रकोष्टों का प्रवेश नहीं हो पाता या यों कहें कि एक दीवार सी खड़ी हो जाती है। हम लिख ही चुके हैं कि प्रत्येक कोष्ट

---

* वर्णसूत्र को अंग्रेजी में (Chromosomes) कहते हैं। यह शब्द ग्रीक शब्द (Chromos), जिसका अर्थ रङ्ग या वर्ण (Dyes) होता है, से बनाया गया है। ग्रीक शब्द Soma का अर्थ तत्व होता है। Chromosome का अर्थ वे तत्व हैं जो रंगे जा सकें। (Biology) के विद्यार्थी इन्हें रङ्ग कर अध्ययन करते हैं, इसलिए इनका नाम रङ्ग वाले तत्व या वर्णसूत्र (Chromosome) पड़ गया।

चित्र १

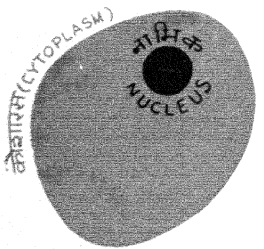

कोष्ट

C E L L

चित्र २

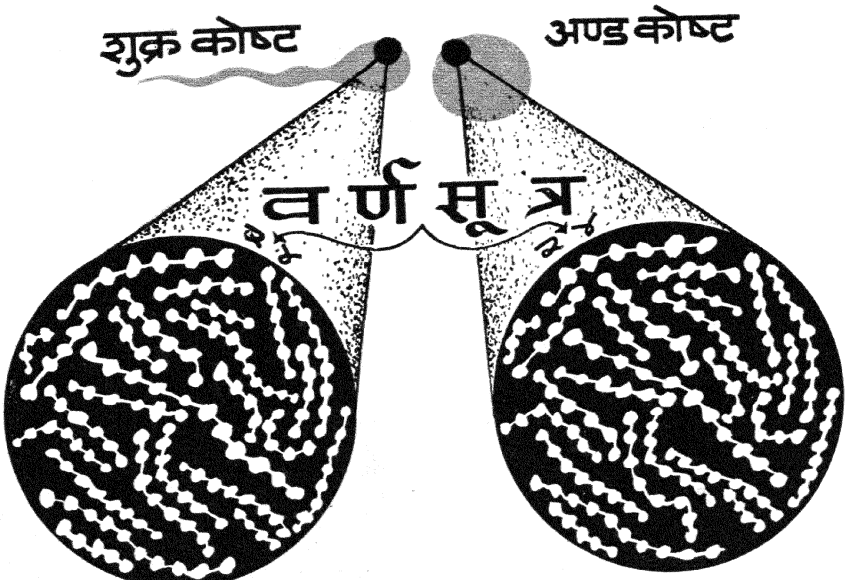

চিত্র ২

के दो भाग होते हैं—कोशारस (Cytoplasm) और नाभिक (Nucleus)। अंडकोष्ट के भीतर केवल शुक्रकोष्ट का नाभिक (Nucleus) या सिर (Head) ही प्रवेश करता है और कोशारस (Cytoplasm) या पूंछ बाहर रह जाती है, जो कि बाद में नष्ट हो जाती है (देखिए चित्र ३ स)। शुक्रकोष्ट अंडकोष्ट के भीतर पहुँचते ही एक गोले का स्वरूप धारण कर लेता है और धीरे धीरे अंडकोष्ट के नाभिक की ओर बढ़ता है (देखिए चित्र ३ स)। वह तब तक बढ़ता रहता है जब तक कि दोनों नाभिक मिल नहीं जाते। मिलते ही नवीन प्राणी की उत्पत्ति आरम्भ हो जाती है (देखिए चित्र ३ द)

माइटोसिस (Mitosis)

दोनों नाभिकों का समागम होते ही वर्णसूत्र (Chromosomes) स्पष्ट हो जाते हैं। इनके स्पष्ट होते ही एक विचित्र प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। प्रत्येक वर्णसूत्र दो भागों में विभाजित हो जाता है (चित्र ४ अ) और फिर विभाजित भाग एक दूसरे के सामान्तर (Parallel) हो जाते हैं। (चित्र ४ ब)। इसके उपरान्त इसी अवस्था में वे कोष्ट के केन्द्र में एक कतार में हो जाते हैं (चित्र ४ स) और दोनो विपरीत छोर (Opposite poles) से सम्बन्धित रेशों से जुड़ जाते हैं। इसके उपरान्त वर्णसूत्र के दो विपरीत छोर पर चले जाते हैं (चित्र ४ द) और तत्पश्चात कोष्ट दो भागों में विभाजित हो जाता है। (चित्र ४ य) इसी प्रकार यह विभाजन होता रहता है। इसे कोष्ट विभाजन (Cell division) या माइटोसिस (Mitosis) कहते हैं। इस प्रक्रिया से स्पष्ट है कि प्रत्येक कोष्ट में समान वर्णसूत्र होते हैं। उनमें कोई भी अन्तर नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक वर्णसूत्र का आधा भाग एक दूसरे में जाता है। बाद में ये वर्णसूत्र फिर विकसित हो जाते हैं।

यही कोष्ट विभाजन के द्वारा अनेक कोष्टों में विभाजित हो जाता है और विभिन्न कोष्ट शरीर के विभिन्न भागों की रचना करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारा शरीर कोष्टों (Cells) का योग है और प्रत्येक कोष्ट समान वर्णसूत्र (Chromosomes) रखता है।

चौबीस युग्म वर्णसूत्र ही क्यों ?
(Why only 24 pairs of Chromosomes ?)

हमने देखा था कि अंडकोष्ट (Egg cell) में २४ युग्म या ४८ वर्णसूत्र थे, और इसी प्रकार शुक्रकोष्ट में २४ युग्म या ४८ वर्णसूत्र थे, इसलिए दोनों के

चित्र ४

कोष्ट विभाजन

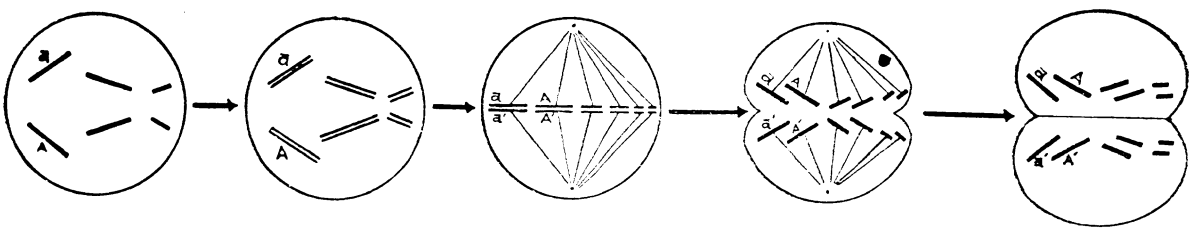

अ ब स द य

१६ वर्णसूत्र नवीन प्राणी में होने चाहिए। वास्तव में वर्णसूत्र कम हो जाते हैं। वह एक विशिष्ट प्रकार के कोष्ट विभाजन के कारण होता है, जिसे प्राणीशास्त्र में घटोतरी विभाजन (Reduction division) कहते हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा वर्णसूत्रों की संख्या आधी रह जाती है।

वर्णसूत्र के व्यक्तित्व का सिद्धान्त (Law of chromosome individuality)

वर्णसूत्र के अभी तक के अध्ययन से हमें ज्ञात हो ही चुका है कि वही वर्णसूत्र (Chrrmosome) जो हमें जन्म के समय प्राप्त हुए थे, हमारे प्रत्येक अंग में पाये जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि वही वर्णसूत्र हमारे लिंग कोष्टों (Sex cells) में भी पाये जाते हैं और हमारे अंडकोष्ट (Egg cell) और शुक्रकोष्ट (Sperm cell) के द्वारा हमारी सन्तानों को मिलते हैं। इसी प्रकार हमारी सन्ताने इन्हें अपनी सन्तानों को हस्तान्तरित कर देती हैं। इसी प्रकार यह क्रम चलता रहता है और वही वर्णसूत्र बने रहते है।§ वर्णसूत्रों की इस मौलिकता एवं अपरिवर्तनशील प्रकृति को वर्णसूत्र के व्यक्तित्व का सिद्धान्त (Law of chromosome individuality) कहते हैं।

वर्णसूत्र का एक निश्चित ढांचा (Structure) एवं संगठन होता है और वह कोष्ट विभाजन के समय प्रतिलिपि उत्पन्न करने की शक्ति रखता है। ये निष्कर्ष बड़े महत्व पूर्ण हैं जो आगे चल कर काम आयेंगे।

क्रोमोनेमा (Chromonema)

वर्णसूत्र (Chromonema) के अन्दर एक चक्राकार (Spiral) धागा सा तत्व होता है। इसे क्रोमोनेमा (Chromonema) कहते हैं। क्रोमोनेमा के चारों ओर अति सूक्ष्म दाने होते हैं। जिस प्रकार माला की गुरियां होती हैं, उसी प्रकार ये दाने होते हैं। इन दानों को वाहकाणु (Genes) कहते हैं।

वाहकाणु (Genes)

वर्णसूत्र में अति सूक्ष्म तत्व होते हैं जिन्हें वाहकाणु (Genes) कहते हैं। वाहकाणु (Genes) वंशानुसंक्रमण (Heredity) की वास्तविक इकाइयां हैं। एक वर्णसूत्र में हजारों वाहकाणु (Genes) होते हैं।

---

§ वर्णसूत्र का पदार्थ (Substance) परिवर्तित होता रहता है परन्तु उस पदार्थ के गुण वही रहते हैं, यही इसकी विशेषता है।

इन्हें अति सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से भी नहीं देखा जा सकता। जिस प्रकार भौतिकशास्त्र में (Atom) को नहीं देखा जा सकता उसी प्रकार वाहकाणु को भी नहीं देखा जा सकता। वाहकाणु की यह विशेषता होती है कि वह अपनी प्रतिलिपि स्वयं रच लेता है और वह इसी प्रकार से बढ़ते जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि उनमें उत्पत्ति की शक्ति होती है। वास्तव में वर्णसूत्र की अपनी प्रतिलिपि उत्पन्न करने की शक्ति इन्हीं वाहकाणु की अभिव्यक्ति है।

वाहकाणु का लक्षणों से सम्बन्ध
(The relation of genes to traits)

वाहकाणु और लक्षणों का घनिष्ट सम्बन्ध है। अधिकांश लक्षण वाहकाणु द्वारा ही निश्चित होते हैं। वंशानुसंक्रमण के तत्व इन्हीं वाहकाणु द्वारा हमें मिलते हैं। शरीर की असंख्य विशेषताओं का निश्चय इन्हीं वाहकाणु द्वारा होता है। प्रत्येक लक्षण का एक विशिष्ट वाहकाणु होता है। एक बात हमें ध्यान में रखना चाहिए कि शारीरिक लक्षण समस्त वाहकाणुओं के पारस्परिक सम्मिलित प्रभाव के फल होते हैं। आगे चलकर हम इस पर और अधिक प्रकाश डालेंगे।

मूल जीवाणु की निरन्तरता (The continuity of germ plasm)

प्रत्येक कोष्ट समान वर्णसूत्र (Charomosomes) और वाहकाणु (Genes) रखता है। शरीर के विभिन्न कोष्ट विभिन्न स्वरूप धारण करते हैं और जिस प्रकार मनुष्य मर जाता है उसी प्रकार वे भी नष्ट हो जाते हैं, परन्तु लिंगकोष्ट नष्ट नहीं होंते (उनमें से कुछ नष्ट नहीं होते)। वे अंडकोष्ट (Egg cells) और शुक्रकोष्ट (Sperm cells) नष्ट नहीं होते, जो कि उत्पादन प्रारम्भ कर देते हैं। यदि प्रत्येक लिंगकोष्ट (Sex cells) उत्पादन प्रारम्भ कर दे (जैसा कि सिद्धान्तन सम्भव है, परन्तु कभी भी ऐसा हो नहीं पाया है) तो प्रत्येक लिंगकोष्ट सदैव जीवित रहे।

जो तत्व अंडकोष्ट एवं शुक्रकोष्ट के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता है। उसे मूल जीवाणु (Germ Plasm) कहते हैं और चूंकि यह निरन्तर हस्तान्तरित होता रहता हैं, और कभी नष्ट नहीं होता, इसकी इस प्रक्रिया को मूल जीवाणु की निरन्तरता का सिद्धान्त (Principle of continuity of the germ plasm) कहते हैं। मूल जीवाणु वर्णसूत्र (Chromosomes) और वाहकाणु (Genes) का योग है।

वंशानुसंक्रमण का अर्थ (Meaning of heredity)

वशानुसंक्रमण मूल जीवाणु (Germ plasm) है जो कि माता पिता से सन्तानों को प्राप्त होता है, दूसरे शब्दों हम यह कह सकते हैं कि वंशानुसंक्रमण वे वर्णसूत्र एवं वाहकाणु हैं जो माता पिता से सन्तानों को प्राप्त होते हैं ।

प्रश्न

१ वंशानुसंक्रमण से आप क्या समझते हैं ?
(What do you understand by Heredity ?)

२. वर्णसूत्र और वाहकाणु को विस्तार में समझाइए ।
(Explain in detail chromosomes and genes.)

अध्याय ११

मेंडल का सिद्धान्त

(Mendel's Principle)

वंशानुसंक्रमण के कुछ सिद्धान्तों का विवेचन हमने पिछले अध्याय में किया था। इस अध्याय में हम एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त का विवेचन करेंगे।

अन्तर (Variation)

एक किसान तीन विभिन्न वंशानुसंक्रमण के बीज बोता है। ये बीज छोटे, मध्यम और बड़े हैं। किसान ने इन्हें तीन विभिन्न क्यारियों में बोया। मान लीजिए १००० बीज प्रत्येक क्यारी में बोये गये। जब बीज पैदा हुए तो देखा गया कि किसी भी क्यारी में बिल्कुल समान आकार के बीज नहीं उत्पन्न हुए, यद्यपि एक क्यारी के अधिकांश बीज समान आकार के हैं। प्रत्येक क्यारी में कुछ बीज औसत से बड़े और कुछ औसत से छोटे हैं। यदि छोटे बीजों की औसत लम्बाई १० मिलीमिटर है तो इस क्यारि के कुछ बीज औसत से छोटे ६,७,८, और ९ मिलीमीटर लम्बे और कुछ औसत से बड़े ११, १२, १३, और १४ मिलीमीटर लम्बे होंगे। इसी प्रकार मध्यम बीजों की औसत लम्बाई १५ मिलीमिटर मान लें तो कुछ बीज ११, १२, १३, १४ और १६, १७, १८, १९, मिलीमीटर लम्बे होंगे। बड़े बीजों की औसत २० मिलीमीटर मान लें तो कुछ बीज १६, १७, १८, १९, २१, २२, २३, २४ मिलीमीटर लम्बे होंगे।

इस परीक्षण से यह स्पष्ट है कि वंशानुसंक्रमण बिल्कुल समान होते हुए भी व्यक्तिगत अन्तर पाये जाते हैं। इनकी औसत लम्बाई १०, १५, २० मिलीमीटर है जो आदर्श लम्बाईयां हैं, परन्तु सब बीज इसी लम्बाई के नहीं हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि आदर्श से थोड़ा बहुत अन्तर हो सकता है।

यह अन्तर का सिद्धांत हमें और भी शिक्षा दे सकता है। मान लीजिए किसानों को १३ मिलीमीटर लम्बे बीज दिए गए और यह नहीं बताया गया कि ये किस क्यारी के बीज हैं। १३ मिलीमीटर का बीज छोटे बीजों वाली

क्यारी से भी हो सकता है और मध्यम प्रकार के बीजों वाली क्यारी से भी हो सकता है, इसी प्रकार यदि १७ मीलिमीटर लम्बे बीज दिए जांय तो वे मध्यम लम्बाई वाले बीजों में से हो सकते हैं और बड़े बीजों में से भी हो सकते हैं। इससे स्पष्ट है कि बिल्कुल समान दिखने वाले बीजों का वंशानुसंक्रमण भिन्न हो सकता है। इसको हम यों भी व्यक्त कर सकते हैं कि बाह्य रूप बिल्कुल समान होते हुए भी वंशानुसंक्रमण भिन्न हो सकता है।

इन बीजों का वंशानुसंक्रमण निश्चित करने के लिए उन्हें फिर से बो दीजिए। १३ मिलीमीटर वाले बीजों का आकार ६ से १४ मिलीमीटर हो और औसत १० मिलीमीटर हो तो उनकी नस्ल छोटी बीजों वाली है और इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि ये १३ मिलीमीटर वाले बीज छोटी नस्ल के बड़े बीज थे। इस प्रकार परीक्षण करने को वंश परीक्षण (progeny test) कहते हैं।

किसी वस्तु का जो बाह्य प्रकट एवं प्रत्यक्ष स्वरूप होता है, उसे उसका प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) कहते हैं और जो स्वरूप वंशानुसंक्रमण के समान होना चाहिए, उसे मूल रूप (Genotype) कहते हैं।

उपरोक्त परीक्षणों से हमें निम्न सिद्धान्त ज्ञात होते हैः—

(१) एक प्रकार के प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) में कई भिन्न प्रकार के मूल (Genotypes) निहित हो सकते हैं।

(२) एक ही प्रकार के मूल रूप (Genotype) का प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) उस पर्यावरण पर निर्भर होता है जिसमें प्राणी विकसित होता है।

(३) प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) मूल रूप (Genotype) और पर्यावरण के संयुक्त प्रभाव का फल होता है।

वर्णसंकर (Hybrids)

साधारण व्यक्तियों का यह विश्वास है कि दो प्रकार के वंशानुसंक्रमण के सम्मिश्रण से तीसरी प्रकार की वस्तु उत्पन्न होती है। एक नीग्रो स्त्री और काकेशियन पुरुष के सम्बन्ध से जो सन्तान उत्पन्न होगी वह अर्द्ध नीग्रो और अर्द्ध काकेशियन होगी। यदि इस अर्द्ध नीग्रो एवं अर्द्ध काकेशियन सन्तान का विवाह नीग्रो से हो तो उनसे उत्पन्न सन्तान $\frac{3}{4}$ नीग्रो और $\frac{1}{4}$ काकेशियन लक्षणों वाली होगी। कहने का अभिप्राय यह है कि वंशानुसंक्रमणीय लक्षण मिश्रित हो जाते हैं। साधारण शब्दों में हम इसे एक उदाहरण द्वारा समझा सकते हैं।

मान लीजिये एक गोरी (White Complexioned) स्त्री का विवाह काले पुरुष से होता है तो इनसे उत्पन्न सन्तानों का काले और गोरे रङ्ग के मिश्रण से उत्पन्न तीसरा रंग—सावला होगा। इसी प्रकार लोग रक्त मिश्रण (Mixture of Blood) की भी चर्चा करते हैं। ये सब भ्रममूलक धारणायें हैं। हम पिछले अध्याय में समझा ही चुके हैं कि वर्णसूत्र (Chromosome) और वाहकाणु (genes) सदैव वही रहते हैं और उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। मेंडल ने इसी तथ्य की खोज की थी जो बड़ी महत्वपूर्ण है।

मेंडल की खोंज (Mendl's Discovery)

मेंडल ने मटर के दानों के साथ परीक्षण किया था और कुछ निष्कर्षों पर पहुँचा था। उन्हीं निष्कर्षों पर हम एक साधारण एवं सरल परीक्षण द्वारा पहुँच सकते हैं, इसलिये हम दूसरे परीक्षण को अवतरित करेंगे। एक लाल रंग के फूल और एक सफेद रंग के फूल को मिलाकर बोया गया। इनसे जो सन्तान उत्पन्न हुई वह लाल और सफेद के बीच के रंग, गुलाबी-रंग, की हुई। इससे लोगों को यह भ्रम हो सकता है कि सफेद और लाल रंग में मिश्रण हो गया है परन्तु ऐसा नहीं है। प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) से मूल रूप (Genotype का पता नहीं लगाया जा सकता। इसे पता लगाने के लिए वंश परीक्षण (Progeny Test) करना होगा। गुलाबी रंग के बीजों को बो दिया गया। इससे उत्पन्न फूल सफेद, गुलाबी और लाल तीनों ही रंग के उत्पन्न हुये। इससे स्पष्ट है कि मिश्रण नहीं हुआ था। इसको और अधिक स्पष्ट करने के लिये इन सफेद फूल वाले बीजों को, गुलाबी फूल वाले बीजों को और लाल फूल वाले बीजों को अलग अलग क्यारियों में बोया गया तो सफेद वाले में सफेद, लाल वाले में लाल और गुलाबी वाले में सफेद, लाल और गुलाबी तीनों ही रंग के फूल हुये। इससे स्पष्ट है कि सफेद और लाल शुद्ध वंशानुसंक्रमण के हैं।

अब प्रक्रिया को ध्यानपूर्वक समझिये। एक लाल फूल शुद्ध लाल (माता) और शुद्ध लाल (पिता) की सन्तान हैं, तो उस रंग का वाहकाणु (Genes) माता और पिता के समान प्राप्त हुआ। इसे (वाहकाणु) + मान लीजिये, तो उसमें +/+ वाहकाणु हैं। इसी प्रकार एक शुद्ध सफेद फूल है उसके भी वाहकाणु स/स हैं। अब हमने सफेद और लाल को मिश्रित बो दिया तो इससे निम्न प्रकार की सन्तान उत्पन्न होगी:—

(अ) +/+ × स/स

= +/स : +/स : +/स : +/स

(ब) + / स × + / स

= + / + : + / स : स / + : स / स

= लाल : गुलाबी : गुलाबी : सफेद

इससे स्पष्ट है कि वाहकाणु कभी भी मिश्रित नहीं होते, बल्कि सदैव शुद्ध बने रहते हैं। यह मेंडल ने खोज की थी और यह खोज अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

+ / स वाले फूलों को हमने गुलाबी रंग का लिखा है, परन्तु यह पर्यावरण का प्रभाव भी हो सकता है या + और स के साथ रहने का प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) भी हो सकता है, परन्तु यह स्पष्ट है कि + और स मिश्रित नहीं होते और अपना व्यक्तित्व वही रखते हैं। कई बार यह भी देखा गया है कि + / स वाले पुष्प भी लाल होते हैं, इस तरह तीन लाल और एक सफेद भी उत्पन्न होता है। इस प्रक्रिया को मेंडल ने इस प्रकार समझाया है कि वाहकाणु दो प्रकार के होते हैं—प्रबल (Dominant) और गौण (Recessive)। जो वाहकाणु प्रबल होता है वह स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष रूप में प्रकट होता है यद्यपि मूल रूप में + / स दोनों ही होते हैं। उपरोक्त उदाहरण में + अर्थात् लाल प्रबल है, इसलिये प्रबल +, गौण स को दबा देता है और फूल प्रत्यक्ष रूप में लाल दिखाई पड़ते हैं।

अतः वर्णसंकरों (Hybrids) में भी वाहकाणु की शुद्धता मेंडल ने घोषित की। यही इसका सिद्धान्त है और वंशानुसंक्रमण के आधारभूत सिद्धांतों में प्रमुख है।

मेंडल के सिद्धांत के अनुसार उत्पन्न सन्तानों को गणित के साधारण नियमों द्वारा भी व्यक्त किया जा सकता है।

$$(\text{अ}+\text{ब})^{१} = \text{अ}^{२} + २\,\text{अ}\,\text{ब} + \text{ब}^{२}$$

या $(\text{लाल}+\text{सफेद})^{२} = \text{लाल}^{२} + २\,\text{लाल सफेद} + \text{सफेद}^{२}$

= लाल + २ लाल सफेद + सफेद

= १ : २ : १

चूंकि लाल प्रबल है इसलिये तीन लाल और एक सफेद होता है या इसे ३ : १ के अनुपात में भी व्यक्त किया जा सकता है। अतः मेंडल ने यह भी बताया कि वर्णसंकर ३ : १ के अनुपात में सन्तानें उत्पन्न करते हैं। मेंडल के स्वयं के परीक्षण में ७०५ लाल और २२४ सफेद सन्तानें थी — ७०५ : २२४

: : ३·०१ : ·९७ । इसे ३:१ के अनुपात में कहा जा सकता है । यह अनुपात औसत परिणाम है । यदि अधिक संख्या में सन्तानें उत्पन्न होंतो यही अनुपात पाया जावेगा ।

सारांश (Summary)

इन दो अध्यायों में हमने वंशानुसंक्रमण के कुछ सिद्धान्तों पर संक्षेप में प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है । कुछ प्रमुख सिद्धान्तों का सारांश निम्न है:—

(१) शरीर कोष्टों (cells) का योग है।

(२) मनुष्यों का जीवन अंडकोष्ट (Egg cell) एवं शुक्रकोष्ट (Sperm cell) के समन्वय से प्रारम्भ होता है ।

(३) प्रत्येक कोष्ट दो वस्तुओं से बना होता है— नाभिक (Nucleus) और कोशारस (Cytoplasm) ।

(४) अंडकोष्ट और शुक्रकोष्ट मिलकर एक हो जाते हैं और फिर कोष्ट विभाजन की प्रक्रिया (Mitosis) के परिणाम स्वरूप एक से दो, दो से चार, चार से आठ और उसी प्रकार सैकड़ों कोष्टों में विभाजित हो जाते हैं ।

(५) कोष्ट के नाभिक (Nucleus) में वर्णसूत्र (Chromosomes) और वाहकाणु (Genes) होते हैं ।

(६) वर्णसूत्र और वाहकाणु अपनी प्रतिलिपियां उत्पन्न कर लेते हैं और प्रत्येक कोष्ट में वही वर्णसूत्र और वाहकाणु पाये जाते हैं ।

(७) इसी प्रक्रिया के कारण मूल जीवाणु (Germ plasm) की निरन्तरता बनी रहती है ।

(८) वंशानुसंक्रमण मूल जीवाणु होता है और मूल जीवाणु वर्णसूत्र और वाहकाणु का योग होता है ।

(९) मनुष्य जाति में २४ युग्म वर्णसूत्र पाये जाते हैं ।

(१०) वाहकाणु कभी मिश्रित नहीं होते, यद्यपि प्रबल या गौण भले ही रहें ।

(११) मनुष्यों के लक्षण और वाहकाणुओं का घनिष्ठ सम्बन्ध है ।

वाहकाणु और लक्षण (Genes and Traits)

मनुष्य के शारीरिक एव मानसिक लक्षणों और वाहकाणुओं में घनिष्ठ सम्बंध है । वास्तव में वाहकाणुओं द्वारा ही हमारे लक्षण निश्चत होते हैं ।

प्रत्येक लक्षण का एक निश्चत वाहकाणु होता है। प्रत्येक व्यक्ति में प्रत्येक लक्षण का एक युग्म (Pair) वाहकाणु पाया जाता है—एक उसे माता से प्राप्त होता है और दूसरा पिता से। प्राणीशास्त्र में इस युग्म को 'Alleles' (यह ग्रीग शब्द Allelos से बना है जिसका अर्थ एक या दूसरा होता है) कहते हैं। इस युग्म में दोनों वाहकाणु समान होते हैं या दो भिन्न प्रकार के। जब समान वाहकाणु इस युग्म में होते हैं तो वही लक्षण प्रमुखता से प्रकट होते हैं। उदाहरण के लिए पिता से नीली आंखों का वाहकाणु मिला और माता से भी नीली आंखों का वाहकाणु मिला तो सन्तान की आंखों का रंग प्रमुख रूप से नीला होगा। जब युग्म में दो भिन्न वाहकाणु होते हैं तो उन दोनों में से उस वाहकाणु का प्रभाव होता है जो प्रबल होता है। उदाहरण के लिए माता से नीली आंखों का वाहकाणु और पिता से काली आंखों का वाहकाणु प्राप्त हुआ और नीली आंखों का वाहकाणु प्रबल (Dominant) और काली आंखों का गौण (Recessive) है तो बच्चे की आंखें नीली होगी यद्यपि उसके अन्दर नीली आंखों और काली आंखों दोनों के वाहकाणु पाये जाते हैं। काली आंखों का वाहकाणु इस पीढ़ी में गौण है तो इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वह आगे की पीढ़ियों में प्रबल नहीं हो सकता। एक उदाहरण द्वारा आप इसे भली प्रकार से समझ सकेंगे। मान लीजिए इस बच्चे (जिसकी आंखों का एक वाहकाणु काला और दूसरा नीला है) का विवाह एक ऐसी स्त्री से हो जिसकी आंखों के दोनों वाहकाणु नीले हों। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) में दोनों समान हैं क्योंकि दोनों की आंखें नीली हैं तथापि मूल रूप (Genotype) में भिन्न हैं। इनकी जो सन्तानें होंगी उनमें से किसी की आंखें काली भी हो सकती है। उत्तर स्पष्ट है कि उसे माता से नीली आंखों का वाहकाणु और पिता से काली आंखों का वाहकाणु प्राप्त हुआ और काली आंखों का वाहकाणु प्रबल (Dominant) और नीली आंखों का वाहकाणु गौण (Recessive) है।

कई बार माता पिता दोनों ही गोरे होते हैं और कई सन्तान काली पैदा होती है तो उसका यही कारण होता है कि प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) में माता पिता दोनों गोरे होते हैं परन्तु मूल रूप में उनमें से कोई या दोनों सफेद और काले रंग को उत्पन्न करने वाले वाहकाणु अपने अन्दर गौण रूप में रखते हैं अर्थात उनमें काला वाहकाणु गौण होता है। कई बार एक वाहकाणु कई पीढ़ियों तक गौण रहता है और किसी पीढ़ी में एक दम प्रबल हो जाता है।

एक बात स्पष्ट रूप से स्मरण रखना चाहिए कि हमारे लक्षणों पर समस्त वाहकाणुओं का सम्मिलित प्रभाव पड़ता है। एक वाहकाणु पृथक् होकर प्रभाव नहीं डालता, यद्यपि प्रत्येक लक्षण के लिए एक निश्चित वाहकाणु होता है और वह निश्चित परिस्थितियों में एक विशिष्ट प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करता है।

उत्परिवर्तन (Mutation)

कभी कभी वाहकाणु अपनी प्रतिलिपि बनाने की प्रक्रिया में परिवर्तित हो जाता है, इस अचानक परिवर्तन को उत्परिवर्तन (Mutation) कहते हैं। उत्परिवर्तन (Mutation) वाहकाणु (Gene) के ढाँचे में अचानक परिवर्तन को कहते हैं।

प्रश्न

१. मेंडल के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

(Discuss the Mendel's principle.)

२. वाहकाणु और लक्षणों का क्या सम्बन्ध है ?

(What is the relation between genes and traits ?)

अध्याय १२

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण

(Herdeity and Environment)

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण में से किसका प्रभाव मनुष्य के विकास पर अधिक पड़ता है, यह विवाद काफी समय से चला आ रहा है। पर्यावरणवादी (Environmentalists) यह मानते हैं कि मनुष्य के विकास पर पर्यावरण का अधिक प्रभाव पड़ता है और वंशानुसंक्रमण का प्रभाव अति न्यून होता है। इस मत के विपरीत वंशानुसंक्रमणावादियों का मत है कि वंशानुसंक्रमण ही मनुष्य के विकास का आधार है और पर्यावरण का प्रभाव केवल नाम मात्र का है। दोनों ही सम्प्रदाय के विद्वानों ने अनेक परिक्षणों द्वारा अपने मत को सिद्ध करने का प्रयत्न किया है, यद्यपि परीक्षण पूर्ण वैज्ञानिक नहीं है। अब हम इनके द्वारा किए गए परीक्षणों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

(१) निग्रो और श्वेत प्रजाति के बुद्धि अंकों के तुलनात्मक अध्याय

(Compartive studies of intelligence scores of Negroes and whites)

प्रथम महायुद्ध के समय नीग्रो सिपाहियों और श्वेत सिपाहियों की बुद्धि का परीक्षण हुआ। अमेरिका में हुए परीक्षण के अनुसार नीग्रो सिपाहियों की औसत मानसिक आयु (Mental age) १० ४ साल और श्वेत सिपाहियों की औसत मानसिक आयु १३·१ वर्ष निकली। इसके अतिरिक्त अन्य परीक्षणों के द्वारा भी यही ज्ञात हुआ कि श्वेत प्रजाति के व्यक्तियों की मानसिक आयु नीग्रो प्रजाति की तुलना में अधिक है। क्लार्क (Clarke) और पिटरसन (Peterson) एवं लेनियर (Lanier) द्वारा क्रमशः लॉस एन्जिलस और न्यूयार्क में किये गये परीक्षणों के अनुसार ऐसा कोई अन्तर नहीं मिला। इन दो परीक्षणों को अपवाद कह कर भी टाला जा सकता है।

उपरोक्त परीक्षणों के आधार पर वंशानुसंक्रमणवादियों का यह विश्लेषण है कि यह अन्तर वंशानुसंक्रमण के कारण है, परन्तु ऐसा स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसके निम्न कारण हैं: —

(अ) बुद्धि परीक्षण बुद्धि के वाहकाणु का मापक नहीं है। बुद्धि परीक्षण अधिकांश रूप से ज्ञान परीक्षण है और ज्ञान पर्यावरण पर आधारित होता है।†

(ब) यदि मान भी लिया जाय कि बुद्धि परीक्षण वास्तविकता में बुद्धि के मापक हैं तो भी समस्या हल नहीं होती। नीग्रो और श्वेत पर्यावरण समान नहीं है, इसलिए निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि इस अन्तर का कारण वंशानुसंक्रमण है या पर्यावरण।

(स) कोई भी बुद्धि परीक्षण करने वाला वैज्ञानिक यह नहीं कह सकता कि बुद्धि के विकास पर प्रशिक्षण, शिक्षा, सामाजिक जीवन का अनुभव, गृहजीवन और सामाजिक अवसर का प्रभाव नहीं पड़ता। अमेरिका में नीग्रो को श्वेत जाति की तुलना में हीन पर्यावरण में रहना पड़ता है।

(२) शारीरिक लक्षणों के माप
(The measurement of physical traits)

जापानी सिपाहियों की लम्बाई ५६ से ६६ इंच और अमेरिकन सिपाहियों की ६१ से ७५ इंच तक पाई गई। जापानियों की औसत लम्बाई ६३·२४ इंच और अमेरिकनों की ६७·५१ इंच थी। इस परीक्षण के आधार पर वंशानुक्रमण-वादियों का कहना है कि इन दो समूहों की लम्बाई में अन्तर इनके वंशानुक्रमण के कारण है, पर इस कथन को भी निम्न कारणों के कारण स्वीकार नहीं किया जा सकता:—

(अ) मनुष्य की लम्बाई उसके जीवन की परिस्थितियों, भोजन के प्रकार, पालन पोषण के ढङ्ग, जलवायु इत्यादि पर आधारित होती है या दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि पर्यावरण के प्रभाव के कारण लम्बाई कम या अधिक होती है।

(ब) ऐसा देखा गया है कि मुसीबत के दिनों में जब भोजन इत्यादि अच्छा नहीं मिलता तो लम्बाई और वजन दोनों पर प्रभाव पड़ता है। जब ये वस्तुएं अनुकूल होती हैं तो लम्बाई बढ़ भी जाती है। बीजों वाले परीक्षण को

† See G. D. Stoddard, 'Intelligence : Its Nature and Nurture.'

याद कीजिए। बॉस (Boas) ने लिखा है कि अमेरिका में रहने वाले यहूदियों और जापानियों की सन्तानों की लम्बाई औसतन २ इंच अपने माता पिता की औसत से बढ़ गई है।

(स) सकीनफिल्ड ने लिखा है, "जन्म प्रारम्भ होने के क्षण से और वयस्क होने तक अगणित कारक कद के वाहकाणुओं की क्रिया पर प्रभाव डालते हैं।"† इनका मत उचित है क्योंकि बच्चे के स्वास्थ्य पर अनेक तत्व प्रभाव डालते हैं।

(३) व्यवसायिक समूहों के बीच अन्तर
(Difference in Occupational Groups)

अमेरिका में एक पर्यालोकन (Survey) किया गया कि पांच लाख डॉलर से अधिक बिक्री करने वाली कम्पनियों के स्वामी, भागीदार एवं उच्च अधिकारी किन समूहों में पैदा हुए। ३६ प्रतिशत बड़े व्यापारियों के पुत्र थे, २१·७ प्रतिशत किसी न किसी प्रकार के व्यापारियों के पुत्र थे और १२·४ प्रतिशत किसानों के, ५ प्रतिशत क्लर्कों के, ८ प्रतिशत कुशल श्रमिकों के और २·२ प्रतिशत अकुशल श्रमिकों के पुत्र थे। इस पर्यालोकन में उन्होंने बताया कि २७·६ प्रतिशत ही साधारण व्यक्तियों की सन्तानें थीं। इससे स्पष्ट है कि उच्च वंशानुसंक्रमण वाले समूहों की सन्तानों की प्रगति अधिक होती है।

इस परीक्षण में अनेक त्रुटियां हैं और इसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि वे कुशल व्यापारी वंशानुसंक्रमण के कारण हैं। इसमें भी पर्यावरण का महत्व कम नहीं किया जा सकता। चूंकि वे उच्च घरानों में पैदा हुए और उन्हें सुन्दर शिक्षा, व्यापारिक प्रशिक्षण एवं सम्बन्ध मिले, इसलिए वे अपनी वर्तमान स्थिति पर पहुँच सके। व्यापार पूंजी एवं प्रभाव पर भी आधारित होता है। ये सारे कारक पर्यावरण के हैं न कि वंशानुसंक्रमण के। अतः यह कहना उचित नहीं है कि वे उच्च स्थितियों में उच्च वंशानुसंक्रमण के कारण हैं।

(४) विख्यात और कुविख्यात वंश
(Famous and Degenerate Family Lines)

सन् १७२० में ज्यूक नाम का व्यक्ति न्यूयार्क में पैदा हुआ। इसके वंशज १८७७ ई० में १२०० पाये गए, उनमें से ४४० शारीरिक बीमारियों से ग्रस्त

§ "From the moment of conception and through puberty, innumerable factors bear upon the action of the 'stature' genes". A. Scheinfeld, 'You and Heredity' p. 81.

थे, ३१० अत्यन्त दरिद्रता की अवस्था में थे, १३० अपराधी ७ हत्यारे और आधी से अधिक स्त्रियां वैश्याएं पायी गयीं। इसके विपरीत एडवर्ड परिवार को देखिये। सन् १९०० में १३९४ वंशज पाए गए, इनमें से २९५ विश्व-विद्यालय के स्नातक थे। इनमें से १३ महा-विद्यालयों के अध्यक्ष, १ संयुक्त-राज्य अमेरिका का उपाध्यक्ष एवं अन्य ऊंचे स्थानों पर विराजमान थे। इन दोनों वंशों में कितना अन्तर है। इस अन्तर का कारण वंशानुसंक्रमणवादियों ने अच्छा व खराब वंशानुसंक्रमण का प्रभाव बताया है। इस तथ्य को भी निम्न कारणों के कारण स्वीकार नहीं किया जा सकता:—

(१) वंशानुसंक्रमण माता और पिता से निश्चित होता है और साधारणतया विवाह अपने निकट के परिवारों में नहीं किया जाता। हमने पीछे स्पष्ट किया था कि शारीरिक एवं मानसिक लक्षण वाहकाणुओं (Genes) के सम्मिलित प्रभाव के कारण होते हैं। प्रत्येक पीढ़ी में माता और पिता के वाहकाणुओं का नया संग्रह होता है। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि जो वंशानुसंक्रमण सन् १७२० में था वही १८७७ में उस वंश के सब सदस्यों में था। यह कहना अत्यन्त अवैज्ञानिक है।

(२) वंशानुसंक्रमणवादी इस तथ्य को अस्वीकार नहीं कर सकते कि ज्यूक्स और एडवर्ड वंशों के पर्यावरण असमान थे। पर्यावरण के प्रभाव को कम सिद्ध नहीं किया जा सकता।

(३) इस पर्यालोकन में ऐसा लगता है कि ज्यूक्स की खोज जेलों, अनाथालयों एवं दरिद्र परिवारों में की गई और एडवर्ड्स की उच्च परिवारों एवं प्रमुख स्थानों में।

(४) ऑसबर्न ने उचित ही लिखा है, "समाजशास्त्रीय अध्ययनों के रूप में यह अध्ययन रुचिकर है। वंशानुसंक्रमण के प्रमाण के रूप में साधारणतया उन्हें अब स्वीकार नहीं किया जाता।" †

हमने चार परीक्षणों पर विचार किया परन्तु इनमें एक बहुत बड़ा दोष था कि दोनों कारक—वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण—स्वतंत्र थे, इसलिये किसका

† "As sociological studies they are of interest. As evidence of heredity they are now generally discredited." F. Osborn, 'Preface to Eugenics', p. 48.

प्रभाव अधिक पड़ता है यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता। इस दोष को दूर करने के लिये विद्वानों ने कुछ ऐसे परीक्षण किये जिसमें एक कारक स्थिर (Constant) और दूसरा कारक अस्थिर (Variable) है। अब हम ऐसे परीक्षणों पर विचार करेंगे।

नियंत्रित परीक्षण (Controlled Experiments)

नियंत्रित परीक्षण वे होते हैं जिनमें किन्हीं कारकों को नियंत्रित किया जाये। ऐसे परीक्षण मनुष्यों पर करना अत्यन्त कठिन है फिर भी इस ओर प्रयत्न किया गया है।

इन परीक्षणों पर प्रकाश डालने के पूर्व 'जुड़वाँ बच्चे' (Twins) शब्द को समझ लीजिये। जुड़वाँ बच्चे वे बच्चे होते हैं जो गर्भ में साथ साथ विकसित होते हैं—प्रथम, भ्राता जुड़वें (Fraternal or Dizygotic Twins) और द्वितीय, समान जुड़वाँ (Identical or Monozygotic or Mon-Oval Twins)। भ्राता जुड़वें (Fraternal Twins) वे बच्चे होते हैं जो पृथक् पृथक् अंडकोष्ट (Egg cell) और शुक्र कोष्ट (Sperm cell) से बनते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि वे साथ साथ माता के गर्भ में विकसित होते हैं परन्तु पृथक् पृथक् वस्तुओं से विकसित होते हैं। ये जुड़वाँ बच्चे अन्य भाइयों के समान होते हैं, इसलिये इन्हें भ्राता जुड़वें कहते हैं। समान जुड़वे (Identical Twins) एक ही अंडकोष्ट (Egg cell) से विकसित होते हैं, इसलिये इन्हें समान जुड़वां बच्चे कहते है। समान जुड़वां बच्चों (Identcal Twins) का वंशानुसंक्रमण बिल्कुल समान होता है क्योंकि वे एक ही अंडकोष्ट के विभाजन के फलस्वरूप विकसित होते हैं। भ्राता जुड़वाँ बच्चों (Fraternal Twins) का भी वंशानुसंक्रमण समान होता है, क्योंकि एक ही पुरुष और स्त्री के शुक्रकोष्ट एवं अंडकोष्ट से ये विकसित होते हैं। समान जुड़वाँ बच्चे भ्राता जुड़वाँ बच्चों की तुलना में अधिक समान लक्षणों वाले होते हैं। जुड़वाँ बच्चे उन बच्चों, जो कुछ समय के अन्तर के उपरान्त उत्पन्न होते हैं, की तुलना में अधिक समान होते हैं। अतः स्पष्ट है कि जुडवाँ बच्चों का वंशानुसंक्रमण समान होता है।

(१) साथ साथ पाले गये समान जुड़वाँ बच्चों का अध्ययन (Studies of Identical Twins reared together)

इन जुड़वां बच्चों का पर्यावरण एवं वंशानुसंक्रमण दोनों ही समान हैं। डाओंनी (Dionne) *बहनों का अध्ययन बड़ा प्रसिद्ध है। ये पांच बहनें समान जुड़वां (Identical Twins) पैदा हुई। तीन वर्ष के उपरान्त मनोवैज्ञानिकों ने इनकी सामाजिक सफलता (Social Success), सामाजिक जनप्रियता (Social Popularity) और सामाजिक रुचि (Social Interests) के गुणों की परीक्षा की। उस परीक्षा का परिणाम निम्नलिखित है:—

क्रम संख्या	बहिनों का नाम	सामाजिक सफलता	सामाजिक जनप्रियता	सामाजिक रुचि
(१)	एनेट	१·३	०·८	२·७
(२)	सेसिल	१·३	१·२	१·८
(३)	एमिली	०·६	१·०	०·६
(४)	मेरी	०·६	०·७	०·४
(५)	थूनी	१·८	१·६	१·०

ये बहिनें शारीरिक लक्षणों में बिल्कुल समान थीं परन्तु उपरोक्त मानसिक अन्तर इनमें पाया गया। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि एमिली को क्रोध बिल्कुल नहीं आता था जब कि मेरी क्रोध की पुतली थी। थूनी का व्यवहार बुजुर्गों सा था। इसी प्रकार के अन्य अन्तर इनमें पाये जाते थे।

इन अन्तरों से स्पष्ट है कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण के समान होते हुये भी अन्तर पाया जाता है। इस परीक्षण से हमारा प्रश्न और भी उलझ गया।

---

§ See H. D. Carter, 'Intelligence, Its Natures and Nurture' Vol. I chap. VIII.

* See W. E. Blatz and others, 'Collected Studies on the Dionne Quintuplets'.

(२) पृथक् पृथक् पाले गये समान जुड़वां बच्चों, का अध्ययन (Studies of Identical twins reared apart)

इस परीक्षण में जुड़वां बच्चों का वंशानुसंक्रमण स्थिर (Constant) रहता है अर्थात् वह परिवर्तित नहीं होता और पर्यावरण अस्थिर (Variable) होता है अर्थात् परिवर्तित होता रहता है या भिन्न होता है।

प्राणीशास्त्री न्यूमेन (Newman), मनोवैज्ञानिक फ्रीमेन (Freeman) और सांख्यिकीवेत्ता होलजिंगर (Holzinger) ने १९ समान जुड़वाँ बच्चों (Identical twins) को भिन्न घरों में पाल कर अध्ययन किया।§ इन विद्वानों ने बताया कि इन भिन्न पर्यावरणों में पाले गए जुड़वाँ बच्चों में अनेक महत्वपूर्ण अन्तर पाए गए, परन्तु पर्यावरण ने शारीरिक लक्षणों पर अति न्यून प्रभाव डाला। व्यक्तित्व के लक्षणों एवं विशेषताओं पर अत्यधिक प्रभाव दृष्टिगोचर हुआ। इससे स्पष्ट है कि पर्यावरण का मानव विकास पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इस परीक्षण में हमने देखा कि दो जुड़वां बच्चों का वंशानुसंक्रमण समान था, परन्तु पर्यावरण भिन्न होने के कारण उनमें अन्तर पाये गये। यहां पर इस बात पर भी ध्यान देना चाहिए की शारीरिक लक्षणों में अति न्यून परिवर्तन होता है, अतः वे वंशानुसंक्रमण से अधिक निर्देशित होते है। वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण के विवाद की ओर संकेत करते हूए उन्होंने उचित ही लिखा है, "हम प्रो० एच० एस० जेनिंग्स के अधिकारपूर्ण कथन से सहानुभूति अनुभव करते हैं कि जो कुछ वंशानुसंक्रमण कर सकता है, वह पर्यावरण भी कर सकता है।"†

(३) विभिन्न माता पिता के साथ साथ पाले गए बच्चों का अध्ययन (Studies of Children of different Parentage reared together)

इस परीक्षण में पर्यावरण स्थिर (constant) होता है और वंशानुसंक्रमण अस्थिर (Variable)। विभिन्न माता पिता के बच्चों का वंशानुसंक्रमण भिन्न

---

§ See 'Twins: A Study of Heredity and Environment', The University of Chicago Press (1937)

† "We feel in sympathy with Professor H. S. Jennings' dictum that what heredity can do environment can also do." Ibid, p. 362.

होता है। यदि उन्हें एक ही पर्यावरण में पाला जाय तो देखें क्या होता है। कुमारी बर्क्स (Miss Burks) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह घोषणा की कि मनुष्य की बुद्धि के विकास में वंशानुसंक्रमण का ८०% और पर्यावरण का २०% प्रभाव पड़ता है। इस परीक्षण में कुमारी बर्क्स ने वंशानुसंक्रमण को पूर्ण रूप से नापने का प्रयत्न किया, जो कि असंभव है। इसी प्रकार का एक परीक्षण स्कील्स (Skeels) ने किया। उसने १५० अवैधज बच्चों, जिनका वंशानुसंक्रमण का कुछ भी पता नहीं था, छः महीने की आयु में एक अनाथालय में रखा। इन लोगों का समय समय पर बुद्धि परीक्षण किया जाता था और उसकी तुलना होती थी। इनमें से १६ बच्चों का बुद्धिफल (I. Q.) ११६ तक दो वर्ष के उपरान्त पहुँच गया जबकि उनकी माताओं का औसत बुद्धिफल ७१ निकला। ढ़ाई साल उपरान्त उन बच्चों का औसत बुद्धिफल १०८ पाया गया। इस परीक्षण से स्पष्ट है कि पर्यावरण मानसिक लक्षणों पर अत्यधिक प्रभाव डालता है।

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण की अपृथक्ता
(Inseparability of Heredity and Environment)

इन परीक्षणों से स्पष्ट है कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण को पृथक् नहीं किया जा सकता। इन दोनों का अति घनिष्ट सम्बन्ध है। मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा है, "जीवन की प्रत्येक घटना दोनों का फल होती है। उनमें से एक परिणाम के लिए उतनी ही आवश्यक है जितनी कि दूसरी। कोई भी न तो कभी हटाई जा सकती है और न ही कभी पृथक् की जा सकती है।"§ वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण उसी प्रकार से सम्बन्धित हैं, जैसे शरीर और आत्मा, एक दूसरे के बिना उनका कोई महत्व नहीं है। प्रत्येक मानव लक्षण के विकास के लिए दोनों की ही अत्यन्त आवश्यकता होती है। एल्टनबर्ग ने भी इसी विचार को इन शब्दों में व्यक्त किया है, "प्रत्येक लक्षण को अपने विकास के लिए वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण दोनों की आवश्यकता होती है।"† लम्ले ने भी इसी विचार की पुष्टि करते हुए

§ "Every phenomenon of life is the product of both. Each is as necessary to the result as the other. Neither can ever be eliminated and neither can ever be isolated." MacIver and Page, 'Society', p. 95

† "Each trait requires both heredity, and environment for its develepment." Edgar Altenberg. 'Genetics,' Henry Holt & Co. New York (1950), p. 22.

लिखा है, "यह वंशानुसंक्रमण या पर्यावरण नहीं है, परन्तु वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण है।"§

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण का विवाद

यह विवाद कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण में कौन अधिक महत्वपूर्ण है, एक व्यर्थ का प्रश्न है। वशानुसंक्रमण और पर्यावरण शब्दों से कुछ भी व्यक्त नहीं होता। डेविस ने लिखा है, " 'वंशानुसंक्रमण' या 'पर्यावरण' जैसे शब्द किसी भी स्पष्ट वस्तु की ओर निर्देश नहीं करते हैं, बल्कि एक अचेतनता की ओर।" † जहाँ किसी फल को उत्पन्न करने के लिए दो कारकों की आवश्यकता होती है, तो यह प्रश्न करना कि दोनों में कौन अधिक महत्वपूर्ण है, एक व्यर्थ सी बात है। बच्चे को जन्म देने में माता और पिता दोनों का योग होता है। यह प्रश्न व्यर्थ होगा कि दोनों में कौन महत्वपूर्ण है। हमारे जीवित रहने के लिए हवा और जल दोनों की आवश्यकता होती है। इन दोनों में से कौन अधिक महत्वपूर्ण है, इससे हमारा कोई मतलब सिद्ध नहीं होता। इसी प्रकार मनुष्य के विकास के लिये वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण दोनों ही अति आकश्यक हैं। अब यह प्रश्न करना कि दोनों में से कौन अधिक महत्वपूर्ण है अपनी शक्ति एवं समय को नष्ट करना है, जब कि हम जानते हैं कि दोनों में से किस एक के अभाव में जीवन विकसित नहीं हो पायेगा। अतः यह विवाद व्यर्थ है।

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं (Heredity and Environment are complementry to each other)

वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं। मानव विकास के लिए दोनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। लेडिस और लेडिस ने इनके सम्बन्धों पर प्रकाश डालते हुए बड़े सुन्दर शब्दों में लिखा है, "वंशानुसंक्रमण हमें

---

§ "It is not heredity or environment but heredity and environment." Lumley, 'Principles of Sociology" p. 50

† "Terms such as 'heredity' or 'environment' do not refer to any thing tangible but to an abstraction." K. Davis, 'Human Society' p. 196.

विकसित होने की क्षमताएं प्रदान करता है, परन्तु इन क्षमताओं के विकसित होने के लिए अवसर पर्यावरण से अवश्य प्राप्त होने चाहिए। वंशानुसंक्रमण हमें हमारी कार्यशील पूंजी देता है और पर्यावरण हमें इसके विनियोग करने का अवसर देता है।"§ वंशानुसंक्रमण हमारी खाद्य—सामग्री है, और उत्पादक के समान पर्यावरण इस खाद्य-सामग्री से जो वस्तु चाहता है, बना लेता है। हम पहिले लिख ही चुके हैं कि मनुष्य का प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) मूलरूप (Genotype or Heredity) और पर्यावरण के संयुक्त काम का परिणाम होता है। इस प्रकार प्रत्येक लक्षण का निश्चय दोनों के संदर्भ से होता है और दोनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "जीवन के सब गुण वंशानुसंक्रमण में होते हैं, गुणों की सम्पूर्ण उत्पत्ति पर्यावरण पर निर्भर होती है।"†

मान लीजिए एक बालक अत्यधिक तीक्ष्ण बुद्धि वाले वाहकाणु अपने वंशानुसंक्रमण में लेकर पैदा होता है, परन्तु बचपन से ही उसे जंगली जानवरों के साथ रहने का अवसर प्राप्त होता है और उसे सामाजिक जीवन का पर्यावरण प्राप्त नहीं होता। क्या यह आशा की जा सकती है कि उपरोक्त वर्णित पर्यावरण में वह बालक अत्यन्त बुद्धिमान निकलेगा। उत्तर स्पष्ट है—कदापि नहीं। प्रत्येक वह गुण, जो हमें वंशानुसंक्रमण से प्राप्त होता है, की दिशा पर्यावरण के द्वारा निश्चित होती है। एक बालक की बुद्धि कुशाग्र हो सकती है, परन्तु वह प्राध्यापक होगा या डाकू, यह पर्यावरण पर निर्भर है। इस प्रकार हमें सदैव स्मरण रखना चाहिए कि पर्यावरण हमारे जीवन के विकास में एक महत्वपूर्ण भाग लेता है, इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वंशानुसंक्रमण महत्वपूर्ण नहीं है। दोनों ही अपना अपना कार्य करते हैं और उनमें से कोई भी एक दूसरे का कार्य नहीं कर

§ "Heredity gives us the capacities to be developed but opportunity for the development of these capacities must come from the environment. Heredity gives us our working capital; environment gives us the opportunity to invest it." Landis' and Landis, 'Social Living,' p. 8.

† "All the qualities of life are in the heredity, all the evocation of qualities depends on the environment." MacIver and Page, 'Society', p. 97.

सकता। मैकाइवर ने ठीक ही लिखा है, "पर्यावरण जीवन का वाहक एवं साधन है। वही अकेले जीवन की अगणित शक्तियों को वास्तविकता प्रदान करता है या नष्ट करता है।"*

अतः इस विवेचन का सारांश यह है कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण दोनों ही मानव शक्तियों के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इन दोनों में कौन अधिक महत्वपूर्ण है, यह न निश्चय हो पाया है न भविष्य में कभी निश्चय हो पायेगा। यह एक व्यर्थ का प्रश्न है।

प्रश्न

१. वंशानुसंक्रमण से आप क्या समझते हैं? इसकी स्पष्ट विवेचना कीजिये। यह किस प्रकार कार्य करता है और क्या यह पर्यावरण से सम्बन्धित है?
(आगरा, १९५०)

(Explain clearly what do you understand by heredity. How does it operate and is it related to environment?)

२. 'वंशानुसंक्रमण नहीं, बल्कि पर्यावरण सामाजिक परिवर्तन को नियन्त्रित करता है।' व्याख्या कीजिये।
('Not heredity but environment conditions Social change' Explain.)

३. वंशानुसंक्रमण बनाम पर्यावरण पर एक निबन्ध लिखिए।
(Write an essay on heredity versus environment.)

४. संक्षिप्त टिप्पणी 'ज्यूक्स और एडवर्ड्स' पर लिखिए। (राजपूताना १९५५)
(Write short note on 'Jukes and Edward.')

---

* "Environment is the means, the vehicle, of life; it alone grants or denies actuality to each of the seemingly infinite potentialities of life." MacIver 'Elements of Social Science', p.60.

अध्याय १३

वंशानुसंक्रमण और मानव जीवन
(Heredity and Human Life)

वंशानुसंक्रमण और मानव जीवन का घनिष्ट सम्बन्ध है। पिछले अध्याय में हम लिख चुके हैं कि यह मापना, कि वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण में से मानव विकास के लिये कौन अधिक महत्वपूर्ण है, तनिक कठिन है, परन्तु मानव विकास के विभिन्न अंगों पर वंशानुसंक्रमण का अधिक प्रभाव पड़ता है। अब हम उन्हीं अङ्गों पर प्रकाश डालेंगे जिन पर वंशानुसंक्रमण का अधिक प्रभाव पड़ता है।

लिंग भेद (Difference of Sex)

प्रत्येक मानव का लिंग (पुलिंग या स्त्रीलिंग) जन्म के समय निश्चित हो जाता है। उन पर पर्यावरण का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता। इस लिंग भेद के ही कारण पुरुष और स्त्रियों में विभिन्न शारीरिक अन्तर पाये जाते हैं। स्त्रियों के गर्भाशय होता है जिसमें बच्चे बनते हैं, पुरुषों के शरीर में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं होती। बच्चा होने के समय उनके गुप्त अंग फैल जाते हैं और बाद को सिकुड़ जाते हैं, यह रबड़ जैसी प्रकृति पुरुष में नहीं पाई जाती। ये वंशानुसंक्रमण द्वारा ही निश्चित होती हैं। स्त्रियों के चेहरे पर बाल नहीं उगते जिस प्रकार पुरुषों के दाढ़ी उगती है। इसी प्रकार के अन्य दैहिक भेद स्त्री और पुरुष में पाये जाते हैं।

कुछ परीक्षणों द्वारा यह विदित हुआ है कि स्त्रियों का औसत वजन पुरुषों से कम होता है और उनकी औसत लम्बाई भी कम होती है। उनके मस्तिष्क का वजन भी पुरुषों के मस्तिष्क की तुलना में हल्का होता है। इसी प्रकार के अन्य शारीरिक भेद स्त्री और पुरुष में पाये जाते हैं। स्त्रियों की छाती पर विशिष्ट प्रकार का उठा हुआ भाग होता है जिसे स्तन कहते हैं और बच्चा उत्पन्न होने के प्रारम्भिक काल में इससे दूध आता है जिसका पान बच्चा करता है। पुरुषों के इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं होती। इससे स्पष्ट है कि ये अन्तर लिंग भेद के कारण पाये जाते हैं जो कि वंशानुसंक्रमण द्वारा निश्चित होते हैं।

स्त्री और पुरुषों के इन भेदों के कारण उसका सामाजिक व्यवहार भी अत्यन्त भिन्न पाया जाता है। चूंकि स्त्रियां बच्चे पैदा करती हैं, इसलिए प्रत्येक संस्कृति में बच्चों का लालन पालन एवं घर की देख रेख स्त्रियों के भाग में आती है। इसके अतिरिक्त दोनों के व्यवहारों के अन्तर संस्कृति पर आधारित होते हैं या यों कहें कि वे पर्यावरण के द्वारा निश्चित होते हैं। किसी भी व्यवहार के विषय में सार्वभौमिक रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि यह कार्य स्त्रियों का है और यह कार्य पुरुषों का है। यह निश्चय करना उस समाज की संस्कृति पर निर्भर होता है। सामाजिक कार्य (Social role) का निश्चय वंशानुसंक्रमण नहीं करता।* कुछ लोगों का मत है कि स्त्रियां स्वाभाविक रूप से मृदुल, सहृदय कोमल एवं भावुक होती हैं और पुरुष कठोर, परिश्रमी एवं बुद्धिमान होते हैं, परन्तु ऐसा सत्य नहीं है। ये गुण विशिष्ट संस्कृति पर आधारित होते हैं न कि वंशानुसंक्रमण पर। मारगेरेट मीड ने अरापेश, मुन्डगुमार एवं शाम्बुली—इन तीन वन्य जातियों में लिंग और स्वभाव के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन किया और वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि आरापेश वन्य जाति में पुरुष और स्त्री का व्यक्तित्व समान है और दोनों ही सहयोगी एवं सेवा की प्रवृत्ति रखते हैं। मुन्डगुमार वन्य जाति में स्त्री और पुरुष दोनों निर्दयी और आक्रमणकारी हैं। शाम्बुली वन्य जाति में स्त्री और पुरुषों के व्यक्तित्व में अन्तर पाया गया।† इसके अतिरिक्त और भी अन्य अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि वंशानुसंक्रमण लिंग भेद अवश्य उत्पन्न करता है, परन्तु इस भेद के आधार पर किस प्रकार का सामाजिक व्यवहार होगा, यह पर्यावरण पर आधारित होता है।§

शारीरिक लक्षण (Physical traits)

शारीरिक लक्षण और वंशानुसंक्रमण का घनिष्ट सम्बन्ध है। पिछले अध्याय में हमने उन जुड़वां बच्चो का अध्ययन किया था जो भिन्न पर्यावरणों

---

* See Margaret Mead, 'Sex and Temperament in Three Primitive Societies,' Morrow co., New York (1935).

† See Amram Scheinfeld, 'Women & Men', Harcourt Brace Co., New York (1944).

§ Helene Deutsch, 'The Psychology of 'Women', Crune and Stratton Co. New York (1944).

में पाले गए थे। उस परीक्षण से हमें ज्ञात हुआ कि बच्चों के शारीरिक लक्षण समान थे यद्यपि उनका पर्यावरण भिन्न था। इससे यह निष्कर्ष निकला कि शारीरिक लक्षण वंशानुसंक्रमण पर अधिक आधारित होते हैं। वाहकाणु (Genes) शारीरिक लक्षणों के स्वरूप निश्चित करते हैं, यद्यपि प्रत्यक्ष रूप (Phenotype) पर्यावरण और मूल रूप (Genotype) या वंशानुसंक्रमण से संयुक्त प्रभाव का फल होता है, फिर भी शारीरिक लक्षण मूल रूप पर अधिक आधारित होते हैं।

मनुष्य का शरीर कोष्टों (Cells) का योग है और प्रत्येक कोष्ट दो मौलिक तत्वों का बना होता है—प्रथम कोशारस (Cytoplasm) और द्वितीय नाभिक (Nucleus)। शरीर के समस्त भाग उसी स्वरूप के होते हैं, जो स्वरूप ये कोष्ट धारण करते हैं। कोष्टों के स्वरूप एवं आकार का निश्चय वर्णसूत्रों एवं वाहकाणुओं द्वारा होता है और ये गुण पूर्व निश्चित होते हैं। इस प्रक्रिया को हम पिछले अध्यायों में भली भाँति समझा चुके हैं। यहाँ पर इतना लिखना पर्याप्त है कि शारीरिक लक्षण वंशानुसंक्रमण पर अधिक आधारित हैं। हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि पर्यावरण का भी प्रभाव पड़ता है, परन्तु वंशानुसंक्रमण की तुलना में कम।

शारीरिक लक्षणों का निश्चय वंशानुसंक्रमण द्वारा अवश्य होता है और वह व्यक्तियों में समानता एवं भिन्नता उत्पन्न करता है, परन्तु शारीरिक लक्षणों को भिन्नता एवं समानता किस दृष्टिकोण से देखी जायेगी और किस प्रकार की सामाजिक प्रतिक्रियाएं होंगी, इसका निश्चय पर्यावरण (संस्कृति, जो कि पर्यावरण की एक अंग है) करता है। मान लीजिए एक व्यक्ति काला है और दूसरा गोरा। इस दोनों में शारीरिक लक्षण की भिन्नता पाई जाती है। अफ्रीका में यह भिन्नता द्वेष एवं घृणा का कारण है परन्तु अन्य परिस्थिति में इसका प्रभाव भिन्न भी हो सकता है। और यही भिन्नता प्रेम एवं श्रद्धा की सृष्टि कर सकती है। मान लीजिये एक स्त्री गोरी है और उसका पति काला है। चूंकि हमारे समाज में गोरी स्त्री को सुन्दर समझा जाता है, इसलिए काला पति उसे प्रेम एवं श्रद्धा से देखेगा और उसका व्यवहार अति मृदुल होगा। इससे स्पष्ट है कि वंशानुसंक्रमण सामाजिक व्यवहार किस प्रकार के होंगे, यह निश्चय नहीं करता। बेनेट और ट्यूमिन

ने उचित लिखा है, "इस प्रकार प्राणीशास्त्र सामाजिक व्यवहार के भेदों की व्याख्या नहा करता है।" §

स्वभाव (Temperament)

स्वभाव भी वंशानुसंक्रमण से अधिक सम्बन्धित है। स्वभाव हमारे आन्तरिक चालकों (Drivers) पर आधारित होता है। सन्तानों का स्वभाव अपने माता पिता पर आधारित होता है। कुछ क्रोधी, कुछ सन्तुलित और कुछ शांत स्वभाव के होते हैं। स्वभाव ग्रन्थियों (Glands) के कार्य करने पर भी आधारित होता है। यदि ग्रन्थियों में दोष उत्पन्न हो जाते हैं तो स्वभाव सन्तुलित एवं शान्त नहीं रहता, क्रोध शीघ्र उत्पन्न हो जाता है।

बुद्धि (Intelligence)

इसमें सन्देह नहीं कि वंशानुसंक्रमण और बुद्धि का सम्बन्ध है परन्तु इतना घनिष्ट नहीं जितना कि शारीरिक लक्षणों से। कुछ वंशानुसंक्रमणवादियों ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि वंशानुसंक्रमण ही बुद्धि का निश्चायक है, परन्तु यह सत्य नहीं।

येरकेस (Yerkes) ने प्रथम महायुद्ध के समय अमेरिका के नीग्रो और श्वेत सिपाहियों की बुद्धि परीक्षा की। नीग्रो की औसत बौद्धिक आयु (Mental Age) १०·४ वर्ष और श्वेत सैनिकों की १३·१ वर्ष पाई गई। इसका कारण उसने वंशानुसंक्रमण बताया, पर अन्य परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध नहीं हुआ है।

न्यूयार्क नगर में एक परीक्षण किया गया। इस नगर के शिक्षा अधिकारियों को ५०० बुद्धिमान बच्चे एक विशेष विद्यालय के लिए चुनने थे। ये बच्चे बुद्धि परीक्षण द्वारा समस्त नगर से चुन लिये गये। जब अधिकारियों ने इन सफल बच्चों को प्रजातियों के अनुसार बाँटा तो १०% बच्चे नीग्रो निकले। न्यूयार्क में नीग्रो जन-संख्या भी १०% ही थी। इससे स्पष्ट है कि करीब २ उसी अनुपात में बच्चे कुशल एवं बुद्धिमान मिले। इसके आधार पर श्वेत और नीग्रो बच्चों की बुद्धि में कोई अन्तर नहीं पाया गया। †

§ "Thus biology does not explain differences in social behaviour." Bennett and Tumin, 'Social Life', p. 26.

† See 'What is Race?' UNESCO Publication (1952), p. 57.

इस विषय में पिछले अध्याय में दिये गए निम्न परीक्षणों को पढ़िए:—

(१) नीग्रो और श्वेत प्रजाति के बुद्धि अंकों के तुलनात्मक अध्ययन।

(२) व्यवसायिक समूहों के बीच अन्तर।

(३) विख्यात और कुविख्यात वंश।

(४) समान जुड़वां बच्चों का अध्ययन जो कि पृथक् पृथक् पर्यावरण में पाले गये।

(५) विभिन्न माता पिता के बच्चों का अध्ययन जो कि साथ साथ पाले गए।

इन परीक्षणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि बुद्धि (Intelligence) और वंशानुसंक्रमण का उतना घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है जितना की शारीरिक लक्षणों और वंशानुसंक्रमण का।

व्यक्तित्व (Personality)

व्यक्तित्व शब्द एक अत्यन्त जटिल शब्द है। अतः इसकी परिभाषा करना अत्यन्त आवश्यक है। बिसन्ज और बिसन्ज ने व्यक्तित्व की परिभाषा इस प्रकार की है, "व्यक्तित्व मनुष्य की आदतों, दृष्टिकोणों और लक्षणों का संगठन है और प्राणीशास्त्रीय, सामाजिक एवं साँस्कृतिक कारकों के संयुक्त कार्य से उत्पन्न होता है।"§ व्यक्तित्व अहं (self or ego) के विकास को कहते हैं। इस अहं का विकास एक जटिल सामाजिक प्रक्रिया द्वारा होता है, जिसे हम समाजीकरण की प्रक्रिया (Process of socialization) कहते हैं।†

व्यक्तित्व की इस परिभाषा से यह सिद्ध होता है कि व्यक्तित्व वंशानुसंक्रमण पर पूर्ण रूप से आधारित नहीं होता। व्यक्तित्व में आदतों एवं दृष्टिकोणों का समावेश होता है और ये वस्तुएं वंशानुसंक्रमण द्वारा निश्चित न होकर पर्यावरण द्वारा निश्चित होती है। वंशानुसंक्रमण ऐसी कुछ शक्तियाँ प्रदान करता है,

---

§ "Personality is the organisation of a person's habits, attitudes and traits and arises from the interplay of biological, social and cultural factors." Biesanj and Biesanj 'Modern Society,' p. 178.

† See K. Davis, 'Human Society', p. 208.

पर इन शक्तियों का प्रयोग किस प्रकार होगा, यह निश्चय वंशानुसंक्रमण द्वारा नहीं होता। वंशानुसंक्रमण व्यक्तित्व के विकास की सीमाएं अवश्य निर्धारित करता है, परन्तु विशिष्ट मार्ग नहीं।

वंशानुसंक्रमण मनुष्य को पशु के रूप में उत्पन्न कर देता है परन्तु उसे मनुष्य बनाने का कार्य समाज पर आधारित होता है। लेंडिस और लेंडिस ने उचित ही लिखा है, "वंशानुसंक्रमण मनुष्य के पशु रूप की व्याख्या करता है, पर्यावरण मनुष्य के मानव स्वरूप की।"* इसे अनेक परीक्षणों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। ऐसे बच्चों के उदाहरण लीजिए जो कि पैदा होते ही मानव समाज से पृथक् कर दिये गये हों। इन बच्चों का कोई भी स्पष्ट व्यक्तित्व नहीं पाया जा सकता। आपने कमला नाम की लड़की के बारे में सुना होगा, जिसे भेड़िये उठा ले गये थे। कमला चार पैरों पर चलती थी और भेड़ियों के समान अन्य कार्य करती थी। उसका व्यक्तित्व केवल भेड़ियों के समान ही था। उसमें कोई भी ऐसा चिन्ह नहीं था जिससे उसे मानव कहा जा सकता, सिवाय उसके शारीरिक लक्षणों के।† यदि वंशानुसंक्रमण के ही द्वारा व्यक्तित्व विकसित होता तो किसी भी पर्यावरण में रह कर हो सकता था, परन्तु ऐसा नहीं होता। अतः वंशानुसंक्रमण व्यक्तित्व के लिए खाद्य सामग्री देता है, पर व्यक्तित्व का वास्तविक विकास पर्यावरण पर आधारित होता है। ग्रीन ने भी इसी तथ्य की पुष्टी की है। वह लिखता है, "तब वंशानुसंक्रमण प्रत्यक्ष रूप से व्यक्तित्व को नहीं ढालता है।"§ बिसन्ज और बिसन्ज ने भी लिखा है, "व्यक्तित्व जन्म से नहीं होता।"¶

समाजशास्त्री और वंशानुसंक्रमण का अध्ययन
(Sociologist and study of Heredity)

समाजशास्त्री वंशानुसंक्रमण का अध्ययन क्यों करते हैं, यह प्रश्न किया जा सकता है। समाजशास्त्री मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करते हैं परन्तु सामाजिक सम्बन्ध कुछ मौलिक आधारों पर टिके हुए हैं, जिनका रहस्य

---

*"Heredity explains man the animal; environment, man the human being." Landis and Landis 'social Living.'

† See J. A. L. Singh and Robert M. Zingg, 'Wolf-Children and Feral Man,' Harper & Bros, New York (1942). See also Kingsle Davis, 'Human Society', pp. 204--208.

§ "Heredity, then does not directly mould the personality." Green, 'Sociology' (1956), p. 24.

¶ "Personality is not inborn" op cit. p. 178.

हमें वंशानुसंक्रमण के अध्ययन से ज्ञात होता है। वंशानुसंक्रमण हमें खाद्य सामग्री प्रदान करता है और उसी खाद्य सामग्री में हमारी शक्तियां निहित हैं। हमारा विकास इन्हीं शक्तियों की सीमाओं में बंधा हुआ है।

वंशानुसंक्रमण के अध्ययन से अनेक मानव समस्याएँ सरल होती जा रही हैं। इसके अध्ययन से समाजशास्त्री को यह ज्ञात हुआ कि वाहकाणु सदैव शुद्ध बने रहते हैं। इसके कारण अनेक गलतफहमियां दूर हुई हैं, रक्त मिश्रण का सिद्धान्त गलत सिद्ध हुआ है, क्योंकि रक्त एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित नहीं होता। इस खोज के आधार पर समाजशास्त्री मानव एकता का सिद्धान्त प्रतिपादित कर सके और अन्तरविवाह के लिए सुझाव दे सके। ऊंच नीच की भावना भी मिटायी जा सकती है। शुद्ध रक्त का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि प्रत्येक मानव में शुद्ध रक्त पाया जाता है। वंशानुसंक्रमण अच्छा और बुरा नहीं होता। ये सांस्कृतिक भेद हैं, जो एक दूसरे के साथ मिलने जुलने से कम हो सकते हैं।

लोगों का ऐसा विश्वास था कि बुद्धि पूर्व निश्चित होती है, परन्तु वंशानुसंक्रमण के अध्ययन से हमें ज्ञात होता है कि बुद्धि एक शक्ति होती है, जो निश्चित सीमाओं में विकसित की जा सकती है। इस दृष्टि से हीनता या उच्चता का कोई प्रश्न नहीं उत्पन्न होता। इस सिद्धान्त के कारण समाजशास्त्र शिक्षा पर अधिक बल देने लगा। मैकाइवर ने भी लिखा है, "जिस प्रकार प्राणीशास्त्र जन्म और प्रजनन पर बल देता है, उसी प्रकार समाजशास्त्र शिक्षा पर।"§

वंशानुसंक्रमण के अध्ययन से समाजशास्त्रियों को प्रजाति, जाति, सामाजिक स्तरण, समाजीकरण की प्रक्रिया, व्यक्तित्व इत्यादि विषयों के अध्ययन में बड़ी सहायता मिलती है। यदि समाजशास्त्रियों ने वंशानुसंक्रमण का अध्ययन न किया होता तो वंशानुसंक्रमणवादियों के प्राणीशास्त्रीय निश्चायक सिद्धान्त (Biological determinism) को किसने आह्वान किया होता ?

प्रश्न

१. मानव की सामाजिक और जैविकीय विरासत में भेद बताइए। सामाजिक विकास में प्रत्येक का महत्व बताइए। (लखनऊ, १९५२)
(Distinguish between social and biological heritage. Discuss the importance of each in social development.)

§"As biology insists on birth and breeding, so does Sociology on education." MacIver, 'Elements of Social Science,' p. 60.

२. वंशानुसंक्रमण का अध्ययन एक समाजशास्त्री के लिए क्यों आवश्यक है ? ऐसे अध्ययन के द्वारा लोगों के प्रजाति व्यवहार समझने में क्या प्रकाश पड़ सकता है ? (राजपूताना, १९५४)

(Why is a study of heredity necessary for a sociologist ? What light can be thrown by such a study on understanding race attitudes of the people ?

३. क्या वंशानुसंक्रमण का शारीरिक स्वरूप, बुद्धि और व्यक्तित्व के लिए समान महत्व है ? अपनी सम्मति के कारण लिखिए । (आगरा, १९५१)

Does heredity have the same significance for Physical appearance, intelligence and personality ? Give reasons for your opinion.)

४. वंशानुसंक्रमण का क्या अर्थ है ? समाज में एक व्यक्ति के विकास को वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण किस प्रकार प्रभावित करते हैं ? (आगरा, १९५६)

What is meant by heredity ? How do heredity and environment influence the growth of an individual in society. ?)

५. वंशानुसंक्रमण एक पर्यावरण में ही सम्भवतया वास्तविकता को प्राप्त करता है ।" विवेचना कीजिए । (राजपूताना, १९५७)

('Heredity is potentially made actual within an environment.' Discuss.)

पंचम खण्ड

समाज और भौगोलिक पर्यावरण

(Society and Geographical Environment)

अध्याय १४ : पर्यावरण का अर्थ
(Meaning of Geographical Environment)

अध्याय १५ : भौगोलिक पर्यावरण और सामाजिक जीवन
(Geographical Environment and Social Life)

अध्याय १६ : भौगोलिक पर्यावरण और सभ्यता एवं संस्कृति
(Geographical Environment and Civilization and Culture)

अध्याय १७ : पहाड़ों, मैदानों एवं रेगिस्तानों में सामाजिक जीवन
(Social Life in Mountains, Plants and Deserts)

अध्याय १८ : ग्रामीण एवं नागरिक जीवन
(Rural and Urban Life)

अध्याय १४

भौगोलिक पर्यावरण का अर्थ

(Meaning of Geographical Environment)

प्रकृति ने मनुष्य के लिये अनेक सुविधायें एवं असुविधायें प्रदान कर रखी हैं। भौतिक वस्तुओं से मनुष्य का समस्त संसार घिरा हुआ है। गगनचुम्बी हिमगिरि, गंगा यमुना का स्वर्णिम उपजाऊ मैदान और नील झकोरे लेने वाला हिन्द महासागर—ये सब ही भारतवर्ष की प्राकृतिक दशा पर प्रभाव डालते हैं। यहां के निवासी भी इनके प्रभाव से नहीं बचते हैं। पृथ्वी के रंगमंच पर मनुष्य अपने सामाजिक जीवन का नाटक खेलता है। पृथ्वी प्रकृति की देन है।

सामान्य रूप में भौगोलिक पर्यावरण का अर्थ हम उन वस्तुओं से समझते हैं जो हमें प्रकृति ने प्रदान की है। मैकाइवर और पेज ने इसी प्रकार का भाव इन शब्दों में प्रकट किया है, "भौगोलिक पर्यावरण उन दशाओं से मिलकर बनता है जिन्हें प्रकृति मनुष्य के लिये प्रदान करती है।"§ भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत पृथ्वी का धरातल और खनिज पदार्थ, भूमि और जल, पहाड़ और मैदान, पौधे और पशु, जलवायु, विद्युत-शक्ति, सूर्य एवं चन्द्र, पृथ्वी की आकर्षण शक्ति इत्यादि आते हैं।

सारोकिन ने भौगोलिक पर्यावरण की सरल एवं स्पष्ट व्याख्या इस प्रकार की है कि भौगोलिक पर्यावरण से "हम ऐसी समस्त ऐहिक दशाओं और घटनाओं को समझते हैं जिनका अस्तित्व, मनुष्य के कार्यों से स्वतन्त्र है, जिनकी रचना मनुष्य द्वारा नहीं की गई है और जो मनुष्य के अस्तित्व एवं कार्यों से बिना प्रभावित हुये स्वतः परिवर्तित एवं रूपान्तरित होती रहती हैं।"† सारोकिन ने

---

§"The geographical environment consists of those conditions that natnre provides for man." MacIver and Page 'Society,' p.98

†"...We mean all cosmic conditions and phenomena which exist independent of man's activity which are not created by man, and which change and vary through their own spontaneity, independent of man's existence and activity." P. Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories,' Harper & Bros, New York, p. 101.

भौगोलिक पर्यावरण को तनिक सीमित करने का प्रयत्न किया है और ऐसा करना मेरे विचार से भी उचित है। जो भी पर्यावरण मनुष्य के कार्यों द्वारा पुनः रचित एवं परिवर्तित होता है उसे भौगोलिक पर्यावरण नहीं कहना चाहिए। ऐसा पर्यावरण सामाजिक या सांस्कृतिक पर्यावरण के अन्तर्गत आना चाहिए। उदाहरण के लिए मनुष्य द्वारा खोदी गई नहरें, मनुष्य द्वारा बोये गये खेत, वन, बाग-बगीचे, खाद द्वारा परिवर्तित भूमि एवं इसी प्रकार के अन्य पर्यावरण के तत्व (जो कि स्वतंत्र अवस्था में भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत आते हैं) भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्गत नहीं मानना चाहिए। अतः यहाँ पर पर्यावरण को हम दो प्रमुख भागों में बांट सकते हैं—प्रथम वह पर्यावरण जो मनुष्य के कार्यों द्वारा प्रभावित नहीं होता और अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखता है और द्वितीय वह जो मनुष्य के कार्यों द्वारा प्रभावित होता है। इसे हम निम्न चार्ट द्वारा भली प्रकार समझ सकते हैं:—

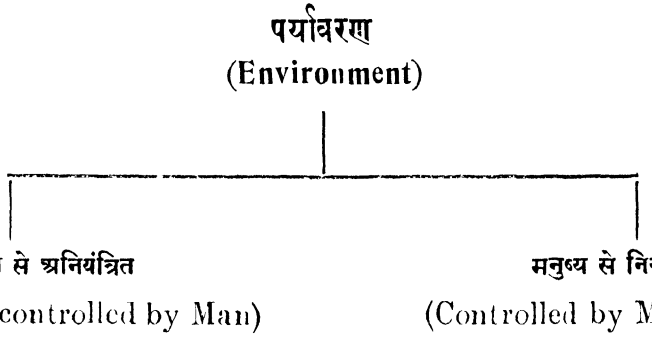

मनुष्य से अनियंत्रित पर्यावरण
(Environment uncontrolled by Man or Uncontrollable Environment)

अनियंत्रित पर्यावरण वह पर्यावरण है जो मनुष्य के कार्यों से बिना प्रभावित हुए स्वतः परिवर्तित एवं रूपान्तरित होता है। उदाहरण के लिये पृथ्वी का सूर्य और चन्द्र से सम्बन्ध, पृथ्वी का क्षेत्रफल एवं स्थिति, खनिजपदार्थों की स्थिति एवं मात्रा, सामुद्रिक क्षेत्र, पहाड़ों और मैदानों का भूमि पर वितरण, बड़ी बड़ी नदियाँ और झीलें, ऋतुएं, ज्वार भाटा, सागर की धारायें, वर्षा, हवा, जलवायु,

दिन और रात्रि का क्रम, पृथ्वी की आकर्षण शक्ति, विद्युत-शक्तियां इत्यादि। इन कारकों को परिवर्तित करना मनुष्य की शक्ति के बाहर है।*

इन कारकों पर मनुष्य का नियंत्रण न होने से हमें यह न समझना चाहिए कि मनुष्य इन कारकों की दया पर है। मनुष्य इन पर नियंत्रण तो नहीं कर सकता परन्तु अपने लाभ के लिये इनका प्रयोग कर सकता है एवं इनके द्वारा उत्पन्न बाधाओं को अपनी युक्ति से सरल बना सकता है। उदाहरण के लिये मनुष्य बड़े बड़े पहाड़ों को उनके स्थान से न तो हटा सकता है और न उन्हें परिवर्तित ही कर सकता है परन्तु उनमें सुरंग (Tunnel) निर्माण कर सकता है। वह ऋतुओं को परिवर्तित नहीं कर सकता है परन्तु उनकी गर्मी एवं सर्दी से अपनी रक्षा कर सकता है।

मनुष्य द्वारा नियंत्रित पर्यावरण (Environment Controlled by Man or Controllable Environment)

नियंत्रित पर्यावरण वह पर्यावरण है जो मनुष्य के कार्यों द्वारा परिवर्तित एवं या निर्मित होता है। इसके अन्तर्गत वह समस्त पर्यावरण आता है जो मनुष्य के आधीन है। अनियंत्रित पर्यावरण के वे तत्व जो नियंत्रित होते जाते हैं इसके अन्तर्गत आते जाते हैं। इसके अन्तर्गत वह पर्यावरण भी आता है जिसे मनुष्य निर्माण करता है—जैसे सभ्यता एवं संस्कृति।

भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment)

अनियंत्रित पर्यावरण (Uncontrollable Environment) को मोटे तौर से भौगोलिक पर्यावरण कह सकते हैं और नियंत्रित पर्यावरण (Controllable Environment) को सामाजिक पर्यावरण (Social Environment) कह सकते हैं।

(१) अनियंत्रित पर्यावरण (Uncontrollable Environment)	=	भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment)

---

* ऐसा कथन वर्तमान अवस्था पर आधारित है भविष्य में विज्ञान की ऐसी प्रगति हो सकती है कि मनुष्य उन वस्तुओं पर भी नियंत्रण कर सके। कृत्रिम वर्षा की जा सकती है, ऐसा वैज्ञानिक परीक्षणों ने सिद्ध कर दिया है। अणु शक्ति (Atomic energy) के द्वारा भी मनुष्य का नियंत्रण बढ़ जायगा। इसलिये जो आज संभव नहीं वह कल संभव हो सकता है।

या

U. E. = G. E.

(२) नियंत्रित पर्यावरण = सामाजिक पर्यावरण
(Controllable Environment) (Social Environment)

या

C. E. = S. E.

सम्पूर्ण पर्यावरण (Total Environment) दो भागों से मिलकर बना है—नियंत्रित पर्यावरण (Controllable Environment) और अनियंत्रित पर्यावरण (Uncontrollable Environment)। इसी सत्य को हम निम्न समीकरण (Equation) द्वारा व्यक्त कर सकते हैं:—

सम्पूर्ण पर्यावरण = अनियंत्रित पर्यावरण + नियंत्रित पर्यावरण
(Total Environment) (Uncontrollable Environment) (Controllable Environment)

या

T. E. = U. E. + C. E.
या T. E. − C. E. = U. E.
या U. E. = T. E. − C. E.
∴ U. E. = G. E. और C. E. = S. E.
∴ G. E. = T. E. — S. E.

भौगोलिक पर्यावरण = सम्पूर्ण पर्यावरण — सामाजिक पर्यावरण
(Geographical Environment) (Total Environment) (Social Environment)

इससे स्पष्ट हैं कि यदि सम्पूर्ण पर्यावरण में से सामाजिक पर्यावरण को निकाल दें तो शेष भौगोलिक पर्यावरण रह जायगा।

भौगोलिक सम्प्रदाय (Geographical School)

भौगोलिक सम्प्रदाय (Geographical School) के और भी अनेक नाम हैं जिनमें से प्रमुख मानव भौगोलिक सम्प्रदाय (School of Human Geography) और सामाजिक भौगोलिक सम्प्रदाय (School of Social Geography) है। इस सम्प्रदाय के मानने वालों को भौगोलिकवादी (Geographists), मानव भौगोलिकवादी (Human Geographists) या सामाजिक भौगोलिकवादी (Social Geographists) कहते हैं। इन

विद्वानों ने मनुष्य के सामाजिक जीवन में भौगोलिक पर्यावरण को अत्यधिक महत्व दिया है।

साधारणतया अधिकांश विद्वानों ने भौगोलिक पर्यावरण को अत्यधिक महत्व दिया है। प्राचीन काल से लेकर आज तक के उन विद्वानों की यदि सूची तैयार की जाय तो अनेक ग्रन्थों की आवश्यकता पड़ेगी। लार्ड कामे (Lord Kame) ने १७८८ ई० में एक ऐसा ग्रन्थ लिखा जिसमें उन लेखकों का विवरण था जिन्होंने भौगोलिक पर्यावरण को अपने लेखों में अत्यधिक महत्व दिया है। यह ग्रन्थ चार भागों में है।* वास्तव में अधिकांश लेखकों ने भौगोलिक पर्यावरण के महत्व की गाथा गाई है। मैं सारोकिन (Sorokin) के इस मत से सहमत हूं कि, "भौगोलिक सम्प्रदाय का इतिहास लिखने का प्रयत्न करने में एक व्यक्ति को उन लेखकों के नाम बताने में कठिनता नहीं होती जिन्होंने कि भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का वर्णन किया है, जितनी कि उन लोगों के नाम बताने में होती है जिन्होंने भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का विवरण नहीं दिया है।"† इससे स्पष्ट है कि भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव को न मानने वाले लेखक अति न्यून संख्या में हैं। आधुनिक युग के प्रमुख भौगोलिकवादी लेमार्क (Lamarck), कार्ल रिटर (Karl Ritter) हम्बोल्ट (Humboldt), बकल (Buckle), लेप्ले (Ley Play), डेमोलिन (Demnlin), मैकिन्डर (Mackinder), रेटजल (Ratzel), कॉम्टे (Comte), ब्लेश (Blache), ब्रहन्स (Brunhes), हंटिंगटन (Huntington), डेक्सटर (Dexter), सेम्पिल (Semple), मूरे (Moore), इत्यादि हुए हैं।§

---

* See Lord Kame 'Sketches of the History of Man', 4 vols.

† "In attempting to write the history of the geographical school, one's difficulty consists not so much in indicating the thinkers who have pointed out the influence of the gographical environment as it does in indicating those who have not mentioned it." P. Sorokin, op. cit, p. 99.

§ See the history of the geographical school in the works: Koller, A. H, 'The Theory of Environment', The Collegiate, Press (1918); Thomas, F., 'The environmetnal Basis of Society; Barnes, H. E 'The New History and the Social Studies.'

भौगोलिक निर्णायकवाद का अर्थ
(Meaning of Geographical determinism)

भौगोलिक निर्णायकवाद (Geographical determinism) को भौगोलिक ब्रह्मवाद (Geographical monism) भी कहते हैं।¶ भौगोलिक निर्णायकवाद से हमारा तात्पर्य यह मानने से है कि प्रत्येक प्रक्रिया एवं तथ्य केवल भौगोलिक पर्यावरण के ही कारण उत्पन्न होते हैं या परिवर्तित होते हैं। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार कह सकते हैं कि यदि मानव व्यवहार के अन्तरों को समझाने का प्रयास अधिकांश रूप से भौगोलिक पर्यावरण के द्वारा हो, तो उसे भौगोलिक निर्णायकवाद का सिद्धांत कहते हैं। भौगोलिकवादी अधिकांश रूप से इसी सिद्धाँत का उपयोग करते हैं। उनके मतानुसार ऐसा कोई भी सामाजिक व्यवहार नहीं है जो भौगोलिक पर्यावरण से प्रभावित न होता हो। प्रत्येक परिवर्तन या नवीन रचना का रहस्य भौगोलिक पर्यावरण के गर्भ में छिपा हुआ है, ऐसा भौगोलिकवादियों का अटूट विश्वास है। अब हम इनके अंधविश्वासी उदाहरणों पर विचार करेंगे।

ब्रिलाट सेवरिन (Brillat-Savarin) ने लिखा है, 'तुम मुझे यह बता दो कि तुम क्या खाते हो और मैं बता दूंगा कि तुम क्या हो।"* इस अवतरण से स्पष्ट है कि लेखक भौगोलिक पर्यावरण को ही मनुष्य के चरित्र का निर्माता समझता है। थामस हेवुड (Thomas Heywood) ने लिखा है, "संसार एक नाटकशाला (Theatre) है और पृथ्वी रंगमच है जिस पर ईश्वर और प्रकृति अभिनेताओं से अभिनय कराते रहते हैं।"† हेवुड के अनुसार मनुष्य प्रकृति के आधीन है और उसी के संकेत पर अपना जीवन बिताता है। कहने का तात्पर्य यह है कि उसका सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार भौगोलिक पर्यावरण द्वारा चालित होता है। भौगोलिकवादियों का यह दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता। हम यह मानते हैं कि भौगोलिक पर्यावरण

¶ See 'Sociological Theory', by Nicholas S. Timasheff Random House, New York (1955).

* "Tell me what you eat and I will tell you what you are." Brillat-Savarin, quoted by Berman, 'Food and Character.'

† "The world's a theatre, the earth a stage,
Which God and Nature do with actors fill."

—Thomas Heywood.

का कुछ न कुछ प्रभाव मनुष्यों पर होता है परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण के अतिरिक्त अन्य कारकों का कोई प्रभाव ही नहीं होता। भौगोलिकवादियों ने तो सीमा ही तोड़ दी है। हंटिंगटन (Huntington) ने लिखा है, "जन्म संख्या भी ऋतुओं के अनुसार परिवर्तित होती रहती है।"¶ इन्होंने एक दूसरी पुस्तक में और भी मज़ेदार बात लिखी है। इन्होंने लिखा है, "ऋतुओं के अभाव में सम्भवतः मानव जाति कभी भी सभ्य न हुई होती।"* हन्टिंगटन (Huntington) के इस कथन की जितनी भी आलोचना की जाय वह कम है। हन्टिंगटन का नाम अति प्रसिद्ध भौगोलिकवादियों में से एक है। इनके सिद्धान्तों की आलोचना हम अगले अध्याय में विस्तारपूर्वक करेंगे। ओडम (Odum) ने भी लिखा है, "मनुष्य पृथ्वी की संतान है। उन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता।"† इसी प्रकार ब्रहन्स (Brunhes) ने लिखा है, "मनुष्य पृथ्वी पर निर्भर है क्योंकि वह पृथ्वी पर रहता है।"§

इसी प्रकार भौगोलिकवादियों ने प्रत्येक सामाजिक व्यवहार का संबंध भौगलिक पर्यावरण से स्थापित करने की चेष्टा की है। मनुष्य और समाज का कोई अंग इन्होंने नहीं छोड़ा है। हमारे वर्णभेद, आर्थिक एव सामाजिक संगठन के ढांचे, धार्मिक विचार, परिवार का प्रकार, विवाह, स्वास्थ्य, बुद्धि, अपराध, आत्महत्या, साहित्य, भोजन, वस्त्र, रीति-रिवाज, सभ्यता एवं

¶ "Births also vary in number according to seasons." Huntington, 'Season of Birth: Its Relation to Human Abilities,' John Wiley & Sons. New York.

* "Without seasons mankind might never have become civilized." E. Huntington, 'Principles of Human Geography,' Revised by Earl B. Shaw, Sixth edition, John Wiley and Sons, New York (1951), p. 69.

† "Man is the child of the earth. They connot be separated." Odum, 'Understanding Society,' p. 87.

§ "Because man lives on the earth he depends on the earth." Jean Brunhes, 'Human Geography,' Abridged ed. MME. M. Jean. Brunhes Delamarre and Pierre Deffontaines. Translated by Ernest F, Row., George G. Harrap and Co. Ltd. London (1952), p 226.

संस्कृति सबको ही भौगोलिक पर्यावरण के द्वारा समझाने की चेष्टा की है। यहां पर रैटजल (Ratzel) के विचारों को अवतरित करना असंगत न होगा। वह लिखता है, "यह अच्छा हो कि हम अपनी बुद्धि और संस्कृति की प्रगति या उन सब की प्रगति जिसे हम सभ्यता की उन्नति कहते हैं की तुलना पक्षी की अनियंत्रित उड़ान की अपेक्षा पौधे के ऊपरी विकास से करें। हम सदैव पृथ्वी से बंधे रहते हैं और टहनी केवल शाखा पर ही उग सकती है। मानव प्रकृति अपना सर आकाश में जितना चाहे उठा सकती है परन्तु उसके पैरों को सदैव पृथ्वी का सहारा लेना पड़ेगा और मिट्टी अवश्य मिट्टी में मिलेगी।"*

भौगोलिक पर्यावरण के सामाजिक जीवन पर प्रभाव का हम अगले अध्याय में विश्लेषण करेंगे। यहाँ पर इतना लिखना पर्याप्त होगा कि भौगोलिकवादियों ने इन सम्बन्धों को बढ़ा चढ़ा कर लिखा है।

भौगोलिक निर्णायकवाद के सिद्धांत की आलोचना
(Criticism of the theory of geographical determinism)

भौगोलिकवादियों ने मनुष्य को कीड़े मकोड़ो एवं पशु-पक्षियों के समान माना है। मनुष्य विवेकयुक्त पशु है इस पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। मनुष्य भौगोलिक पर्यावरण का उतना दास नहीं जितने कि पशु-पक्षी। हेवुड की यह कल्पना, कि मनुष्य निष्क्रिय कारक है, सत्य नहीं है। मिस दस्तूर (Miss Dastur) ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है, "..... मनुष्य निष्क्रिय कारक नहीं है बल्कि इस नाटक में एक सक्रिय कारक है।"† पाणिक्कर (Panikkar) ने भी लिखा है, "मनुष्यों के सम्बन्धों के अतिरिक्त

---

* "Our growth in intelligence and culture, all that we call progress of civilization, may better be compared with the upward shoot of a plant than with the unconfined flight of a bird; we remain ever bound to the earth, and the twig can only grow on the stem. Human nature may raise its head aloft in the pure ether, but its feet must ever rest on the ground and the dust must return to the dust." Friedrich Ratzel—'The History of Mankind,' 3 vols; [Translated by A. J. Butler from second German Edition] (1896 p. 3.)

† "..., and man is not a passive factor but an active agent in the drama." A. J. Dastur, 'Man and his Environment,' The Popular Book Depot, Bombay (1954), p. 5.

भौगोलिक कारकों का स्वयं में कोई मूल्य नहीं है।"§ भौगोलिकवादियों के सिद्धांत का उत्तर देते हुए बेनेट और ट्यूमिन (Bennett and Tumin) ने उचित ही लिखा है, "सम्भवतया यह जोर देना उतना ही तर्क संगत है (जितना कि भौगोलिक निर्णायकवाद का सिद्धांत), यद्यपि अधिक नहीं, कि मनुष्य अपने भौतिक पर्यावरण को परिवर्तित करता है न कि पर्यावरण मनुष्य को।"* मनुष्य ने अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को अपनी बुद्धि द्वारा विकसित किया है। भौगोलिक पर्यावरण का दास होना तो दूर रहा मनुष्य ने अपने विज्ञान के बल पर भौगोलिक पर्यावरण पर शासन करना प्रारम्भ कर दिया है। समुद्र की छाती को चीरते हुए उसके जहाज हजारों मील पार कर जाते हैं, वायुमंडल में प्रवेश कर वायुयान हवा से बातें करता है, पहाड़ों के शरीर का छेदन करते हुए सुरंगों द्वारा मनुष्य अपनी यात्रा पूरी करता है इत्यादि इत्यादि। इस प्रकार मनुष्य ने भौगोलिक पर्यावरण को अपना दास बना लिया है। वार्ड (Ward) ने भी लिखा है कि "पर्यावरण पशु को परिवर्तित करता है जबकि मनुष्य पर्यावरण को परिवर्तित करता है।"† मनुष्य ने हर प्रकार से भौगोलिक पर्यावरण को अपने आधीन कर लिया है।

सामाजिक व्यवहार अत्यन्त जटिल है, उसे केवल भौगोलिक पर्यावरण का परिणाम नहीं माना जा सकता। भौगोलिकवादियों की यह प्रवृत्ति रही है कि वे हर प्रक्रिया को, वह चाहे जितनी भी जटिल क्यों न हो, भौगोलिक पर्यावरण के कारण बता देंगे। यह सामाजिक व्यवहार के विश्लेषण की बड़ी सरल युक्ति है। ग्रीन (Green) ने भौगोलिक वादियों पर यह आरोप

---

§ "Geographical factors themselves have no value except in relation to men." K. M. Panikkar, Geographical Factors in Indian History', Bhartiya Vidya Bhawan, Bombay (1955), p. 22.

* "It is perhaps as reasonable if not more so to insist that man modifies his physical environment rather than that the environment modifies man." Bennet and Tumin, 'Social Llfe'. p. 36.

† "Environment transforms the animal while man transforms the environment." Lester F. Ward. (Quoted by Green 'Sociology', p. 27.)

उचित ही लगाया है कि, 'भौगोलिक निर्णायकवाद सिद्धान्त को मानने वाले अति सरल स्पष्टीकरण करने के दोषी रहे हैं और इनकी व्याख्याओं का सूक्ष्म निरीक्षण अवश्य करना चाहिये।"§ भौगोलिकवादियों के इस दोष को ब्रहन्स (Brunhes) सरीखे भूगोलशास्त्री ने भी स्वीकार किया है। उसके शब्दों को अवतरित करना असंगत न होगा। उसने लिखा है, "ऐसी व्याख्याओं के लिये इतनी अति सुगम खोज करके भयंकर भूल की गई है।"†

भौगोलिक निर्णायकवाद के मानने वालों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत बड़े सुन्दर और तर्कसंगत प्रतीत होते हैं परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इनका आधार वैज्ञानिक नहीं होता। सारोकिन (Sorokin) ने बड़े ही सुन्दर शब्दों में इनके सिद्धांतों के अवैज्ञानिक होने का विवरण दिया है। उन्होंने लिखा है, "इन सिद्धाँतों के अध्ययन के प्रारम्भ में व्यक्ति उनकी मौलिकता और ओज से प्रभावित होता है। अध्ययन को जारी रखते हुए वह उनके विरोध एवं अस्पष्टता के कारण उद्विग्न एवं चकित होता है और अन्त में वह इन सिद्धान्तों के सागर में, यह न जानते हुए कि इनमें क्या सत्य है और क्या दुविधापूर्ण, भटक जाता है।"*

सत्यता का अंश

भौगोलिकवाद के विषय में जो हमने आलोचना की है उसका यह तात्पर्य नहीं है कि इन्होंने जो कुछ भी लिखा है वह असत्य एवं निराधार है। हमने

---

§ "Proponents of geographic determinism have been guilty of over simplification, and their interpretations must be closely scrutinized." Arnold W. Green, 'Sociology,' Mc Graw-Hill Book Co. Inc. (1956), pp. 25-26.

† "Terrible blunders have been caused by such over-simplified searches for explanations as these." J. Brunhes, 'Human Geography,' p. 232.

* "At the beginning of a study of these theories one is impressed by their brilliancy and originality, continuing the study one is perplexed and bewildered by their contradiction and vagueness; and finally he is lost in the sea of these theories not knowing what is them is valid, and what is wrong or doubtful." P. Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories,' p. 101.

एक ही तथ्य पर जोर देने का प्रयत्न किया है—वह है वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने का। भौगोलिक पर्यावरण का सामाजिक जीवन पर प्रभाव पड़ता है और अनेक सामाजिक व्यवहार भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव से प्रभावित होते रहे हैं और होते रहेंगे। एक बात ध्यान में रखना चाहिए कि भौगोलिक पर्यावरण (Geographical Environment) सम्पूर्ण पर्यावरण (Total Environment) का एक अंग है और समस्त सामाजिक जीवन को समझने के लिए न केवल भौगोलिक पर्यावरण को ही अपितु सम्पूर्ण पर्यावरण को समझना पड़ेगा। मैकाइवर और पेज ने उचित लिखा है, "जहां कहीं भी मानव समाज का अस्तित्व है वहाँ पर अनेक पर्यावरण के कारक रचना करते हैं।"*

अगले अध्याय में हम भौगोलिक पर्यावरण का सामाजिक जीवन पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव का विश्लेषण करेंगे। साथ ही साथ भौगोलिक निकर्णायकवाद के सिद्धान्तों का भी उचित प्रसंगों में विवेचन करेंगे।

प्रश्न

१. भौगलिक पर्यावरण का क्या अर्थ होता है ? । (आगरा, १९५६)
(What is Geographical Environment ?)

२. भौतिक सम्प्रदाय की विवेचना उसके वर्तमान विकास को ध्यान में रखते हुए कीजिये। (लखनऊ, १९५२)
(Discuss the Geographical School keeping in view its modern development.)

३. भौगोलिक निर्णायकवादक से आप क्या समझते हैं ?
(What do you understand by Geographical determinism ?)

SELECTED READINGS

1. MacIver and page, 'Society', Chapter V
2. P. Sorokin Contemporary Sociological Theories Chapter III

* "Many environmental factors conspire wherever human societies exist." MacIver and Page, 'Society,' p. 109.

अध्याय १५

भौगोलिक पर्यावरण और समाजिक जीवन

(Geographical Environment and Social Life)

भौगोलिक पर्यावरण मनुष्य के ऊपर अपना प्रभाव डालता है, यह सब स्वीकार करते हैं। हम पहले ही लिख चुके हैं कि भौगोलिकवादियों ने इन प्रभावों को बढ़ा चढ़ा कर लिखा है। अब हम भौगलिक पर्यावरण के वास्तविक प्रभाव, जो कि मनुष्य और उसके सामाजिक जीवन पर पड़ता है, पर प्रकाश डालेंगे। अध्ययन की सरलता के दृष्टिकोण से भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव को हम दो प्रमुख भागों में बाँट देंगे—प्रथम वे अङ्ग जिन पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रत्यक्ष (direct) प्रभाव पड़ता है और द्वितीय वे अङ्ग जिन पर अप्रत्यक्ष Indirect) प्रभाव पड़ता है। इसको हम निम्न चार्ट द्वारा चित्रित कर सकते हैं—

प्रत्यक्ष प्रभाव
(Direct Effect)

- १. जनसंख्या और उसका घनत्व (Population and its density)
- २. भौतिक आवश्यकतायें (Material Needs)
  - (अ) मकान (Houses)
  - (ब) वस्त्र (Clothing)
  - (स) भोजन और पान (Food & Drink)
  - (द) पशुपालन (Breeding of animals)
  - (य) पौधे (Plants)
- ३. मौलिक व्यवसाय (Fundamental Occupations)
- ४. शारीरिक लक्षण (Physical Features)
- ५. सामाजिक व्यवहार (Social Behaviour)

अप्रत्यक्ष प्रभाव
(Indirect Effect)

—शारीरिक लक्षण और प्रकार
(Physical features and type)
- (अ) शारीरिक लक्षण (Physical features)
- (ब) शारीरिक ढांचा (Physical Structure)
- (स) प्रजाति (Race)

—उच्च आवश्यकतायें
(Higher Needs)
- (अ) आर्थिक संगठन (Economic organisation)
- (ब) राजनैतिक संगठन (Political organisation)
- (स) धर्म (Religion)
- (द) कला और साहित्य (Art & Literature.)
- (य) विवाह (Marriage)

—मानव व्यवहार
(Human Behaviour)
- (अ) शारीर सम्बन्धी (Relating to body)
- (ब) सामाजिक (Social)
- (स) प्राणीशास्त्रीय (Biological)

—मानव शक्ति और कुशलता
(Human Energy & Efficiency)
- (अ) स्वास्थ्य (Health)
- (ब) मानसिक कुशलता (Mental Efficiency)
- (स) शारीरिक कुशलता (Physical Efficiency)

—सभ्यता
(Civilization)

—संस्कृति
(Culture)

(१) भौगोलिक पर्यावरण का जन-संख्या पर प्रभाव (Effect of Geographical Environment on Population)

भौगोलिक पर्यावरण का सबसे अधिक प्रभाव मानव जन-संख्या और उसके घनत्व पर पड़ता है। साधारणतया वे भौगोलिक क्षेत्र अत्यधिक घने आबाद होते हैं जो मानव निवास के लिए सुविधाजनक होते हैं और जहां पर मानव की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति सुगमता से हो जाती है। ये कारक ऋतु, जलवायु, मिट्टी, भूमि एवं जल इत्यादि पर आधारित होते हैं। रेगिस्तान एवं अन्य असुविधाजनक स्थानों पर मानव जन-संख्या नहीं पाई जाती। ब्रहन्स ने लिखा है, "साइबेरिया के टंड्रा, सहारा के हमादा या अमेजन के जंगल मनुष्यों से प्रायः शून्य हैं।"† साधारणतया मानव जन संख्या उन मैदानों में अधिक पाई जाती है जहां पर वर्षा अधिक होती है या नदियां उसे सींचती हैं एवं जिसकी भूमि समतल होती है। उदाहरण के लिये भारतवर्ष को ही लीजिये। अधिकांश जन-संख्या दो घाटियों में पाई जाती है—पहला गंगा यमुना का मैदान और दूसरा कावेरी का छोटा मैदान (जन-संख्या के घनत्व

क्रम संख्या	प्रदेश	कुल जन-संख्या	पूर्ण जन-संख्या का प्रतिशत
१.	हिमालय प्रदेश	१,७०,४२,६६७	४·८
२.	उत्तरी मैदान	१३,६४,४७,[illegible]२	३६·१
३.	दक्षिणी पठार और प्रायद्वीप की पहाड़ियां	१०,८५,६८,६४५	३०·४
४.	पश्चिमी घाट और समुद्री किनारा	३,६६,२६,७६३	११·२
५.	पूर्वी घाट व समुद्री किनारा	५,१८,३२,३३६	१४·५
६.	अंडमन और निकोबार द्वीप	३०,६७१	

† "The Siberian tundras, the Saharan hamadas, or the Amazon forest are almost devoid of men." Brunhes. Human Geography,' p. 47.

का मान चित्र देखिये)। महानदी, गोदावरी कृष्णा, नर्बदा और ताप्ती के द्वारा सिञ्चित भाग पहाड़ी होने के कारण अधिक जन-संख्या को जन्म नहीं दे सका। गंगा यमुना के मैदान की आबादी ११ करोड़ से अधिक है। कावेरी की घाटी यद्यपि बहुत छोटी है तथापि उसकी जन-संख्या २॥ करोड़ है। भारतवर्ष को प्रमुख ६ प्राकृतिक क्षेत्रों में बांटा जा सकता है, जैसा कि उपरोक्त तालिका§ में बताया गया है।

भारतवर्ष की ३१ जन-संख्या उत्तरी मैदान में पाई जाती है जब कि उसी के समान फैले हुये हिमालय प्रदेश में केवल ४८ जन-संख्या पाई जाती है। संसार के अन्य भागों में भी जन-संख्या का वितरण इसी प्रकार पाया जाता है।

जन-संख्या का घनत्व भी भौगोलिक पर्यावरण से प्रभावित होता है। भारतवर्ष के मिदनापुर जिले की जन-संख्या का घनत्व १९४७ ई० के पूर्व सबसे अधिक था। आज भी पश्चिमी बंगाल की जन-संख्या का घनत्व ८०८ है, जो कि दिल्ली और ट्रावनकोर कोचीन से कम है। निम्न तालिका† से स्पष्ट है कि उन क्षेत्रों की जन-संख्या का घनत्व कम है जिनमें प्राकृतिक सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं:—

प्रदेश	जन-संख्या (लाखों में)	जन-संख्या का घनत्व प्रति वर्ग मी०
रेगिस्तानी प्रदेश	४६	६१
पश्चिमी हिमालय	९०	६८
उत्तरी पश्चिमी पहाड़ियाँ	१०४	१६३
पूर्वी हिमालय	१२४	११८
उत्तरी मध्य पहाड़ियाँ और पठार	१३८	१६४
उत्तरी पूर्वी पठार	२९०	१९२

§ India 1956, The Publications Division, Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India, New Delhi.

† See INDIA 1956, p. 8.

अभी तक के विवेचन से स्पष्ट है कि भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव मानव जन-संख्या एवं उसके घनत्व पर पड़ता है परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि भौगोलिक निर्णायकवाद के अनुसार मानव जन-संख्या के भौगोलिक पर्यावरण पर ही अधारित है। अन्य कारकों पर भी जन-संख्या एवं जन-संख्या का घनत्व आधारित होता है। उदाहरण के लिये पुरानी दिल्ली की आबादी १९४१ ई० में ५,२१,८४९ थी और १९५१ की गणना के अनुसार ९,१४,७९० थी। इस दस वर्षों में इतना परिवर्तन कैसे हुआ? क्या भौगोलिक पर्यावरण परिवर्तित हो गया? इसका उत्तर भौगोलिक पर्यावरण में निहित न होकर सामाजिक पर्यावरण में निहित है। १९४७ ई० में भारतवर्ष स्वतन्त्र हुआ और राजधानी का महत्व बढ़ गया। लाखों सरकारी कर्मचारी नियुक्त किये। भारतवर्ष के विभाजन के फलस्वरूप भी लाखों शरणार्थी दिल्ली में बस गये। स्वतन्त्रता के उपरान्त व्यवसाय एवं अन्य कार्यों की भी प्रगति हुई। इन सब कारकों के प्रभाव से ही आज दिल्ली की जन-संख्या का घनत्व ३१२ है।

यह भी बताना बड़ा कठिन है कि कौन सा भौगोलिक पर्यावरण मानव जन-संख्या के लिये सुविधाजनक है और कौन सा असुविधाजनक। यूरोप में उन क्षेत्रों का घनत्व सबसे अधिक है जो १०० मीटर से कम ऊंचाई पर आबाद है और १४०० मीटर पर बसे हुये क्षेत्र बिल्कुल ही वीरान हैं परन्तु इसके विपरीत अयन वृत के प्रदेश (Tropical Regions) जैसे अबीसीनिया, अरब, मध्य और दक्षिणी अमेरिका इत्यादि में वे क्षेत्र सबसे अधिक आबाद हैं जो कि १५०० मीटर से ऊपर स्थित हैं। इससे स्पष्ट है कि जन-संख्या के लिये भिन्न भिन्न स्थानों के भिन्न भिन्न भौगोलिक दशाएं सुविधाजनक होती हैं। जो भौगोलिक पर्यावरण एक समाज के लिये सुविधाजनक हो सकता है वही दूसरे प्रकार के समाज के लिये असुविधाजनक हो सकता है इसके अतिरिक्त सामाजिक कारक भी अपना प्रभाव डालते रहते हैं। इसे हम बढ़ते हुए नगरों के उदाहरण से भली प्रकार समझ सकते हैं। आज भारतवर्ष में एक लाख से अधिक आबादी वाले नगर ६९ हैं। इनकी आबादी एक लाख से अधिक होने का कारण सामाजिक पर्यावरण है, न कि भौगोलिक पर्यावरण। कलकत्ता नगर की आबादी ३३,४४,८३९ है।

(२) भौतिक आवश्यकतायें (Material Needs)

भौतिक आवश्यकताओं और भौगोलिक पर्यावरण का भी घनिष्ट सम्बन्ध है। मानव की भौतिक आवश्यकतायें भौगोलिक पर्यावरण के ही द्वारा पूर्ण

होती हैं और भौगोलिक पर्यावरण इनके द्वारा मनुष्य के जीवन पर अपनी गहरी छाप लगाता है । अब हम आवश्यक भौतिक आवश्यकताओं और भौगोलिक पर्यावरण के सम्बन्ध का विश्लेषण करेंगे ।

(अ) मकान (House):—मानव के निवास गृह पर भौगोलिक पर्यावरण का गहरा प्रभाव पड़ता है । मकान का स्वरूप, प्रकार एवं जिस सामग्री से मकान बनता है इत्यादि भौगोलिक पर्यावरण द्वारा प्रभावित होते हैं । जहाँ लकड़ी अधिक होती है वहाँ पर मकान अधिकांश लकड़ी के बनाये जाते हैं । जहां पर पत्थर सरलता से प्राप्त होता है, वहां मकान पत्थर के बनाये जाते हैं । राजस्थान में सुन्दर लाल, सफेद और मटमैले रङ्ग के पत्थरों के भवन चारों ओर दिखाई पड़ते हैं । ब्रहन्स ने लिखा है, 'यदि भूगोल घर की प्रत्येक वस्तु की व्याख्या नहीं कर सकती, पर कम से कम मानव निवास को बिना भूगोल का सहारा लिये पूर्णतया नहीं समझा जा सकता ।"§

इसमें सन्देह नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण मानव निवास की सम्पूर्ण व्यवस्था में सहायता करता है परन्तु यह कहना उचित नहीं है कि अन्य कारकों का कोई प्रभाव नहीं होता । होपी (Hopi) तथा नवाजो (Navajo) बहुत लम्बे समय से उत्तर-पश्चिमी एरीजोना (Arizona) प्रदेश में रह रहे हैं, परन्तु होपी अपने मकान पत्थर के चौकोर बनाते हैं जबकि नवाजो मिट्टी की तिकोनी झोंपड़ियां बनाते हैं । ये दोनों जातियां साथ साथ एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहती हैं ।* किसी भी नगर को लीजिये एक ही पर्यावरण में विभिन्न प्रकार के मकान दृष्टिगोचर होते हैं । झोंपड़ी और महल एक ही भौगोलिक पर्यावरण में सामाजिक पर्यावरण की दुहाई देते रहते हैं । सारोकिन ने उचित लिखा है, "यदि मानव निवास बिना भूगोल का सहारा लिये हुये पूर्णतया नहीं समझा जा सकता तो उसे केवल भूगोल द्वारा समझाने का प्रत्येक प्रयत्न निराशापूर्ण और मिथ्या है ।"†

---

§"If geography is far from explaining everything in the house, at least the human habitation cannot be completely understood without an appeal to geography." Brunhes 'Human Geography', p. 94.

*See R. H. Lowie, 'Culture and Ethnology', pp. 49-65.

†"If the human habitation cannot be understood completely without an appeal to geography, every attempt to account for it by geography alone is hopeless and fallacious." P. Sorokin 'Contemporary Sociological Theories,' P. 111.

(ब) वस्त्र (Clothing):—भौगोलिक पर्यावरण और वस्त्रों का भी गहरा सम्बन्ध है। ठंडे प्रदेशों में या शरद ऋतुओं में गरम एवं मोटे कपड़े पहने जाते हैं और गर्म प्रदेशों एवं गर्म ऋतुओं में हल्के कपड़े पहने जाते हैं। यह भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव के कारण होता है।

वस्त्रों पर भौगोलिक पर्यावरण का यद्यपि प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है तथापि वस्त्र केवल भौगोलिक पर्यावरण पर ही आधारित नहीं है, अन्य पर्यावरण भी अपना प्रभाव डालते हैं। प्रत्येक समुदाय में भिन्न भिन्न समूह के लोग भिन्न भिन्न प्रकार के कपड़े पहिनते हैं, उदाहरण के लिये सिपाहियों की वर्दी, सैनिक की वर्दी, पादरियों के वस्त्र, पंडित जी का पहनावा इत्यादि। स्त्रियों और पुरुषों के वस्त्रों में महान अन्तर होता है यद्यपि वे एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहते हैं। इससे स्पष्ट है कि वस्त्र केवल भौगोलिक पर्यावरण पर ही आधारित नहीं होते।

(स) भोजन और पान (Food and Drink):—भौगोलिक पर्यावरण और खान पान में भी घनिष्ट सम्बन्ध होता है। समुद्र के किनारे रहने वाले लोग उन लोगों से अधिक मछली खाते हैं जो समुद्र से दूर रहते हैं। मद्रासी और बङ्गाली इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। जङ्गलों में रहने वाले मांस का सेवन करते हैं। इसी प्रकार जहां पर फल अधिक उत्पन्न होते हैं वहां के लोग उन लोगों की अपेक्षा, जहां फल नहीं पैदा होते, अधिक फल खाते हैं। वार्ड (Ward) ने भी इसी विचार की पुष्टि इन शब्दों में की है, "जलवायु यद्यपि नियन्त्रणों में से एक है परन्तु बहुत ही महत्वपूर्ण क्योंकि वही प्रमुख रूप से निश्चय करती है कि अन्य कारक—भोजन, प्रथायें, व्यवसाय—किस प्रकार के होंगे।"† अनेक समाज अपने प्रदेश में पैदा होने वाले प्रमुख खाद्यान्न के नाम से पहचाने जाते रहे हैं। भोजन और संस्कृति का भी घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। भोजन मनुष्य और उसके पर्यावरण को जोड़ने वाली शक्तिशाली कड़ी है।

†"Climate is but one of many controls, albeit a most important one, for it largly determines what many of the other factors, diet, customs, occupations, shall be." R. de. C. Ward, 'Climate Considered Especially in its Relation to Man'. John Murray London (1908), p. 223.

ब्लेश (Blache) ने उचित लिखा है, "खाद्यान्न-पूर्ति मनुष्य और उसके पर्यावरण के बीच निकटतम कड़ी है।"*

भौगोलिक पर्यावरण और भोजन में इतना प्रत्यक्ष सम्बन्ध होते हुए भी भौगोलिक निर्णायकवाद का सिद्धान्त ठीक नहीं उतरता। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब कि मनुष्य एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहते हुए भी भिन्न भिन्न प्रकार का भोजन करते हैं। इस सम्बन्ध में आर्मीटेग † (Armitage) का अध्ययन बड़ा प्रकाश डालता है। एक ही क्षेत्र में रहने वाले गरीब एवं अमीर व्यक्तियों का भोजन एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न होता है। भारतवर्ष में विभिन्न सम्प्रदाय एक ही क्षेत्र में रहते हुए भी भिन्न भिन्न भोजन करते हैं। हिन्दुओं की कुछ जातियां मांस खाती हैं और कुछ उसे देखना भी पाप समझती हैं। इस बात को भौगोलिक पर्यावरण नहीं समझ सकता। इसका कारण सामाजिक पर्यावरण (धर्म, रिति-रिवाज) में निहित है। आधुनिक युग में तो भौगोलिक पर्यावरण और भोजन का सम्बन्ध और भी कम होता जा रहा है। आवागमन के साधन बढ़ते जा रहे हैं और संसार के लोगों का भोजन मिश्रित होता जा रहा है।

(द) पशु पालन (Breeding of Animals):—पशु पालना और भौगोलिक पर्यावरण में भी घनिष्ट सम्बन्ध है। पशुओं के लिये एक विशिष्ट प्रकार के भौगोलिक पर्यावरण की आवश्यकता होती है क्योंकि मनुष्य के समान अनुकूलन की शक्ति पशुओं में नहीं होती।

(य) पौधे (Plants):—पौधे पृथ्वी से बंधे हुये हैं और अपना स्थान नहीं छोड़ सकते। इस कारण से उन पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है। पौधे मनुष्य के जीवन को प्रभावित करते हैं।

३. मौलिक व्यवसाय (Fundamental Occupations)

मनुष्य के प्रमुख मौलिक व्यवसाय निम्न हैं:—

(i) शिकार करना (Hunting)

(ii) मछलीमारना (Fishing)

---

*"The food-supply is one of the closest ties between man and his environment." P. Vidal De La Blache, 'Principles of Human Geography' (Eng. Translation), p. 211.

† See F. P. Armitage, 'Diet and Race' pp. 30-32.

(iii) पशु पालन (Herding)
(iv) खेती करना (Farming)
(v) लकड़ी जमा करना (Lumbering)
(vi) खानें खोदना (Mining)
(vii) शिल्प कर्म (Manufacturing)
(viii) वाणिज्य (Commerce)

ये मौलिक व्यवसाय अपने भौगोलिक पर्यावरण पर आधारित होते हैं। मध्य अफ्रिका के पिग्मी (Pygmies) घूमने फिरने वाले शिकारी हैं और इनका मौलिक व्यवसाय शिकार करना है। वहां की जलवायु नम है जिसके कारण बड़े घने जङ्गल होते हैं। इन जङ्गलों के कारण खेती करना असम्भव है। नीग्रो इन्हें नदियों के किनारे नहीं पहुँचने देते इसलिये पिग्मी मछली मारने का काम भी नहीं कर पाते। पशु-पालन के लिये भौगोलिक पर्यावरण प्रतिकूल है। खानें खोदना, शिल्प-कर्म एवं वाणिज्य उनकी शक्ति से परे है।

समुद्र के किनारे रहने वाले मछली मारने का कार्य करते हैं, मैदानों में रहने वाले खेती करते हैं और खानों के पास रहने वाले खान खोदते हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण मौलिक व्यवसाय का निश्चायक होता है, फिर भी अन्य कारक भी व्यवसाय निश्चित करने में अपना प्रभाव डालते हैं। हंटिंगटन ने भी स्वीकार किया है कि, "प्रत्येक कारक के प्रति मानव प्रतिक्रिया उस स्थिति के अनुसार बदलती रहती है जो कि सभ्यता ने प्राप्त की होती है।" * इस विषय पर अधिक विस्तार में हम आगे प्रकाश डालेंगे (भौगोलिक पर्यावरण और आधुनिक सभ्यता)।

४. शारीरिक लक्षण (Physical features)

मनुष्य के शारीरिक लक्षणों पर भी भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है। गर्म स्थानों में रहने वाले मनुष्यों का रंग काला होता है और ठंडे स्थानों में रहने वाले लोगों का रंग अपेक्षाकृत कम काला होता है। शरीर के अन्य लक्षणों पर भी भौगोलिक पर्यावरण की गहरी छाप होती है।

*"Human responce to each factor varies according to the stage reached by civilization." E. Huntington, 'Principles of Human Geography,' Sixth Edition, a revision, by Earl B. Shaw., John Wiley & Sons Inc. New York (1951), p. 15.

५. सामाजिक व्यवहार (Social Behaviour)

भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव सामाजिक व्यवहार पर भी पड़ता है। भौगोलिकवादियों ने अनेक सामाजिक व्यवहारों का भौगोलिक पर्यावरण से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की है। उनका कथन है कि अपराध भौगोलिक पर्यावरण से सम्बन्धित है। गर्मी में प्राणघातक अपराध एवं बलात्कार अधिक होते हैं। जाड़ों में चोरियाँ अधिक होती है। वास्तव में ये सम्बन्ध प्रत्यक्ष नहीं हैं। एक विशिष्ट प्रकार के अपराध गर्मी या सर्दी के कारण उत्पन्न नहीं हो सकते। मैकाइवर और पेज ने इसका उत्तर देते हुये उचित ही लिखा है, "ग्रीष्म ऋतु अपराधों को उसी प्रकार जन्म नहीं देती जिस प्रकार सूर्य बर्फ को पिघलाता है।"*

भौगोलिक पर्यावरण का सामाजिक जीवन पर अप्रत्यक्ष प्रभाव (Indirect effect of Geographical Environment on Social Life)

भौगोलिक पर्यावरण का सामाजिक जीवन पर अप्रत्यक्ष प्रभाव भी पड़ता है। अप्रत्यक्ष से हमारा तात्पर्य यह है कि भौगोलिक पर्यावरण अपना प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से किसी कारक पर डालता है और वह कारक सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालता है इस प्रकार भौगोलिक पर्यावरण का जो प्रभाव सामाजिक जीवन पर पड़ता है उसे हम अप्रत्यक्ष (Indirect) प्रभाव कहते हैं। उदाहरण के लिये भौगोलिक पर्यावरण कारक 'अ' पर प्रभाव डालता है और कारक 'अ' सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालता है। इसमें कारक 'अ' के द्वारा भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव सामाजिक जीवन पर पड़ता है।

भौगोलिक पर्यावरण——'अ'—— सामाजिक जीवन

या

∵ भौगोलिक पर्यावरण = अ और अ = सामाजिक जीवन

∴ भौगोलिक पर्यावरण = सामाजिक जीवन

१. शारीरिक लक्षण और प्रकार (Physical features and type)

भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव मनुष्य के शारीरिक लक्षणों और शारीरिक प्रकारों पर पड़ता है।

---

* "Nor does hot weather breed crimes in the way that sun melts the snow." MacIver and Page, 'Society', p. 108.

(अ) शारीरिक लक्षण (Physical features)

ऊष्ण कटिबंध में मनुष्य की त्वचा का रंग कड़ी धूप के कारण काला पड़ जाता है। जिन स्थानों में चावल अधिक होता हैं वहाँ के व्यक्तियों में केल्सियम (Calcium) की कमी होती है और इसके फलस्वरूप उनकी हड्डियां कमजोर होती है।

(ब) शारीरिक ढांचा (Physical Structure)

भौगोलिक पर्यावरण शारीरिक ढांचे पर अप्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। एस्कीमो की नाक के द्वार कुछ तिरछे तथा सिकुड़े हुये होते हैं जिसके कारण ठंडी वायु एकदम से प्रवेश नहीं कर पाती और नथुनों तक पहुंचते पहुँचते कुछ गरम हो जाती है। अफ्रीका के निवासियों की काली खाल उनके रक्त को सूर्य की अल्ट्रा वाइलेट (Ultra-Violet) किरणों से बचाने में सहायता करती है। इसी प्रकार के भौगोलिक पर्यावरण से अनुकूलन होते रहते हैं और मनुष्य इस प्रकार प्रत्येक भौगोलिक पर्यावरण में रह पाता है। शारीरिक लक्षणों का विभिन्न भौगोलिक पर्यावरणों से अनुकूलन एक साधारण प्रक्रिया नहीं है। चार विभिन्न पद्धतियों के द्वारा भौगोलिक पर्यावरण से शारीरिक लक्षण अनुकूलन करते हैं। वे निम्न है:-

(i) उत्परिवर्तन (Mutation)
(ii) प्रवरण (Selection)
(iii) पृथक्करण (Isolation)
(iv) प्रत्यक्ष परिवर्तन (Direct Modification)

(i) उत्परिवर्तन (Mutation):—जहाँ तक उत्परिवर्तन का प्रश्न है वे भौगोलिक पर्यावरण के कारण उत्पन्न नहीं होते क्योंकि एक स्थान के सब व्यक्तियों में परिवर्तन नहीं होता। उत्परिवर्तन किसी अन्य प्रभाव के कारण होता है।

(ii) प्रवरण (Selection):—प्रवरण की प्रक्रिया भौगोलिक पर्यावरण का फल है। सर्प ठंडी जलवायु में जीवित नहीं रह सकते। प्रवरण शारीरिक ढांचे में परिवर्तन नहीं कर पाता परन्तु एक छलनी (Sieve) के समान कार्य करता है—कुछ प्रकार के परिवर्तन होने देता है और कुछ को असम्भव बना देता है और प्रत्येक स्थान पर यह छलनी भिन्न होती है। नीली आंखें बाल्टिक सागर के जलवायु में फलती फूलती है। भौगोलिक पर्यावरण शारीरिक ढांचे का प्रवरण

अति न्यून मात्रा में कर पाता है। पृथ्वी के प्रत्येक भाग पर, जहाँ पर भिन्न भिन्न भौगोलिक पर्यावरण पाये जाते हैं, मनुष्य रहता है। एक और विचित्र बात यह है कि एक ही भौगोलिक पर्यावरण में भिन्न भिन्न शारीरिक ढांचे के लोग रहते हैं। नीग्रो और श्वेत प्रजाति के व्यक्ति (Albama) में साथ साथ एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहते हैं। छोटे कद के हॉपी इन्डियन (Hopi) लम्बे कद के नवाजो (Navajo) के साथ न्यूमैक्सिको में रहते हैं। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि भौगोलिक पर्यावरण द्वारा मनुष्यों के शारीरिक ढांचों का प्रवरण अति मध्य गति से होता है। उदाहरण मिलना दुर्लभ है।

(iii) पृथक्करण (Isolation):—शारीरिक ढांचे के प्रकार पृथक्करण के कारण भी समान हो जाते हैं क्योंकि लिंग सम्बन्ध सीमित हो जाता है। यह पृथक्करण भौगोलिक पर्यावरण के कारण उत्पन्न होता है। इनके ढांचों के समान होने का कारण भौगोलिक पर्यावरण न होकर एक सीमित समूह में ही लिंग सम्बन्धों का होना (Inbreeding) है।

(iv) प्रत्यक्ष परिवर्तन (Direct Modification):—जिस प्रदेश में मनुष्य रहता है वहीं से वह जीवनोपयोगी सामग्री प्राप्त करता है। भूमि वह रसायन एवं खनिज प्रदान करती है जिन्हें मनुष्य प्रयोग में लाता है। शरीर के विभिन्न अंगों के लिये विभिन्न प्रकार के रसायन एवं खनिज की आवश्यकता होती है जैसे दांतों के लिये फासफोरस, केल्सियम, अल्ट्रा वाइलेट किरणें और एस्कोरबिक एसिड (Ascorbic Acid) की आवश्यकता होती है। इस प्रकार भौगोलिक पर्यावरण शारीरिक ढांचे के विभिन्न अंगों पर प्रभाव डालता है।

भौगोलिक पर्यावरण शारीरिक ढांचे पर अप्रत्यक्ष प्रभाव डालता है परन्तु यह समझना भूल होगी कि शारीरिक ढांचे के समस्त परिवर्तन भौगोलिक पर्यावरण के ही कारण होते हैं। शरीर अधिक अनुकूलन नहीं कर सकता। ऑग्बर्न निमकॉफ ने ठीक ही लिखा है, "प्रायः अत्यधिक भौगोलिक परिवर्तन में शरीर अनुकूलन करने के स्थान पर समाप्त हो जायेगा।"* अतः भौगोलिक पर्यावरण शारीरिक ढांचे पर बहुत कम प्रभाव डालता है।

---

* "...Often the body will succumb rather than adapt under too great geographical change." Ogburn and Nimkff, 'A Handbook of sociology', p. 69.

(स) प्रजाति (Race)

प्रजातियाँ शारीरिक भेदों के आधार पर वर्गीकृत की जाती हैं। भौगोलिकों का कथन है कि शारीरिक भेद विभिन्न भौगोलिक पर्यावरणों का परिणाम है। इस प्रकार प्रजाति के निर्माण कार्य में भौगोलिक पर्यावरण का महत्वपूर्ण भाग है। प्रजातियों के निर्माण के लिये पृथकता की आवश्यकता होती है। ब्लेश ने इसे एक आवश्यक कारक बताया है। उसने लिखा है, "जिसे हम प्रजाति कह कर पुकारते हैं उसके लिये पृथकता एक आवश्यक दशा है।"† भौगोलिकवादियों का मत है कि भौगोलिक पर्यावरण ने यदि प्रजाति के भेद उत्पन्न न भी किये हों तो कम से कम यह तो कहा ही जा सकता है कि भौगोलिक पर्यावरण ने उन शारीरिक भेदों को पृथक्ता द्वारा बनाये रखा।

सेम्पिल§ ने अपनी पुस्तक में मनुष्य के शारीरिक लक्षणों को भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव के फलस्वरूप सिद्ध करने की चेष्टा की है। उसने हमारे कद, खाल के रंग, बालों की बनावट और रंग, नाक की बनावट, सिर की बनावट, वक्षस्थल की चौड़ाई इत्यादि पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव बताया है। पहाड़ी क्षेत्रों में खाद्यान्नों की कमी होती है इसलिये वहाँ के मनुष्य एवं पशु मैदानों के मनुष्य एवं पशुओं की अपेक्षा छोटे आकार के होते हैं। बौने घोड़े आइसलैंड (Ice Land), कॉरसिका (Corsica) और सार्दीनिया (Sardinia) के द्वीपों में पाये जाते हैं क्योंकि वहां पर भोजन पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाता। डेवन पोर्ट के अनुसार न्यूजर्सी (New Jersey) में अरब के घोड़ों की उंचाई बढ़ जाती है। इसी प्रकार के अनेक उदाहरण देते हुये सेम्पिल ने कद को भौगोलिक पर्यावरण का फल बताया है। उसने लिखा है, "कद अंशतः भोजन पर आधारित है और इसलिये भौगोलिक पर्यावरण पर (आधारित है)।"*

---

† "Isolation is the necessary condition of what we call race." Blache, 'Principles of Human Geography', translated by Bingham, Constable Publishers, London (1950), p. 448.

§ See 'Influence of Geographic Environment,' E. C. Semple, Henry Holt & Co. New York (1947), pp. 33—49,

* "Stature is partly a matter of feeding and hence of geographic condition." R. C. Sepmle, ibid, p. 34.

प्रजातिक लक्षणों पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव यदि स्वीकार कर लिया जाय तो एक कठिन समस्या उत्पन्न हो जाती है। प्रजातिक लक्षण वे लक्षण होते है जिन्हें वंशानुसंक्रमण के द्वारा प्राप्त किया जाता है। अतः प्रजातिक लक्षण पैत्रिक होते हैं और यदि वे पैत्रिक होते है तो उन्हें पर्यावरण प्रभावित नहीं कर सकता। इसलिये यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि प्रजातिक लक्षण भौगोलिक पर्यावरण द्वारा निश्चित होते हैं।

(२) उच्च आवश्यकतायें (Higher needs)

मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं पर तो भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता ही है पर उच्च आवश्कतायें भी इस प्रभाव से वंचित नहीं रह पातीं। भौगोलिकवादियों ने तो प्रत्येक वस्तु को भौगोलिक पर्यावरण से सम्बन्धित करने की चेष्टा की है। अब हम कुछ महत्त्वपूर्ण उच्च आवश्यकताओं पर भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का विश्लेषण करेंगे।

(अ) आर्थिक सङ्गठन (Economic Organisation)

आर्थिक जीवन और सङ्गठन पर भौगोलिक पर्यावरण का अत्यधिक प्रभाव होता है। मनुष्य के मौलिक व्यवसायों और भौगोलिक पर्यावरण के सम्बन्ध का विश्लेषण हम कर चुके हैं। रॉस ने जोर देते हुये लिखा है, "संक्षेप में (हम कह सकते हैं) प्रकृति समाज के सामान्य आर्थिक लक्षणों को निश्चित करती है।"†

(i) सम्पत्ति और भौगोलिक पर्यावरण (Wealth and Geographical Environment):—भौगोलिकवादियों का मत है कि भौगोलिक पर्यावरण द्वारा ही यह निश्चित होता है कि किसी समाज के पास कितनी सम्पत्ति होगी। सामाजिक जीवन की प्रारम्भिक अवस्थाओं में यह कथन और भी अधिक सत्य था। बकल* (Buckle) ने इस सिद्धान्त पर बड़ा जोर दिया है।

बकल का यह सिद्धान्त कुछ अंशों में सत्य है, परन्तु पूर्णतया नहीं। वन्य जातियों के लिये भी यह सिद्धान्त पूरी तरह लागू नहीं होता। सम्पति की

---

† "In a word, Nature determines the general economic features of society." E. A. Ross, 'Principles of Sociology,' p. 81

* See H. T. Buckle, 'Introducition to the History of Civilization of England', new & revised edition by J. M. Robertson, pp. 24-28, and Chapter II.

प्रकृति गतिशील है और वह समाज की संस्कृति के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। निस्संदेह ही भौगोलिक पर्यावरण अनेक वस्तुयें प्रस्तुत करता है जिन्हें मानव समाज सम्पति के रूप में मूल्यवान स्थान प्रदान करता है परन्तु कोई वस्तु आर्थिक दृष्टि से मूल्यवान मानी जायेगी या नहीं, यह समाज की प्रकृति पर निर्भर करता है। एक युग में हीरे जवाहिरात का बड़ा मूल्य समझा जाता था आज साधारण व्यक्ति के लिये उसका कोई मूल्य नहीं है। उन्हें परखने के लिये जौहरी की आवश्यकता होती है। जौहरी के गुण उत्पन्न करना भौगोलिक पर्यावरण का कार्य नहीं, सामाजिक पर्यावरण का कार्य है। आधुनिक युग में तेल, कोयला, लोहा इत्यादि का बड़ा मूल्य है क्योंकि लोग इन वस्तुओं का प्रयोग करना जानते हैं। इससे स्पष्ट है कि भौगोलिक पर्यावरण स्वयं मूल्यवान नहीं है बल्कि उसका मूल्यवान होना वहाँ के निवासियों के सामाजिक मूल्यों (Social Values) पर आधारित है। भारतवर्ष भौगोलिक पर्यावरण की दृष्टि से बड़ा मूल्यवान देश है। प्राचीन काल में यह बड़ा समृद्धिशाली था, परन्तु आज उसी भौगोलिक पर्यावरण के होते हुये भी दरिद्रता का केन्द्र बना हुआ है। स्वतन्त्रता के उपरान्त हम फिर समृद्धि की ओर बढ़ रहे हैं। हॉपी और नवाजो इंडियन्स एक ही पर्यावरण में रहते हैं परन्तु एक धनी है और दूसरा दरिद्र।* इतना होते हुए भी यह सत्य है कि भौगोलिक पर्यावरण एक समाज की आर्थिक सम्पत्ति पर बड़ा गहरा प्रभाव डालता है।

(ii) उद्योग-धन्धे और भौगोलिक पर्यावरण (Industries and Geographical Environment)—एक समाज के उद्योग-धंधों और भौगोलिक पर्यावरण में घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। हमारे उद्योग-धंधे उसी प्रकार के होंगे जिस प्रकार की वस्तुयें वहाँ का भौगोलिक पर्यावरण प्रदान करेगा। अर्थशास्त्र के उद्योगों के स्थानीयकरण के सिद्धान्त (Theory of the Localisation of Industries) से हम सब ही परिचित होंगे। जहाँ पर जिस प्रकार का कच्चा माल मिलेगा उसी प्रकार के उद्योग धंधे वहाँ पर स्थापित हो जायेंगे। उत्तर-प्रदेश के उत्तरी-पूर्वी जिलों में गन्ना अधिक उत्पन्न होता है अतः वहाँ शक्कर बनाने के अनेक कारखाने स्थापित हो गये हैं। जमशेदपुर में टाटा का लोहे का कारखाना स्थापित है क्योंकि वहाँ पर लोहा

---

* See R. H. Lowie, 'Culture and Ethnology', p. 48.

सरलता से प्राप्त होता है। अहमदाबाद और बम्बई का क्षेत्र कपास के लिये अनुकूल है अतः वहाँ पर अनेक सूती मिल दिन रात धुआँ उड़ाया करते हैं। मैसूर में प्रसिद्ध चन्दन का तेल व साबुन बनाने का कारखाना सरकार द्वारा खोल दिया गया है क्योंकि वहाँ पर चन्दन के घने वन पाये जाते हैं। ब्यावर ऊन की सबसे बड़ी मंडी है क्योंकि इसके आस पास का क्षेत्र भेड़ें पालने के लिये अति उपयुक्त है। इससे स्पष्ट है कि भौगोलिक पर्यावरण और उद्योगों के प्रकार एवं स्वरूपों में घनिष्ट सम्बन्ध है।

हमें यह नहीं समझ लेना चाहिये कि उद्योग-धंधे केवल भौगोलिक पर्यावरण पर ही आधारित हैं और मनुष्य के सामाजिक पर्यावरण का उसमें कोई भी हाथ नहीं है। डेमोलिन्स (Demolins) का यह कथन उचित नहीं है कि एक प्रदेश के निवासियों के मौलिक आर्थिक व्यवसाय या उद्योग-धन्धों के स्वरूप की घोषणा केवल भौगोलिक पर्यावरण के ज्ञान से की जा सकती है। यह घोषणा करने के लिए उनके सामाजिक पर्यावरण (सभ्यता तथा संस्कृति) का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। स्विट्जरलैंड और तिब्बत के लोग एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहते हैं परन्तु उनके व्यवसाय एवं उद्योग-धंधे एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत हैं। बुशमेन (Bushman) और हर्रेरो (Herrero) एक ही प्रकार के रेगिस्तान में रहते हैं परन्तु बुशमेन का मौलिक व्यवसाय शिकार करना है और हर्रेरो का पशु-पालन। १४६२ के पहले संयुक्त-राज्य अमेरिका में वे उद्योग-धंधे नहीं पाये जाते थे जो आज पाये जाते हैं। रूस में १६१८ के पूर्व उद्योग-धन्धों का नामो निशान न था। तो क्या अब इन देशों का भौगोलिक पर्यावरण परिवर्तित हो गया?

वास्तविकता यह है कि भौगोलिक पर्यावरण खाद्य पदार्थ, खनिज पदार्थ एवं अन्य वस्तुयें प्रदान करता है पर वह उनका उपयोग नहीं सिखाता। इन पदार्थों को प्रयोग में लाने की क्रिया सामाजिक पर्यावरण सिखाता है और उसके द्वारा ही यह निश्चित होता है कि कौन सी वस्तु प्रयोग में लायी जायेगी और कौन सी नहीं। मैकाइवर और पेज ने इसे स्पष्ट रूप से लिखा है, "वास्तव में जिसे हम प्राकृतिक द्रव्य साधन का नाम देते हैं वह केवल एक प्रकार की मिट्टी या खनिज पदार्थ या नदी नहीं है वह सभ्यता के विकास का परिणाम है—कि वह (प्राकृतिक द्रव्य साधन) वर्तमान समाज

द्वारा किस प्रकार परिभाषित एवं प्रयोग किया जाता है।"* सभ्यता प्राकृतिक द्रव्य साधनों का मूल्य बढ़ा देती है। हमारी सभ्यता ने कोयले का प्रयोग जान लिया तो कोयले की खानों के पास बड़े बड़े कारखाने खुल गये। जब तक मनुष्य ने सोने के मूल्य को नहीं जाना था उस समय तक कोई भी अफ्रीका के जंगलों में सोने की खोज में नहीं घूमा करता था। अतः यह किसी समाज की सभ्यता एवं संस्कृति पर निर्भर होता हैं कि वहां किस प्रकार के उद्योग-धंधे पाये जायेंगे।

(ब) राजनैतिक संगठन (Political Organisation)

भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव राजनैतिक संगठन के विकास, उत्पत्ति एवं स्थिरता पर पड़ता है। मैदानों में जहां पर बड़ी बड़ी नदियां बहती हैं और भूमि उपजाऊ होती है, वहाँ पर राजनैतिक संगठन सरलता से उत्पन्न होता है। गङ्गा–यमुना के मैदान, नील, दजला-फरात (Euphrates), और यलो नदी के मैदानों में सर्वप्रथम शासन स्थापित हुये। यहाँ पर इन नदियों की बाढ़ रोकने के लिये एवं नहरें निकालने के लिए राज्य स्थापित करने की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त लोगों का पेशा खेती करना होता है अतः इन्हें बाहरी आक्रमणों से रक्षा की भी आवश्यकता होती है। इसके विपरीत पहाड़ी प्रदेशों में लोग छोटे छोटे समूहों में बंट जाते हैं और प्राकृतिक रुकावटें इन्हें मिलने नहीं देती जिसके कारण यहाँ पर स्थायी राज्य का निर्माण होना कठिन होता है। अफगानिस्तान, अल्बेनिया, मैकेडेनिया, काकेशस, कोरसिका और स्काटलैंड के प्रदेश इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। स्विट्जरलैंड ही एक ऐसा अपवाद है जहाँ पर प्रजातंत्र स्थापित है यद्यपि वह एक पहाड़ी देश है।

भौगोलिकवादियों ने भौगोलिक पर्यावरण और राज्य के प्रकारों में भी संबंध स्थापित करने का प्रयत्न किया है। उनके अनुसार ऐसे स्थानों में प्रजातंत्रवाद शीघ्र उत्पन्न होता है जहाँ पर व्यापार अधिक होता है। व्यापार में उतार चढ़ाव आते रहते हैं और एक ही व्यक्ति कभी राजा और कभी रंक बनता रहता

---

* "In fact, what we name a 'natural resource' is not simply a type of soil or mineral or river; it is the result of the civilizational development—of how the earth fact is defined, and utilized by the extant society." MacIver and Page, 'Society,' p. 107.

है, इसलिये समता की भावना उत्पन्न हो जाती है। जहाँ पर अधिकांश रूप से खेती की जाती है वहाँ पर वर्ग की भावना सरलता से पनपती है क्योंकि भूमि के स्वामी और खेती करने वाले किसान विभिन्न वर्ग के होते हैं। ऐसे स्थानों पर कुलीनतंत्र (Aristoracy) शासन स्थापित हो जाता है। इसी प्रकार से अन्य भौगोलिकवादियों ने अन्य शासन के प्रकारों पर भी भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव सिद्ध करने का प्रयत्न किया है।

युद्ध एवं अन्तर्राष्ट्रीय कलह को भी भौगोलिकवादियों ने भौगोलिक पर्यावरण से संबंधित करने की चेष्टा की है। हंटिंगटन ने लिखा है, "खनिज पदार्थों का भौगोलिक वितरण अन्तर्राष्ट्रीय कलह तथा युद्धों के प्रमुख कारणों में से एक है।"†

भौगोलिक पर्यावरण और राजनैतिक संगठन में कभी घनिष्ट संबंध रहा हो उसके विषय में विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता, परन्तु आधुनिक युग में ऐसा कोई संबंध सत्य प्रतीत नहीं होता। रूस में अनेक शताब्दियाँ राजतंत्र (Monarchy) द्वारा शासित होती रहीं परन्तु १९१७ में साम्यवाद (Communism) की स्थापना वहाँ की जनता ने की। इस परिवर्तन को भौगोलिकवादी भौगोलिक पर्यावरण के परिवर्तन से समझाने की चेष्टा करेंगे परन्तु यह प्रयास कैसे सफल हो सकता है जब कि हम सब यह जानते हैं कि भौगोलिक पर्यावरण एक दिन में परिवर्तित नहीं हुआ करता। भारतवर्ष का भौगोलिक पर्यावरण इन १५ वर्षों में परिवर्तित नहीं हुआ है परन्तु यहाँ पर २६ जनवरी १९५० को पूर्ण सत्ताधारी जनतांत्रिक प्रजातंत्र (Sovereign Democratic Republic) की स्थापना हुई। समस्त भारत में विभिन्न भौगोलिक पर्यावरणों के होते हुये भी हर प्रदेश में जनतांत्रिक शासन है। इसलिये भौगोलिकवादियों के इस कथन में अधिक सत्यता दिखाई नहीं पड़ती।

(स) धर्म (Religion)

भौगोलिक पर्यावरण और धर्म में गहरा संबंध है। प्राकृतिक दृश्य ही धर्म के अंग बन जाते हैं। नील नदी मिश्र के लोगों के लिये जीवन एवं मृत्यु

† "The geographical distribution of minerals is one of the greatest causes of international troubles and wars." Huntington, 'Principles of Human Geography', (1951) p. 366.

दोनों को ही प्रदान करती है, जब बाढ़ आती है तो मृत्यु का दृश्य छा जाता है अन्यथा वर्ष भर जीवन संचार करती रहती है। इसी के फलस्वरूप वहाँ के धर्म में नील नदी का एक विशेष स्थान है। इसी प्रकार भारतवर्ष में गङ्गा, यमुना इत्यादि नदियों की पूजा होती है। भारतवर्ष में वृत्र (Vritra), जो वर्षा को रोक देता है, शैतान समझा जाता है और मिश्र में तूफान का देवता (Typhon), जो जलते हुये तूफान भेजता है, शैतान समझा जाता है।

स्वर्ग और नरक की कल्पना भी लोगों के भौगोलिक पर्यावरण पर आधारित प्रतीत होती है। नार्वे के लोग स्वर्ग को एक गर्म स्थान और नरक को ऐसा स्थान मानते हैं जहाँ पर कड़ी सर्दी और कोहरा पड़ता हो। इसके विपरीत अरब, फिलीस्तीन के लोगों के अनुसार नरक एक ऐसा स्थान है जहाँ पर अत्यधिक गर्मी पड़ती है और सदैव आग जलती रहती है। उनका स्वर्ग वह स्थान है, जहाँ पर उद्यान होता है, पेड़ों की छाया होती है, सरिता बहती रहती है और फल फूल की अधिकता होती है। प्राचीन यहूदियों ने एक न्यूजेरुसलम (New Jerusalem) नगर की कल्पना की है जो चारों ओर से दीवालों से घिरा हुआ है और जिसकी सड़कें सोने की हैं और द्वार हीरे जवाहिरात के हैं। यही उनका स्वर्ग है। हमें ज्ञात होना चाहिये कि यहूदी चारों ओर से खूंख्वार रेगिस्तान वन्य जातियों से घिरे हुए हैं। वास्तविकता यह है कि जो पर्यावरण किसी प्रदेश के निवासियों को कष्ट देता है उसे वे नरक की भूमिका का आधार बनाते हैं और जिस प्रकार के पर्यावरण से वे सुख की कल्पना करते हैं उसे वे स्वर्ग से संबोधित करते हैं। रॉस ने ठीक ही लिखा है, "जलवायु और दृश्य धर्म की मध्य अवस्थाओं पर अपनी स्पष्ट छाप डालते हैं।"* केरी ने भी इसी विचार का समर्थन करते हुये लिखा है, "एक समाज के लोगों का धर्म सदैव अधिकांश रूप से उनकी पृथ्वी पर स्थिति, उन दृश्यों, जिनके बीच उनका जीवन बीतता है और उन प्राकृतिक घटनाओं, जिनके कि वे आदी हो जाते हैं, पर आधारित होता है।"†

---

* "Climate and scene write themselves clearly into middle stages of religion." E. A. Ross, 'Principles of Sociology,' p. 83.

† "The creed of a people is always greatly dependent upon their position on this earth, upon the scenery amid which their life is passed and the natural phenomena to which they become habituated;....." C. F. Keary, 'Outlines of Primitive Belief,' (1882), p. 325.

(द) कला और साहित्य (Art and Literature)

कला और साहित्य पर भी भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है। साहित्य की प्रत्येक रचना पर भौगोलिक पर्यावरण की छाप लगी रहती है। महाभारत, रामायण, जयशंकर प्रसाद की रचनायें इत्यादि सब पर ही पर्यावरण का प्रभाव पड़ा है। कला तो भौगोलिक पर्यावरण से ही प्रेरणा प्राप्त करती है।

(य) विवाह (Marriage)

लिंग सम्बन्धों पर भी पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है। ऐसे पहाड़ी एवं पठारी प्रदेशों में जहां पर भोजन की व्यवस्था पर्याप्त मात्रा में नहीं होती वहाँ पर जन संख्या की वृद्धि अभिशाप मानी जाती है। इसके फलस्वरूप ऐसे उपाय अपनाये जाते हैं जिससे जन-संख्या की वृद्धि न हो। बड़ी आयु में विवाह करना या अविवाहिता रहना साधारण रीति-रिवाज बन जाते हैं। बहुपति विवाह (Polyandry) प्रचलित हो जाता है। तिब्बत में इसी कारण से बहुपति विवाह पाया जाता है। पोलीनेसिया (Polynesia) के द्वीपों में भी बहुपति विवाह प्रचलित है। ऐसे स्थानों पर लिंग सम्बन्धी आचार ढीले पड़ जाते हैं और परिवार के प्रति पवित्र भावना नष्ट हो जाती है। वैश्यावृत्ति को बुरा नहीं माना जाता। इसके विपरीत जहां पर भौगोलिक पर्यावरण सहायक होता है वहां पर बहु-पत्नी विवाह (Polygyny) पाया जाता है।

इसमें सन्देह नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण लिंग सम्बन्धों पर प्रभाव डालता है परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि अन्य पर्यावरण प्रभाव नहीं डालते। भारतवर्ष ने अन्य पश्चिमी देशों की भांति एक-विवाह (Monogamy) की विधि पारित की है। यह उसका सांस्कृतिक प्रयास है जिसका भौगोलिक पर्यावरण से कोई सम्बन्ध नहीं है।

३. मानव व्यवहार (Human Behaviour)

भौगोलिक पर्यावरण अपना प्रभाव मानव व्यवहार पर भी डालता है। भौगोलिकवादियों ने अनेक इस प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की है। कुछ प्रमुख भौगोलिकवादियों का तो यहां तक कहना है कि ऐसा कोई भी मानव व्यवहार नहीं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भौगोलिक पर्यावरण से प्रभावित न होता हो। हंटिंगटन ने लिखा है, "जहां की मानवीय दशायें कुछ प्रकार की मानवी क्रियाओं के वितरण के लिये प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेवार हैं, सूक्ष्म अध्ययन

यह बताता है कि, वहां भी अप्रत्यक्ष रूप से भौगोलिक पर्यावरण उस विषय से घनिष्ट सम्बन्ध रखता है।"* अब हम कुछ मानव व्यवहारों पर होने वाले भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का विश्लेषण करेंगे।

(अ) शरीर-सम्बन्धी व्यवहार (Physical Behaviour)

शरीर सम्बन्धी व्यवहार का उदाहरण आत्म-हत्या (Suicide) से अच्छा कोई दूसरा न होगा। भौगोलिकवादियों का कहना है कि जलवायु और आत्महत्या में गहरा सम्बन्ध है। दुर्खिम ने अपनी पुस्तक 'Le-Suicide' में यद्यपि आत्महत्या के अनेक कारकों का विवरण दिया है फिर भी भौगोलिकवादियों के कथन का समर्थन किया है। भौगोलिकवादियों का कथन है कि यूरोपीय देशों में वर्ष के उन महिनों में (मार्च से अगस्त) जिनमें गर्मी अधिक पड़ती है, उन महीनों की अपेक्षा अधिक आत्महत्यायें होती हैं जिनमें जाड़ा पड़ता है।

दुर्खिम ने आत्महत्याओं के अन्य महत्वपूर्ण कारण बताये हैं जिनका भौगोलिक पर्यावरण से कोई भी सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता। उसने यह अवश्य लिखा है कि गर्मियों में दिन बड़े होते हैं और अधिक सम्बन्ध स्थापित किये जा सकते हैं। इन सम्बन्धों के अभाव में मनुष्य को पृथक्करण के कारण एकाकीपन का अनुभव होता है और वह आत्महत्या की ओर प्रवृत होता है। यह स्पष्ट है कि ऋतुयें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आत्महत्याओं के लिये प्रेरित नहीं करती। ग्रीन ने इसी विचारधारा की पुष्टि करते हुए लिखा है, "स्पष्ट है कि ऋतुओं में परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से आत्महत्या करने के लिये प्रवृत नहीं कर सकते।"†

(ब) सामाजिक (Social)

भौगोलिकवादियों ने अपराध पर भी भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव को सिद्ध किया है। उसका कथन है कि चोरियाँ और डकैतियाँ सर्दी की ऋतु में अधिक होती हैं और हत्यायें इत्यादि गरमी के दिनों में।

---

* "Even where human conditions are directly responsible for the distribution of certain typs of human activity, furthur study shows that indirectly the geographical environment has a great deal to do with the matter." Huntiongton, 'Principles of Human Geography', pp. 3-4.

† "Clearly changes in the seasons cannot directly cause suicide." Green, 'Sociology', p. 25.

वास्तव में इस प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करना भौगोलिकवादियों की भयंकर भूल है। अपराध करने के लिये अनेक परिस्थितियां होती हैं जिनमें मनुष्य फँस जाता है। भौगोलिक पर्यावरण और अपराध का कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

(म) प्राणीशास्त्रीय (Biological)

कुछ भौगोलिकवादियों ने जन्म-दर एवं मृत्यु-दर को भी भौगोलिक पर्यावरण से सम्बन्धित करने का प्रयत्न किया है। इनमें जैनकिन का सिद्धान्त बड़ा ही रुचिकर एवं आश्चर्यजनक है। इन्होंने मृत्यु-दर और बृहस्पति ग्रह (jupiter) में सम्बन्ध स्थापित किया है। इनके अनुसार जन्म-दर फरवरी, मार्च, सितम्बर और अक्टूबर में अन्य महिनों से अधिक रहती है। गर्भ की दर दिसम्बर, जनवरी, मई और जुलाई के महिनों में अधिक रहती है।

यह कथन वैज्ञानिक आधार पर आधारित नहीं है, इसलिये इन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता।

अगले अध्याय में हम भौगोलिक पर्यावरण और सभ्यता एवं संस्कृति, जो कि मानवशक्ति और कुशलता पर आधारित है, के सम्बन्धों का विश्लेषण करेंगे।

प्रश्न

१. भोजन सम्बन्धी आदतों, वस्त्रों, धार्मिक क्रियाओं और सरकार के स्वरूपों पर भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव की पूर्ण व्यख्या कीजिये। (आगरा १९५४)
(Discuss fully influence of geographical environment on food habits, dress patterns, religious practices and forms of Government.)

२. सामाजिक जीवन तथा संस्थाओं पर भौगोलिक दशाओं के प्रभाव को बताइये। भारतवर्ष से उदाहरण दीजिये।(आगरा १९५० राजस्थान १९५८)
(Indicate the influence of geographical features on social life and institutions. Give illustrations from India.)

SELECTED READINGS

1. Brunhes, 'Human Geography' Chapters II to VII
2. Blache, 'Principles of Human Geography' Chapters III to IX.
3. Semple. 'Influences of Geographic Environment' Chapters I to VI.

अध्याय १६

भौगोलिक पर्यावरण और सभ्यता एवं संस्कृति

(Geographical Environment and civilization and Culture)

सभ्यता और संस्कृति पर भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव सिद्ध करने वालों में हंटिंगटन का नाम सबसे पहले लिया जाता है। वैसे तो सैकड़ों भौगोलिकवादियों ने इस सम्बन्ध को स्थापित करने का प्रयत्न किया है परन्तु हंटिंगटन ने इसे वैज्ञानिक आधार देकर अधिक शक्तिशाली बनाने की चेष्टा की है। पहले हम मानव-शक्ति और कुशलता पर भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव का विवरण देंगे। इस विवरण से हमें सभ्यता और संस्कृति पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन में बड़ी सहायता मिलेगी।

मानव-शक्ति और कुशलता (Human Energy and Efficiency)

जलवायु भौगोलिक पर्यावरण का एक मुख्य कारक है। जलवायु इतना महत्व पूर्ण कारक है कि भौगोलिक पर्यावरण और जलवायु को पर्यायवाची कहा जा सकता है। अब हम जलवायु के प्रभाव का, जो मानव-शक्ति और कुशलता पर पड़ता है, वर्णन करेंगे।

(अ) जलवायु और स्वास्थ्य (Climate and Health)

स्वास्थ्य पर जलवायु का बड़ा प्रभाव पड़ता है। इस तथ्य को प्राचीन काल से स्वीकार किया जाता रहा है। साधारणतया हम अपने दैनिक जीवन में सुनते रहते हैं कि अमुक व्यक्ति का स्वास्थ्य खराब हो गया है और डाक्टर ने उसे जलवायु परिवर्तन की राय दी है। इस कथन से सिद्ध होता है कि स्वास्थ्य और जलवायु में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है इस सम्बन्ध का कोई भी विरोध नहीं कर सकता।

हंटिंगटन ने लिखा है कि जलवायु की तीन दशायें मानव स्वास्थ्य और कुशलता पर विशेष प्रभाव डालती हैं। १. तापमान (Temperature), २. आर्द्रता (Humidity), ३. अस्थिरता (Variability)। तापमान

स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है। अधिक सर्दी और अधिक गर्मी दोनों ही स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती हैं। समशीतोष्ण कटिबंध (Temperate Zones) स्वास्थ्य के लिये अत्यधिक लाभप्रद होता है। आर्द्रता (Humidity) भी स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है। हंटिंगटन ने लिखा है, "स्वास्थ्य और शक्ति को नियंत्रित करने में वायु में नमी की मात्रा महत्वपूर्ण कारकों में से एक है।"* अधिक तापमान के साथ यदि अधिक आर्द्रता (Humidity) भी हुई तो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती है। पसीना बहने लगता है। जापान में गर्मियों में वायु इतनी अधिक नम होती है कि प्रत्येक व्यक्ति मुर्झाने लगता है और आलस्य छा जाता है। जब वायु में बिल्कुल नमी नहीं होती तो वह भी गर्म स्थानों में स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती है। इलाहाबाद में इसी कारण से गर्मी के महिनों में अत्यधिक लोग मरते हैं और यहां की मृत्यु-दर संसार के अन्य भागों से अधिक होती है। जलवायु का स्थिर रहना भी स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। उसमें साधारण परिवर्तन और हल्की आंधियाँ स्वास्थ्य के लिये लाभदायक होती हैं। हंटिगटन ने इन्हीं तत्वों पर आधारित मानव स्वास्थ्य के लिये अनुकूलतम जलवायु (Opitimum Climate) निश्चित की है।

अनुकूलतम जलवायु (Optimum Climate)

मानव स्वास्थ्य एवं कुशलता के लिये अनुकूलतम जलवायु का विवरण हंटिंगटन ने निम्न शब्दों में दिया है:—

१. औसत तापमान सबसे अधिक सर्दी पड़ने वाले महिने में ४०° से कुछ नीचे और सबसे अधिक गर्मी पड़ने वाले महिने में ७०° होना चाहिये। इसका तात्पर्य यह है कि जाड़ों में ४०° से नीचे तापमान नहीं रहना चाहिये और गर्मियों में ७०° से अधिक नहीं होना चाहिये। ४०° से ७०° के बीच का तापमान अनुकूलतम है।

२. समुद्र या झीलों की ओर से आने वाले तूफान अपने साथ नमी लाते हैं और ग्रीष्म ऋतु में कम नमी लाते हैं। हर ऋतु में वर्षा भी प्रदान करते हैं।

---

* "The amount of moisture in the air is one of the important factors in regulating health and energy." Huntington, 'Principles of Human Geography,' p. 405.

यही कारण है कि समुद्र के किनारे के प्रदेश स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं। हवा में मध्यम नमी होनी चाहिये।

३. तापमान में हल्का परिवर्तन होता रहना चाहिये।

उसके अनुसार आदर्श जलवायु (Ideal Climate) वह है जिसका औसत तापमान ६४° फ० आर्द्रता ८०° के समीप हो और जो संक्षेप रूप से अस्थिर रहती हो।

हंटिंगटन तथा अन्य भौगोलिकवादियों के इस सिद्धान्त की तीव्र आलोचना की गई है; आलोचकों में सारोकिन (Sorokin) और जिमरमेन (Zimmerman) प्रमुख हैं। इस सिद्धान्त में अनेक दोष हैं और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उन्हें सिद्ध नहीं किया जा सका है, परन्तु इतना निश्चित है और सब ही स्वीकार करते हैं कि जलवायु स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालती है। प्रत्यक्ष प्रभाव तो पड़ता ही है पर अप्रत्यक्ष प्रभाव और भी अधिक पड़ता है। स्वास्थ्य के लिये भोजन एवं अन्य वस्तुओं की आवश्यकता होती है, जिन्हें जलवायु प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है।

(ब) शारीरिक कुशलता (Physical Efficiency)

जलवायु शारीरिक कुशलता को भी प्रभावित करती है। शारीरिक कुशलता के लिए आदर्श बाह्य तापमान ६४° फ० (करीब ७०° फ० दोपहर में और ५५° फ० रात्रि को) होना चाहिए। आर्द्रता न कम होनी चाहिये न अधिक। ८० प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता (Relative Humidity) अति सुन्दर अवस्था है। जलवायु में साधारण परिवर्तन शारीरिक कुशलता को बढ़ाते हैं।

स्टेचर (Stecher) ने हंटिंगटन की आलोचना की है। उसने अपने परीक्षणों के आधार पर लिखा है, "इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिलता कि औसत कार्यशक्ति शुष्कता के द्वारा बुरी तरह प्रभावित होती है।"§ अन्य लेखकों ने भी इस सिद्धान्त की आलोचना की है। कुछ भी हो इतना निश्चित है कि जलवायु का प्रभाव शारीरिक कुशलता पर अवश्य पड़ता है। हमारा दैनिक अनुभव हमें इस तथ्य को मानने के लिये विवश कर देता है।

---

§ "We find no evidence that average performance (·····) are adversely affected by dryness." Stecher, 'The Effects of Humidity on Nervousness and General Efficiency,' The Science Press, N. Y. (1916), p. 43.

(स) मानसिक कुशलता (Mental Efficiency)

जलवायु का प्रभाव मानसिक कुशलता पर भी पड़ता है। हंटिंगटन के अनुसार मानसिक कुशलता के लिए बाह्य तापमान करीब ३९° फ० होना चाहिये। हंटिंगटन ने लिखा है, "जब तापमान अधिक मात्रा में गिर जाता है तो मानसिक कार्य में शारीरिक कार्य से अधिक रुकावट पड़ती प्रतीत होती है और (मानसिक कुशलता) उतनी ही गिर जाती है जब कि (तापमान में) कोई परिवर्तन नहीं होता।' † अन्य भूगोलशास्त्रियों ने भी इस सिद्धान्त को सिद्ध करने का प्रयत्न किया है।

जलवायु और मानव-शक्ति (Climate and Human Energy)

हमने स्वास्थ्य, शारीरिक एवं मानसिक कुशलता इत्यादि पर जलवायु का प्रभाव बताने का प्रयत्न किया। ये ही मानव-शक्ति के प्रमुख अङ्ग हैं। गर्म एवं आर्द्रतापूर्ण कटिबन्धों में मानव-शक्ति कम हो जाती है और मनुष्य शीघ्र थक जाता है। इन कटिबन्धों में भूमि का उर्वरापन गरम वर्षा के कारण नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रों में मलेरिया, पीला बुखार, निद्रा की बीमारी (Sleeping Sickness) इत्यादि बीमारियों का प्रकोप बना रहता है। इसके विपरीत ध्रुवी क्षेत्रों (Polar Regions) में अत्यधिक सरदी के कारण कोई कार्य नहीं हो पाता। शीतोष्ण कटिबन्ध, (Temperate Zones) ऐसे भाग हैं जहां पर कार्य अधिक हो सकता है। रॉस ने उचित ही लिखा है, "इसलिए यह मध्यस्थ जलवायु में होता है कि ऐसे लक्षण पनपते हैं जैसे शक्ति, आकांक्षा, आत्मविश्वास, परिश्रम और मितव्ययता।"*

इसमें सन्देह नहीं कि जलवायु मानव शक्ति, कुशलता एवं कार्यों पर अपना प्रभाव डालती है, परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि हंटिंगटन की आदर्श

---

† "When the temperature falls greatly, mental work seems to suffer more than physical, and declines as much as when there is no change." E. Huntington, 'Civilization and Climate p. 142.

* 'So it is in the intermediate climes that such traits flourish as energy, ambition, self-reliance, industry and thrift." Ross, 'principles of Sociology,' p. 81.

जलवायु प्रत्येक व्यक्ति के लिये आदर्श हो। विभिन्न जलवायु विभिन्न प्रदेशों के लिये आदर्श होती है। भारतवर्ष में ४०° फ० तापमान होने पर हाहाकार मच जाएगा परन्तु स्विटजरलैंड ने ५° फ० साधारण तापक्रम रहता है। पश्चिमी यूरोप के कुछ प्रदेशों में नहरों और नदियों के जम जाने पर सारे कार्य बन्द हो जाते हैं और अत्यधिक बेरोजगारी फैल जाती है। इसके विपरीत उत्तरी रूस, साईबेरिया और यूराल के प्रदेशों में लोग नदियों के जमने की बाट जोहते हैं। जब नदियां जम जाती हैं तब वहां पर मानव-क्रिया प्रारम्भ होती है।

जलवायु और सभ्यता (Climate and Civilization)

भौगोलिकवादियों का मत है कि सभ्यता और जलवायु में घनिष्ट सम्बन्ध है। हंटिंगटन ने इस सम्बन्ध को सिद्ध करने के लिए अनेक परीक्षण किये और बहुत से तथ्य एकत्रित किए। जलवायु और सभ्यता की प्रगति एवं ह्रास का सिद्धान्त हंटिंगटन की निम्न तीन कल्पनाओं पर आधारित है:—

१. जलवायु स्वास्थ्य निश्चित करती है।

२. स्वास्थ्य शारीरिक और मानसिक कुशलता को निश्चित करता है।

३. जलवायु सदैव परिवर्तित होती रहती है।

डॉ० हंटिंगटन का कहना है कि जलवायु स्वास्थ्य निश्चित करती है और स्वास्थ्य शारीरिक और मानसिक कुशलता को। शारीरिक और मानसिक कुशलता शक्ति, बुद्धि, कठोर परिश्रम इत्यादि गुणों को जन्म देती है और ये गुण ही सभ्यता को जन्म देते हैं और उसका विकास करते हैं। चूंकि सभ्यता इन गुणों का परिणाम है और ये गुण जलवायु के द्वारा निश्चित होते हैं इसलिए जलवायु सभ्यता को निश्चित करती है। जहाँ पर जलवायु अनुकूल होती है वहाँ सभ्यता का विकास होता है और इसके विपरीत जहाँ जलवायु प्रतिकूल होती है वहां सभ्यता का ह्रास होता है। अनुकूल जलवायु से हंटिंगटन का क्या तात्पर्य है, उस पर हम पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं।

हंटिंगटन का कहना है कि उसका यह सिद्धान्त तीसरी कल्पना पर टिका हुआ है। सभ्यतायें विकसित हुईं और समाप्त हो गईं, इसका उत्तर हंटिंगटन की तीसरी कल्पना—जलवायु सदैव परिवर्तित होती रहती है—में मिलता है। जब जलवायु अनुकूल रही होगी तब सभ्यता का उद्भव हुआ होगा और जब जलवायु अनुकूल रही होगी तब तक वह सभ्यता विकसित होती रही होगी और जैसे ही जलवायु का प्रतिकूल होना प्रारम्भ हुआ होगा सभ्यता का ह्रास

होने लगा होगा। इसका अभिप्राय यह हुआ कि सभ्यता का उद्भव एवं ह्रास जलवायु की अनुकूलता या प्रतिकूलता पर आधारित है।

हंटिंगटन का यह सिद्धान्त सत्य है या असत्य, यह उसकी उपरोक्त वर्णित तीनों कल्पनाओं पर आधारित है। यदि ये कल्पनायें सत्य सिद्ध होती हैं तो उसका सिद्धान्त सत्य है और यदि ये कल्पनायें सत्य सिद्ध नहीं होती तो हंटिंगटन का यह सिद्धान्त, कि जलवायु सभ्यता के विकास और ह्रास को निश्चित करती है, निराधार एवं असत्य है। प्रथम और द्वितीय कल्पनाओं पर इस अध्याय के प्रारम्भ में हम प्रकाश डाल ही चुके हैं। इसके अतिरिक्त वे इतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं जितनी कि तीसरी कल्पना है। हंटिंगटन ने भी इस तथ्य पर जोर दिया है। तीसरी कल्पना को अत्यधिक महत्व देते हुये उसने लिखा है, "इस पुस्तक के तर्क का अधिकांश भाग ऐतिहासिक काल में जलवायु के उतार चढ़ाव की कल्पना के साथ दृढ़ रहता है या समाप्त हो जाता है।"§ इसलिये हम तीसरी कल्पना का विश्लेषण करेंगे और यदि वह कसौटी पर खरी नहीं उतरती तो हंटिंगटन का सिद्धान्त सत्य नहीं है।

हंटिंगटन ने अपने सिद्धान्त को सिद्ध करने के लिये अनेक मानचित्र बनाये। इन मानचित्रों से उसने यह सिद्ध किया है कि जिन क्षेत्रों में जलवायु अच्छी है, वहां पर स्वास्थ्य-दर ऊंची है और उन्हीं प्रदेशों में अधिक योग्य व्यक्ति पाये जाते हैं और उच्च स्तर की सभ्यतायें भी उन्हीं क्षेत्रों में पाई जाती हैं। अब हम हंटिंगटन के द्वारा प्रस्तुत किये गये तर्कों का क्रमशः विश्लेषण करेंगे।

हंटिंगटन के सिद्धान्त की समालोचना

१. हंटिंगटन यह मान कर चला है कि जलवायु ऐतिहासिक काल में परिवर्तित होती रहती है। वार्ड (Ward) ने अपनी पुस्तक 'Climate' के ११ वें अध्याय में लिखा है कि अन्तरिक्ष विज्ञान सम्बन्धी प्रमाणित लेखों (Meteorological Records) के अध्ययन से सिद्ध होता है कि ऐतिहासिक काल में जलवायु में अत्यधिक परिवर्तन नहीं होते। जलवायु सम्बन्धी अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिक और विशेषज्ञ भी वार्ड के मत का समर्थन करते हैं। उनके अनुसार जलवायु में परिवर्तन होने के साधारण विश्वास अवैज्ञानिक हैं।

---

§ "A large part of the reasoning of this book stands or falls with the hypothesis of climatic pulsations in historic time." Huntington, 'Civilization and Climate,' p. 7.

१. हंटिंगटन का जलवायु के उतार चढ़ाव का सिद्धान्त केलिफोर्निया में स्थित 'बड़े पेड़ों' के चक्रों के अध्ययन पर आधारित है। विशेषज्ञों ने हंटिंगटन की अध्ययन पद्धति और उसके द्वारा निकाले गये निष्कर्षों की तीव्र आलोचना की है। वार्ड* ने इसका विशेष विवरण दिया है।

२. यदि हम यह मान भी लें कि उसका केलिफोर्निया में अध्ययन ठीक है तो भी आवश्यक नहीं कि संसार के अन्य भागों में भी केलिफोर्निया के ही समान जलवायु में उतार चढ़ाव आते हों।

३. हंटिंगटन ने जिस सामग्री का प्रयोग किया है वह बिल्कुल काल्पनिक है क्योंकि प्राचीन यूनान और रोम की जलवायु के कोई भी प्रमाणित लेख नहीं हैं। हंटिंगटन की मनमानी निम्न व्याख्या से स्पष्ट हो जाती है। रोम के पतन के कारण की व्याख्या करते हुये उन्होंने लिखा है, "४५० ई० पू० से २५० ई० पूर्व तक संभवतया रोम की जलवायु निश्चय ही वर्तमान इटली के किसी भी भाग की तुलता में अधिक स्फूर्तिदायक रही होगी।..... वह काल वर्षा और तूफान की अत्यधिक न्यूनता के साथ समाप्त हुआ। इसके उपरान्त २२० या २१० ई० पू० जलवायु वर्तमान स्थिति के समान रही। १०० वर्ष तक उसी प्रकार की दशा रही और १५० वर्ष के लिये जलवायु पुनः उसी स्थिति जैसी हो गई जैसी कि अनुकूल २४० ई० पूर्व थी।"† इन पंक्तियों को पढ़ने से पाठक को ऐसा लगेगा कि डा० हंटिंगटन के पास प्राचीन रोम के जलवायु सम्बन्धी विस्तृत प्रमाणित लेख उपलब्ध होंगे या कुछ ऐतिहासिक प्रमाणित लेख होंगे जिसके आधार पर उन्होंने निश्चित तिथियों के साथ जलवायु के परिवर्तन का विवरण दिया है। पाठक आश्चर्य-चकित हो जायेंगे जब उनको यह

---

* See Ward, 'Climate', p. 350.

† "From 450 to 250 B. C. the climate (of Rome) was probably decidedly more stimulating than in any part of Italy to-day.....That period ended in a great decline in rainfall and storminess. Then by 220 or 210 it had apparently fallen to about the present level. For a hundred years nearly the same conditions prevailed, and for a century and a half the climate returned to a condition as favourable as in 240 B. C." Huntington, 'World Power and Evolution', pp. 190 and 192.

पता लगेगा कि यह डा० हंटिंगटन के मस्तिष्क की सूझ है। इससे अधिक कल्पित एवं मनगढ़न्त विचार और क्या हो सकते हैं। ऐसे तर्क देकर उसने अपने सिद्धान्त को शक्ति प्रदान करने के स्थान पर निर्बल बना दिया है।

५. इसके अतिरिक्त वह समय समय पर सुविधानुसार अपनी कल्पनाओं को परिवर्तित भी करता रहा है जो कि उनकी विभिन्न पुस्तकें* पढ़ने से ज्ञात होता है।

इन परिस्थितियों में हंटिंगटन द्वारा प्रतिपादित कल्पना, कि जलवायु ऐतिहासिक काल में परिवर्तित होती रहती है, सत्य नहीं है। जब यह कल्पना सत्य नहीं है तो हंटिंगटन का यह सिद्धान्त, कि जलवायु सभ्यता के उद्भव एवं ह्रास को निश्चित करती है, कैसे सत्य हो सकता है। अब हम हंटिंगटन द्वारा दिये गये अन्य प्रमाणों का भी विश्लेषण करेंगे।

६. हंटिंगटन ने निम्न मानचित्र बनाये हैं:—

(अ) पृथ्वी पर और यूरोप में जलवायु का वितरण।

(ब) पृथ्वी पर और यूरोप में सभ्यता का वितरण।

(स) यूरोप में स्वस्थ्य दर का वितरण।

(द) यूरोप में प्रसिद्ध व्यक्तियों का वितरण।

हंटिंगटन के अनुसार इन मानचित्रों में ध्यान देने योग्य अनुरूपता (Similarity) झलकती थी। स्वास्थ्य-दर (Health Rates) उन देशों में अधिक पायी गयी जहाँ पर जलवायु आदर्श (Ideal) जलवायु जैसी थी। सभ्यता का स्तर भी उन्हीं देशों में उच्च पाया गया जहां पर जलवायु हंटिंगटन के अनुसार अनुकूल थी और उन स्थानों में निम्न पाया गया जहाँ पर प्रतिकूल एवं हीन जलवायु और निम्न स्वास्थ्य था। प्रसिद्ध व्यक्तियों की संख्या भी विभिन्न देशों में वहाँ की जलवायु और स्वास्थ्य के वितरण के अनुसार ही पायी गयी। तात्पर्य यह है कि जिन देशों में अनुकूलतम जलवायु पायी गयी उन्हीं में उच्चतम स्वास्थ्य दर भी पायी गयी और उन्हीं देशों में प्रसिद्ध व्यक्तियों की संख्या अधिकतम पायी गयी और वहीं पर उच्च स्तर

---

* Compare his books, 'Civilization and Climate', chap xiv; World Power and Evolution', chap. viii; 'The Character of Races,' Fig. 15.

की सभ्यतायें भी पायी गयीं। इससे स्पष्ट है कि जलवायु सभ्यता के विकास को निश्चित करती है। हंटिंगटन ने लिखा है, "जलवायु प्रत्यक्ष रूप से स्वास्थ्य और शक्ति को प्रभावित करती है और ये (स्वास्थ्य और शक्ति) परिणामस्वरूप सभ्यता को प्रभावित करती हैं।"†

इन मानचित्रों के द्वारा उसने अपने सिद्धान्त की सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। इसमें सन्देह नहीं कि ये मानचित्र हंटिंगटन के ज्ञान को प्रदर्शित करते हैं परन्तु ये मानचित्र वैज्ञानिक आधार पर नहीं बनाये गये हैं और इनमें अनेक दोष पाये जाते हैं।

(i) ये मानचित्र हंटिंगटन ने अपने सिद्धान्त की सुविधा के अनुसार बनाये हैं, इसलिये वे पक्षपात रहित नहीं हैं।

(ii) ऐसे मानचित्रों का वैज्ञानिक मूल्य क्या हो सकता है जिसमें अत्यधिक विस्तृत कटिबंध बनाये गये हैं और इस पर भी अनेक अपवाद पाये जाते हैं? कल्पना कीजिये कि आधा यूरोप और तीन चौथाई एशिया (२५° से ७०° अक्षांश और ३०° से १८०° देशान्तर में फैले हुये क्षेत्र) की समान जलवायु हंटिंगटन ने बताई है और उनके मानचित्र में यह एक समान जलवायु का क्षेत्र दिखाया गया है।* वास्तव में इतने बड़े प्रदेश में विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है। इसमें कुछ क्षेत्र तो बिल्कुल ही प्रतिकूल जलवायु वाले हैं परन्तु हंटिंगटन ने इन्हें अनुकूल जलवायु वाला क्षेत्र बतलाया है। इसी प्रकार उसके अन्य चार क्षेत्र भी बड़े विस्तृत हैं और उनमें विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है, और कोई भी जिसे निक भी भूगोल का ज्ञान है, इन क्षेत्रों को समान जलवायु वाले क्षेत्र स्वीकार नहीं करेगा।

(iii) इससे स्पष्ट है कि हंटिंगटन के मानचित्र मनमाने ढंग से सुविधानुसार बनाये गये हैं। अतः इस पद्धति के द्वारा किसी भी वस्तु के बीच सदृश्यता सिद्ध की जा सकती है।

(iv) जापान और कोरिया की जलवायु समान है परन्तु स्वास्थ्य दर और सभ्यता का स्तर एक दूसरे का विरोधी है। बेल्जियम की जलवायु हंटिंगटन

---

† "Apparently climate influences health and energy and these in turn influence civilization."

* See Figs 22, 43, 44, in 'Civilization and climate.'

ने अनुकूल बतायी है और सभ्यता के मानचित्र में उसका स्थान उच्च है, परन्तु इनकी तुलना में प्रसिद्ध व्यक्तियों की संख्या अति न्यून है। हंटिंगटन ने इन्हें अपवाद (Exception) कहा है। यह समझ में नहीं आता कि जब हंटिंगटन ने समस्त रूस, जो पृथ्वी का $\frac{1}{6}$ भाग है, को समान जलवायु के क्षेत्र में रखा है तो जपान और कोरिया जैसे साधारण अपवाद की ओर संकेत क्यों ?

(v) यदि हम यह मान भी लें कि मानचित्र वैज्ञानिक हैं, तो भी यह कैसे सिद्ध किया जा सकता है कि स्वास्थ्य, सभ्यता और प्रसिद्ध व्यक्तियों में अन्तर जलवायु के अन्तर के कारण होता है।

७. हंटिंगटन ने १६०० का काल मानचित्र बनाने में लिया। मान लीजिये कि वह १०० या २०० ई० पूर्व का काल लेते तो हम निश्चय के साथ कह सकते हैं कि उच्च स्तर की सभ्यतायें भूमध्य सागर के चारों ओर के प्रदेशों और एशिया में पाई जातीं। वर्तमान समय में ये देश बिलकुल पिछड़े हुये हैं, जबकि बाल्टिक सागर के चारों ओर के देश इङ्गलैंड और उत्तरी यूरोप में उच्च सभ्यतायें विकसित हो रही हैं। १०० या २०० ई० पूर्व इन्हीं सभ्य देशों के निवासी जंगली थे और आज के पिछड़े हुये देश रोम, यूनान, उत्तरी अफ्रीका, चीन, भारतवर्ष और एशिया के अन्य क्षेत्र सभ्यता के उच्च शिखर पर थे। इसलिये सभ्यता जलवायु पर आधारित नहीं है।

८. कई बार कुछ देश एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहते हुये एक दूसरे से अधिक प्रगति कर लेते हैं और उच्च सभ्यता का उपभोग करते हैं।

९. हंटिंगटन का कथन है कि भौगोलिक पर्यावरण और जलवायु अति मध्यम गति से लाखों वर्ष में परिवर्तित होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार देशों की सभ्यताओं में १०० या २०० साल में कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिये परन्तु इसके विपरीत हमें अनेक उदाहरण मिलते हैं। १८४० से १९१०के बीच जापान की जलवायु में कोई विशेष परिवर्तन नहीं ज्ञात हुआ, परन्तु इसी समय में जापान एक पिछड़े हुये जंगली देश से सभ्य एवं शक्तिशाली साम्राज्य के रूप में परिवर्तित हो गया। रूस भी १९१७ के उपरान्त संसार का सर्वशक्तिशाली सत्ता वाला देश बन गया और इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका भी।

१०. एक ही प्रकार की जलवायु में रहते हुये भी विभिन्न सामाजिक वर्ग विभिन्न मात्रा में प्रसिद्ध व्यक्तियों को जन्म देते हैं, इसका क्या कारण है ?§

§ See P. Sorokin, 'Social Mobility', Chap. XII.

क्या जलवायु इस प्रक्रिया को समझा सकती है ? स्पष्ट है कि इसमें अन्य सामाजिक कारक अपना प्रभाव डालते हैं ।

११. पनिक्कर ने भी भौगोलिक पर्यावरण को बड़ा महत्वपूर्ण स्थान दिया है । उन्होंने भूमध्य सागर, नील, दजला और फरात, सिंध-गङ्गा के मैदान और समुद्र के किनारे के प्रदेशों को महत्वपूर्ण बताया है और लिखा है, "इन क्षेत्रों में ही सदैव सभ्यतायें विकसित होती रही हैं ।"* भौगोलिक पर्यावरण को भारत की सभ्यता को बचाने का श्रेय देते हुये लिखा है, जिसने प्राचीन समय में भारतीय सभ्यता को सुरक्षित रखा और जिसने उसे नष्ट होने से, जैसे कि नील और दजला की घाटियों की सभ्यतायें नष्ट हो गईं थी, बचाया (वह) उसकी भौगोलिक स्थिति थी ।"§ हो सकता है कि भारतीय सभ्यता को भारत की भौगोलिक स्थिति ने बचाया हो परन्तु वही एक कारण नहीं है ।

१२. गोल्डन वाइजर ने हंटिंगटन के सिद्धान्त की निन्दा करते हुये लिखा है, "कोई भी पर्यावरण एक निश्चित प्रकार की सभ्याता को जन्म देने के लिये केवल मात्र उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, न ही कोई पर्यावरण परम सीमाओं को छोड़कर किसी सभ्यता को विकसित होने से रोक सकता है ।"†

१३. केवल इतना ही नहीं बल्कि कुछ समाजशास्त्रियों का तो यहां तक विचार है कि सभ्यता अधिकांश उन्हीं क्षेत्रों में विकसित होती है जहाँ पर प्रतिकूल जलवायु और भौगोलिक पर्यावरण पाया जाता है । उनका मत है कि

---

* "It is in those areas that civilizations developed at all times." K. M. Panikkar, 'Geographical Factors in Indian History', p. 5.

§ What has preserved Indian civilization in the past and saved it from being uprooted as the civilizations of the Nile and Tigris Valleys were, was her geographical position……" Ibid, p. 83.

† "No environment can in itself be held responsible for producing a definite type of civilization, nor can any environment barring extremes, prevent a civilization from developing." A. A. Goldenweiser, 'Early Civilization,' A. A. Knoff, New York (1926), p. 299.

अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण में मनुष्य की समस्त आवश्यकतायें बिना परिश्रम के संन्तुष्ट हो जाती हैं और इस कारण से ऐसे प्रदेशों में रहने वाले लोग आलसी एवं निष्क्रिय हो जाते हैं और उनकी कार्यक्षमता को आह्वान करने वाला अवसर कभी नहीं आता। इसके विपरीत प्रतिकूल पर्यावरण मनुष्य को ललकारता है और उसे कार्य करने के लिये प्रेरित एवं विवश करता है। प्रसिद्ध कहावत भी है—'आवश्यकता अविष्कार की जननी है'। टॉयनबी (Toynbee)† ने प्रतिकूल पर्यावरण में उत्पन्न होने वाली सभ्यताओं का उल्लेख किया है और यह सिद्ध कर दिया है कि भौगोलिकवादियों का कथन सत्य नहीं है। आधुनिक भौगोलिकवादियों में प्रमुख ब्लेश ने भी इस विचार को स्वीकार किया है। उसने लिखा है, 'उन समस्त संघर्षों में, जो कि पर्यावरणीय आवश्यकताओं के दबाव से उत्पन्न होते हैं, एक स्वाभाविक प्रगति का तत्व निहित रहता है।"*

१४. क्रीट (Crete) और सिसली (Sicily) दोनों ही का भौगोलिक पर्यावरण समान है। क्रीट में सभ्यता विकसित हुई परन्तु सिसली में नहीं। यदि भौगोलिक पर्यावरण ही सभ्यता को जन्म देता होता तो दोनों ही स्थानों पर सभ्यता विकसित होती या दोनों ही स्थानों पर नहीं।

अब हमें ज्ञात हो गया होगा कि हंटिंगटन के सिद्धान्त में कितने दोष हैं। इन दोषों के कारण हंटिंगटन के सिद्धान्त को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता। आधुनिक युग में तो हंटिंगटन के सिद्धान्त को कोई भी स्थान मिलना कठिन है क्योंकि आधुनिक सभ्यता अत्यधिक विकसित हो गई है। अब हम आधुनिक सभ्यता और भौगोलिक पर्यावरण के सम्बन्ध का इन नई परिस्थितियों में विश्लेषण करेंगे।

आधुनिक सभ्यता और भौगोलिक पर्यावरण
(Modern Civilization and Geographical Environment)

आधुनिक सभ्यता ने भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव को और भी कम कर दिया है। भौगोलिकवादी कहते हैं कि मानव सभ्यता भौगोलिक पर्यावरण

---

† See Arnold J. Toynbee 'A study of History' I, p. 269. Also see D. C. Somervell's abridgment of Toynbee's work.

* There is an inherent element of progress in all struggles which result from the compulsion of environmental necessity." Blache, 'Principles of Human Geography,' (1950), p. 172.

द्वारा निश्चित होती है, परन्तु प्रमाण इसके विपरीत हैं। आधुनिक सभ्यता में विज्ञान का इतना अधिक विकास हो गया है कि मनुष्य कुछ भी कर सकता है और जहां उसकी इच्छा हो वहाँ रह सकता है। सर्दी में अपने मकान को गर्म कर सकता है और अत्यधिक गर्मी से बचने के लिये अपने भवन को ठंडा रख सकता है। वह समुद्र में गोता लगा सकता है और हवा में उड़ सकता है जब कि ये दोनों ही तत्व भौगोलिक पर्यावरण ने उसके लिये निषिद्ध घोषित कर रखे हैं। संक्षेप में उसने भौगोलिक पर्यावरण को विजय कर लिया है। मैकाइवर और पेज ने उचित लिखा है, "ज्यों ज्यों मनुष्य का नियंत्रण बढ़ता है वह अपने समीपवर्ती पर्यावरण, जिसमें वह रहता है, पर प्रत्यक्ष रूप से उतना ही कम निर्भर रहता है और उतना ही कम प्रभावित होता है।"† भौगोलिक पर्यावरण आधुनिक युग में किसी भी सामाजिक प्रक्रिया की व्याख्या नहीं कर सकता। मान लीजिये एक स्थान पर मनुष्य रहते हैं उस स्थान पर किस प्रकार के मकान होंगे, यह भौगोलिक पर्यावरण पर निर्भर न होकर आधुनिक सभ्यता के चमत्कारों पर आधारित होगा। उस स्थान पर फूस की झोंपड़ी, साधारण मकान, महल या इक्कीस मंजिल की हवा में बातें करने वाली गगन-चुम्बी इमारत हो सकती है। भौगोलिक पर्यावरण के कारकों पर अभौगोलिक (Non-Geographic) कारकों ने विजय प्राप्त कर ली है। सारोकिन ने उचित लिखा है, "और सभ्यता के स्वरूप जितने अधिक जटिल होते हैं उतना ही तुलनात्मक दृष्टि से भौगोलिक परिस्थितियों और सामाजिक घटनाओं में सम्बन्ध कम उल्लेखनीय, अनिश्चित और अस्पष्ट रहता है।"§

आधुनिक सभ्यता के विकास के फलस्वरूप भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव बहुत कम हो गया है। ब्लेश ने इस विचारधारा की निन्दा करते

---

† "As man's control increases he becomes less directly and less completely dependent upon and influenced by the immediate environment in which he is situated." MacIver and Page, 'Society', p. 103.

§ "And the more complex are the forms of civilization, the less noticeable, the less definite, and the less tangible is the correlation between geographical conditions and social phenomena." Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories,' p. 105.

हुये लिखा है, "स्थानीय पर्यावरण से मुक्ति कभी भी उतनी पूर्ण नहीं है जितना कि हमारे नागरिक पक्षपातपूर्ण विचार के कारण, हम विश्वास करते हैं।"* भौगोलिकवादियों के अनुसार आधुनिक सभ्यता भी भौगोलिक पर्यावरण पर उतनी ही आश्रित है जितनी प्राथमिक अव्यवस्थाओं में थी। ब्रहन्स ने लिखा है कि यह मनुष्य का भ्रम है कि उसने अपनी शक्ति बढ़ा ली है और भौगोलिक पर्यावरण पर विजय प्राप्त करके उसके बन्धनों से मुक्त हो गया है। वास्तव में स्थिति इसके विपरीत है। संसार के सभ्य व्यक्तियों ने और भी कठोर शर्तों वाले संविदा (Contract) पर हस्ताक्षर कर दिये हैं। इसलिये यह नहीं सोचना चाहिये कि भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव कम हो गया है बल्कि केवल इतना हुआ है कि प्रभाव का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। मनुष्य आज भी उतना ही आश्रित है जितना सभ्यता की प्राथमिक अवस्थाओं में था। उसने लिखा है, "और भौगोलिक तथ्य मनुष्य के अधिकाधिक श्रेष्ठ स्वामी बनते जा रहे हैं।"† ब्रहन्स ने इस बात को स्वीकार किया है कि आधुनिक सभ्यता ने भौगोलिक पर्यावरण पर विजय प्राप्त की है परन्तु उसने तर्क प्रस्तुत किया है कि विजय प्राप्त करने का यह अभिप्राय नहीं कि हमारी भौगोलिक पर्यावरण पर आश्रितता का अन्त हो गया। उसने लिखा, "एक देश को विजय करना उस पर और अधिक आश्रित होना होता है। कोई व्यक्ति उस पर इसलिए आश्रित होता है क्योंकि उसने उसे विजय किया है।"§ यह तर्क देते हुये ब्रहन्स ने यह मत प्रकट किया है कि आधुनिक सभ्यता भौगोलिक पर्यावरण पर इसलिये अधिक आश्रित है कि उसने भौगोलिक पर्यावरण को विजय किया है। गिबर्ड (Gibbard) ने भी भौगोलिकवादियों का समर्थन किया है। उसके अनुसार यातायात और विनिमय के साधन बढ़ गये हैं और प्रत्येक देश एक दूसरे के निकट हो गया है। प्रौद्योगिक उन्नति के कारण नई नई वस्तुओं का निर्माण

---

* "Emancipation from local environment is never as Complete as our urban prejudice would have us believe." Blache, 'Principles of Human Geography,' p. 191.

† "And geographical facts are more and more becoming man's supreme masters." Brunhes, 'Human Geography', p. 229

§ "To conquer a country is to be more dependent on it : one depends on it because one has conquered it." Ibid, p. 228.

प्रारम्भ हो गया है और विज्ञान के सहारे भौगोलिक पर्यावरण पर अत्यधिक नियन्त्रण कर लिया गया है। मनुष्य का जीवन ही परिवर्तित हो गया है। परन्तु इस सबका यह तात्पर्य नहीं कि आधुनिक सभ्यता और भौगोलिक पर्यावरण का कोई भी सम्बन्ध नहीं। उसके शब्दों को अवतरित करना यहाँ पर असंगत न होगा। उसने लिखा है, "इसका यह तात्पर्य नहीं कि हम अपने पर्यावरण से मुक्त हो गये हैं बल्कि केवल इतना कि हमने उसे और भी अधिक विस्तृत बना दिया है।"* इस समस्या पर सेम्पिल ने बड़े ही सुन्दर शब्दों में प्रकाश डाला है। उसने लिखा है, "मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के ढंग का इतना शोर मचाया है और प्रकृति मनुष्य पर निरन्तर प्रभाव डालते हुये भी इतनी शांत रही है कि मानव प्रगति के समीकरण में भौगोलिक कारक को बिल्कुल ही भुला दिया गया है।"†

भौगोलिकवादियों ने निस्संदेह ही बड़े तर्कपूर्ण ढङ्ग से यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि आधुनिक सभ्यता भौगोलिक पर्यावरण पर और भी अधिक आश्रित है, परन्तु यह सत्य नहीं है। आधुनिक सभ्यता ने मनुष्य को भौगोलिक पर्यावरण के निर्मम अत्याचारों से मुक्त करा दिया है। इतना ही नहीं, आधुनिक सभ्यता ने भौगोलिक पर्यावरण को भी परिवर्तित कर दिया है।

आधुनिक सभ्यता ने भौगोलिक पर्यावरण के कारकों के महत्व को बढ़ा अवश्य दिया है परन्तु उनकी नियंत्रण शक्ति कम कर दी है। ममफोर्ड (Mumford) ने लिखा है, "ज्यों ज्यों सांस्कृतिक विरासत बढ़ती जाती है, त्यों त्यों पर्यावरण का अधिकाँश भाग अधिक उपयोगी और अर्थपूर्ण होता जाता है। एक प्रदेश की प्राकृतिक दशायें संस्कृति और तांत्रिक कुशलता के बढ़ने के कारण

---

* "This does not mean that we have escaped from our envieronment but only that we have made it more extensive." Harold A. Gibbard in 'Fundamentals of Sociology,' by Eldridge and Associates (in cluding Gibbard.) Thomas Y. Crowell Co., New York (1950) p. 151.

† "Man has been so noisy about the way he has 'conquered Nature' and Nature has been so silent in her persistent influence over man, that the geographic factor in the equation of human development has been overlooked." Semple,'Influence of Geographic Environment.' p. 2.

अभी तक व्यर्थ होने के स्थान पर वस्तुतः अधिक बढ़ती जा रही हैं।"* प्राचीन समय में शिकारी जंगल को शिकार का स्थान समझता था परन्तु आधुनिक सभ्यता में पले हुये व्यक्ति के लिये जंगल लकड़ी एवं ईंधन का साधन, मनोरंजन का क्षेत्र, वैज्ञानिक अवलोकन का कार्यक्षेत्र, भूमि को नष्ट होने से बचाने का साधन एवं वनस्पति शास्त्र की प्रयोगशाला इत्यादि है। इससे स्पष्ट है कि आधुनिक सभ्यता ने भौगोलिक पर्यावरण के महत्व को बढ़ा दिया है। साथ ही साथ भौगोलिकवादियों को यह भी याद रखना चाहिये कि आज भौगोलिक पर्यावरण के नियंत्रण को समाप्त कर दिया गया है और अब मनुष्य भौगोलिक पर्यावरण का दास नहीं रहा है।

भौगोलिक पर्यावरण का वास्तविक महत्व
(Real Importance of Geographical Environment)

भौगोलिक पर्यावरण के प्रभाव की जो आलोचना हमने की है उसका यह अभिप्राय नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण का कोई प्रभाव ही नहीं होता। अब हम उसके वास्तविक महत्व पर प्रकाश डालेंगे।

भौगोलिक पर्यावरण मनुष्य के लिये अनेक वस्तुयें प्रदान करता है। और मनुष्य अपनी सभ्यता के अनुसार उन वस्तुओं का प्रयोग करता है। दस्तूर (Dastur) ने ठीक ही लिखा है, "प्रकृति केवल सामग्री प्रदान करती है, मनुष्य की आवश्यकतायें, उसकी कल्पना-शक्ति एवं योग्यता उसे अपने ही कार्यों के लिये बाध्य करती है।"† मनुष्य इन वस्तुओं का अपनी सुविधाओं के लिये प्रयोग करता है। मनुष्य की विशेष शक्तिबुद्धि-एक महत्वपूर्ण कार्य करती है। वही उसे समय समय पर निर्देशित करती रहती है। बैनेट और ट्यूमिन ने

---

* "As the cultural heritage increases, a larger part of the environment becomes useful and meaningful; the natural conditions of a region, so for from being nullified by the increase of culture and technical skill, are actually magnified." Lewis Mumford, 'The Culture of Cities' Martin Secker and Warburg Ltd. London (1953), p. 313.

† "Nature but offers the material; man's needs, his genius and ability compel him to utilise them for his own purposes." A. J. Dastur, 'Man and his Environment,' Popular Book Depot, Bombay 1. (1954), p. 3.

लिखा है, "वह मनुष्य की बुद्धि है जो कच्चे माल के लिये उपयोग खोजती है।"* भौगोलिक पर्यावरण मनुष्य एवं सभ्यता का आधार है परन्तु उस आधार पर क्या वस्तु बनेगी यह सामाजिक पर्यावरण पर आधारित है। लोवी (Lowie) ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है, "पर्यावरण से सांस्कृतिक ढाँचों के निर्माताओं को ईंट और चूना उपलब्ध होता है परन्तु शिल्पकार की योजना प्राप्त नहीं होती।"†

भौगोलिक पर्यावरण सभ्यता का विकास निश्चित नहीं करता परन्तु वह सीमायें अवश्य निर्धारित करता है। बड़े बड़े नगर सहारा, गोबी और थार (राजस्थान) के रेगिस्तानों में विकसित नहीं हो सकते। इन स्थानों में किसी भी प्रकार के प्राकृतिक साधन उपलब्ध नहीं होते। मनुष्य अपने भोजन की समस्या हल नहीं कर पाता है। घोर गर्मी और बालू के टीबे सारे कार्यों को समाप्त कर देते हैं। इसी प्रकार के प्रतिबन्ध भौगोलिक पर्यावरण ने उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के निकटवर्ती क्षेत्रों में भी लगा रखे हैं। वहाँ पर भी मानव सभ्यता विकसित नहीं हो सकती। जहां भौगोलिक पर्यावरण और जलवायु अत्यधिक प्रतिकूल होती है वहाँ पर मनुष्य के लिये कोई भी चारा नहीं रहता। एस्कीमो के लिये भौगोलिक पर्यावरण अत्यंत कठोर है और उनके भाग्य में बर्फ और जानवरों की खालें एवं मछलियों के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। इससे स्पष्ट है कि भौगोलिक पर्यावरण ने सीमायें निर्धारित कर दी हैं और सभ्यता का विकास उन्हीं सीमाओं के बीच हो सकता है। यद्यपि आधुनिक सभ्यता इतनी अधिक प्रगति कर गई है कि भौगोलिक पर्यावरण द्वारा निश्चित सीमाओं को पार करके भी वह विकसित हो सकती है परन्तु ऐसा वास्तविक जीवन में होता नहीं है। थार के रेगिस्तान में विज्ञान के सहारे दूसरी नई दिल्ली बसाई जा सकती है। जलवायु पर नियंत्रण किया जायेगा और समस्त नगर शीशे की दीवार और छत से घिरा होगा और प्रत्येक आवश्यक वस्तु-भोजन, जल, फल, वस्त्र इत्यादि अन्य स्थानों से पहुँचा दी जायगी। मनुष्य का विज्ञान और प्रौद्योगिकी भौगोलिक पर्यावरण की

---

* "It is man's intelligence which discovers uses for raw materials." Bennett and Tumin, 'Social Life', p, 32

† "The environment furnishes the builders of cultural structures with brick and mortar but it does furnish the architect's plan." R. H. Lowie, 'Culture and Ethnology, p. 64.

किसी भी सीमा पर विजय प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि आधुनिक सभ्यता अति उच्च स्तर पर है। फिर भी एक बात स्मरण रखनी चाहिये कि मनुष्य का विज्ञान इस कार्य को करने में असफल न होगा परन्तु मनुष्य की मितव्ययता और अर्थशास्त्र इस वीरता के कार्य में सहयोग नहीं देंगे। लोग इसे शेखचिल्लीपन कहेंगे। क्लिम तथा अन्य ने उचित लिखा है "इस प्रकार चाहे भौतिकपर्यावरण कुछ कार्य करना असम्भव न बना सके परन्तु बुद्धिमान व्यवसायी उन सम्भव कार्यों को टालेगा जिन्हें भौतिक पर्यावरण अलाभप्रद बनाता है।"¶ इस प्रकार भौगोलिक पर्यावरण सभ्यता को सीमाओं में बांधता है और उन प्रतिबंधों को तोड़ना सरल नहीं है। सभ्यता भौगोलिक पर्यावरण पर अप्रत्यक्ष रूप से आधारित अवश्य है परन्तु उसके विकास के स्वरूप का निश्चायक भौगोलिक पर्यावरण नहीं होता बल्कि अन्य सामाजिक कारक होते हैं।

भौगोलिक पर्यावरण और संस्कृति
(Geographical Environment and Culture)

भौगोलिकों के अनुसार किसी भी समाज की संस्कृति उस प्रदेश के भौगोलिक पर्यावरण से संबंधित होती है। हम पहले ही लिख चुके हैं कि भौगोलिक पर्यावरण मौलिक व्यवसायों के निश्चित करने में एक प्रमुख भाग लेता है। व्यवसाय मनुष्य के जीवन पर गहरा प्रभाव डालते हैं। प्राकृतिक पर्यावरण मनुष्य के विचारों पर भी अपनी छाप लगाता है। ओडम ने लिखा है, "संस्कृति और भूगोल अपृथक्नीय है।"

आलोचना (Criticism):—

१, संस्कृति के विकास में सभ्यता की भांति भौगोलिक पर्यावरण कुछ न कुछ छाप अवश्य डालता है परन्तु संस्कृति के स्वरूप का निश्चायक नहीं होता। गिबर्ड ने उचित लिखा है, "वह (संस्कृति) पुष्पों के समान एक

¶ "Thus the physical environment may not make it impossible to pursue certain courses of action, but the wise businessman will avoid possible courses of action which the natural environment makes unprofitable." Lester E. Klimm, Otis P. Starkey, Joseph A. Russel and Van H. English, 'Introductory Economic Geography,' Harcourt Brace and Co., New York (1956). Third Edition, p. 8.

निश्चित प्रकार से विकसित होने के लिये पृथ्वी से नहीं उगती है तथापि भौतिक पर्यावरण ने प्रत्येक संस्कृति पर अपनी छाप लगादी है।"*

२. संस्कृति का बुद्धि और मनुष्य के मानसिक स्तर से अधिक सम्बन्ध है। संस्कृति भौगोलिक पर्यावरण के बजाय विचारों से अधिक प्रभावित होती है। रॉस ने भी लिखा है, "विचार, मत और सिद्धान्त अधिक प्रभाव डालते हैं और जलवायु एवं दृश्य अति न्यून।"†

३. समाज भौगोलिक पर्यावरण में रहने वाले व्यक्तियों की संस्कृति में विरोध क्यों पाया जाता है यदि भौगोलिक पर्यावरण उसे निश्चित करता है? भारतवर्ष में छोटे नागपुर के पठार पर रहने वाली वन्य जातियां—हो, मुन्डा, संथाल और उराव की संस्कृतियों में अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है। उत्तरी-पूर्वी एरीजोना में होपी और नवाजो इण्डियन्स रहते हैं यद्यपि लम्बे समय से वे एक ही पर्यावरण में रह रहे हैं फिर भी उनकी संस्कृतियां एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। होपी बढ़िया पत्थरों के मकान बनाते हैं और नवाजो तिकोनी मिट्टी की झोंपड़ियाँ। होपी मिट्टी के बर्तन बनाने में अति कुशल हैं जबकि नवाजो मिट्टी के अच्छे बर्तन नहीं बना पाते। होपी कपास पैदा करते हैं और नवाजो कपास का बिल्कुल भी प्रयोग नहीं करते और अपनी भेड़ों की ऊन इस्तेमाल करते हैं। होपी एक पत्नी रख सकता है जबकि एक नवाजो दो रख सकता है। नवाजो दामाद और सास एक दूसरे से बात नहीं कर सकते हैं जबकि होपी के लिये ऐसा कोई बन्धन नहीं। इसी प्रकार के अन्य बन्धन पाये जाते हैं। अपने देश में विभिन्न जातियों की संस्कृतियों में अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है यद्यपि वे एक ही भौगोलिक पर्यावरण में रहती हैं।

४. आवागमन के साधनों में बड़ी प्रगति हुई है और संस्कृति पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा है। संसार की विभिन्न संस्कृतियां एक दूसरे के सम्पर्क में

---

* "It does not spring from the ground, like flowers, to bloom in any predictable way. Yet the physical environment has left its imprint on every culture." Eldridge & Associates. 'Fundamentals of Sociology,' p. 143.

† "Ideas, dogmas and doctrines play a greater role, climate and scence a lesser role." Ross. Principles of Sociology,' p. 87.

आती है और आपस में आदान प्रदान करती हैं। इसके फलस्वरूप भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव कम होता जा रहा है।

इन दो अध्यायों में हमने सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण किया। यद्यपि हमने स्थान स्थान पर भौगोलिक निर्णायकवाद के सिद्धान्त की आलोचना की है तथापि हमारा यह मत कभी नहीं है कि भौगोलिक पर्यावरण और सामाजिक जीवन में कोई संबंध नहीं है। वास्तव में अन्य कारकों की भांति भौगोलिक पर्यावरण भी सामाजिक जीवन के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैं सारोकिन के इन विचारों से सहमत हूँ, "सामाजिक घटनाओं का कोई भी विश्लेषण, जो भौगोलिक कारकों का विचार नहीं करता, अपूर्ण है।"*

प्रश्न

१. भौगोलिक तत्व आपके प्रदेश की सभ्यता के विकास में किस प्रकार (क) सहायक व (ख) बाधक रहे हैं ? (आगरा १९५७)
(How have the Geographical factors (a) helped and (b) checked the growth of civilization in the region to which you belong ?)

२. सभ्यताओं के विकास और पतन पर भौगोलिक कारकों का क्या प्रभाव होता है ? (आगरा १९५५)
(What is the influence of geographical factors on the growth and decay of civilizations ?)

SELECTED READINGS

1. Huntington, 'Principles of Human Geography' and 'Civilization and Climate'.
2. A. J. Toynbee, 'A Study of History' Vol. I.
3. Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories.' Chapter III.
4. A. J. Dastur, 'Man and his Environment.'

* "Any analysis of social phenomena, which does not take into consideration geographical factors, is incomplete." P. Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories,' p. 193.

अध्याय १७

पहाड़ों, मैदानों एवं रेगिस्तानों में सामाजिक जीवन

(Social Life in Mountains, Plains and Deserts)

पिछले अध्यायों में हमने सामाजिक जीवन पर भौगोलिक पर्यावरण के सामान्य प्रभाव पर प्रकाश डाला। अब हम विभिन्न प्रकार के भौगोलिक क्षेत्रों के सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालेंगे। वैसे तो संसार के किसी भी दो भागों का भौगोलिक पर्यावरण समान नहीं है परन्तु अध्ययन की सुविधा के लिये मोटे तौर पर हम इसे निम्न चार भागों में बांट सकते हैं:—

१. पहाड़ (Mountains)
२. मैदान (Plains)
३. रेगिस्तान (Deserts)
४. ध्रुवी क्षेत्र (Polar Regions)

पहाड़ों में सामाजिक जीवन (Social Life in Mountain)

पहाड़ उस ऊंचे या बहुत ऊंचे भूमि के स्वरूप को कहते हैं जिसमें अत्यधिक असम (ऊंची-नीची) भूमि पायी जाती हो और चोटी पर अति न्यून समतल भूमि पायी जाती हो। भौगोलिकवादियों ने पहाड़ों के स्वरूपों के अनुसार उन्हें छः प्रमुख वर्गों में बाँटा है। प्रत्येक पहाड़ में ऊंचाई निचाई पाई जाती है और समतल भूमि का अभाव रहता है।

पहाड़ों पर मानव जीवन निम्न तीन कारणों से मैदानों के जीवन से भिन्न होता है:—

१. समुद्र की सतह से ऊंचाई का प्रभाव(The Effect of Altitude)

जिन व्यक्तियों को हृदय रोग होता है वे ५००० फीट की ऊंचाई पर नहीं रह सकते और १०००० फीट या इससे अधिक ऊँचाई पर उन्हें सांस लेने में अत्यधिक कठिनाई होती है। अधिक ऊंचाई पर साधारण व्यक्तियों को भी सांस लेने में कठिनता होती है। शरीर में लाल जीवाणु (Redcorpuscle) की

संख्या बढ़ जाती है और वह ऑक्सीजन अधिक ग्रहण करने लगता है। इसी के फलस्वरूप जब लोग पहाड़ से मैदानों में आते हैं तो उन्हें अधिक शक्ति का अनुभव होता है। कुछ दिनों में लाल जीवाणुओं की संख्या कम हो जाती है और श्वेत जीवाणुओं की संख्या बढ़ जाती है। रक्त में इस परिवर्तन और अनुकूलन के कारण मनुष्य किसी भी ऊंचाई पर अनुकूलन कर लेता है। एशिया के तिब्बती प्रदेश और दक्षिणी अमेरिका के एन्डियन प्रदेश (Andean Regions) में ऊंचाई के कारण जीवन कठिन हो जाता है।

२. जलवायु (Climate)

ऊंचाई के कारण जलवायु पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। ऊंचाई जलवायु को चार प्रमुख रूपों से प्रभावित करती है:—(अ) ऊंचाई के साथ साथ तापमान घटता जाता है। स्वतन्त्र वायु में ३३० फीट ऊंचाई पर गर्मियों में १° तापमान घट जाता है और इसी दर से घटता चला जाता है। (ब) जितनी अधिक ऊंचाई होती है उतना ही तापमान अस्थिर रहता है। हवा की न्यूनता के कारण सूर्य की गर्मी सीधी पड़ती रहती है। दिन और रात के तापमान में महान अन्तर पाया जाता है क्योंकि दिन में भूमि एकदम गर्म हो जाती है और रात्रि को एकदम ठंडी हो जाती है। (स) ऊंचाई पर बादल अधिक रहते हैं। (द) अधिक ऊंचाई पर वायु का दबाव कम होता है।

अयन-वृतीय (Tropical) प्रदेशों में अधिक ऊंचाई ठंडी हवा के कारण लाभप्रद होती है परन्तु ठंडे देशों में ऊंचाई का बुरा प्रभाव पड़ता है।

३. ऊंची नीची भूमि (Slopes)

पहाड़ों पर भूमि समतल नहीं होती जिसके फलस्वरूप अनेक बाधायें उपस्थित होती हैं। इस भूमि पर ऊंचाई निचाई होने के कारण न तो बड़े खेत ही बन पाते हैं और न ही बस्तियां आबाद हो पाती हैं।

पहाड़ों के भौगोलिक पर्यावरण पर हमने सूक्ष्म प्रकाश डाला। इससे पाठकों को वहां के सामाजिक जीवन को समझने में सहायता मिलेगी।

१. जन संख्या (Population)—सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाला सबसे प्रमुख कारक जन-संख्या है। जन-संख्या समतल एवं ढालू भूमि पर आधारित होती है। ऊंची नीची भूमि पर मनुष्य सुगमता से नहीं रह सकता। इसी के कारण पहाड़ों पर जन-संख्या बिखरी हुई होती है और

जन संख्या का घनत्व मैदानों की तुलना में बहुत कम होता है। पहाड़ों पर जन-संख्या का वितरण भी असमान होता है। घाटियों और वादियों में जहां पर भूमि कुछ समतल होती है अधिक जन-संख्या पाई जाती है। भूटान एक पहाड़ी प्रदेश है और हिमालय के दक्षिणी ढाल पर स्थित है। भूटान में औसत जन-संख्या का घनत्व १२ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है जब कि उसके नीचे मैदान में बसने वाले राज्य पश्चिमी बंगाल की जन-संख्या का घनत्व ८०८ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। भारतवर्ष में निम्न जन-संख्या वाले प्रदेश अधिकांश पहाड़ी हैं। निम्न तालिका इस पर प्रकाश डालती है:—

प्रदेश	जन-संख्या	जन-संख्या का घनत्व
१. पश्चिमी हिमालय प्रदेश	६०	६८
२. उत्तरी-पश्चिमी हिमालय प्रदेश	१०४	१६३
३. पूर्वी हिमालय प्रदेश	१२४	११८

लम्बे चौड़े फैले हुये महान हिमालय प्रदेश में कुल जन-संख्या १,७०, ४२,६६७ है जो कि समस्त भारत की जन-संख्या का ४·८ प्रतिशत ही है जबकि समतल उत्तरी मैदान में भारत की ३६·१ प्रतिशत जन-संख्या बसी हुयी है।

२. यातायात और आवागमन के साधन (Transport and Means of Transport)—पहाड़ों की असम भूमि आवागमन एवं यातायात के लिये अति बाधक होती है। पहाड़ी प्रदेशों में सड़कें और रेलें पहाड़ियों के ऊपर नीचे और चारों ओर चक्कर काटती हैं। बड़ी कठिनाई से इन्हें बनाया जाता है जिस पर मैदानों की तुलना में कई गुना व्यय होता है। पहाड़ों पर माल चढ़ाने में केवल उसे आगे ही नहीं बढ़ना पड़ता बल्कि बढ़ती हुयी ऊंचाई के कारण पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के विरुद्ध ऊपर उठाना भी पड़ता है, इसमें मनुष्यों एवं पशुओं को अधिक शक्ति लगानी पड़ती है और यन्त्रों को भी अधिक कार्य करना पड़ता है। पहाड़ों पर दो मील पर स्थित स्थान पर पहुँचाने के लिये सड़कों और रेलों को चार या उससे अधिक मील का चक्कर लगाना पड़ता है।

इन कठिनाइयों के कारण तीन प्रमुख हानियाँ होती हैं—प्रथम, आवागमन मैदानों की तुलना में धीरे होता है और अधिक समय लगता है। दिल्ली से कालका चलने वाली डाक गाड़ी ६० मी० प्रति घंटा चलती है परन्तु कालका से शिमला के बीच चलने वाली रेलगाड़ी १५ या २० मील की रफ्तार से अधिक नहीं चल सकती। द्वितीय पहाड़ों के चक्करदार एवं असम रास्ते आवागमन के साधनों को शीघ्र खराब कर देते हैं। जो मोटर मैदान में १० साल चल सकती है वह पहाड़ों पर पांच वर्ष में खराब हो जाती है। तृतीय इन कारणों के फलस्वरूप पहाड़ों पर आवागमन का मूल्य मैदानों की तुलना में अत्यधिक बढ़ जाता है।

पहाड़ों में आवागमन के साधन भी कम ही प्रयोग हो सकते हैं। खच्चर आज भी पहाड़ों पर बड़ा उपयोगी है। वायुयान भी मैदानों के लिये अधिक उपयुक्त है क्योंकि उसे प्रारम्भ में उड़ने और उतरने के लिये समतल भूमि की आवश्यकता होती है। पहाड़ों पर कोहरा और बादल अधिक होने के कारण वायुयान को सदैव खतरा रहता है। सड़कें या रेलें भी अधिक नहीं बनाई जाती क्योंकि उनके बनाने में अत्यधिक खर्च होता है और पहाड़ों पर जन-संख्या कम होने के कारण वे व्यापार की दृष्टि से उपयोगी भी नहीं होती। पहाड़ों में जो भी जन-संख्या होती है वह भी अत्यन्त दरिद्र होती है इसलिये सरकार को उनसे कर भी कम प्राप्त होता है। अतः अधिक राशि इन क्षेत्रों पर खर्च भी नहीं की जाती। इन तमाम कारणों के फलस्वरूप पहाड़ पर यातायात एवं आवागमन के साधनों की अति न्यूनता पाई जाती है। इसीलिये पहाड़ी प्रदेश के लोग अन्य भागों के लोगों से पृथक रहते हैं और अपनी सभ्यता और संस्कृति का विकास अधिक नहीं कर पाते।

३. आर्थिक जीवन (Economic Life)—पहाड़ी प्रदेशों में रहने वाले मनुष्यों का आर्थिक जीवन बड़ा कठोर होता है। पहाड़ों पर खेती करना सरल कार्य नहीं, इसलिये इन लोगों का मौलिक एवं एकमेव व्यवसाय खेती करना नहीं होता। पहाड़ी प्रदेशों में खेती करने में निम्न कठिनाइयां प्रमुख रूप से सामने आ जाती हैं:—

(अ) अत्यधिक भूमि का कटाव (Rapid Soil Erosion)

पहाड़ी प्रदेशों में भूमि का कटाव अत्यधिक मात्रा में होता है। प्रत्येक वर्ष वर्षा, जो कि अक्सर होती रहती है, कुछ न कुछ मिट्टी बहा ले जाती है।

(ब) पथरीली मिट्टी (Rocky Soil)

यद्यपि पहाड़ी प्रदेशों में मैदानों की तुलना में अधिक मिट्टी बनती है परन्तु इतना अधिक कटाव होता है कि शेष मिट्टी की तह बड़ी पतली रह जाती है और वह भी पथरीली होती है। हिमालय प्रदेश में प्रायः स्त्रियों को खेतों में पत्थर बीनते पाइयेगा जिन्हें वे एक झोली में भरती जाती हैं। पत्थरों की इतनी अधिक संख्या पाई जाती है कि हजारों वर्षों से स्त्रियां इसी प्रकार इन्हें बीनती रही है फिर भी ये समाप्त नहीं हुये। ऐसी पथरीली भूमि में खेती करना सरल नहीं है।

(स) समतल भूमि का अभाव (Lack of Level Spaces)

पहाड़ों पर खेत बनाने के लिये समतल भूमि नहीं मिलती घाटियों और वादियों में ही कुछ सुगमता से खेत बन पाते हैं। समतल भूमि के अभाव के कारण जहां भी थोड़ा स्थान मिलता है वहां पर उसे चौरस करके चबूतरा (Terraces) बना लेते हैं और उनमें खेती करते हैं। इन ऊंचे स्थानों पर आधुनिक कृषि यन्त्रों का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि ये छतनुमा खेत बड़े छोटे छोटे होते हैं।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि पहाड़ों पर खेती सुगमता से नहीं की जा सकती। इसके अभाव में पहाड़ी लोग भेड़ों तथा अन्य जानवरों को पालते हैं। इन पशुओं के लिये घास अधिक मात्रा में प्राप्त हो जाती है। ठंडी जलवायु के कारण दूध भी अधिक होता है। पशु-पालन पहाड़ों के निवासियों का प्रमुख एवं मौलिक व्यवसाय होता है।

पहाड़ पर खेती तो सुगमता से नहीं हो पाती परन्तु बड़े बड़े पेड़ ऊंची नीची भूमि पर सरलता से उगते हैं। उनकी जड़ें पथरीली भूमि में स्थान बना लेती हैं। इन वृक्षों के द्वारा बादाम, जैतून तथा अन्य फल प्राप्त होते हैं। पहाड़ों पर मेवा, सेव, अंगूर, खूबानी इत्यादि फल भी खूब पैदा होते हैं। चाय और कॉफी की भी पैदावार पथरीली एवं ऊंची नीची भूमि में खूब होती है।

पहाड़ों पर उगने वाले पेड़ न केवल फल प्रदान करते हैं बल्कि लकड़ी भी। लकड़ी उद्योग पहाड़ों पर बहुत पाया जाता है। जलाने की लकड़ी के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए भी लकड़ी उपलब्ध होती है। लकड़ी से फर्नीचर, छड़ियां व खिलौने आदि बनाने के उद्योग पहाड़ों पर पाये जाते हैं। इसलिए पहाड़ से

लौटने वाले स्नेही लकड़ी की वस्तुएं उपहार में देते हैं क्योंकि अधिकता के कारण उनका मूल्य कम होता है।

४. राजनैतिक संगठन (Political Organisation)

पहाड़ी क्षेत्रों में राजनैतिक संगठन अधिक संगठित नहीं होता क्योंकि यातायात और आवागमन के साधन दुर्गम होते हैं और जन-संख्या विभिन्न स्थानों पर बिखरी हुई रहती है। प्रजातांत्रिक शासन भी अधिक सफल नही होता। ये प्रदेश इस दृष्टि से पिछड़े हुए होते हैं।

५. पहाड़ी प्रदेशों में सभ्यता का निम्न स्तर (Low Level of Civilization)

पहाड़ी प्रदेशों में निम्न स्तर की सभ्यता पाई जाने के निम्न कारण हैं:—

(i) कुशल शिल्पकारों का अभाव (Scarcity of good Artisans)—पहाड़ों पर कुशल शिल्पकारों, व्यवसायियों एवं उत्पादकों का अभाव पाया जाता है क्योंकि उन्हें पेट भरने में अत्यधिक कठिनाई होती है। जन-संख्या के बिखरे होने के कारण शिल्पकार बड़ा व्ययसाय नहीं कर सकता। उसे अपना पेट पालने के लिए अपने व्यवसाय के अतिरिक्त पशु-पालन और खेती भी करनी पड़ती है इसलिए वह एक श्रेष्ठ कारीगर नहीं बन पाता। लोहार, राज, बढ़ई तथा अन्य शिल्पकारों को पहाड़ पर पर्याप्त कार्य नहीं मिलता इसलिए लोग इन धंधों को नहीं अपनाते। इसके फलस्वरूप पहाड़ ने निवासियों को अधिकांश कार्य स्वयं करने पड़ते हैं। जीवन की इन आवश्यकता की पूर्ति करने में फंसे रहने के कारण वे उच्चतम आवश्यकताओं आवश्यताओं की ओर ध्यान ही नहीं दे पाते।

(ii) अत्यधिक शीत (Excessive Cold)—जाड़े के दिनों में अत्यधिक शीत पड़ती है और समस्त क्षेत्र बर्फ से ढक जाता है। इसके फलस्वरूप कार्य करना असम्भव हो जाता है और मनुष्य को लाचार होकर बेकार बैठना पड़ता है। इस प्रकार समस्त जाड़े बेकारी में बीतते हैं।

(iii) पृथकता (Isolation)—यायायात एवं आवागमन के साधन सुगम न होने के कारण ये एक दूसरे से पृथक हो जाते हैं और पृथकता कूप मंडूकता की जननी है। इनका विकास इनके ही अनुभवों पर आधारित होता है और संसार के नवीन अनुसंधानों का लाभ ये नहीं उठा पाते।

(iv) अशिक्षा (Illiteracy)—पहाड़ी प्रदेशों में अशिक्षा का बोलबाला है। स्कूल भी केवल गर्मियों में चलते हैं। अशिक्षा के कारण डाक्टरों, इंजिनियरों

एवं प्राध्यापकों की कमी रहती है। वास्तव में ये ही लोग किसी समुदाय में नवीन विचारों का संचार करते हैं।

६. सामाजिक संगठन (Social Organisation)

सामाजिक संगठन परिवार पर आधारित होता है। परिवार पितृ-सत्ताक (Patriarchal) होते हैं। जन-संख्या बढ़ने का इन्हें सदैव भय रहता है अधिक जन-संख्या को ये प्रदेश पाल नहीं सकते, इसलिये ऐसी रीति रिवाज पाये जाते हैं जिससे जन-संख्या अधिक न बढ़े। बहुपति-विवाह (Polyandry) भी अधिकांश स्थानों पर पाया जाता है। लिंग सम्बन्धी आचार अधिक कठोर नहीं होते। लड़कियों को उनके जन्म के समय ही मार डालने की प्रथा (Female Infanticide) भी प्रचलित है।

आधुनिक युग में पहाड़ों का महत्व

आधुनिक युग में पहाड़ी प्रदेशों का महत्व बढ़ गया है। सभ्यता ने इनका आदर करना प्रारम्भ कर दिया। मैदान के लोग स्वच्छ एवं ठंडी वायु और सुन्दर दृश्यों के लिये पहाड़ों पर जाते हैं। इसके कारण पहाड़ों पर यात्रियों की संख्या अत्याधिक बढ़ गई है और गर्मी के दिनों वहां के निवासियों का व्यवसाय चमक उठता है और उनके धंधे भी प्रगति की ओर बढ़ते हैं क्योंकि ग्राहकों की संख्या बढ़ जाती है। नवीन लोगों के सम्पर्क में आने के फलस्वरूप उन्हें नये विचार मिलते हैं और उनका जीवन विकसित होता है। आशा की जाती है कि इसी प्रकार के अन्य परिवर्तन पहाड़ी प्रदेशों के निवासियों के भविष्य में भी होते रहेंगे।

मैदानों में सामाजिक जीवन (Social Life in Plains)

मैदान उस समतल भूमि को कहते हैं जिसमें अति न्यून ऊंची नीची भूमि पायी जाती है। मैदानों में जीवन पहाड़ों की अपेक्षा सुगम होता है। अब हम मैदानों के सामान्य सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालेंगे।

१. जन-संख्या (Population)

मैदानों में जन-संख्या घनी आबाद होती है। भारतवर्ष में उत्तरी मैदान की जन-संख्या ही केवल १३,६४,४७,६५२ है जो कि समस्त भारत की जन-संख्या की ३६·१ प्रतिशत है। संसार के अधिकाँश बड़े बड़े नगर जिनकी आबादी ५ लाख से ऊपर है मैदानों में ही स्थित हैं। विशेषतया वे मैदान और भी अधिक घने बसे हुये हैं जो नदियों के किनारे या उनके मुहानों पर स्थित हैं और

जहाँ कि भूमि बालू और मिट्टी से मिलकर बनी है ; निम्न तालिका से ज्ञात होगा कि अधिकांश मैदानों में घनी आबादी पायी जाती है:—

प्रदेश	जन-संख्या	जन संख्या का घनत्व
	(लाखों में)	(प्रति वर्ग मील)
१. गङ्गा का निचला मैदान	७००	८३२
२. गङ्गा का ऊपरी मैदान	३८६	६८१
३. मलाबार का कोंकण	२३८	६३८
४. दक्षिणी मद्रास	३०७	५५४
५. उत्तरी मद्रास और तटीय उड़ीसा	२११	५६१

२. आवागमन के साधन (Means of Transportation)

मैदानों में आवागमन के मार्ग तथा साधन अति सुगम हैं। मैदानों में इस दृष्टि से निम्न लाभ हैं:—

(i) मैदानों में समतल भूमि होती है इसलिये मार्ग बनाने में विशेष कठिनाई नहीं होती है। (ii) आवागमन के मार्ग किसी भी दिशा में सीधे बनाये जा सकते हैं। (iii) जितने अधिक मार्ग वहाँ के निवासी चाहें, बन सकते हैं। (iv) ये मार्ग तुलनात्मक दृष्टि से कम खर्च में बनाये एवं सुरक्षित रक्खे जा सकते हैं। (v) इन मार्गों पर तीव्र गति से चलने वाले वाहन प्रयोग में लाये जा सकते हैं। (vi) बड़े और भारी यंत्र भी प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

इन सुविधाओं के कारण मैदानों में रेलों और सड़कों के जाल बिछ गये हैं। व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान पर सरलता से कम समय में आ जा सकता है। इस सुगमता के कारण व्यापार एवं व्यवसाय का क्षेत्र बढ़ जाता है और उन्हें प्रोत्साहन मिलता है।

३. आर्थिक जीवन (Economic Life)

मैदानों में रहने वाले मनुष्यों का मौलिक एवं प्रमुख व्यवसाय खेती होता है। जिधर भी निकल जाइये लहलहाते हुये हरे भरे खेत मन में

उल्लास भर देते हैं। भूमि समतल होने के कारण बड़े बड़े खेत बनाये जा सकते हैं और आधुनिक कृषि यन्त्रों का प्रयोग किया जा सकता है। व्यवसाय एवं उद्योग-धंधे भी अत्यधिक मात्रा में पाये जाते हैं।

सभ्यता का स्तर साधारणतया उच्च होता है। मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकतायें सुगमता से पूर्ण होने के कारण मनुष्य उच्च आवश्यकताओं की भी पूर्ति करने की ओर अग्रसर होता है। साहित्य और कला का विकास सरलता से किया जा सकता है। पास पास रहने और नित्यप्रति के सम्पर्क के कारण सामूहिक सहयोग भी सरलता से प्राप्त हो जाता है। इन सबके फलस्वरूप सभ्यता का विकास होता है।

कुशल शिल्पकारों को कार्य की कमी नहीं रहती। वे अपने कार्यों में प्रवीण हो जाते हैं और नवीन आविष्कार कर पाते हैं। शिक्षा का भी सरलता से विकास किया जा सकता है।

४. राजनैतिक संगठन (Political Organisation)

मैदानों में राजनैतिक संगठन की आवश्यकता शीघ्र होने लगती है क्योंकि उनके पास धन धान्य होता है और वे एक निश्चित स्थान में बसे हुये होते हैं। यातायात की सुगमता के कारण संबंध सरलता से स्थापित हो जाते हैं। सामान्यतया मैदानों के लोग राजनीति में अधिक रुचि लेते हैं क्योंकि उनके पास प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के उपरान्त काफी समय बचता है।

५. सामाजिक संगठन (Social Organisation)

साधारणतया एक विवाह प्रथा (Monogamy) या बहु-पत्नी विवाह (Polygyny) प्रथा पायी जाती है क्योंकि खाने पीने को पर्याप्त मात्रा में प्राप्य होता है। मनुष्य का स्थान ऊंचा होता है क्योंकि कृषि में उसका प्रमुख भाग होता है।

इस प्रकार मैदानों में जीवन साधारणतया सुगम होता है। मैदानों में जीवन अन्य विभिन्न भौगोलिक पर्यावरण के कारकों के साथ साथ परिवर्तित होता रहता है। इन कारकों में प्रमुख वर्षा, मिट्टी की किस्म, जलवायु एवं नदियाँ इत्यादि हैं। इन पर संक्षेप में हम पिछले अध्यायों में प्रकाश डाल चुके हैं।

रेगिस्तान में सामाजिक जीवन (Social Life in Deserts)

२०° और ३०° अक्षांशों (Latitudes) के बीच प्रत्येक महाद्वीप के पश्चिमी भाग में समुद्र को छूते हुये सूखे रेगिस्तान फैले हुये हैं। इन रेगिस्तानों में हवायें नियम से बहती हैं, जिन्हें व्यापारिक पवनें (Trade Winds) कहते हैं। इन, रेगिस्तानों को व्यापारिक पवनें रेगिस्तान (Trade-Wind deserts) कहते हैं। ये रेगिस्तान पश्चिमी अफ्रीका से पूर्व की ओर सहारा, अरब, ईराक, दक्षिणी ईरान से बिलोचिस्तान और प० पाकिस्तान की सिन्धु घाटी तक फैले हुए हैं। इनके अन्तर्गत उत्तरी-पश्चिमी मैक्सिको, उत्तरी चिली, दक्षिणी अफ्रीका का कालाहारी रेगिस्तान और पश्चिमी एवं दक्षिणी आस्ट्रेलिया का अधिकांश भाग भी आता है। इन समस्त क्षेत्रों में निम्न समान लक्षण मिलते हैं:—

(i) अति न्यून वर्षा (ii) वनस्पति का अभाव (iii) कृषि का अभाव (iv) मनुष्य की पशुओं पर आश्रितता (v) अत्यधिक बिखरी हुई जन संख्या (vi) सभ्यता का निम्न स्तर।

इन लक्षणों वाले अन्य क्षेत्र भी पाये जाते हैं। इन प्रदेशों को भूगोल-शास्त्रियों ने निम्न दो प्रमुख भागों में बांटा है:—

१. महाद्वीपीय रेगिस्तान (Continental Deserts)

२. ध्रुवी प्रदेश (Polar Regions)

महाद्वीपीय रेगिस्तान (Continental Deserts) व्यापारिक पवनीय रेगिस्तानों (Trade-Wind Deserts) की ही भाँति होते हैं। उनमें मुख्य अन्तर यह है कि ये वर्ष के अधिकांश भाग में व्यापारिक पवनीय रेगिस्तानों की भांति गर्म रहते हैं परन्तु कुछ समय ध्रुवी रेगिस्तानों के समान ठंडे रहते हैं। मध्य एशिया में केस्पियन सागर से मंचूरिया की सीमाओं तक फैले हुये रेगिस्तान इसके उदाहरण हैं।

ध्रुवी रेगिस्तान वास्तव में साधारण भाषा के अनुसार रेगिस्तान नहीं कहे जा सकते क्योंकि अधिकांश समय वे बर्फ से ढके रहते हैं और जब बर्फ पिघल जाती है तो नमी रहती है फिर भी जहाँ तक मनुष्य के जीवन पर प्रभाव का सम्बन्ध है वे रेगिस्तान (अनुर्वर) हैं।

१. जन-संख्या (Population)

रेगिस्तानों में जन-संख्या अत्यधिक कम पाई जाती है और वह भी बिखरी हुई। भारतवर्ष में थार के रेगिस्तान की जन-संख्या ४६ लाख है और जनसंख्या का घनत्व ६१ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है जब कि दिल्ली का घनत्व ३०१७ व्यक्ति प्रति वर्ग मील और सम्पूर्ण भारतवर्ष का औसत घनत्व ३१२ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। यद्यपि राजस्थान राज्य क्षेत्रफल के अनुसार भारतवर्ष में द्वितीय राज्य है (१,३०,२०७ वर्ग मील) फिर भी इसकी जन-संख्या केवल १,५२,६०,७६७ है।

प्रदेश	क्षेत्र	जन-संख्या	जन-संख्या का घनत्व
१. राजस्थान	१,३०,२०७	१,५२ ६०,७६७	११७
२. मध्य प्रदेश	१,३०,२७२	२,१२,४७,५३३	१६३
३. बम्बई	१,११,४३४	३,५६,५६,१५०	३२३
४. उत्तर प्रदेश	१,१३,४०६	६,३२,१५,७४२	५५०

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि रेगिस्तान में जन-संख्या अत्यन्त कम पायी जाती है। दक्षिणी अरब के ३ लाख वर्गमील भयंकर रेगिस्तान में कोई आबादी है ही नहीं और इस ओर जाने का साहस निकट के रहने वाले व्यक्ति भी नहीं करते। १९३१ ई० के पूर्व उस रेगिस्तान को किसी भी यूरोप के निवासी ने पार नहीं किया था।

२. आवागमन के साधन (Means of Transportation)

रेगिस्तान में आवागमन के साधनों की बड़ी कठिनाई होती है। यहाँ पर सड़कें बनाना या रेल की पटरियाँ डालना असम्भव है। रेगिस्तान में ऊँट बड़ा उपयोगी पशु है जिससे आवागमन के साधन के अतिरिक्त अन्य लाभ भी उठाये जाते हैं जैसे उसका दूध एवं उसके जमा पानी का प्रयोग।

नोटः—उपरोक्त तालिका 'India 1956' के अनुसार है।

ऊँट को रेगिस्तान का जहाज कहते हैं। अन्य पशुओं का वहाँ जीवित रहना कठिन है। आवागमन की इन कठिनाइयों के कारण कोई भी व्यापार या व्यवसाय नहीं हो पाता।

३. आर्थिक जीवन (Economic Life)

रेगिस्तान के निवासियों का आर्थिक जीवन भी बड़ा कठोर होता है। रेगिस्तान में घास और झाड़ के अतिरिक्त और कुछ उत्पन्न नहीं होता। रेगिस्तान में कृषि तो हो ही नहीं सकती।

जहां पर किसी भी कारण से थोड़ा बहुत पानी पाया जाता है वहां पर कुछ पेड़ पौधे उग जाते हैं और ऐसे स्थानों को मरुद्यान (Osis) कहते हैं। ऐसे स्थान रेगिस्तान के निवासियों के लिए स्वर्ग के समान होते हैं। इन मरुद्यानों से रेगिस्तान के वास्तविक खानाबदोशों का वही सम्बन्ध होता है जो मैदानों में नगरों से गांव के निवासियों का होता है। मिश्र का मरुद्यान, जिसमें २ करोड़ व्यक्ति रहते हैं मध्य अफ्रीका के पहाड़ों पर होने वाली वर्षा का परिणाम है। जहाँ पर पानी की मात्रा कम होती है वहाँ पर मरुद्यान बन जाते हैं। खजूर के पौधे पांच या छः फीट गहरे गढ़ों में लगाये जाते हैं और थोड़े से पानी से ही ये पौधे उग जाते हैं।

रेगिस्तान के निवासी खानाबदोश होते हैं। मरुद्यानों के अतिरिक्त कहीं भी स्थायी निवास स्थान नहीं मिलता। भेड़ें, बकरे एवं बकरियां और गधे और विशेषतया ऊंट आदि पशु जो थोड़ी सी वनस्पति पर ही जीवित रहते हैं यहाँ पाले जाते हैं। ये खानाबदोश हरियाली की खोज में एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रस्थान करते रहते हैं। इनके पास बहुत थोड़ा समान होता है तथा पशुओं को छोड़कर और कोई ऐसी वस्तु नहीं होती जिसे वास्तव में सम्पत्ति कहा जा सके। इतने कठिन जीवन के कारण ये कुछ भी सम्पत्ति नहीं जोड़ पाते और दरिद्र ही बने रहते हैं। इनकी दरिद्रता का सब से प्रमुख कारण वर्षा की कमी है जिसके कारण चारागाह सूख जाते हैं। ऐसी स्थिति में पशु मरने लगते हैं। भेड़ें दूध नहीं देतीं और छोटे बच्चे तुरन्त ही मरना प्रारम्भ हो जाते हैं। वर्षा न होने के कुछ दिन बाद ही इनके पास कुछ भी नहीं रहता। इस प्रकार इनकी दरिद्रता बढ़ती जाती है।

४. राजनैतिक संगठन (Political Organisations)

रेगिस्तान के खानाबदोश राजनैतिक संगठन से दूर रहते हैं और मरुद्यानों में स्थापित सरकारों के लिये सिर दर्द बने रहते हैं। अपनी प्राथमिक

आवश्यकतायें पूरी न होने के कारण वे सदैव उन्हीं में उलझे रहते हैं और राजनीति में भाग लेने का उन्हें समय ही नहीं मिलता। प्रत्येक परिवार का पिता ही उनका सरदार या राजा होता है। पिता का प्रत्येक शब्द कानून होता है। जहाँ पर कई परिवार मिल कर रहते हैं वहाँ पर किसी परिवार के मुख्य को सरदार चुन लिया जाता है। अरब के रेगिस्तान में ऐसे सरदार को शेख़ कहते हैं। प्रायः शेख़ की पदवी, पिता से पुत्र को हस्तांतरित होती रहती है परन्तु यह एक शर्त पर आधारित होता है कि समूह के लोग उसे स्वीकार कर लें। यह स्वीकार करना उसके चरित्र एवं योग्यता पर आधारित होता है। यदि शेख के पुत्र को समूह स्वीकार नहीं करता तो नये शेख का चुनाव बुद्धिमत्ता, वीरता एवं सर्वप्रियता आदि गुणों के आधार पर किया जाता है। आज भी रेगिस्तान के प्रदेशों में स्थापित सरकारें चाहे वे प्रजातांत्रिक ही हैं, इन्हीं शेखों पर आधारित हैं और यही कारण है कि वहां की सरकारें स्थायी नहीं रह पातीं।

५. धर्म (Religion)

धर्म पर भी भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है। अरब के रेगिस्तानों में पानी की न्यूनता रहती है इसलिये यहां के लोगों में स्नान के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है। लाखों अरब के निवासी सम्भवतया अपना सम्पूर्ण जीवन बिना स्नान किये ही बिता देते हैं। कुरान में स्पष्ट लिखा है कि जहां पर पानी न मिले वहाँ पर नमाज़ पढ़ने के पहले बालू से हाथ और पैर रगड़ लेने चाहियें।

६. चरित्र एवं आचार विचार (Character and Morals)

दरिद्रता के कारण इन खानाबदोशों के उचित और अनुचित के विषय में विचार हमारे विचारों से भिन्न हैं। उनकी दृष्टि में परिवार के पालन पोषण के लिए सब कुछ उचित है तो हमारे लिये कुछ और ये लोग दूसरों को लूटना अनुचित नहीं समझते। एक काफिला दूसरे काफिले पर हमला करता ही रहता है। रेगिस्तान के निवासी अधिकांशतया बेइमान और आलसी होते हैं। नित्य प्रति कार्य करना वे गुलामी समझते हैं। ये लोग लड़ने में बड़े बहादुर होते हैं और कठिन से कठिन समय में भी हार नहीं मानते।

अतिथि सत्कार इनका सार्वभौमिक लक्षण है। इनके जीवन में अतिथि सत्कार यदि न होता तो इनका जीवन ही दूभर हो जाता क्योंकि एक व्यक्ति को मरुद्यान पहुँचने में दस बारह दिन से भी अधिक लगते हैं। एक व्यक्ति को अपने शत्रुओं के खेमों में भी रात्रि को सुरक्षा एवं भोजन प्राप्त हो जाता है।

अतिथि सत्कार की भावना इन लोगों में इतनी अधिक होती है कि वे अपने अतिथि का सत्कार अवश्य करेंगे चाहे उनके परिवार को भूखा ही रहने के लिये बाध्य होना पड़े।

ध्रुवी क्षेत्रों में सामाजिक जीवन (Social Life in Polar Regions)

ध्रुवी क्षेत्र भी रेगिस्तान के ही समान होते हैं। इनमें मुख्य अन्तर यह होता है कि ये गरम बालू के रेगिस्तान न होकर बर्फ के ठंडे रेगिस्तान होते हैं। भारतवर्ष में इस प्रकार के रेगिस्तान नहीं पाये जाते।

१. जन-संख्या (Population)

ध्रुवी क्षेत्रों में रेगिस्तानों से भी कम लोग पाये जाते हैं। अन्टार्कटिका (Antarctica) में एक भी निवासी नहीं पाया जाता। उत्तरी कनाडा में बीस हजार जन-संख्या है जब कि इसका क्षेत्रफल रूस को छोड़कर समस्त यूरोप के बराबर है।

२. आवागमन के साधन (Means of Transporation)

यहां आवागमन के साधन असम्भव हैं। ये लोग बर्फ पर चलने वाली गाड़िया बनाते हैं जिन्हें रेंडियर और कुत्ते खोचते हैं। टंड्रा के भागों में रेंडियर रेगिस्तान के ऊंट की भांति ठंडे रेगिस्तानों का जहाज है। यहां रेलें और सड़कें बनाना असम्भव है।

३. आर्थिक जीवन (Economic Life)

ध्रुवी क्षेत्र के निवासी अंशतः पृथ्वी के पशुओं पर और अंशतः समुद्र के पशुओं पर जीवन निर्वाह करते रहते हैं। एस्कीमो केवल समुद्र के पशुओं पर निर्भर रहते हैं। अधिक ठंडे प्रदेशों में समुद्र में वनस्पति और पशु दोनों ही स्थल से अधिक पाये जाते हैं और वे शीघ्र सड़ते भी नहीं। गर्मियों में ये लोग खेमे गाड़कर रहते हैं। जाड़ों में ये दक्षिणी भागों में उतर आते हैं और पत्थर एवं खालों की झोंपड़ियां बनाकर रहते हैं। प्रायः ये बर्फ के ढेर के मकान भी बनाते हैं। एस्कीमो का पालतू पशु कुत्ता है जो कि इनकी गाड़ी (Sledge) खींचता है और इन्हें शिकार करने में भी सहायता करता है। नाव भी इनके लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण साधन है।

इनके पास कोई विशेष सम्पत्ति नहीं होती।

४. राजनैतिक संगठन (Political Organisation)

राजनैतिक संगठन कोई विशेष नहीं होता। साधारणतया पितृ-सत्तात्मक परिवार पाये जाते हैं।

५. चरित्र एवं आचार (Character and Morals)

ये लोग लूट पाट नहीं मचाते। प्रायः ईमानदार होते हैं। अतिथि सत्कार इनका भी सार्वभौमिक गुण है।

प्रश्न

१. मैदान पहाड़ और रेगिस्तान मनुष्यों के जीवन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं ? (आगरा १९५६)
(How do plains, hills and deserts influence the life of the people ?)

२. सामाजिक स्वरूपों और प्रक्रियाओं को निश्चित करने में नदियों और पहाड़ों के तुलनात्मक कार्य का मूल्यांकन कीजिये। (आगरा १९५३)
(Evaluate the comparative role of rivers and mountains in the determination of Social forms and processes.)

३. 'जन-संख्या का घनत्व जीविकोपार्जन के साधनों के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।' पूर्णरूप से समझाइये। (राजपूताना, १९५५)
('The density of population varies with the manner of making a livelihood.' Explain fully.)

४. जिस क्षेत्र में आप रहते हैं उसका एक प्राकृतिक मानचित्र बनाइये और उस मानचित्र के सहारे उस क्षेत्र के सामाजिक जीवन का विश्लेषण कीजिये।
(Make a physcial map of the region in which you live and analyse the social life of the region with the help of the map.)

SELECTED READINGS

1. Ross, 'Principles of Sociology' Chapter VI.
2. Blache, 'Principles of Human Geography.'

अध्याय १८

ग्रामीण एवं नागरिक जीवन

(Rural and Urban Life)

पर्यावरण का मानव जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण ग्रामीण और नागरिक जीवन है। नगर और ग्राम में भिन्न पर्यावरण होने के कारण भिन्न भिन्न प्रकार का सामाजिक जीवन पाया जाता है। इस अध्याय में हम ग्रामीण एवं नागरिक जीवन के विभेद प्रकाश डालेंगे।

ग्रामीण जीवन (Rural Life)

इसके पूर्व कि हम ग्रामीण एवं नागरिक जीवन के भेदों पर प्रकाश डाल हम ग्रामीण एवं नागरिक जीवन के सामान्य रूप, उनकी परिभाषा, जन्म, विकास इत्यादि पर भी प्रकाश डालेंगे।

ग्राम का जीवन (Origin of Village)

सृष्टि के प्रारम्भिक चरणों में मनुष्य भोजन की खोज में स्थान स्थान पर घूमता फिरता था और कुछ भी कंद मूल फल उसे प्राप्त होते थे उनसे क्षुधा की तृप्ति करता था। समय के साथ साथ वह आगे बढ़ने लगा। उसने अग्नि की खोज की और कुछ ऐसे हथियार बनाने लगा जिनसे शिकार किया जा सकता था। इस अवस्था में भी वह खानाबदोशों की तरह घूमता रहा। कई युगों के उपरान्त उसकी दृष्टि पृथ्वी माता की ओर आकर्षित हुई और वह कुछ वस्तुयें उगाने में सफल हुआ। इससे उसको प्रोत्साहन मिला और हो (Hoe) का अविष्कार कर सका। इससे कृषि का प्रारम्भ हुआ। कृषि की देख रेख के लिये उसे अपनी खानाबदोशी प्रकृति पर प्रतिबन्ध लगाना पड़ा और एक स्थान पर रहने के लिये बाध्य होना पड़ा। पेड़ों के झुरमुटों एवं पशुओं की गुफाओं ने उसे झोंपड़ी बनाने के लिये अवश्य प्रेरित किया होगा। शनैः शनैः वह झोंपड़ी बनाकर रहने लगा। उसने हल का भी अन्वेषण किया फल स्वरूप कृषि और भी सुगम हो गई। इस प्रकार मानव युगों के प्रयत्न से एक दिन कृषक बन बैठा।

ग्राम का जन्म कब और किस प्रकार हुआ यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता परन्तु कृषि के विकास के साथ साथ ग्राम का भी जन्म हुआ। इससे स्पष्ट है कि कृषि और ग्राम में घनिष्ट सम्बन्ध है। इस पर विशेष प्रकाश हम आगे चल कर डालेंगे। यहाँ पर इतना ही स्मरण रखना पर्याप्त होगा कि ग्रामीण जीवन का जन्म कृषि पर मूल रूप से आधारित है। कृषि और ग्रामीण जीवन में इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि एक दूसरे के बिना वे जीवित नहीं रह सकते।

ग्रामीण जीवन के आधार (Basis of Rural Life)

ग्रामीण जीवन के मूल आधार निम्न हैं:—

(अ) कृषि : मूल व्यवसाय (Agriculture : fundamental Occupation)

ग्रामीण जीवन कृषि पर आधारित है। यही इनका मूल व्यवसाय है। स्मिथ ने जोर देते हुये लिखा है, "कृषि और वस्तुओं को एकत्रित करने वाले व्यवसाय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के मूल आधार हैं। कृषक और ग्रामीण प्रायः पर्यायवाची शब्द हैं।"§

(ब) जन-संख्या की अनुरूपता (Homogeinity of Population)

ग्रामों में जन-संख्या की अनुरूपता पायी जाती है। इसके फलस्वरूप उनके सम्बन्ध घनिष्ट एवं जीवन समान होता है। सांस्कृतिक संघर्ष का कोई स्थान नहीं होता।

(स) जन-संख्या की न्यूनता (Scarce Population)

ग्रामों में जन संख्या कम होती है क्योंकि कृषि करने के लिये बड़े बड़े खेतों की आवश्यकता पड़ती है और गाँव खेतों से बहुत दूर नहीं बसाये जा सकते। थोड़ी जन-संख्या होने का भी सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

(द) प्रकृति से घनिष्ट सम्बन्ध (Close Contect with Nature)

ग्रामीण जीवन का प्रकृति से घनिष्ट एवं प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहता है इसके फलस्वरूप ग्रामीण जीवन अधिक प्राकृतिक होता है और इसका प्रभाव उनके धर्म, परम्पराओं एवं विश्वासों पर भी पड़ता है।

---

§ "Agriculture and the collecting enterprises are the basis of the rural economy : farmer and countryman are almost synonymous terms." T. Lynn Smith, "The Sociology of Rural Life." Harper & Bros, New York (1947) p. 16.

भारत में ग्रामों का विकास (Development of Villages in India)

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत में ५ लाख से अधिक ग्राम पाये जाते हैं। ओमैली (O'Malley) ने उचित ही लिखा है, "भारतवर्ष ग्रामों का देश कह कर पुकारा जाता है·····"* आज भी भारत की ८२·७ प्रतिशत जन-संख्या ग्रामों में रहती है। भारत की इस ग्रामीण प्रकृति को कोई भी दूर से देख सकता है। जर्मन विद्वान मेक्सवेबर (Max Weber) ने भी संकेत किया है, "भारतवर्ष ग्रामों का देश रहा है।"†

नागरिक जीवन (Urban Life)

हमने ग्रामीण जीवन के जन्म, विकास एवं आधारों पर संक्षिप्त प्रकाश डाला, अब हम नागरिक जीवन का अध्ययन करेंगे।

नगर का जन्म (Origin of Cities)

नगर का जन्म कब और किस स्थान पर हुआ यह बताना अत्यन्त कठिन है। गिस्ट और हेलबर्ट (Gist and Halbert) ने उचित ही लिखा है, "सभ्यता के जन्म के समान ही नगर का जन्म भी भूत के अन्धकार में खो गया है।"§ नगर के जन्म के समय का निश्चित ज्ञान नहीं है परन्तु इतना निश्चित है कि नगरों का जन्म ग्रामों के जन्म से बहुत बाद में हुआ। जब सामाजिक परिस्थितियाँ इतनी अनुकूल हुईं और मनुष्य का बौद्धिक विकास इतना अधिक हो गया कि वह खेती के उत्पादन के बिना भी रह सके, तब नगर का जन्म हुआ होगा। वैसे तो नगर अति प्राचीन समय से पाये जाते हैं। यहाँ तक कि प्रागैतिहासिक खोज के अनुसार नवीन पाषाण युग (New Stone Age) में भी नगर पाये जाते थे, परन्तु नागरिक जीवन का अधिक विकास औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution) के बाद ही हुआ है। नगरों के जन्म के लिए कुछ प्रमुख कारक उत्तरदायी हैं।

---

* "India has been Called a land of villages,....." L. S. S. O'Malley, 'India's Social Heritage', p. 100.

† "India has been a country of villages..." Max Weber, 'Essays in Sociology' translated by Gerth & Wright Mills, p.412

§ "Like the origin of civilization itself, the origin of the city is lost in the obscurity of the past." Gist and Halbert, 'Urban Society', p. 16.

नगरों का विकास (Development of Cities)

नगरों के विकास के अनेक कारक हैं। इन कारकों को निम्न प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है :—

(१) ग्रामीण कारक (Rural factors)—नगर के विकास के ग्रामीण कारक अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण हैं। यदि इन ग्रामीण कारकों को नगर रूपी भवन की नींवें कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। नगर ग्रामों पर आधारित हैं। जब ग्रामों में साधनों का आधिक्य हुआ तब नगरों का जन्म सम्भव हो सका। यह साधनों का आधिक्य निम्न कारणों से सम्भव हो सका:—

(अ) कृषि में क्रांति (Revolution in Agriculture)—मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकतायें भोजन और वस्त्र की हैं। यदि इनकी पूर्ति न हो तो मनुष्य अन्य उच्च आवश्यकताओं की ओर ध्यान नहीं दे सकता। जैसे जैसे प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति न्यूनतम श्रम के द्वारा होती जाती हैं वैसे वैसे शेष श्रम उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति में लगता जाता है। इसके ही कारण अनेक अन्वेषण एवं खोजें सम्भव हो सकीं जिन्होंने नागरिक जीवन को जन्म दिया। कृषि में यह क्रांति औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution) के कारण सम्भव हो सकी। कृषि कर्म की पद्धतियाँ अधिक कुशल होती गईं। पहिये (Wheel) के अन्वेषण के कारण नई नई मशीनें बन सकीं जिसके द्वारा अत्यधिक न्यून श्रम से पहले की तुलना में कई गुना अन्न उत्पन्न किया जाता है। ग्राम के निवासी न केवल अपने लिये बल्कि अन्य लोगों के लिये भी अन्न उत्पन्न करते हैं। थोड़े से लोग समस्त जन-संख्या के लिये अन्न इत्यादि उत्पन्न कर लेते हैं इसके फलस्वरूप शेष लोग कृषि उद्योग को छोड़ कर अन्य उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति में लगते जा रहे हैं।

पश्चिमी देशों में इसका अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। बड़े बड़े खेत बनाये गये और ट्रैक्टर तथा अन्य मशीनों के प्रयोग के फलस्वरूप थोड़े से व्यक्ति बहुत सा अन्न उत्पन्न कर लेते हैं। अमेरिका में १९४० ई० में औसत खेत का क्षेत्रफल १७३ एकड़ था § अन्य वैज्ञानिक साधनों का भी प्रयोग ये लोग करते हैं। यही कारण है कि पश्चिमी देशों में विशेषतः अमेरिका में नागरिक जन-संख्या तीव्र गति से बढ़ती जा रही है।

---

§ 'Statistical Abstract,' Bureau of the Census, 1942, p. 694.

भारत में अभी कृषि में उतनी क्रांति नहीं हो पाई है जितनी कि पश्चिमी देशों में। फिर भी कृषि में कुशलता बढ़ती जा रही है और अनेक योजनाओं के द्वारा अन्न का उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। कुछ लेखकों† का मत है कि भारत की नागरिक जन-संख्या बढ़ने के कारण-ग्रामों की आत्म-निर्भरता का लोप, जन-संख्या का भूमि पर दबाव और खेती में ह्रास हो रहा है, परन्तु मेरे विचार से ये कारण ऊपर से दिखाई पड़ते हैं। वास्तव में नागरिक जन-संख्या के बढ़ने का कारण साधनों का आधिक्य है। चूंकि साधनों का आधिक्य भारत में अधिक नहीं हो पाया है इसी लिये नागरिक जन-संख्या की वृद्धि अति मध्यम गति से हो रही है।

(ब) अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण (Favourable Geographical Environment)—साधनों का आधिक्य अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण पर भी आधारित है। जिन प्रदेशों में भौगोलिक पर्यावरण अनुकूल होता है वहाँ पर प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से होती है फलस्वरूप नगरों का विकास सम्भव हो जाता है। यही कारण है कि संसार के पहले नगर दजला फरात, नील, गङ्गा सिन्धु इत्यादि की घाटियों में बने। भारतवर्ष में गङ्गा यमुना के मैदान में १ लाख से अधिक संख्या वाले ३३ नगर (भारत में कुल ७५ हैं) पाये जाते हैं।*

(२) आवागमन के साधन (Means of Transportation)

नगरों के विकास का दूसरा प्रमुख कारक आवागमन के साधन हैं। नगर रूपी शरीर के शक्तिशाली पैर, आवागमन के साधन और साधनों का आधिक्य है। आवागमन के साधनों के बिना नगर व्यापार का केन्द्र नहीं बन सकता और न ही अन्न तथा वस्त्र का वितरण हो सकता है। उद्योग और व्यापार का विकास भी आवागमन के साधनों के अभाव में सम्भव नहीं हो सकता था।

पहले केवल जलमार्गों पर प्राचीन आवागमन के साधनों का प्रयोग होता था परन्तु इनसे नगरों का अधिक विकास सम्भव नहीं हो सका। शनैः शनैः औद्योगिक क्रांति के उपरान्त मोटर, रेल, वायुयान तथा जहाज का अन्वेषण हुआ। आवागमन के साधनों के बढ़ जाने के कारण कच्चे माल को नगरों तक पहुँचाना

---

† देखिये कैलाशनाथ शर्मा 'समाजशास्त्र के मूल सिद्धान्त' भाग १, किताब महल, इलाहाबाद (१९५५) पृष्ठ ११२.

* See G. S. Ghurye, 'Cities of India', Sociological Bulletin, March 1953. p. 47 and table I on p. 72.

सम्भव हो गया और वस्तुओं के दूर दूर तक वितरण की सुविधा के फलस्वरूप व्यापार और वाणिज्य का विकास सम्भव हो गया।

(३) उद्योग-धंधे (Industry)

उद्योग-धंधों के कारण नगरों का विकास तीव्र गति से सम्भव हो सका। उद्योग-धन्धे नगर रूपी शरीर के लिये रीढ़ की हड्डी के समान हैं। विद्युत द्वारा चालित कल कारखानों के विकास के फलस्वरूप उत्पादन के केन्द्र एक स्थान पर केन्द्रित उद्योग की नींव पड़ सकी। वेबर¶ ने फैक्ट्री-पद्धति या केन्द्रित उद्योग को उद्योग के विकास का चतुर्थ चरण बताया है। आधुनिक औद्योगिक नगर वाष्प (Steam) और विद्युत-शक्ति की देन है।

(४) व्यापार और वाणिज्य (Trade and Commerce)

नगरों का विकास केवल उद्योग धंधों के कारण ही नहीं बताया जा सकता क्योंकि आधुनिक मशीनों एवं विद्युत-शक्ति के आविष्कार के पूर्व भी बड़े-बड़े नगर पाये जाते थे। इस युग के पूर्व नगरों का विकास व्यापार और वाणिज्य पर आधारित था। आज भी व्यापार के बिना नगर का विकास सम्भव नहीं हो सकता। सिम्स (Sims) ने व्यापार के महत्व का वर्णन करते हुये लिखा है, "व्यापार नगर के अस्तित्व के लिये उतना ही आवश्यक है जितना कि एक प्राणी के लिए रक्त का परिचालन होता है।"* आधुनिक युग में भी व्यापार और वाणिज्य का महत्व बढ़ता जा रहा है और नगर का अस्तित्व इन पर ही आधारित है।

५ नागरिक कारक (Urban factors)

नागरिक जीवन के विकास के नागरिक कारक भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जिस प्रकार धन धन को खींचता है उसी प्रकार नागरिक जीवन और अधिक नागरिक जीवन की ओर अग्रसर करता है। नागरिक कारकों को निम्न प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है:—

¶ Weber, Adna F., 'The Growth of Cities, p. 185.

* "Trade is as necessary to the existence of the city as is the circulation of blood to an organism." N. L. Sims, 'Elements of Rural Sociology'. Third Ed., Thomas Y. crowell Company, New York (1947), p. 655.

(अ) राजनैतिक कारक (Political factor)—नगर आवागमन के साधनों का केन्द्र एवं उद्योग-धंधों एवं व्यापार का प्रमुख स्थान होता है जहाँ जीवन की आवश्यकतायें सरलता से पूर्ण की जा सकती हैं। इसी कारण राजसत्ताधारी अपने केन्द्र नगरों में ही बनाते हैं। राजधानी होने के कारण नगर का और भी अधिक विकास होता है क्योंकि वह उस प्रदेश का आकर्षण केन्द्र बन जाता है। सेना भी यहां पर अधिक मात्रा में रखी जाती है। इसके अतिरिक्त प्राय: प्रमुख कार्यालय भी राजधानी में स्थित होते हैं। उदाहरण के लिये अपने देश की राजधानी दिल्ली का भी विकास राजनैतिक कारण से हुआ है। भारत के अन्य राज्यों की राजधानियों की जन-संख्या तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। उदाहरण के लिये जयपुर को लीजिए जो कि संयुक्त राजस्थान की राजधानी १९४८ के उपरान्त बनी है। १९३१ से १९४१ के समय में जनसंख्या की वृद्धि केवल २२.२ प्रतिशत थी जबकि १९४१ से १९५१ के बीच जन-संख्या की वृद्धि ६५.३ प्रतिशत हुई।* १९५१ से १९६१ के बीच इसकी जन-संख्या की वृद्धि और भी अधिक तीव्र गति से होनी चाहिये, ऐसा मेरा विचार है। इसके विपरीत अजमेर की जन-संख्या पर कुछ न कुछ प्रभाव राजधानी न रहने का अवश्य पड़ेगा।

(ब) आर्थिक कारक (Economic factors)—नगर में आर्थिक क्षेत्र भी बहुत होता है और लोग सरलता से जीविकोपार्जन भी कर सकते हैं। ग्रामों में कृषि या उससे सम्बन्धित व्यवसायों को छोड़ कर अन्य व्यवसाय नहीं पाये जाते परन्तु नगरों में व्यवसायों की भरमार होती है। फलस्वरूप मनुष्य नगरों में आकर बस जाते हैं।

(स) नागरिक सुविधायें या सांस्कृतिक कारक (Urban facilities or Cultural factor)—नगरों में मनुष्य की उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अनेक संस्थायें होती हैं जिनका चिन्ह भी ग्रामों में नहीं मिलता। महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, मेडिकल कालेज, इंजिनियरिंग स्कूल तथा अन्य उच्च कोटि की शिक्षण संस्थायें नगरों में ही पायी जाती हैं। इनके अतिरिक्त अन्य सांस्कृतिक संस्थायें भी नगरों में पायी जाती हैं।

ग्रामों में मनुष्य अपने अवकाश के समय का कोई भी सदुपयोग नहीं कर पाता परन्तु नगरों में अनेक सुविधायें उपलब्ध होती हैं। मनोरंजन के आधुनिक साधन

* Figures quoted from G. S. Ghurye's article 'Cities of India' in Sociological Bulletin, March 1953 issue, p. 76,

जैसे चलचित्र, संगीत एवं नाट्यशालायें तथा अन्य सभायें, नागरिक जीवन को और भी मनोरंजक बना देते हैं।

(द) मनोवैज्ञानिक कारक या नगर का चाव (Psychological factor or Lure of city life)—नागरिक विकास में मनोवैज्ञानिक कारक भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कुछ लोगों की मानसिक अवस्था ऐसी निर्मित हो जाती है कि सब सुविधाओं के होते हुये भी वे ग्राम में रहना पसंद नहीं करते। नगर की तड़क भड़क एवं तीव्र गति से चलने वाला जीवन उन्हें अच्छा लगता है और वे इसके बिना जीवित नहीं रह सकते। इसी मनःस्थिति के कारण शिक्षित युवक ग्रामों में नहीं जाना चाहते और नगरों में रहने के लिये कोई भी मूल्य देने के लिये तत्पर रहते हैं। नागरिक जीवन उत्तेजना एवं आनन्द उत्पन्न करता है।

नागरिक जीवन के प्रति यह चाव नागरिक जीवन को स्थायित्व प्रदान करता जा रहा है।

(य) सुरक्षा की भावना (Sense of Security)—नगर में सुरक्षा की भावना उत्पन्न हो जाती है। यह सुरक्षा प्राकृतिक एवं सामाजिक दोनों ही प्रकार के ध्येयों के प्रति होती है। प्राकृतिक विपदायें, जो कि ग्रामीण जीवन में नित्यप्रति का अनुभव होती हैं, नगर में उनकी रोकथाम के लिये अनेक व्यवस्थायें होती हैं। समाज के रूढ़िवादी विचारों से ऊब कर भी मनुष्य नगर में स्वतन्त्रता की सांस लेते हैं।

(र) जीवन की अवधि में वृद्धि (Increase in Life Scale)—नगरों में मानव जीवन की अवधि बढ़ गई है। चिकित्सा विज्ञान एवं अन्य वैज्ञानिक अनुसंधानों की क्रांतिमयी प्रगति के कारण मनुष्य अधिक दिन जीवित रह सकता है और ये सुविधायें नगरों में ही सरलता से उपलब्ध हो सकती हैं।

इन अनेक कारकों पर नागरिक जीवन का विकास आधारित है।

नागरिक जीवन के आधार (Bases of Urban Life)

नागरिक जीवन के निम्न प्रमुख आधार हैं:—

(१) व्यवसायों की बहुलता (Multiplicity of occupations)—नागरिक जीवन ग्रामीण जीवन के समान केवल एक ही व्यवसाय पर आधारित नहीं है। नगरों में अगणित व्यवसाय पाये जाते हैं फलस्वरूप व्यक्तियों को

भिन्न भिन्न प्रकार के जीवन का अनुभव होता है क्योंकि नगर में विभिन्न प्रकार के सामाजिक जीवन पाये जाते हैं।

(२) जनसंख्या की विभिन्नता (Heterogenity of population)—नगरों में जन-संख्या विभिन्न प्रकार की पायी जाती है। यहाँ पर विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय, वर्ग, जाति, प्रजाति के व्यक्ति पाये जाते हैं। यहां पर आर्थिक विषमता भी अधिक पायी जाती है। जन-संख्या की अनेकता के कारण विभिन्न प्रकार के सामाजिक जीवनों में संघर्ष एवं आदान प्रदान होता रहता है।

(३) जन-संख्या का आधिक्य (Surplus of population)—नगरों में जन-संख्या का आधिक्य होता है। आबादी बड़ी घनी होती है। जन-संख्या का घनत्व अधिक होने के कारण अनेक प्रक्रियायें प्रारम्भ हो जाती हैं जिनका हम आगे विवरण देंगे।

(४) श्रम-विभाजन और विशेषीकरण (Division of Labour and Specialisation)—व्यवसायों की बहुलता होने के कारण सम्बन्धित नगर में श्रम-विभाजन एवं विशेषीकरण पाये जाते हैं। नगर में इतने कार्य होते हैं कि कोई व्यक्ति सारे कार्य नहीं कर सकता बल्कि कुछ अतिरिक्त कार्य (एक विशिष्ट कार्य को छोड़ कर) करना भी कठिन हो जाता है क्योंकि उसे करने के लिये विशेष कुशलता की आवश्यकता पड़ती है। सारा कार्य श्रम-विभाजन पर आधारित होता है और अत्यधिक विशेषीकरण पाया जाता है।

(५) अन्योन्याश्रितता (Inter-dependence)—व्यवसायों की बहुलता एवं श्रम-विभाजन और विशेषीकरण के फलस्वरूप नगर निवासियों में अत्यधिक अन्योन्याश्रिता पायी जाती है। इसके कारण अनेक सहयोग समितियों का निर्माण हो जाने से अन्य कार्यों पर भी प्रभाव पड़ता है।

नगरों का वर्गीकरण (Classification of Cities)

नगरों का अनेक भागों में वर्गीकरण किया जा सकता है यद्यपि कोई भी दो नगर एक दूसरे के बिल्कुल अनुरूप नहीं होते, फिर भी उनमें साम्यता पायी जाती है। यह वर्गीकरण उनके प्रमुख व्यवसायों पर आधारित है। इसके अनुसार निम्न वर्गीकरण हो सकता है:—

१. उत्पादन केन्द्र (Production Centres)—उन नगरों को उत्पादन के केन्द्र कहते हैं जहाँ पर मौलिक उत्पादन होता है। मौलिक उत्पादय उन उद्योगों को कहते हैं जो प्रकृति से वस्तुएँ प्राप्त करते हैं जैसे खानें खोदना,

मछली पकड़ना इत्यादि। द्वैतियक उत्पादन उन उद्योगों को कहते हैं जिनमें खाद्य पदार्थों से नवीन वस्तुएँ निर्मित की जाती हैं। जिन नगरों में प्राथमिक या द्वैतियक उत्पादन का कार्य विशेष रूप से होता है उन्हें उत्पादन केन्द्र कहते हैं। उदाहरण के लिये जमशेदपुर, कलकत्ता, कानपुर, बम्बई इत्यादि।

२. व्यापार और वाणिज्य के केन्द्र (Centres of Trade and Commerce)—वे नगर जिनमें व्यापार और वाणिज्य की अधिकता होती है और बड़ी बड़ी मंडियां स्थापित हो जाती हैं उन्हें व्यापार और वाणिज्य के केन्द्र कहते हैं। ये वितरण के केन्द्र भी बन जाते हैं। उदाहरण के लिये वेनिस, एमस्टर्डम, न्यूयार्क, लन्दन, बम्बई, दिल्ली, ब्यावर इत्यादि।

३. राजनैतिक राजधानियाँ (Political Capitals)—राजनैतिक राजधानियां उन नगरों को कहते हैं जहां पर राज्यों के अधिकृत केन्द्र स्थापित किये जाते हैं। औद्योगिक क्रांति के पूर्व राजनैतिक राजधानियाँ और व्यवसायिक राजधानियां प्रायः एक ही हुआ करती थीं परन्तु अब यातायात एवं आवागमन के साधनों की वृद्धि के कारण पृथक् पृथक् होना सम्भव हो गया है। मास्को, पेकिंग, दिल्ली, जयपुर, लखनऊ, पटना, भूपाल इत्यादि राजनैतिक राजधानियों के उदाहरण हैं।

४. सांस्कृतिक केन्द्र (Cultural Centres)—कुछ नगर सांस्कृतिक महत्व के होते हैं। इन्हें निम्न भागों में बांटा जा सकता है:—

(अ) धार्मिक केन्द्र (Religious Centres)—कुछ स्थान धार्मिक केन्द्र होते हैं जैसे वाराणसी, गया, पुरी, रामेश्वरम्, प्रयाग इत्यादि।

(ब) शिक्षण केन्द्र (Educational Centres)—कुछ नगर शिक्षा के लिये प्रसिद्ध होते हैं जैसे कोलम्बिया, ऑक्सफोर्ड, हेडलबर्ग (Heidelberg) इत्यादि।

(स) अन्य सांस्कृतिक केन्द्र (Other Cultural Centres)—कुछ नगर ऐतिहासिक कारणों से प्रसिद्ध होते हैं। इसके अतिरिक्त भी अन्य सांस्कृतिक कार्यों के लिये कुछ स्थान प्रसिद्ध होते हैं जैसे बम्बई चलचित्र के लिये।

५. स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के केन्द्र (Health and Recreation Resorts)—कुछ नगर स्वास्थ्य के केन्द्र या मनोरंजन के केन्द्र होते हैं। यहाँ पर लोग मनोरंजन एवं आनन्द के लिये आते हैं। उदाहरण के लिये नैनीताल, मसूरी, माउन्ट आबू इत्यादि।

६. विविध केन्द्र (Diversified Centres)—कुछ नगर ऐसे होते हैं जहां पर अनेक प्रकार के कार्य होते हैं। आधुनिक युग में अधिकांश ऐसे ही नगर पाये जाते हैं।

भारत में नगरों का विकास (Growth ot Cities in India)

नगरों का विकास भारत में अति मध्यम गति से हो रहा है। इस पर भी यह उल्लेखनीय है कि नागरिक जन-संख्या में बराबर वृद्धि हो रही है। यह निम्न चार्ट से स्पष्ट है।

ग्रामीण तथा नागरिक जन संख्या*

वर्ष	ग्रामीण जन-संख्या	नागरिक जन-संख्या	गत दस वर्षों में वृद्धि (नागरिक जन-संख्या)
१८७२	९१·३	८·७	
१८८१	९०·७	९·३	+०·६
१८९१	९०·६	९·४	+०·१
१९०१	९०·०	१०·०	+०·६
१९११	९०·६	९·४	+०·६
१९२१	८८·७	११·३	+१·९
१९३१	८७·९	१२·१	+०·८
१९४१	८६·१	१३·९	+१·८
१९५१	८२·७	१७·३	+३·४

* "Figures from the year 1872 to 1911 are quoted from Kingsley Davis, 'Population of India and Pakistan,' Princeton University Press, (1951), p. 127, and from 1921 onwards from 'INDIA, 1957.'

१९११ ई० में नागरिक जन-संख्या में ह्रास हुआ है। यह ह्रास प्लेग तथा अन्य महामारियों के फलस्वरूप हुआ था। इसके अतिरिक्त नागरिक जन-संख्या की वृद्धि बराबर होती रही है यद्यपि मात्रा बहुत अधिक नहीं है। तालिका स्पष्ट है कि १९५१ में ३·४ प्रतिशत जन-संख्या की वृद्धि हुई। है जो कि १९४१ से तीन गुनी है। इससे स्पष्ट है कि नागरिक जन-संख्या की वृद्धि स्वतन्त्रता के उपरान्त अधिक बढ़ गई है।

१९४१ में १ लाख से अधिक जन-संख्या वाले नगर ५८ थे। १९५१ की जनगणना के अनुसार इन नगरों की संख्या ५८ से बढ़कर ७५ हो गई। १० लाख से अधिक जन-संख्या वाले नगर बम्बई, मद्रास, कलकत्ता व हैदराबाद हैं।

ग्रामीण एवं नागरिक जीवन में अन्तर
(Contrast between Rural and Urban Life)

ग्रामीण और नागरिक जीवन में अन्तर करना इतना सरल नहीं है जितना कि हम सब समझते हैं। प्रथम तो यह ही निश्चित नहीं है कि किसे ग्राम कहें और किसे नगर। इसके कारण तुलना करने में अनेक कठिनाइयां होती हैं। इन दोनों में अन्तर दिखाने के पूर्व हम तुलना में आने वाली कठिनाइयों पर प्रकाश डालेंगे।

ग्रामीण एवं नागरिक जीवन की तुलना में कठिनाइयाँ
(Difficulties in comparing Rural and Urban Life)

ग्रामीण और नागरिक जीवन की तुलना में निम्न प्रमुख कठिनाइयां उपस्थित होती हैं:—

१. सार्वभौमिक परिभाषा का अभाव (Lack of Universal Definition)—ग्राम और नगर की परिभाषा करना बड़ा कठिन है। भिन्न भिन्न राज्यों में भिन्न भिन्न परिभाषायें की गयी हैं। फ्रांस में दो हजार से अधिक जन-संख्या वाली बस्तियां, बेल्जियम में पांच हजार से अधिक, मिश्र में ग्यारह हजार से अधिक, संयुक्त-राज्य अमेरिका में ढाई हजार से अधिक और जापान में तीस हजार से अधिक जन-संख्या वाली बस्तियों को नगर मानते हैं। इससे स्पष्ट है कि कोई भी सार्वभौमिक परिभाषा नहीं है। काम चलाने के लिये इस प्रकार की सीमायें निर्धारित कर दी जाती हैं। यह तो जन-संख्या के आधार पर परिभाषा हुई, इसी प्रकार भिन्न भिन्न समाज-शास्त्रियों ने भिन्न भिन्न आधार

लिये हैं। इनमें से प्रमुख आधार जन संख्या का घनत्व, सामाजिक संबंध (जहाँ पर द्वैतियक संबंध पाये जायें वह नगर होता है और जहाँ पर प्राथमिक सम्बन्ध पाये जायें वह ग्राम) और व्यवसाय (जहाँ पर व्ययसायों की बहुलता पायी जाय वह नगर और जहां केवल कृषि का व्यवसाय हो वह ग्राम होता है) इत्यादि हैं। इनसे भी कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं बन पाती। बर्गल ने बड़ी सुन्दर बात लिखी है, "ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि नगर क्या है परन्तु किसी ने भी संतोषजनक परिभाषा नहीं की है।"* जब कोई निश्चित परिभाषा ही नहीं है तो ग्राम और नगर के बीच की अन्तर रेखा मनमाने ढंग से खींची जाती है, इस लिए इन दोनों की तुलना करने में बड़ी कठिनाई होती है।

२. ग्रामीण और नागरिक-अंशों का अन्तर (Rural and Urban—a matter of degree)—ग्रामीण और नागरिक जीवन में बिल्कुल विभिन्नता नहीं पायी जाती बल्कि कुछ अंशों का अन्तर पाया जाता है। प्रत्येक नगर में कुछ न कुछ ग्राम के तत्व पाये जाते हैं और प्रत्येक ग्राम में नगर के। ग्राम और नगर एक स्पेक्ट्रम (Spectrum) के दो छोर हैं। अत्यधिक बड़े मुख्य नगर (Metropolis), नगर (City), कस्बा (Town) बड़े ग्राम (Big Villages), साधारण ग्राम (Village), पुरवे (Hemlets) और बस्तियां (Settlements) एक स्पेक्ट्रम के विभिन्न रंगों के समान हैं। बस्तियां और विशाल नगर इसके दो छोर हैं। ग्राम और नगर में स्पष्ट अन्तर न होने के कारण तुलना में बड़ी कठिनाई होती है। मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "परन्तु दोनों के बीच इतना स्पष्ट अन्तर नहीं है कि यह बताया जा सके कि कहाँ पर नगर समाप्त होता है और ग्राम प्रारम्भ होता है।"†

३. नगर में विभिन्न पर्यावरण (Heteregenous Environments in a city)—तीसरी कठिनाई यह है कि एक नगर में विभिन्न पर्यावरण पाये

* "Everybody seems to know what a city is but no one has given a satisfactory definition." E. E. Bergel, 'Urban Sociology,' Mc Graw-Hill Series (1955). p. 5.

† "But between the two there is no sharp demarcation to tell where city ends and country begins." MacIver and Page, 'Society,' p. 311.

जाते हैं, इसलिये किस विशिष्ट पर्यावरण से तुलना की जाय। यहां पर परस्पर विरोधी एवं असम्बद्ध पर्यावरण पाये जाते हैं। विभिन्न जातियों, प्रजातियों एवं वर्गों के लोग नगर में पाये जाते हैं। ये लोग भिन्न भिन्न व्यवसायों में संलग्न रहते हैं इसलिये मिलने जुलने का भी अवसर प्राप्त नहीं होता। इन कारणों के फलस्वरूप एक नगर में अनेक प्रकार के पर्यावरण पाये जाते हैं।

४. नगर और ग्राम की परिवर्तनशील प्रकृति (The changing character of City and Village)—इनकी तुलना में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ये सदैव परिवर्तित होते रहते हैं। इनकी प्रकृति गतिशील है। एक ओर ग्रामों पर नगर का प्रभाव बराबर पड़ता रहता है और दूसरी ओर नागरिक जीवन में ग्रामीण तत्व प्रवेश करते रहते हैं। इन कारणों से इनके स्वरूप कभी भी स्थायी नहीं होते।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि नगर और ग्राम में स्पष्ट अन्तर की रेखा खींचना अति कठिन है। गिस्ट और हेलबर्ट ने भी लिखा है, "अतः ग्रामीण और नागरिक जीवन का सुपरिचित विभाजन सामुदायिक जीवन के तथ्यों पर आधारित होने की अपेक्षा अधिकांश रूप से एक सैद्धान्तिक धारणा है।"†

यह सत्य है कि ग्रामीण और नागरिक जीवन में स्पष्ट अन्तर की रेखा खींचना बड़ा कठिन है फिर भी दोनों के सामाजिक जीवन में स्पष्ट अन्तर पाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति इन अंतरों को अनुभव करता है इसलिये इनकी तुलना करना बड़ा लाभप्रद होता है और ऐसा सरलता से किया जा सकता है। अब हम ग्रामीण और नागरिक जीवन के विभिन्न पहलुओं के अन्तरों पर प्रकाश डालेंगे। हमें यहाँ पर एक बात स्मरण रखनी है कि ये अन्तर अध्ययन के लिये हैं जो कि शुद्ध ग्रामीण और शुद्ध नागरिक जीवन में पाये जाते हैं परन्तु वास्तव में इस प्रकार का शुद्ध नागरिक या शुद्ध ग्रामीण जीवन मिलना कठिन है।

---

†"Thus the familiar dichotomy between 'rural' and 'urban' is more of a theoritical concept than a devision based upon the facts of community life." Gist and Halbert, 'Urban Society, (1954)' p. 3.

ग्रामीण और नागरिक जीवन के भेद
(Contrast between Rural and Urban Life)

ग्रामीण और नागरिक जीवन के मूलआधारों का विवरण हम पहले दे चुके हैं। इन्हीं के कारण ग्रामीण और नागरिक जीवन में भेद पाये जाते हैं इनके जीवन में प्रमुख भेद निम्न हैं:—

१. सामाजिक संगठन (Social Organisation)

नागरिक एवं ग्रामीण जीवन में सामाजिक संगठन विभिन्न स्तरों में मिलता है।

(अ) परिवार (Family)—ग्रामों में परिवार बड़े शक्तिशाली होते हैं। ग्रामीण समुदाय परिवार पर आधारित होता है। कृषि में पुरुष अधिक महत्वपूर्ण होता है इसलिये परिवार पितृसत्तात्मक (Patriarchal) होते हैं। दुबे ने लिखा है, "प्रारम्भिक पितृवंशीय एवं पितृस्थानीय या संयुक्त परिवार ग्रामीण भारत के इस भाग में साधारणतया मिलते हैं।"* संयुक्त परिवारों में कठोर अनुशासन होता है और सदस्यों के संबंध अति घनिष्ट होते हैं। साधारणतया परिवार की सदस्यता छोड़ना बड़ा कठिन होता है। कई पीढ़ियों तक लोग एक ही परिवार में साथ साथ रहते है।

नगरों में परिवार उतना शक्तिशाली नहीं होता जितना कि ग्रामों में होता है। नागरिक समुदाय परिवार पर आधारित न होकर व्यक्ति पर होता है। यहाँ पर व्यक्ति को महत्व दिया जाता है। यद्यपि पितृसत्तात्मक परिवार पाये जाते हैं तथापि स्त्रियों और बच्चों का बड़ा महत्व होता है। संयुक्त परिवार नगर में टूट रहे हैं। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में भी नगरों में संयुक्त परिवार की जड़ें हिल रही हैं। व्यक्तिगत परिवारों की बहुलता होती है। परिवार के अधिकांश कार्य अन्य संस्थाओं ने ले लिये है। परिवार प्रेम एवं वात्सल्य पर टिका हुआ है। नागरिक परिवारों में अनुशासन भी अधिक कठोर नहीं होता। परिवार के सदस्यों के संबंध अधिक घनिष्ट नहीं होते क्योंकि उन्हें मिलने जुलने का अवसर बहुत कम समय के लिये प्राप्त होता है। इतना होते हुये भी नगरों में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसी समिति में मनुष्य को प्राथमिक संबंध स्थापित करने का अधिक अवसर प्राप्त होता है।

---

* "The patrilineal and patrilocal elementary or joint family is the normal type of family unit met with in this part or rural India." S. C. Dubey, 'Indian Village,' Routledge & Cegan Paul Ltd. London. p. 132.

(ब) विवाह (Marriage)—ग्रामों में विवाह एक पारिवारिक महत्व का विषय है। यहाँ पर विवाह दो व्यक्तियों में नहीं, दो परिवारों में होता है। भारत के ग्रामों में अति प्राचीन नियमों का पालन करना पड़ता है। प्रेम और रोमांस नाम की वस्तु ग्रामों में नहीं मिलती। इसे लोग घृणा की दृष्टि से देखते हैं मनुष्य परिवार के आधीन होता है इसलिये अपने साथी के चुनने में उसकी कोई आवाज नहीं होती। ग्रामों में विवाह परिवार की आवश्यक्ता एवं स्तर के अनुसार निश्चित होते हैं।

नगरों में व्यक्ति तनिक स्वतन्त्र होता है इसलिये विवाह परिवार पर आधारित न होकर व्यक्ति पर आधारित होते हैं। अपने जीवन साथी को चुनने में व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। प्रेम और रोमाँस को लोग घृणा की दृष्टि से नहीं देखते बल्कि उसे विवाह का एक सभ्य एवं उच्च स्वरूप मानते हैं। विवाह व्यक्ति की आवश्यक्ता, पसंद एवं स्तर के अनुसार होता है।

(स) स्त्रियों की अवस्था (Status of Woman)—ग्रामों में परिवार समस्त कार्यों का संचालन करता है और उनके सदस्य केवल कार्य करने वाले होते हैं। कृषि के व्यवसाय में पुरुष प्रधान होता है इसलिये स्त्री का स्थान ऊँचा नहीं होता। वे परिवार पर आधारित रहती हैं। उन्हें विशेष स्वतन्त्रता भी नहीं होती आर्थिक तथा सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों में वे बुरी तरह से पिछड़ी हुई हैं। भारत के ग्रामों की स्त्रियों की दशा तो और भी खराब है। यहाँ पर स्त्रियां दासियों के समान रहती हैं।

नगरों में स्त्रियों की अवस्था समाज में अच्छी होती है। वह परिवार की गृहणी एवं स्वामिनी होती है। उसे अन्य स्वतन्त्रतायें भी प्राप्त होती हैं। वह स्वतन्त्र एवं स्वावलम्बी भी हो सकती है क्योंकि नगरों में उसे जीविकोपार्जन के साधन उपलब्ध हैं।

(द) पड़ौस (Neighbourhood)—ग्रामों में पड़ौस एक महत्व की वस्तु है। वहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति अपने पड़ौसियों के विषय में जानता है क्योंकि उनकी संख्या कम होती है और उन्हें मिलने जुलने के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। साधारणतया पड़ौस में समान संस्कृति के लोग बसे होते हैं और वे एक ही प्रकार के व्यवसाय में संलग्न होते हैं। इन कारणों से उनकी समस्यायें समान होती हैं। विशेष संस्थाओं के अभाव में उन्हें एक दूसरे का हाथ भी बटाना पड़ता है। प्रायः पड़ौस के व्यक्तियों में परिवार सरीखे संबंध स्थापित हो जाते

हैं। भारतीय ग्रामों में पड़ौस एक प्रकार से विस्तृत परिवार ही होता है क्योंकि समस्त रिश्तेदार एक ही बस्ती में बस जाते हैं और यदि कुछ परिवार रिश्तेदार न हुए तो समान जाति के तो होते ही हैं। बस्तियां अधिकांश रूप से जातियों के अनुसार बसती हैं। इनके फलस्वरूप इनके सम्बन्ध अपने पड़ौसियों से घनिष्ट होते हैं और एक दूसरे के सुख दुख में भाग लेते हैं।

नगरों में पड़ोस महत्वपूर्ण अवश्य होता है परन्तु इतना नहीं जितना कि ग्रामों में। जन-संख्या के अधिक होने के कारण व्यक्ति सारे पड़ौसियों को पहचानता भी नहीं है। इसके अतिरिक्त सबके व्यवसाय एवं कार्य के स्थान भिन्न भिन्न होते हैं इसलिये उन्हें एक दूसरे के सम्पर्क में आने के अवसर भी कम ही प्राप्त होते हैं। एक ही पड़ौस में विभिन्न संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं। मोहल्ले की रक्षा के अतिरिक्त (वह प्रायःपुलिस करती है) और कोई भी सामान्य स्वार्थ नहीं होते हैं। इनके कारण सम्बन्ध घनिष्ट नहीं हो पाते। मनुष्य नगर में मशीन के समान कार्य करता है। और उसका क्षेत्र इतना विस्तृत होता है कि वह 'हलो मित्रता' (Halo Friendship) के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं जानता। एक पड़ौसी दूसरे पड़ौसी से उदासीन रहता है और एक दूसरे के सुख दुख में हिस्सा नहीं बंटा पाता। कई बार ऐसा देखा गया है कि एक घर में मुर्दा पडा हुआ है और उसके बगल वाले घर में रेडियों पर संगीत का आनन्द लिया जा रहा है।

(य) समुदाय (Community)—ग्रामों में सामुदाय अधिक संगठित होते हैं। वहां पर घनिष्ट संबंध होने के कारण 'हम की भावना' या सामुदायिक भावना शीघ्र विकसित हो जाती है और उन्हें अपनी भूमि से अत्यधिक प्रेम भी होता है क्योंकि वह उन्हें जीवन प्रदान करती है। ग्रामों में समुदाय का अनुशासन भी कठोर होता है। ग्राम पंचायत एक महत्वपूर्ण संगठन है।

नगरों में समुदाय अस्थायी होते हैं। सामुदायिक भावना का अभाव रहता है और भूमि से लोगों को अधिक प्रेम नहीं होता क्योंकि वे अधिक गतिशील होते हैं। नगरों में समुदाय का अनुशासन प्रायः शून्य होता है।

(र) सामाजिक स्तरण (Social Stratification)—सामाजिक स्तरण ग्रामों में वंशपरम्परागत अधिक पाया जाता है। आर्थिक आधार पर वर्ग दो ही होते हैं—जमींदार और किसान। भारत के ग्रामों में जाति प्रथा बड़ी कठोर रूप में पायी जाती है।

नगरों में सामाजिक स्तरण वंशपरम्परागत अधिक नहीं होते। आर्थिक आधार पर अनेक विषमतायें पायी जाती हैं। यहां पर अत्यधिक धनी और अति दरिद्र दोनों ही पाये जाते हैं। बोगर्डस ने लिखा है, "अत्यधिक वर्ग विषमतायें नगर का लक्षण है।" ×

२. सामाजिक नियंत्रण (Social Control)

ग्रामों में परिवार एवं समुदाय अत्यधिक शक्तिशाली होते हैं और जन-संख्या कम होने के कारण प्राथमिक सम्बन्ध पाये जाते हैं। इनके फलस्वरूप सामाजिक नियंत्रण के प्राथमिक साधन प्रयोग में लाये जाते हैं। प्रथम तो पितृ-सत्तात्मक परिवार का ही नियंत्रण काफी मात्रा में होता है। लिंग सम्बन्धी अपराध परिवार की एकता एवं स्थायित्व के विरुद्ध अपराध समझे जाते हैं और इनके लिये कठोर दण्ड दिया जाता है। परिवार से बहिष्कृत होना मृत्यु दण्ड है। रीति रिवाज एवं रूढ़ियाँ अधिकांश व्यवहार को नियंत्रित करती हैं। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "ग्रामीण समुदाय में प्रथा शासक होती है और जन-रीतियाँ एवं रूढ़ियां अधिकाँश व्यवहार को नियंत्रित करती हैं।"* सामाजिक नियंत्रण के अनौपचारिक साधन प्रयोग में लाये जाते हैं। धार्मिक भावना एवं ईश्वर का भय भी इन पर सामाजिक नियंत्रण रखता है। सामाजिक नियंत्रण के औपचारिक साधनों का प्रयोग ग्रामों में बहुत कम होता है।

नगरों में सामाजिक नियंत्रण एक बहुत बड़ी समस्या है। नगरों में जन-संख्या इतनी अधिक होती है कि पहचानने वालों की संख्या बहुत कम होती है और प्राथमिक सम्बन्ध तुलनामात्र के ही होते हैं। परिवारिक नियंत्रण रखना भी कठिन हो जाता है। नगर में दो प्रकार के सामाजिक संसार पाये जाते हैं—प्रथम उन लोगों का जो कि शारीरिक दृष्टि से समीप होते हैं परन्तु सामाजिक दृष्टि से अनभिज्ञ एवं अपरिचित और द्वितीय संसार मित्रों और परिचित व्यक्तियों का। इन दो संसारों में रहने के कारण उसे दो ओर से आश्रय प्राप्त होता हैं। प्राथमिक समूह या मित्रों, सम्बन्धियों एवं परिचितों के नियंत्रण से व्यक्ति कभी भी मुक्त हो सकता है। किंग्सले डेविस ने उचित ही लिखा है, "वह जब भी चाहे, अपरिचितों के

× "Class extremes characterize the city." Bogardus, 'Sociology,' p. 144.

* In the rural community, custom is king; the folkways and mores control most of behavior." Biesanz and Biesanz 'Modern Society,' p. 114.

सागर में विलीन होकर किसी भी प्राथमिक समूह के कठोर नियंत्रण से बच सकता है।"† नगर में नवीन प्रकार के सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता पड़ती है। नगरों में विभिन्नता, गतिशीलता एवं अनभिज्ञता के कारण मनुष्य बड़ी सरलता से प्राथमिक नियंत्रण से बच जाता है। इसके फलस्वरूप नागरिक समाज को औपचारिक एवं संगठित सामाजिक नियंत्रण की शरण लेनी पड़ती है। विधियाँ और कानून, पुलिस, कचहरी, गुप्तचर एवं बन्दीगृह इत्यादि का भय मनुष्य के व्यवहार को नियंत्रित करता है। इनके द्वारा यद्यपि मनुष्य का सार्वजनिक व्यवहार कठोरता से नियंत्रित हो जाता है तथापि उसे व्यक्तिगत व्यवहार में अत्यधिक स्वतन्त्रता रहती है। विभिन्न संस्कृतियों के व्यक्तियों के बसने के कारण कोई सामान्य व्यवहार बन भी नहीं पाता है।

सामाजिक सम्बन्ध (Social Relationships)

ग्रामों एवं नगरों में सामाजिक सम्बन्ध भी भिन्न पाये जाते हैं। अब हम वैयक्तिक संबंध एवं सामाजिक समूहों पर प्रकाश डालेंगे।

(अ) वैयक्तिक संबंध (Personal Relationship)—ग्रामों में जन-संख्या कम होती है। इसके फलस्वरूप लोगों में व्यक्तिगत एवं प्रत्यक्ष सम्पर्क सरलता से स्थापित होता है। इनका व्यवसाय समान होने के कारण नित्य प्रति एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता पड़ती रहती है। इस प्रकार अत्यधिक सम्पर्क में आते रहने के कारण वे एक दूसरे से पूर्णतया परिचित होते हैं। अतः इनमें वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। किसी भी व्यक्ति का व्यवहार पूर्ण होता है।

नगरों में वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित होना कठिन हो जाता है क्योंकि वहाँ पर जन-संख्या अधिक होती है और भिन्न भिन्न कार्यों के लिये भिन्न भिन्न व्यक्तियों से कार्य पड़ता रहता है। नगरों में द्राध्यिक अर्थ व्यवस्था (Money Economy) पायी जाती है। व्यक्ति के कार्य से प्रयोजन होता है जिसे द्रव्य के द्वारा कराया जा सकता है, व्यक्ति से कोई प्रेम नहीं होता फलस्वरूप वैयक्तिक सम्बन्ध नहीं विकसित हो पाते और अवैयक्तिक सम्बन्ध (Impersonal Relations) ही स्थापित हो पाते हैं। गिस्ट और हेलबर्ट

† "He can escape the oppressive control of any primary group when he wishes, simply by disappearing into the sea of strangers." K. Davis, 'Human Society,' p. 331.

ने लिखा है, "नगर वैयक्तिक सम्बन्धों की अपेक्षा अवैयक्तिक सम्बन्धों को प्रोत्साहन देता है।"† नागरिक जीवन पर यन्त्रीकरण (Mechanization) का भी गहरा प्रभाव पड़ा है। समस्त मानव सम्बन्ध मशीन की भांति समझे जाते हैं। व्यक्ति विशेष का कोई विशिष्ट स्थान नहीं होता केवल पद का सम्मान एवं स्थान होता है। नगरों में व्यक्ति को समझना सम्भव भी नहीं है क्योंकि इसके लिये समय और अवसर दोनों का ही अभाव रहता है। सम्पूर्ण व्यवस्था इस प्रकार बनी हुइ है कि कोई कुछ जानने का प्रयोजन भी नहीं करता। किंग्सले डेविस ने बड़े सुन्दर शब्दों में इस प्रक्रिया का वर्णन इस प्रकार किया है, "हम एक व्यक्ति के विषय में यह देख कर कि वह अति अल्प समय में किस प्रकार का दिखाई पड़ता है, किस प्रकार बोलता है और किस प्रकार कार्य करता है, निर्णय कर लेते हैं क्योंकि बिना उसको जाने हुये, बिना किसी अन्य व्यक्ति को, जो उसे जानता हो, जाने हुये और बिना अन्य बातों को ध्यान में रखते हुये, हम इसके अतिरिक्त और कुछ कर भी नहीं सकते।"× प्रत्येक व्यक्ति का विषयात्मक (Objective) विश्लेषण होता है। लोग यह जानने की चेष्टा करते हैं कि इस व्यक्ति का क्या कार्य है—डॉक्टर, प्राध्यापक, आचार्य, व्यापारी, धनी, दरिद्र इत्यादि। सम्बन्धों में अत्यधिक बनावट होती है। कोई व्यक्ति अपने मन में भले ही शत्रुता रखता हो परन्तु बाह्य रूप में वह उसे प्रकट नहीं होने देता।

(ब) सामाजिक समूह (Social Group)—ग्रामों में प्राथमिक सामाजिक समूह पाये जाते हैं। अधिकाँश समय परिवार एवं मित्र मंडली में ही बीत जाता है। सम्पूर्ण आवश्यकतायें इन्हीं प्राथमिक समूहों में पूरी हो जाती है।

नगरों में यद्यपि प्राथमिक समूह पाये जाते हैं तथापि मनुष्य द्वैतियक समूहों (Secondary Groups) से अधिक बँधा होता है। अनेक समितियों का

---

† "The city....., encourages impersonal rather than personal relationships." Gist and Halbert, 'Urban Society,' p. 263.

× "We Judge the person by how he looks, how he speaks, and how he acts—in a brief moment of time; because, not knowing anyone else who knows him, and not caring anyway, we can do nothing else." Kingsley Davis, 'Human Society,' p. 330.

वह सदस्य होता है क्योंकि इसके बिना उसकी आवश्यकतायें पूरी नहीं हो सकतीं। अपनी रुचि के अनुसार वह किसी भी समिति का सदस्य बन सकता है और जब चाहे तब उसे छोड़ सकता है।

४. सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी कार्य (Social Interaction)

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी कार्य भी नगर और ग्राम में भिन्न भिन्न सामाजिक जीवन को जन्म देते हैं। इन कार्यों से उत्पन्न प्रक्रियायें भी दोनों में विभिन्न प्रकार से कार्य करती हैं।

(अ) सामाजिक सम्बन्ध (Social Contacts)— ग्राम में सामाजिक सम्बन्धों की अत्यधिक न्यूनता होती है क्योंकि उनका क्षेत्र सीमित है। सामाजिक सम्बन्धों का यह अभाव ग्रामीण जीवन का एक प्रमुख दोष है। इसके कारण उनका दृष्टिकोण सीमित रहता है और उनका समाज प्रगति नहीं कर पाता। कूप मंडूकता की भावना विकसित हो जाती है। ग्रामीण सामाजिक सम्बन्ध अधिक स्थायी होते हैं।

नगरों में सामाजिक सम्बन्धों की भरमार होती है। अनेक व्यक्तियों से सम्बन्ध होने के कारण नगर की संस्कृति गतिशील हो जाती है और वह प्रगती की ओर बढ़ती रहती है। नगर में अधिकाँश सामाजिक सम्बन्ध अप्रत्यक्ष एवं अवैयक्तिक होते हैं। संचार के आधुनिक साधनों जैसे रेडियो, टेलीफोन, तार इत्यादि के द्वारा अधिकांश सामाजिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। इनके कारण नगर के मनुष्य अन्य मनुष्यों को मनुष्य न समझ कर चलती फिरती मशीन मात्र समझते हैं।

(ब) सहयोग (Co-operation)—ग्रामों में प्रायः प्रत्येक कार्य में सहयोग की प्रक्रिया होती हैं, परन्तु यह सहयोग अधिकतर परिवार तक सीमित रहता है।

नगरों में यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने कार्य में संलग्न दिखता है फिर भी अत्यधिक सहयोग की प्रक्रिया कार्य करती रहती है। समस्त नागरिक जीवन सहयोग की सामाजिक प्रक्रिया पर आधारित है। नगरों में श्रम विभाजन और विशेषीकरण अत्यधिक मात्रा में पाया जाता है। श्रम विभाजन और विशेषीकरण का आधार ही सहयोग है। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ की चिन्ता करता है परन्तु सहयोग की लड़ी में गुथा हुआ है। नागरिक जीवन एक दूसरे पर आश्रित है।

(स) प्रतिस्पर्द्धा (Competition)–ग्रामों में प्रतिस्पर्द्धा की प्रक्रिया अधिक नहीं पाई जाती। लोग अपने अपने कार्यों में लगे होते हैं। सामाजिक स्थिति परिवार और वंशपरम्परा पर आधारित होती है।

नगरों में प्रतिस्पर्द्धा की सामाजिक प्रक्रिया अत्यधिक होती है। अधिकाँश सामाजिक स्थितियां व्यक्ति अपने व्यक्तिगत परिश्रम एवं योग्यता से प्राप्त कर सकता है। इसके कारण लोग एक दूसरे के प्रतिद्वंदी होते हैं।

(द) संघर्ष (Conflict)—ग्रामों में संघर्ष का प्राचीन रूप पाया जाता है और अति शीघ्र मारने मरने को तैयार हो जाते हैं। अधिकाँश संघर्ष भूमि पर केन्द्रित होता है। कभी कभी दो परिवारों, जातियों एवं ग्रामों में भी संघर्ष पाया जाता है। यह संघर्ष शीघ्र ही खुला रूप धारण कर लेता है। जिससे ग्रामों में जीवन सुरक्षित नहीं रह पाता।

नगरों में भी संघर्ष पाया जाता है परन्तु अधिकांशतया अप्रत्यक्ष होता है। नगर का उत्थान ही ग्रामों से संघर्ष करके हुआ है। सिम्स ने लिखा है, "नगर के उत्थान में संघर्ष एक प्रत्यक्ष प्रक्रिया थी।"* नगरों का अधिकांश संघर्ष विभिन्न रूपों में दबा रहता है, फिर भी कभी कभी हड़ताल, दंगों, तालाबन्दी, मार पीट इत्यादि के रूप में दिखाई पड़ता है।

(य) व्यवस्थान (Accommodation)—ग्रामों में व्यवस्थान की प्रक्रिया सरलता से कार्य नहीं कर पाती। यहाँ के लोगों में सामाजिक सहिष्णुता अधिक नहीं पायी जाती। सामाजिक परिवर्तन तथा अन्य परिस्थितियों से ग्रामीण शीघ्र व्यवस्थान नहीं कर पाते क्योंकि उनकी भावनायें, विचार तथा उद्वेग अधिक होते हैं। यही कारण है कि ग्रामीण नागरिक नगरों में व्यक्तिगत एवं सामाजिक विघटन के शिकार होते हैं।

नागरिक जीवन में अत्यधिक सामाजिक सहिष्णुता पायी जाती है और व्यवस्थान उनका प्रमुख गुण एवं लक्षण है। वे शीघ्र सामाजिक परिवर्तन तथा अन्य नवीन परिस्थितियों से व्यवस्थान कर लेते हैं।

(र) एकीकरण (Assimilation)—ग्रामों में सामाजिक संबंध अधिक एवं भिन्न संस्कृतियों से न होने के कारण एकीकरण का प्रश्न ही नहीं उठता।

---

* "Conflict was a conspicuous process in the rise of the city." N. L. Sims, 'Elements of Rural Sociology' (1947,) p. 651.

साधारणतया ग्रामीण जीवन में एकीकरण की प्रक्रिया अति मंद गति से कार्य करती है।

नगरों में एकीकरण की प्रक्रिया सदैव कार्य करती रहती है। नगर के पर्यावरण एवं संस्कृतियाँ आपस में आदान प्रदान करती रहती हैं और एकीकरण की प्रक्रिया मंद गति से कार्य करती रहती है और शनैः शनैः उनमें अनुरूपता स्थापित करती रहती है।

५ सामाजिक दृष्टिकोण (Social Attitudes)

ग्रामीण और नागरिक जीवन के विभिन्न पर्यावरणों के फलस्वरूप वहाँ के निवासियों के सामाजिक दृष्टिकोण भी भिन्न बन जाते हैं। कुछ प्रमुख विषयों के प्रति उनके दृष्टिकोणों का विश्लेषण हम करेंगे।

(अ) सामाजिक परिवर्तन (Social Change)—ग्रामों में सामाजिक परिवर्तन के प्रति दृष्टिकोण रूढ़िवादी है। ग्रामीण क्षेत्र की संस्कृति की अनुरूपता, कृषि का स्थायी प्रभाव, निश्चित दैनिक जीवन एवं पृथक्ता उन्हें रूढ़िवादी बना देती है। न्यूमेयर ने उचित ही लिखा है, "ग्रामीण संस्कृति रूढ़िवादिता की ओर झुकी रहती है।"* वे वर्तमान व्यवस्था के कट्टर अनुयायी होते हैं और किसी भी परिवर्तन को पसन्द नहीं करते जब तक कि अत्यधिक आवश्यकता उन्हें विवश न करे।

नागरिक क्षेत्रों में सामाजिक परिवर्तन का लोग विरोध के स्थान पर स्वागत करते हैं। नगर में नवीन अर्थ व्यवस्था के कारण प्राचीन सामाजिक व्यवस्था ठीक नहीं लगती और दोनों में सामंजस्य नहीं रहता है। दोनों में सामंजस्य लाने के लिये नित्यप्रति सामाजिक परिवर्तन होते रहते हैं। नगर के निवासी प्रगतिशील होते हैं और अधिकांश सुधारवादी आन्दोलन नगर में ही प्रारम्भ होते हैं। रॉस ने लिखा है, "नगर जगन्मित्र होता है जब कि ग्राम राष्ट्रवादी और स्वदेशाभिमानी होता है।"†

---

* "Rural culture tends to be conservation." Martin H. Neumeyer, 'Social Problems and the changing Society,' D. Van Nostrand Ca. Inc. New York, p. 63.

† "The city is cosmopolitan, whereas the country is nationalistic and patriotic." E. A. Ross, 'Principles of Sociology.' p. 77.

(ब) राजनीति (Politics)—ग्रामीण जनता प्रायः राजनीति के प्रति उदासीन होती है। वे उस राजनैतिक संस्था का साथ देते हैं जो भूमि सुधार संबंधी कार्यक्रम रखती है। राजनैतिक विचारधारा भी परिवार पर आधारित होती है।

नगरों में राजनीति में लोग सक्रिय भाग लेते हैं और सबको राजनैतिक विचारों की स्वतंत्रता होती है। उग्र दल को नगरों में सहयोग मिलता है। नये नये राजनैतिक दलों का जन्म नगरों में ही होती है।

(स) सामाजिक सहिष्णुता (Social Tolerance)—ग्राम के निवासियों का सम्पर्क उनसे भिन्न प्रजातियों, धर्मों एवं राष्ट्रों के व्यक्तियों से नहीं पड़ता है। वे अपनी ही संस्कृति में संकुचित रहते हैं। इसके फलस्वरूप उनमें सामाजिक सहिष्णुता का अभाव पाया जाता है।

नगर के निवासियों में अधिक सामाजिक सहिष्णुता पायी जाती है क्योंकि उन्हें विभिन्न संस्कृतियों का ज्ञान होता है। हो सकता है कि नगर का निवासी किसी विचार या कार्य से पूर्णतया सहमत न हो, फिर भी वह उसका विरोध नहीं करेगा। प्रत्येक को अपनी संस्कृति के अनुसार जीवन बिताने का अधिकार होना चाहिये, वह इस सिद्धान्त को मानता है। आधुनिक सभ्यता में सामाजिक सहिष्णुता एक बहुत बड़ा गुण माना जाता है।

(द) धर्म एवं आचार (Religion and Moral)—ग्राम के लोग धर्म एवं आचार को बड़ा महत्व देते हैं। उनका ईश्वर एवं प्रकृति में अनन्य विश्वास होता है। यह उनके व्यवसाय का प्रभाव है। उन्हें अनेक प्राकृतिक विपदाओं का सामना करते रहना पड़ता है।

नगरों में धर्म एवं आचार के प्रति विचार शिथिल पड़ जाते हैं। विज्ञान की नयी नयी खोजों के कारण उसका विश्वास ईश्वर में कम होता जाता है। वे ग्राम के निवासियों के समान कट्टर नहीं होते। उनका धर्म भी विवेक पर आधारित होता है।

(य) भाग्यवादिता (Fatalism)—कृषि प्राकृतिक दशाओं पर आधारित होती है और प्रकृति प्राकृतिक नियमों के अनुसार चालित होती है और व्यक्ति की शक्ति से स्वतन्त्र होती है। इसके फलस्वरूप ग्राम के निवासियों को प्रकृति की शक्ति के सामने नतमस्तक होना पड़ता है और यह विश्वास प्रबल हो जाता है कि संसार में जो कुछ भी होता है ईश्वर की इच्छा से होता है। ईश्वर की इच्छा ही मनुष्य का भाग्य है अतः वही होता है जो भाग्य में लिखा होता है।

नगर में प्रकृति से उतना सम्बन्ध नहीं रहता जितना ग्रामों में रहता है। नगर में मनुष्य को अपनी शक्ति एवं बल की प्रदर्शनी देखने को मिलती है। इसके कारण उसका अपने प्रति विश्वास बढ़ जाता है। कुछ लोगों का कथन भी है कि ग्राम को ईश्वर ने बनाया है और नगर की रचना मनुष्य ने की है। नगर में मनुष्यों पर प्राकृतिक विपदायें भी बहुत कम आती हैं और जो आती हैं उनसे युद्ध करने के लिये वह अपना अस्त्र—विज्ञान—सदैव तैयार रखता है और अधिकतर विजय भी प्राप्त करता है फलस्वरूप उसकी आस्था ईश्वर एवं भाग्य में कम हो जाती है।

(र) कृत्रिमता (Artificiality)—ग्रामों में प्रकृति का प्रभाव अधिक होता है इसलिये ग्राम के निवासी कृत्रिमता के घोर विरोधी होते हैं। उनका जीवन सीधा होता है और वे हर क्षेत्र में सादगी पसंद करते हैं। बोगर्डस ने लिखा है, "ग्राम के लोग स्पष्टवक्ता, निष्कपट एवं सत्यनिष्ठ होते हैं, वे नागरिक जीवन के अनेक क्षेत्रों की कृत्रिमता से घृणा करते हैं।"¶ उन लोगों को फैशन इत्यादि भी अधिक पसंद नहीं होते।

नगर की रचना ही कृत्रिमता पर आधारित है। यहाँ पर शृङ्गार एवं बनावट का बोलबाला रहता है। यहाँ के प्रत्येक क्षेत्र में कृत्रिमता पायी जाती है। नगर की कही जाने वाली सभ्यता इसी कृत्रिमता का दूसरा नाम है।

६. सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility)

ग्रामों में सामाजिक गतिशीलता नगरों की तुलना में बहुत कम पायी जाती है। सारोकिन और ज़िमरमेन ने लिखा है, 'ग्रामीण समुदाय एक घड़े में शान्त जल के समान है और नागरिक समुदाय पतीली में उबलते हुये पानी के समान है।.....एक का विशिष्ट लक्षण स्थिरता है तो दूसरे का गतिशीलता।"†

¶ "Rural people are frank, open and genuine; they scorn the artificiality of many phases of city life." Bogardus 'Sociology,' p. 133.

† "The rural community is similar to calm water in a pail, and the urban community to boiling water in a kettle..... Stability is the typical trait for the one; mobility is the typical for the other." Sorokin and Zimmerman, 'Principles of Rural-Urban Sociology,' Henry Holt & Co. New York (1929), p 44.

नगर में एक समूह से दूसरे समूह में जाना अत्यन्त सरल है। इसे अनुप्रस्थ गतिशीलता (Horizental Mobility) कहते हैं। नगरों में व्यवसाय परिवर्तन भी अत्यन्त सरल होता है। किसान प्रायः किसानों की ही सन्तान होते हैं परन्तु नगर में किसी भी व्यवसायिक समूहों के लोग पाये जाते हैं। नगरों में धर्म परिवर्तन भी बिना किसी कठिनाई के किया जा सकता है।

नगर में व्यक्ति सामाजिक सीढ़ी या स्थिति पर ऊंचा उठ सकता है परन्तु ग्राम में ऐसी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। आज कोई दरिद्र है तो कल धनी बन सकता है। स्थान परिवर्तन भी नगरों में अधिक सम्भव है। ग्रामों में लोग भूमि से बंधे होते हैं परन्तु नगर में ऐसा कोई बन्धन नहीं होता। देशान्तरगमन (Migration) ग्रामों की ओर से नगर की ओर होता है।

७. सामाजिक स्थायित्व (Social Solidarity)

ग्रामों में अनुरूपता और समान लक्षणों, उद्देश्यों एवं अनुभवों के फलस्वरूप सामाजिक स्थायित्व उत्पन्न होता है। यह अनौपचारिक और संविदारहित सम्बन्धों पर आधारित होता है।

नगरों में सामाजिक स्थायित्व का आधार विभिन्नता, विशेषीकरण और पारस्परिक निर्भरता होती हैं। यह औपचारिक और संविदापूर्ण सम्बन्धों पर आधारित होता है।

८, आर्थिक जीवन (Economic Life)

नगर और ग्राम के आर्थिक जीवन में भी अत्यधिक विभिन्नता पाई जाती है।

(अ) व्यवसाय (Occupation)—ग्रामों में प्रमुख व्यवसाय कृषि है और अन्य व्यवसाय भी इससे सम्बन्धित हैं। अनेक सामाजशास्त्रियों का मत है कि ग्राम और नगर के बीच अन्तर उत्पन्न करने वाले कारकों में व्यवसाय प्रमुख है। सिम्स ने लिखा है "जीविकोपार्जन की दो मौलिक रूप से भिन्न रीतियों ने ग्रामीण और नागरिक संसारों को पृथक् कर दिया है।" * कृषि के व्यवसाय का प्रमुख लक्षण यह है कि इसमें जीवित एवं विकसित होने वाली वस्तुओं से सम्पर्क होता है चाहे वे पेड़ पौधे हों या पशु या दोनों। किसान प्राकृतिक

* "Two fundamentally different modes of getting a living set the rural and urban worlds apart." N. L Sims, 'Elements of Rural Sociology,' p. 649.

पर्यावरण में कार्य करता है। इनके कारण ग्राम के लोग मानव सम्बन्धों से प्रेम करते हैं और ईश्वर से डरते हैं।

नगरों में अधिकांश व्यवसायों में, मशीनों एवं अन्य जीवनहीन वस्तुओं से कार्य करना पड़ता है। इसके फलस्वरूप मनुष्य का दृष्टिकोण प्रत्येक वस्तु को मशीनों के ही समान व्यवहार करने का हो सकता है। व्यवसायों की बहुलता के कारण अत्यधिक श्रम-विभाजन और विशेषीकरण पाया जाता है। द्राव्यिक अर्थ व्यवस्था के कारण सम्पूर्ण दृष्टिकोण द्रव्य पर आधारित रहता है। आज के युग में द्रव्य का महत्व है इसलिए नगरों के व्यवसाय फल फूल रहे हैं।

(ब) जीवन का स्तर (Standard of Living)—ग्रामों का जीवन स्तर अधिक ऊंचा नहीं होता क्योंकि अर्थोपार्जन के साधन सीमित होते हैं। वे नगरवासियों के समान खर्चीले भी नहीं होते। समय समय पर प्राकृतिक विपदाएँ उन्हें भविष्य के लिए धन एवं अन्न बचाना सिखा देती हैं। उनकी सामाजिक व्यवस्था भी उन्हें बचाने के लिए बाध्य करती है क्योंकि उनकी सामाजिक स्थिति उत्पादन और बचत से स्थिर होती है, जब कि नगर के लोगों की सामाजिक स्थिति उपभोग (Consumption) पर आधारित होती है। रॉस ने उचित लिखा है, "ग्रामीण जीवन बचत करने का सुझाव देता है। नागरिक जीवन खर्च करने का सुझाव देता है।"† ग्रामों में जीवन सामान्य पाया जाता है और एकदम धनी होने के अवसर नहीं मिलते हैं। जमींदार तथा अन्य धनी व्यक्ति भी साधारण ग्रामीण ढंग से ही रहते हैं क्योंकि उन्हें सुरक्षा के अधिक साधन उपलब्ध नहीं है और समाज के अनुसार चलना ही पड़ता है।

नगरों में व्यापार तीव्र गति से चलता है और धनोपार्जन की मात्रा अत्यधिक होती है। साधारणतया जीवन का स्तर ऊँचा होता है परन्तु यहाँ पर दोनों छोर पाये जाते हैं। एक ओर तो करोड़पति एवं लखपति पाए जाते हैं तो दूसरी ओर भिखारियों और दरिद्रों की भी कमी नहीं है। इसके फलस्वरूप जीवन के स्तर में अत्यधिक विषमता पाई जाती है। खर्चीली प्रवृत्ति होने के कारण ग्रामों से जीवन का स्तर फिर भी उच्च होता है। नगर के लोग अधिकांश धन बाह्य आवरणों में खर्च कर देते हैं। शिक्षा, चिकित्सा एवं

---

† "Country life, then suggests 'Save !' City life suggests 'Spend ! E. A. Ross, 'Principles of sociology,' p. 76.

अन्य उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी नगर के लोग धन व्यय करते हैं। इसका प्रमुख कारण सामाजिक दबाव है।

६. सांस्कृतिक जीवन (Cultural Life)

नगर और ग्राम की संस्कृतियों एवं सांस्कृतिक जीवन में भी मौलिक भेद पाये जाते हैं।

(अ) संस्कृति की प्रकृति (Nature of Culture)—ग्रामों में स्थिर संस्कृति पाई जाती है उसमें बहुत परिवर्तन नहीं होते। भारत के ग्रामों के विषय में लिखते हुए नजमल करीम ने लिखा है, "वे स्थिर प्रतीत होते हैं जब कि कोई भी वस्तु स्थिर नहीं रहती है। एक राजवंश के उपरान्त दूसरा राजवंश समाप्त होता गया, क्रांति के बाद क्रांति होती गई, हिन्दू, पठान, मुगल, मरहठा, सिक्ख, आंग्ल बारी बारी से स्वामी होते गए परन्तु ग्रामीण समुदाय वैसे के वैसे ही हैं।" † ग्रामीण जीवन ही स्थिर सा है। कृषक भी एक निश्चित प्रकार का जीवन व्यतीत करता है। सिम्स ने भी लिखा है, "कुछ अपवादों को छोड़ कर उसका जीवन भी ऋतुओं के समान निश्चित कालचक्र के अनुसार चलता है।"*

नगरों में संस्कृति गतिशील (Dynamic) होती है। वह सदैव विकसित होती रहती है और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ती रहती है। गतिशील संस्कृति के कारण कूपमंडूकता एवं शिथिलता का चिन्ह तक भी नहीं पाया जाता।

(ब) संस्कृति का आधार (Basis of Culture)—ग्रामों में संस्कृति जातिगत एवं पवित्रता (Sacred) पर आधारित होती है। संस्कृतिक का प्रत्येक अंग अनुरूपता से पूर्ण होता है और लोग इनका पालन इसलिये करते हैं कि इनका आधार पवित्रता है।

---

† "They seem to last where nothing else lasts. Dynasty after dynasty tumbles down; revolution succeeds revolution; Hindu, Pathan, Mughal, Mahratta, Sikh, English are masters in turn; but the village communities remain the same." A. K. Nazmul Karim, 'Changing Society in India and Pakistan,' Oxford University Press, Dacca (1956), p. 8.

* "With few exceptions his life moves in cycles almost as fixed as the season." Sims, 'Elements of Rural Sociology,' p. 650.

नगर की संस्कृति का आधार असाम्प्रदायिक (Secular) है।

(स) परम्परायें (Traditions)—ग्रामों में परम्पराओं की पूजा होती है। उनका समस्त जीवन परम्पराओं द्वारा चालित होता है।

नगरों में समान्य परम्पराओं का निश्चित होना ही कठिन हो जाता है। नवीन विचारधाराओं का सदैव प्रभाव पड़ता रहता है। इसके फलस्वरूप परम्पराओं का प्रभाव कम हो जाता है।

१०. सामाजिक विघटन (Social Disorganisation)

ग्रामों में स्थिर एवं रूढ़िवादी समाज पाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति और कार्य साधारणतया पूर्व निश्चित होते हैं। इनके फलस्वरूप न तो मानसिक संघर्ष और निराशा ही उत्पन्न होती है और न ही सामाजिक संस्थाओं में संघर्ष होता है। व्यक्तिगत या सामाजिक विघटन प्रायः उत्पन्न नहीं होता।

नगरों में विभिन्न संस्कृतियों का संघर्ष सदैव चलता रहता है इसलिये मनुष्यों के लिये कोई मार्ग निश्चित करना कठिन हो जाता है। तीव्रगति से होने वाले सामाजिक परिवर्तन के कारण समस्या और भी कठिन हो जाती है। व्यक्तियों के मस्तिष्क में सदैव मानसिक कलह बनी रहती है। व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक विघटन नगरों में अधिक मात्रा में पाया जाता है। आर्थिक तूफान आते रहते हैं और दरिद्रता बेकारी तथा आर्थिक स्थिति में उलट पुलट की भरमार रहती है। तलाकों की संख्या भी नगर में अधिक पायी जाती है। नगर की अपरिचित भीड़ भाड़ मनुष्य को अपराध करने के लिये प्रोत्साहित करती रहती है।

ग्रामीण और नागरिक जीवन के अन्तरों पर हमने अभी तक प्रकाश डालने का प्रयत्न किया। हम पहले भी लिख चुके हैं कि दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। आधुनिक समय में नगर का प्रभाव ग्रामों पर अधिक पड़ रहा है। अब हम इस प्रभाव का विश्लेषण करेंगे।

नागरिक प्रभुत्व (Urban Ascendancy)

वह संस्कृति जो अधिक शक्तिशाली, गतिशील एवं प्रभावपूर्ण होती है अन्य संस्कृतियों पर अपना प्रभाव डालती है। आधुनिक युग में नागरिक संस्कृति अपना प्रभाव ग्रामीण संस्कृति पर डाल रही है। सिम्स ने उचित लिखा है,

"ग्रामीण समाज का नागरीकरण सामान्य अवलोकन का तथ्य है।"§ नगर की सत्ता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। वह संस्कृति का केन्द्र बन गया है। ममफोर्ड ने लिखा है, "नगर किसी समुदाय की शक्ति एवं संस्कृति के अत्यधिक एकाग्रचित्त होने का केन्द्र है, जैसा कि इतिहास से ज्ञात होता है।"* नगर को सांस्कृतिक केन्द्र होने के कारण अत्यधिक प्रभुता प्राप्त हो गई है। प्राथमिक नागरिक संस्कृति के तत्व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसारित (Diffused) होते जा रहे हैं। इन तत्वों पर हम संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

पहले भौतिक संस्कृति प्रसारित होती है। आधुनिक नागरिक संस्कृति के भौतिक तत्व व्यापारिकवाद, पूंजीवाद, यंत्रीकरण, विशेषीकरण और संगठन है। व्यापार नगरों का प्रमुख लक्षण है। समस्त व्यापार द्रव्य पर आधारित है। ग्रामीण समाज भी इससे प्रभावित होता जा रहा है। वह भी अब द्रव्य पर आधारित है। अब ऐसी फसलें बोई जाती हैं जिनके द्वारा अधिक से अधिक द्रव्य प्राप्त किया जा सके। ऐसी फसलों को व्यापारिक फसलें (Commercial Crops) कहते हैं। पूंजीवाद (Capitalism) नागरिक जीवन का दूसरा प्रमुख लक्षण है। प्रायः अधिकांश पश्चिमी देशों में भूमि पूंजीवादियों के हाथों में चली गई है। भारतवर्ष में यह प्रक्रिया अंग्रेजी राज्य के साथ प्रारम्भ हुई परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त समाप्त हो गई। जमींदारी उन्मूलन एवं आचार्य विनोबा भावे द्वारा चालित भूदान यज्ञ के कारण पूंजीवाद भूमि को नहीं हड़प सका। यंत्रीकरण (Mechanisation) भी ग्रामों में विकसित हो गया है। नयी नयी मशीनों का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। विशेषीकरण (Specialization) उत्पादन के लिये बड़ी लाभदायक वस्तु है। नगरों के उद्योग-धन्धों में इसका अत्यधिक प्रयोग किया जाता है। ग्रामों में कृषि तथा अन्य व्यवसायों में विशेषीकरण एवं श्रम-विभाजन का उपयोग होने लगा है। संगठन (Organisation) भी ग्रामों में बढ़ता जा रहा है। अनेक कृषि संगठन

---

† "The urbanisation of rural society is a fact of common observation." N. L. Sims, 'Elements of Rural Sociology,' p. 654.

* "The city, as one finds it in history, is the point of maximum concentration for the power and culture of a community." L. Mumford, 'the Culture of Cities,' Martin Secker & Warburg Ltd. London (1953), p. 3.

एवं सहकारी आन्दोलन इसके प्रमाण हैं। इससे स्पष्ट है कि नागरिक संस्कृति के प्राथमिक तत्व ग्रामीण जीवन के प्रमुख आधार बनते जा रहे हैं।

नगर की संस्कृति के अभौतिक तत्व भी ग्रामों में शनैः शनैः प्रवेश कर रहे हैं। आधुनिक शिक्षा एवं नागरिक आर्थिक अवसर इस प्रसार में बड़ी सहायता कर रहे हैं। नगर के विचार—धार्मिक, राजनैतिक तथा अन्य—ग्रामीण विचारों से अच्छे समझे जाते हैं। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप ग्रामीण जनता नगर की प्रत्येक वस्तु का अनुसरण करती रहती है।

नगरों का प्रभुत्व अवश्य है परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि ग्राम का कोई महत्व ही नहीं है। वास्तव में दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं।

ग्राम और नगर की अन्योन्याश्रितता
(Interdependence of Village and City)

ग्राम और नगर एक दूसरे पर आश्रित हैं। ग्राम नगर के लिये भोजन उपलब्ध करता है और प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है ग्राम ही नगर की जननी है और अभी भी नगर के पालन पोषण का भार ग्राम पर ही है। नगर और ग्राम दोनों की ही अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि वे एक दूसरे के पूरक हैं। नगर की अनेक कमियों की पूर्ति ग्राम में हो जाती है। आधुनिक समाजशास्त्रियों का ऐसा मत है कि इस प्रकार के क्षेत्र विकसित होने चाहिये जिनमें नगर और ग्राम दोनों की विशेषतायें पायी जायें। इस सिद्धान्त को प्रदेशवादी सिद्धान्त (Theory of Regionalism) कहते हैं।

प्रश्न

१. कुछ समाजों, जिनसे आप परिचित हों, में ग्रामीण जीवन पर पड़ने वाले नागरिक प्रभाव की प्रकृति एवं सीमा का विवरण दीजिये।

(राजपूताना १९५७)

(Indicate the nature and extent of urban influence on rural life in some societies with which you are familiar.)

२. उन विभिन्नताओं के मोटे स्वरूप का चित्रण कीजिए जो कि एक ग्राम निवासी किसी नगर में व्यवसायिक मजदूर बनने पर देखता है।

(आगरा १९५७)

(Give a broad picture of the differences that a villager would notice most when becomes an industrial worker in a city)

३. एक नगर का व्यक्ति ग्रामीण जीवन की झलक देखना चाहता है और आपसे अपने समाजशास्त्रीय प्रदर्शक के रूप में सहायता मांगता है। अपने आगन्तुक को ग्रामीण जीवन के प्रमुख लक्षण समझाइये।

(आगरा, १९५६)

(A man from a city wants to get a glimpse of rural life and seeks your help as his 'Sociological guide.' Explain the main features of rural life to your visitor.)

४. ग्रामीण और नागरिक जीवन के भेद बताइये।

(राजपूताना १९५६, आगरा १९५५, लखनऊ १९४९, १९५३.)

(Indicate contrast of Rural and Urban life)

५. एक ग्रामीण समुदाय की परिभाषा करिये। स्थायी ग्रामीण समुदायों के विकास में सहायता देने वाले प्रादेशिक, आर्थिक तथा सामाजिक कारकों को बताइये। (आगरा, १९५४)

(Define a village Community. Mention the regional economic and social factors which contribute to the growth of permanent village communities)

६. नागरिक समुदाय की विषम जन-संख्या के तथा सामाजिक सम्बन्धों की अवैयक्तिकता के क्या सामाजिक प्रभाव है? (आगरा, १९५१)

(What are the social consequences of the heterogeneous population and the impersonality of social relations in the urban community?)

७. "नगर गांव से किसी भांति अधिक कृत्रिम नहीं हैं।" व्याख्या कीजिये।
(आगरा, १९५७)

('The city is no more artificial than the village,' Explain.)

SELECTED READINGS

1. Gist and Halbert, 'Urban Society,' chapters.
2. N. L. Sims, 'Elements of Rural Sociology' chapters V, XV, XVI, XXI, XXVIII, and XXIX.
3. L. Mumford, 'The culture of Cities'.
4. T. Smith, 'The Sociology of Rural life,' chaptersXV, XVI, XIX, XX,XXII and XXIII.

सप्टम खंड

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया
(Social Interaction)

अध्याय १६ : सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया
(Social Interaction)
अध्याय २० : पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं :
प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष
(Disintegrative Social Processes :
Competition and Conflict)
अध्याय २१ : एकीकरण करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं :
सहयोग, व्यवस्थान और आत्मसात
(Integrative Social Processes : Co-operation,
Accommodation and Assimilation)

अध्याय १६

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया
(Social Interaction)

प्रकृति के प्रत्येक क्षेत्र में विभिन्न तत्वों के बीच परस्पर-सम्बन्धी क्रियायें होती रहती हैं। प्राकृतिक विज्ञानों में हम रसायनिक, भौतिक इत्यादि परस्पर सम्बन्धी क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। समाजशास्त्र में हमारा सम्बन्ध सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाओं से होता है। सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाओं के अभाव में समाज शून्य हो जाता है और व्यक्ति सामाजिक नहीं रहते।

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाओं का अर्थ
(Meaning of Social Interaction)

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाओं का अर्थ समझने के पूर्व हमें 'सामाजिक' शब्द के अर्थ का स्मरण करना होगा। † सामाजिक दशा तभी निर्मित होती है जब मनुष्यों के बीच मानसिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, अर्थात मानसिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाएं एक दूसरे को प्रभावित करना प्रारम्भ कर देती हैं। सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (Social Interaction) वे कार्य होते हैं जिनके द्वारा व्यक्ति या समूह एक दूसरे से परस्पर प्रभावित होते हैं। डासन और गेटिस ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है "सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया वह प्रक्रिया होती है जिसके द्वारा मनुष्य एक दूसरे के मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट होते हैं।" * गिस्ट ने भी लिखा है, "सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (वह) परस्पर प्रभाव होता है जो कि मनुष्य परस्पर उत्तेजना एवं प्रतिवचन के द्वारा एक दूसरे पर डालते हैं।" § परस्पर सामाजिक क्रिया को एक एक उदाहरण के द्वारा समझाया जा सकता है। मान लीजिये खेल का मैदान संसार है। इस

---

† अध्याय ४ पढ़िये।

* "Social interaction is a process whereby men interpenetrate the minds of each other." Dawson and Gettys, 'An Introduction to Sociology,' (1948), p. 296.

§ "Social interaction is the reciprocal influences human beings exert on each other through interstimulation and response." Noel P. Gist in the book 'Fundamentals of Sociology" by Seba Eldridge and others (1950), p. 363.

संसार में रहने वाले व्यक्ति खिलाड़ी हैं। खेल के नियम सामाजिक नियम हैं। जिन स्थितियों (Positions) में वे खेलते हैं वह उसकी सामाजिक स्थिति (Social Status) § है। उस विशिष्ट स्थिति में जिस प्रकार के कार्यों (game) की उनसे आशा की जाती है वे उनके कार्य (Roles) हैं। प्रत्येक खिलाड़ी अपनी अपनी स्थिति (Position) में खेल प्रारम्भ होने के पूर्व खड़ा है। सीटी बजी और खेल प्रारम्भ हुआ। खेल प्रारम्भ होने के उपरान्त जो कुछ होता है—एक खिलाड़ी फुटबॉल लेकर आगे बढ़ता है, दूसरी ओर के समस्त खिलाड़ी सतर्क हो जाते हैं, केन्द्रीय खिलाड़ी (Centre-forward) प्रतिद्वन्दी से भिड़ जाता है, गोली (Goal Keeper) सतर्कता की स्थिति में खड़ा हो जाता है और फुटबॉल आते ही उसे अपने हाथ में लेकर ऐसी ठोकर लगाता है कि वह केन्द्र से आगे बढ़ जाती है, अब सारे खिलाड़ी अपनी-अपनी स्थितियों के अनुसार आगे बढ़ने लगते हैं और सबकी दिशा परिवर्तित हो जाती है, इत्यादि इत्यादि—वह ही सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रिया कहलाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक खिलाड़ी एक दूसरे की स्थिति (Status) और कार्यों (Role) को प्रभावित करता है और अन्य खिलाड़ियों के कार्यों से प्रभावित होता रहता है। यह परस्पर प्रभाव मानसिक जागरूकता के फलस्वरूप होता है। मानव समाज में यह प्रक्रिया सदैव होती रहती है। प्रत्येक व्यक्ति की कुछ न कुछ सामाजिक स्थिति (Social Status) होती है और उसे उस स्थिति से सम्बन्धित कार्य (Role) करने पड़ते हैं। इन कार्यों की पूर्ति करने के प्रयत्न में एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं और इस सामाजिक सम्बन्ध के फलस्वरूप एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। परस्पर प्रभावित करते रहने की प्रक्रिया को सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रिया (Social Interaction) कहते हैं। ग्रीन ने इसकी परिभाषा करते हुये लिखा है, "सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया से उन परस्पर प्रभावों को समझा जाता है जो कि व्यक्तियों और समूहों द्वारा, उनके समस्याओं को सुलझाने के प्रयत्नों एवं उद्देश्यों तक पहुँचने में, एक दूसरे पर डाले जाते हैं।"* इसके अर्थ को समझने के उपरान्त अब हम उन मौलिक दशाओं पर प्रकाश डालेंगे जो कि इसके लिये अत्यन्त आवश्यक है।

---

§ सामाजिक स्थिति एवं कार्य को समझने के लिये लेखक की पुस्तक 'समाजशास्त्र की रूपरेखा' भाग २ का अध्याय ८ पढ़िये।

* "By Social interaction is meant the mutual influences that individuals and groups have upon one another in their attempts to solve problems and in their striving toward goals." A. W. Green, 'Sociology' (1956) p. 49.

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया की मौलिक दशाएं (Basic Conditions of Social Interaction)

सामाजिक परस्पर-सम्बधी क्रिया प्रारम्भ होने के लिये निम्न दो दशाओं का होना अत्यन्त आवश्यक है:—

(अ) सामाजिक सम्बन्ध (Social Contact) और (ब) संचार (Communication)

(अ) सामाजिक सम्बन्ध (Social Contact)—सामाजिक सम्बन्ध के बिना यह क्रिया प्रारम्भ ही नहीं हो सकती, क्योंकि उसके बिना परस्पर प्रभाव पड़ ही नहीं सकता। किसी न किसी प्रकार सामाजिक सम्बन्ध अवश्य स्थापित होना चाहिये। गिलिन और गिलिन ने लिखा है, "इसलिये, सामाजिक सम्बन्ध परस्पर-सम्बन्धी क्रिया का प्रथम चरण होता है।"† सामाजिक सम्बन्ध प्राथमिक (Primary) या द्वैतियक (Secondary) किसी भी प्रकार के हो सकते हैं। ये मित्रता या शत्रुता दोनों को ही जन्म देते हैं। जब कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से विचारों का आदान प्रदान करने लगता है तो सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है चाहे व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हो या अप्रत्यक्ष रूप से किसी अन्य वस्तु के द्वारा सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हुआ हो।

(ब) संचार (Communication)—सामाजिक सम्बन्ध, बिना किसी न किसी प्रकार के ज्ञानेन्द्रियों के पारस्परिक सम्बन्ध के कभी भी स्थापित नहीं हो सकता। कोई न कोई संचार का माध्यम प्रत्येक सामाजिक सम्बन्ध में पाया जाता है। संचार के ही माध्यम द्वारा सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (Social Interaction) कार्य करती है। संचार के साधन कुछ भी हो सकते हैं। प्रमुख संचार के साधन—भाषा, लिपि, सांकेतिक भाषा (Gestures), टेलीफोन, प्रतीक (Symbols), रेडियो इत्यादि हैं।

सामाजिक सम्बन्ध और संचार सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया को जन्म देते हैं। यह समाज के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

समाज और सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (Society and Social Interaction)

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया समाज के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विलसन और कोल्ब ने लिखा है, "संस्कृति और समाज दोनों ही सामाजिक

† "Social contact, therefore, is the first phase of interaction." Gillin and Gillin, 'Cultural 'Sociology,' (1954) p. 492.

परस्पर-सम्बन्धी क्रिया के परिणाम हैं।"* लम्ले ने भी इसका महत्व बताते हुये लिखा है, "और सम्बन्ध एवं परस्पर सम्बन्धी क्रिया हमारे जीवन के आधार स्तम्भ हैं। वास्तव में वे वही हैं जो कि हम सामाजिक (शब्द) से समझते हैं। वे समाज के लिये उसी प्रकार हैं जैसे कि ईंटें और चूना इमारतों के लिये होते हैं।"† बीसंज और बीसंज ने भी लिखा है, "समाज की जड़ें सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रिया में गड़ी हुई हैं।"§ इस प्रकार समाज का जन्म ही सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया के कारण हुआ है और इसके बिना वह जीवित नहीं रह सकता। समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। सामाजिक सम्बन्धों का जाल तभी निर्मित हो सकता है जब कि सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया होती हो। प्रत्येक क्षण समाज में विभिन्न प्रकार की सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रियाएं होती रहती हैं। इनके अनेक स्वरूप होते हैं।

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया के स्वरूप : सामाजिक प्रक्रियाएं (Forms of Social Interaction : Social Processes)

सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया के विभिन्न स्वरूप होते हैं। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "परस्पर-सम्बन्धी क्रिया के विभिन्न स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रियाएं कहते हैं।" * सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। एक सम्प्रदाय का तो यह मत है कि समाजशास्त्र में केवल सामाजिक प्रक्रियाओं का ही अध्ययन करना चाहिये। इस सम्प्रदाय का नाम यथार्थवादी सम्प्रदाय (Formal School) है।

---

* "Both culture and society are the products of social interaction,....." Logan Wilson and William L. Kolb, 'Sociological Analysis,' Harcourt, Brace & Co., Inc. New York (1949), p. 681.

† "And contacts and interactions are the foundation stone of our life; indeed, they are what we mean by social; They are to society what bricks and mortar are to buildings." Lumley, 'Principles of Sociology' p. 98.

§ "Society is rooted in social interaction,....." Biesanz and Biesanz, 'Modern Society,' (1954) p. 88.

सामाजिक प्रक्रियाओं का अर्थ (Meaning of Social Processes)

सामाजिक प्रक्रिया को समझने के लिये पहले प्रक्रिया को समझना होगा। एक प्रक्रिया उन सम्बन्धित घटनाओं के क्रम को कहते हैं जो एक विशिष्ट परिणाम की ओर ले जाती है। इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि सम्बन्धित घटनाओं का क्रम एक बार से अधिक होता है। जो सम्बन्धित घटनाओं का क्रम केवल एक बार ही हो उसे प्रक्रिया नहीं कहेंगे। दूसरी प्रमुख बात यह है कि घटनाओं में सम्बन्ध होना चाहिये। तीसरा प्रमुख लक्षण यह है कि उसमें निरन्तरता की झलक पाई जानी चाहिये और चतुर्थ लक्षण यह है कि कुछ न कुछ परिणाम निकलना चाहिये। इस प्रकार एक प्रक्रिया के प्रमुख लक्षण निम्न होते हैं:—

(अ) घटनाओं का सम्बन्धित होना,

(ब) सम्बन्धित घटनाओं के क्रम में पुनरावृति होना,

(स) घटनाओं के क्रम का किसी निश्चित परिणाम की ओर ले जाना।

प्रक्रियाओं के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। श्वास लेने की प्रक्रिया (Process of Respiration) का ही उदाहरण लीजिये। इस प्रक्रिया में श्वास अन्दर खींची जाती है, बहुत थोड़े समय अन्दर रुकती है और फिर बाहर निकाल दी जाती है। घटनाओं के इस क्रम की पुनरावृति होती रहती है और इससे निश्चित परिणाम भी निकलता है। प्रत्येक क्षेत्र में प्रक्रियाएं होती रहती हैं। सामाजिक सम्बन्धों के क्षेत्र में पाई जाने वाली प्रक्रियाओं को सामाजिक प्रक्रियाएं कहते हैं।

समाज में अगणित सामाजिक प्रक्रियाएं होती रहती हैं। अनेक विद्वानों ने इनका वर्गीकरण किया है।† यहां पर हम मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं का विवेचन करेंगे।

मौलिक सामाजिक प्रक्रियाएं (Basic Social Processes)

सामाजिक प्रक्रियाओं की संख्या अगणित है। मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं की संख्या भी अनेक समाजशास्त्रियों के अनुसार भिन्न भिन्न हैं। ये समस्त सामाजिक प्रक्रियाएं-प्रतिस्पर्द्धा (Competition), संघर्ष (Conflict),

---

* "The various forms of interaction are called the social processes." ibid, p. 88.

† अध्याय ५ पढ़िये।

सहयोग, (Co-operation), व्यवस्थान (Accommodation) और आत्मसात (Assimilation)—मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं के अन्तर्गत आ जाती हैं। हम इन्हीं मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं पर अगले अध्यायों में प्रकाश डालेंगे। इन मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं को उनके परिणाम के अनुसार दो वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम वे सामाजिक प्रक्रियाएं जो एकीकरण करती हैं और द्वितीय वे जो पृथक करती हैं। एकीकरण करने वाली (Integrative) सामाजिक प्रक्रियाएं सहयोग, व्यवस्थान और आत्मसात हैं और पृथक करने वाली (Disintegrative) सामाजिक प्रक्रियाएं प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष हैं।

प्रश्न

१. सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (अन्तः क्रिया) क्या है ? इसके कुछ मूल रूपों की व्याख्या भारतीय समाज से उदाहरण देकर कीजिये। (राजस्थान, १९५७)

(What is social interaction ? Explain some of its basic forms with the help of illustrations from the Indian Society.)

SELECTED READINGS

1. Sutherland, Woodward and Maxwell, 'Introductory Sociology' Fourth Edition, Chapter XI.
2. Green, A. W. 'Sociology,' Chapter IV.
3. Renter and Hart, 'Introduction to Sociology' Chapter X.

अध्याय २०

पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं
प्रतिस्पर्द्धा एवं संघर्ष

(Disintegrative Social Processes : Competition and Conflict)

पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रियाओं में प्रमुख प्रतिस्पर्द्धा (Competition), विरोध (Contravention), संघर्ष (Conflict), स्तरण (Stratification), विभिन्नता (Differentiation), विशेषीकरण (Specialisation) इत्यादि हैं। इनमें से मौलिक सामाजिक प्रक्रियाएं प्रतिस्पर्द्धा और संघर्ष ही हैं। अन्य सामाजिक प्रक्रियाएं इनके अन्तर्गत आ जाती हैं।

प्रतिस्पर्द्धा (Competition)

प्रतिस्पर्द्धा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पायी जाती है। आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा आधुनिक समाज का प्रमुख लक्षण है।

प्रतिस्पर्द्धा का अर्थ (Meaning of Competition)

प्रतिस्पर्द्धा की परिभाषा करते हुये बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "प्रतिस्पर्द्धा दो या अधिक व्यक्तियों के समान उद्देश्य, जो कि इतना सीमित है कि सब उसके भागीदार नहीं बन सकते, को पाने के प्रयत्न को कहते हैं।"* बोगर्डस ने लिखा है, "प्रतिस्पर्द्धा किसी ऐसी वस्तु को प्राप्त करने के विवाद को कहते हैं जो कि इतनी मात्रा में नहीं पायी जाती जिससे कि मांग की पूर्ति हो सके।"† फेअर चाइल्ड ने लिखा है कि "प्रतिस्पर्द्धा सीमित वस्तुओं के उपयोग

---

* "Competition is the striving of twoor more persons for the same goal, which is limited so that all cannot share it." Biesanz and Biesanz, 'Modern Society', p. 90

† "Competition is a contest to obtain something which does not exist in a quantity sufficient to meet the demand." E. S. Bogardus, 'Sociology', p. 527.

या अधिकार के लिये किये जाने वाले परिश्रम को कहते है।"§ सदरलैंड तथा अन्य ने इसकी व्याख्या बड़े सुन्दर शब्दों में इस प्रकार की है, "प्रतिस्पर्द्धा व्यक्तियों या समूहों के बीच उन संतुष्टियों, जिन्हें उनके सीमित होने के कारण सब प्राप्त नहीं कर सकते, की प्राप्ति के लिये एक अवैयक्तिक, अचेतन एवं निरन्तर परिश्रम को कहते हैं।"* इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्द्धा किसी वस्तु की प्राप्ति के लिये किये जाने वाले परिश्रम को कहते हैं। वह वस्तु सीमित होती है और उसकी मांग (Demand) पूर्ति से अधिक होती है। इस समाजिक प्रक्रिया में स्वार्थों का संघर्ष निहित होता है, फिर भी स्पष्ट संघर्ष नहीं पाया जाता। प्रतिस्पर्द्धा भी एक प्रकार का संघर्ष है परन्तु इन दोनों में मौलिक भेद पाये जाते हैं। जिनका विवरण हम आगे देंगे। फिर भी प्रतिस्पर्द्धा को भली प्रकार समझने के लिये उसकी प्रकृति को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रतिस्पर्द्धा की प्रकृति (Nature of Competition)

प्रतिस्पर्द्धा की प्रकृति के निम्न प्रमुख लक्षण हैं:—

(अ) अचेतन प्रक्रिया (Unconscious Process)—प्रतिस्पर्द्धा एक अचेतन प्रक्रिया है। प्रतिस्पर्द्धा में प्रतिद्वंदियों (Competitors) का कोई भी ज्ञान नहीं होता है। इसमें केवल उद्देश्य के प्रति चेतनता होती है और उसे पाने के लिए व्यक्ति अधिक से अधिक प्रयत्न करता है। उदाहरण के लिये भारतीय प्रशासन सेवा (Indian Administrativve Service) में प्रत्येक वर्ष ७५ व्यक्ति चुने जाते हैं। इन ७५ स्थानों के लिये हजारों व्यक्ति परिश्रम करते हैं। इन परीक्षार्थियों को अपनी समस्त परिस्थिति के प्रति कोई चेतनता नहीं होती। वे केवल अपने अपने परिश्रम से परिचित होते हैं और अपने उद्देश्य के प्रति चेतन होते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य बातों का उन्हें

---

§ "Competition is the struggle for the use or possession of limited goods." H. P. Fairchil (Editor), 'Dictionary of Sociology', Philosophical Library, New York (1944), p. 289.

* "Competition is an impersonal, unconscious, continuous struggle between individuals or goups for satisfactions which, because of their limited supply, all may not have." Sutherland, Woodward and Maxwell, 'Introductory Sociology,' Fourth Ed. (1952), p. 207.

कोई ज्ञान नहीं होता। यदि किसी प्रकार उन्हें अन्य बातों का ज्ञान भी हो गया तो वे वस्तुयें उनकी शक्ति के बाहर होती है।

(ब) अवैयक्तिक प्रक्रिया (Impersonal Process)—प्रतिस्पर्द्धा एक अवैयक्तिक प्रक्रिया भी होती है क्योंकि प्रतिद्वंदियों को एक दूसरे का कोई ज्ञान नहीं होता। उनका परिश्रम उद्देश्य की प्राप्ति की ओर होता है और प्रतिद्वंदियों से उनका कोई द्वेष नहीं होता। जब उनका परिश्रम उद्देश्य से हटकर प्रतिद्वंदियों पर आजाय तो प्रतिस्पर्द्धा के स्थान पर संघर्ष (Conflict) प्रारम्भ हो जाता है। ऑगबर्न और निमकॉफ ने उचित लिखा है, "जब उत्तेजना प्रतिस्पर्द्धा की वस्तुओं से हटकर स्वयं प्रतिद्वंदियों पर हो जाती है तो संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। संघर्ष वैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा है।"

(स) निरन्तर प्रक्रिया (Continuous Process)— प्रतिस्पर्द्धा एक निरन्तर प्रक्रिया है। किसी भी समाज में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति सदैव प्रतिस्पर्द्धा की शक्तियों से नियंत्रित होती है। मनुष्य निरन्तर आगे बढ़ते रहना चाहता है इसलिये उसे सदैव परिश्रम करना पड़ता है। मनुष्य की सामाजिक स्थिति को ऊंचा करने की इच्छा एवं लोभ प्रतिस्पर्द्धा को निरन्तरता प्रदान करते हैं। सौ रुपये पाने वाला व्यक्ति दो सौ रुपये के स्थान पर पहुंचने का प्रयत्न करता है और दो सौ रुपये पाने वाला व्यक्ति तीन सौ का और इसी प्रकार यह क्रम चलता रहता है। आवश्यकतायें कभी समाप्त नहीं होती।

(द) सार्वभौमिक प्रक्रिया (Universal Process)—प्रतिस्पर्द्धा एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। यह प्रत्येक समाज में पायी जाती है। हेमिल्टन ने लिखा है, "केवल ऐसे अनार्थिक स्थान जैसे स्वर्ग में यह (प्रतिस्पर्द्धा) अनुपस्थित हो सकती है जहां पर स्वर्गवासी आवश्यकताओं से स्वतंत्र हैं या जहां पर प्रत्येक अच्छी वस्तु की अधिकता है।"§ प्रतिस्पर्द्धा उस समय तक पायी जायेगी जब

¶"When there is a shift in interest from the objects of competition to the competitors themselves, rivalry results. Rivalry is personalized competition." Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology', p. 234.

§"Only in such a noneconomy as heaven, where celestials are free from wants or there is a surfeit of all good things, can it be absent." Walton H. Hamilton, 'Competition', in Encyclopiedia of the Social Sciences, Vol. IV, p. 147.

तक लोग ऐसी वस्तुओं की इच्छा करते रहेंगे जो कि सीमित हैं और उनकी मांग पूर्ति से अधिक रहेगी। कई बार प्रतिस्पर्द्धा अत्यधिक सहयोगी समाजों में भी अत्यधिक मात्रा में पायी जाती है। उदाहरण के लिये रूस में समाजवादी प्रतिस्पर्द्धा (Socialist Competition) इससे स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्द्धा सार्वभौमिक प्रक्रिया है।

प्रतिस्पर्द्धा के प्रकार (Types of Competitions)

प्रतिस्पर्द्धा दो प्रकार की होती है—वैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा (Personal Competition) और अवैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा (Impersonal Competition)

(अ) वैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा (Personal Competition)—वैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा उस प्रतिस्पर्द्धा को कहते हैं जो व्यक्तियों के बीच पायी जाती है। इसमें प्रतिस्पर्द्धी एक दूसरे के प्रति चेतन होते हैं। इसे प्रतिद्वंदिता (Rivalry) भी कहते हैं।

(ब) अवैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा (Impersonal Competition)—अवैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा उस प्रतिस्पर्द्धा को कहते हैं जो समूहों के बीच पायी जाती है। यद्यपि व्यक्ति ही सामाजिक समूहों के सदस्य होते हैं फिर भी ऐसी प्रतिस्पर्द्धा में संबंध अवैयक्तिक होते हैं। प्रतिस्पर्द्धी एक दूसरे के प्रति सामान्यतया अचेतन होते हैं।

प्रतिस्पर्द्धा के स्वरूप (Forms of competition)

प्रतिस्पर्द्धा के अनेक स्वरूप पाये जाते हैं। इनमें से निम्न स्वरूप प्रमुख हैं :—

(अ) आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा (Economic Competition)—आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा से हम सभी भली प्रकार परिचित हैं क्योंकि इसकी चर्चा दैनिक जीवन में नित्य प्रति होती रहती है। इस प्रतिस्पर्द्धा के स्वरूप का जन्म इसलिये होता है कि आर्थिक वस्तुओं की मांग पूर्ति से अधिक होती है। हम उन्हीं वस्तुओं को आर्थिक कहते हैं जिनकी माँग पूर्ति से अधिक हो।

(ब) साँस्कृतिक प्रतिस्पर्द्धा (Cultural Competition)—साँस्कृतिक प्रतिस्पर्द्धा उन सभी स्थानों पर पायी जाती है जहाँ दो या अधिक संकृतियां एक दूसरे के संबंध में आती हैं। विभिन्न धर्मों एवं मतों की प्रतिस्पर्द्धा से हम सब परिचित हैं।

(स) सामाजिक प्रतिस्पर्द्धा (Social Competition)—आर्थिक क्षेत्र की ही भाँति मनुष्य अपने समाज में अपनी सामाजिक स्थिति (Social Status) के लिये परिश्रम करता है। समूह भी ऐसी प्रतिस्पर्द्धा में भाग लेते हैं। मनोवैज्ञानिक इसे 'अहं की संतुष्टि' (Satisfaction of the ego) कहते हैं। मनुष्य और समूह समाज में अपना मान बढ़ाना चाहते हैं।

(द) राजनैतिक प्रतिस्पर्द्धा (Political Competition)—राजनैतिक प्रतिस्पर्द्धा, प्रतिस्पर्द्धा के उस स्वरूप को कहते हैं जो व्यक्ति या समूह राज्य सत्ता पर अधिकार जमाने या राजनैतिक स्थिति (Palitical Status) को प्राप्त करने के लिये करते हैं।

(य) प्रजातीय प्रतिस्पर्द्धा (Racial Competition)—प्रजातीय प्रतिस्पर्द्धा उस प्रतिस्पर्द्धा को कहते हैं जो दो या अधिक प्रजातियां एक दूसरे से उच्च बनी रहने की अभिलाषा से करती हैं।

प्रतिस्पर्द्धा और कार्यक्षमता (Competition and Efficiency)

प्रतिस्पर्द्धा केवल पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रिया नहीं है। इसमें अत्यधिक गुण पाये जाते हैं। प्रतिस्पर्द्धा का सबसे बड़ा गुण यह है कि वह कार्यक्षमता को प्रोत्साहन देती है और बढ़ाती है। प्रतिस्पर्द्धा के फलस्वरूप व्यक्ति अधिक परिश्रम करने के लिये प्रोत्साहित होते हैं। बीसंज और बीसंज ने उचित लिखा है, 'हमें पूर्ण विश्वास है कि यदि सहयोग कार्यों को पूर्ण करवाता है तो प्रतिस्पर्द्धा यह आश्वासन देती है कि वे (कार्य) अच्छी प्रकार से किये जायेंगे।" * प्रतिस्पर्द्धा अत्यन्त आवश्यक है। पूंजीवादी समाजों में तो प्रतिस्पर्द्धा पाई ही जाती है, परन्तु समाजवादी सहयोगी समाज भी इसे समाप्त नहीं कर सके। रूस में साम्यवादी समाज पाया जाता है और वहां पर व्यक्तिगत सम्पत्ति का कोई महत्व नहीं है। इसके फलस्वरूप प्रतिस्पर्द्धा का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। उन्होंने प्रतिस्पर्द्धा का नाम समाजवादी प्रतिस्पर्द्धा (Socialist Competition) रखा है। व्यक्तियों में प्रतिस्पर्द्धा न होकर दो मिलों या कारखानों में प्रतिस्पर्द्धा उत्पन्न की जाती है। रूस ने अपना उत्पादन इस पद्धति के द्वारा अत्यधिक बढ़ा लिया है। इससे स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्द्धा कार्य करने की स्फूर्ति, प्रेरणा एवं गति प्रदान करती है। इनके फलस्वरूप कार्यक्षमता बढ़ती है।

---

† "We are convinced that while co-operation gets things done, competition assures that they will be well done." Biesanz & Biesanz, 'Modern Society,' P. 91.

प्रतिस्पर्द्धा और आधुनिक समाज
(Competition and Modern Society)

प्रतिस्पर्द्धा का स्थान आधुनिक समाज में अत्यन्त माननीय है। प्रतिस्पर्द्धा आधुनिक जटिल समाज में इसलिये और भी अधिक सर्वप्रिय हो गई है कि परिश्रम को प्रोत्साहन देकर व्यक्ति को प्रगति की ओर बढ़ाती है। किंग्सले डेविस ने लिखा है, "वास्तव में इसको प्रगति कही जाने वाली वस्तु से स्पष्ट सम्बन्ध होने के कारण कुछ क्षेत्रों में यह आधुनिक सभ्यता के आवश्यक लक्षण के रूप में मानी जाने लगी है।" *

प्रतिस्पर्द्धा प्राचीन समाजों में पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रिया कही जा सकती है परन्तु आधुनिक समाज ने इसके दृष्टिकोण को परिवर्तित कर दिया है और नकारात्मक मूल्यों के स्थान पर सकारात्मक मूल्यों को स्थापित कर दिया है। आधुनिक संस्कृति ने इसे एक सुन्दर, अच्छी एवं प्रिय वस्तु बना दिया है। आजकल प्रतिस्पर्द्धा का प्रयोग अत्यधिक बढ़ गया है। परिवार भी इससे रहित नहीं है। माता और पिता में बच्चे के प्यार के लिये प्रतिस्पर्द्धा होती है और वे बच्चे से पूंछते हैं कि तुम्हें कौन अधिक प्यार करता है। उत्तर जिसके पक्ष में होता है वह आनन्द विभोर हो जाता है और दूसरा अन्य अवसर की प्रतीक्षा करता है और बच्चे को अधिक प्यार करना प्रारम्भ कर देता है।

प्रतिस्पर्द्धा समाज में व्यक्तियों को कार्य करने के लिये प्रेरित करती है और सामाजिक स्थितियों को निश्चित करती है। आधुनिक समाज में सामाजिक स्थिति जन्म से निश्चित नहीं होती है बल्कि प्राप्त की जाती है इसलिये प्रतिस्पर्द्धा का महत्व सामाजिक स्थिति को निश्चित करने में और भी बढ़ गया है।

सम्पादित स्थिति और प्रतिस्पर्द्धा (Achieved Status and Competition)—प्रतिस्पर्द्धा और सम्पादित स्थिति में अत्यधिक घनिष्ट सम्बन्ध है। ग्रीन ने तो यहां तक लिखा है "सम्पादित स्थिति पर इतनी अधिक स्पर्द्धा लक्षित होती है कि दोनों शब्द प्रायः व्यवहारिक रूप में पर्यायवाची हैं।"†

---

* "In fact its obvious connection with what is called progress has led to its enthronement in some circles as the essential feature of modern civilization." Kingsley Davis; 'Human Society', p. 163-4.

† "So much of competition is almed at achieved status, however, that the two terms are practically synonymous." A. W. Green, 'Sociology' (1956), p. 56.

स्थिति और प्रतिस्पर्द्धा के सम्बन्ध का वर्णन करते हुये बर्नार्ड ने भी लिखा है, "अतः यद्यपि हम आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक प्रतिस्पर्द्धा की चर्चा कर सकते हैं (तथापि) प्रत्येक स्वरूप में स्थिति के लिये प्रतिस्पर्द्धा सदैव उपस्थित रहती है।" *

पशुओं में भी प्रतिस्पर्द्धा पाई जाती है। पशु अपने अस्तित्व के लिये अधिक परिश्रम करते हैं परन्तु मनुष्य अपनी सामाजिक स्थिति के लिये करते हैं। विशेषतया उन समाजों के लिए जिनमें जटिल सामाजिक संघठन और उच्च कोटि की प्रौद्योगिकी पाई जाती है यह कथन और भी अधिक सत्य है। मनुष्य केवल शारीरिक अस्तित्व के लिये प्रतिस्पर्द्धा नहीं करता। एलरिज ने उचित लिखा है, "व्यक्तियों और समूहों के बीच प्रतिस्पर्द्धा अस्तित्व बनाये रखने की अपेक्षा अधिकतर अपनी स्थितियों की रक्षा या उन्नति के उद्देश्य से होती है।" †

इसमें सन्देह नहीं कि प्रतिस्पर्द्धा आधुनिक युग में एक अच्छी प्रक्रिया समझी जाती है, फिर भी असीमित प्रतिस्पर्द्धा अच्छी नहीं होती।

असीमित प्रतिस्पर्द्धा (Unlimited Competition)

कुछ आधुनिक विद्वानों का मत था कि असीमित प्रतिस्पर्द्धा होनी चाहिये और यह प्रजातंत्र एवं स्वतंत्र व्यापार का आवश्यक लक्षण है परन्तु शीघ्र ही यह अनुभव होने लगा कि असीमित प्रतिस्पर्द्धा लाभ की अपेक्षा हानि पहुंचाती है। एकाधिकार (Monopoly) विकसित हो जाता है और निर्बलों का कोई सहारा नहीं रहता और स्वतंत्रता भी नष्ट हो जाती है। आधुनिक युग में प्रतिस्पर्द्धा पर नियंत्रण किया जाता है यद्यपि पूर्ण प्रतिस्पर्द्धा कभी भी नहीं पाई जाती। बेनेट और ट्यूमिन ने लिखा है, "पूर्ण प्रतिस्पर्द्धा और पूर्ण सहयोग की

---

* "Thus although we may speak of economic, social and political competition, in all cases competition for status is present." Jessie Bernard, 'American Community Behavior' Dryden Press, New York (1949), p. 85.

† "Competition between individuals and groups is thus largely towards the objective of preserving or improving their respective statues rather than actual survival." Eldridge and others, 'Fundamentals of Sociology' p. 383.

कल्पनायें दोनों ही समान रूप से काल्पनिक है।"§ प्रतिस्पर्द्धा पर कुछ न कुछ नियंत्रण सदैव रहे हैं। प्रतिस्पर्द्धा का मौलिक लक्षण ही यही है कि वह निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत स्वार्थों का संघर्ष है। ये सीमायें समाज द्वारा निश्चित की जाती हैं और प्रतिस्पर्द्धियों को उनका कठोरता से पालन करना पड़ता है। यदि इन नियमों का पालन नहीं होता तो प्रतिस्पर्द्धा संघर्ष में परिवर्तित हो जाती है। इसके अतिरिक्त भी प्रतिस्पर्द्धा को सीमित किया जाता रहा है। विभिन्न स्वार्थों के संगठन स्थापित हो जाते हैं जो प्रतिस्पर्द्धा की सीमा में रखते हैं। उदाहरण के लिये श्रमिक संघ, मिल मालिक संघ, उपभोक्ता सहकारी संघ इत्यादि।

प्रतिस्पर्द्धा पर इतना नियंत्रण होते हुये भी वह सीमाओं का उल्लंघन कर जाती है और संघर्ष उत्पन्न हो जाता है।

प्रतिस्पर्द्धा, संघर्ष की ओर निर्देशित करती है
(Competition leads to Conflict)

प्रतिस्पर्द्धा व्यक्तियों और समूहों को संघर्ष की ओर ले जाती है। मान लीजिये दो खिलाड़ी खेल रहे हैं। एक खिलाड़ी दूसरे से बाजी ले जाना चाहता है। इसके फलस्वरूप वह उस व्यक्ति विशेष से द्वेष करने लगता है। इसी को प्रतिद्वन्दिता (Rivalry) कहते हैं। इसके उपरान्त वह सीमाओं का उल्लंघन करने लगता है और किसी भी प्रकार जीतना चाहता है। यही संघर्ष है। बोगर्डस ने उचित लिखा है, "प्रतिस्पर्द्धा, तर्क के अनुसार, संघर्ष में विकसित हो जाती है।" *

प्रतिस्पर्द्धा में कुछ न कुछ तो संघर्ष की भावना पाई जाती ही है। किंग्सले डेविस ने भी लिखा है, "इसलिये यह (प्रतिस्पर्द्धा) कलह का एक परिवर्तित स्वरूप है।" † प्रतिस्पर्द्धा पूर्ण संघर्ष न होने के कारण एक दम पृथक् करने

---

§ "The assumptions of 'perfect competition' and 'perfect co-operation' are both equally fictitious." Bennett and Tumin, 'Social Life,' p. 124.

* "Competition logically develops into conflict." Bogardus 'Sociology', p. 528.

† "It is thus a modified form of struggle." K Davis, 'Human Society', p. 162.

वाली सामाजिक प्रक्रिया नहीं कही जा सकती। प्रतिस्पर्द्धा एकीकरण भी करती है परन्तु असीमित प्रतिस्पर्द्धा विघटन को जन्म देती है। इसलिये हम यह कह सकते हैं कि प्रतिस्पर्द्धा अति न्यून मात्रा में पृथकीकरण करती है। जोन्स ने भी लिखा है, "तब, प्रतिस्पर्द्धा पृथक् करने वाली नम्र प्रक्रियाओं में से एक है।"§

फिर भी प्रतिस्पर्द्धा एक प्रकार का संघर्ष है। अब हम संघर्ष (Conflict) पर प्रकाश डालेंगे।

संघर्ष (Conflict)

संघर्ष मानव प्रकृति में उसी प्रकार पाया जाता है जिस प्रकार सहयोग। संघर्ष किन्हीं न किन्हीं स्वार्थों के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। यह मानव समाज की एक मौलिक सामाजिक प्रक्रिया है।

संघर्ष का अर्थ (Meaning of Conflict)

संघर्ष का अर्थ प्रतिस्पर्द्धा का विवेचन करते समय हमने बताने की चेष्टा की थी। जब प्रतिस्पर्द्धा उद्देश्यों से हट कर प्रतिस्पर्द्धियों पर केन्द्रित हो जाती है तो संघर्ष का रूप धारण कर लेती है। संघर्ष की परिभाषा करते हुए ग्रीन ने लिखा है, "संघर्ष दूसरे या दूसरों की इच्छा के विरोध, प्रतिकार या बलपूर्वक रोकने के विचारपूर्वक प्रयत्न को कहते हैं।"* संघर्ष में अहिंसा की भावना स्पष्ट होती है। गिलिन और गिलिन ने हिंसा पर अधिक बल दिया है। उन्होंने लिखा है, "सङ्घर्ष वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति या समूह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति अपने विरोधी को हिंसा या हिंसा के भय के द्वारा प्रत्यक्ष आह्वान देकर करते हैं।"† ग्रीन ने लिखा है कि सङ्घर्ष बिना शारीरिक हिंसा के भी उत्पन्न हो सकता है। सङ्घर्ष का अर्थ उसकी प्रकृति पर विचार करने से और भी अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

---

§ "Competition is, thus, one of the milder disintegrative processes" Jones, 'Basic Sociological Principles,' Ginn and Company, Boston (1949), p. 370.

* "Conflict is the deliberate attempt to oppose, resist or coerce the will of another or others." A. W. Green, 'Sociology' (1956), p 50.

† "Conflict is the social process in which individuals or groups seek their ends by directly challenging the antagonist by violence or the threat of violence." Gillin and Gillin, 'Cultural Sociology', p. 625.

संघर्ष की प्रकृति (Nature of Conflict)

सङ्घर्ष की प्रकृति के निम्न प्रमुख लक्षण हैं:—

(अ) चेतन प्रक्रिया (Conscious Process)—सङ्घर्ष एक चेतन प्रक्रिया है। सङ्घर्ष में प्रतिद्वन्दियों को एक दूसरे का पूर्ण ज्ञान होता है और वे न केवल उद्देश्य की प्राप्ति करना चाहते हैं बल्कि अपने विरोधियों का नाश भी करना चाहते हैं। सङ्घर्ष में तीव्र उद्वेग उत्पन्न हो जाता है और विरोधी अत्यधिक सतर्क हो जाते हैं। पार्क और बरगस ने भी लिखा है, "सङ्घर्ष अति तीव्र उद्वेग और अत्यधिक शक्तिशाली उत्तेजना को जागृत कर देता है और ध्यान एवं प्रयत्न को अत्यधिक एकाग्रचित कर देता है।"*

(ब) वैयक्तिक प्रक्रिया (Personal Process)—सङ्घर्ष एक वैयक्तिक प्रक्रिया होती है क्योंकि प्रतिद्वन्दियों का उद्देश्य व्यक्तियों को हानि पहुंचाना या समाप्त करना भी होता है। उनका परिश्रम उद्देश्य से हट कर प्रतिद्वन्दियों पर आ जाता है।

(स) अनिरन्तर प्रक्रिया (Intermittent Process)—सङ्घर्ष की प्रकृति निरन्तर न होकर अनिरन्तर या अस्थायी होती है। कुछ समय तक सङ्घर्ष चलता है फिर रुक जाता है और फिर चलने लगता है। सङ्घर्ष के लिये अत्यधिक शक्ति एवं कार्य की आवश्यकता पड़ती है और ये वस्तुयें व्यक्तियों या समूहों में निरन्तर स्थायी नहीं रह सकती। इसलिये इनके क्षीण होते ही सङ्घर्ष ढीला पड़ जाता है या कुछ समय के लिये समाप्त हो जाता है।

(द) सार्वभौमिक प्रक्रिया (Universal Process)—प्रतिस्पर्द्धा के समान सङ्घर्ष भी सार्वभौमिक प्रक्रिया है। यह किसी न किसी रूप में प्रत्येक समाज में पाया जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार सङ्घर्ष युयुत्सा (Pugnacity) की मूल प्रवृति के कारण मनुष्यों की प्रकृति में निहित है, परन्तु इस प्रकार के विचार की पुष्टि करना सम्भव नहीं है क्योंकि मनुष्य सहयोग और सङ्घर्ष दोनों ही करता रहा है। ये तत्व संस्कृति पर आधारित है और मानव

---

* "Conflict.....evokes the deepest emotions and strongest passions and enlists the greatest concentration of attention and of effort." R. E. Park and E. W. Burgess, 'Introduction to the Science of Sociology', University of Chicago Press, Chicago, p. 574.

प्रकृति से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। कोई भी कारण क्यों न हो सङ्घर्ष प्रत्येक समाज में पाया जाता है। सङ्घर्ष व्यक्तियों और समूहों की इच्छाओं एवं स्वार्थों के टकराने से उत्पन्न होता है। सामाजिक नियंत्रण के साधन-रूढ़ियाँ तथा संस्थाओं—मनुष्यों की इच्छाओं एवं स्वार्थों पर नियंत्रण रखते हैं और कुछ नियमों के द्वारा संघर्षों को बचाते हैं परन्तु सामाजिक नियंत्रण के साधन बहुत धीरे धीरे परिवर्तित होते हैं और इच्छायें एवं स्वार्थ अति शीघ्र परिवर्तित होते रहते हैं और नवीन रूप धारण करते रहते हैं। जब तक ये नये रूप धारण होते रहेंगे तब तक संघर्ष भी नये २ रूपों में उपस्थित होता रहेगा। आधुनिक युग में रूढ़ियों के अनुसार माता पिता बच्चों पर अत्यधिक नियन्त्रण रखना चाहते हैं परन्तु स्वतंत्रता की लहर में पले हुये बच्चों की धारणायें परिवर्तित हो गई हैं और वे नियंत्रण का विरोध करते हैं फलतः माता पिता एवं बच्चों के बीच संघर्ष वर्तमान समाज में अधिक पाया जाता है।

संघर्ष के प्रकार (Types of Conflict)

संघर्ष दो प्रकार का होता है—वैयक्तिक (Personal) और सामूहिक (Corporate)।

(अ) वैयक्तिक संघर्ष (Personal Conflict)—वैयक्तिक सङ्घर्ष उस सङ्घर्ष को कहते हैं जो एक समूह में व्यक्तियों के बीच पाया जाता है। समूह इस प्रकार के सङ्घर्ष को प्रोत्साहन नहीं देता और उसे अधिक से अधिक नियन्त्रित रखने का प्रयत्न करता है। समूह को इस सङ्घर्ष से कोई लाभ नहीं होता।

इस सङ्घर्ष के उत्पन्न होने के कई कारण होते हैं। व्यक्ति के कुछ स्वार्थ समूह के स्वार्थों के साथ होते हैं और कुछ व्यक्तिगत। इन व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति मनुष्य किसी भी मूल्य पर करना चाहता है। ईर्ष्या और द्वेष व्यक्तिगत सङ्घर्ष को जन्म देते हैं। अधिकाँश सङ्घर्ष के कारण शक्ति, धन, विश्राम, मान एवं लिंग होते हैं। कई बार मनुष्य किसी कार्य को मिल कर करते हैं परन्तु उस कार्य के द्वारा प्राप्त फल के वितरण पर सङ्घर्ष उत्पन्न हो जाता है। इसके उदाहरण जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मिलते हैं।

वैयक्तिक सङ्घर्ष में शारीरिक हिंसा का प्रयोग तुलनात्मक दृष्टि से कम होता है क्योंकि समूह के नियम व्यवहार को नियन्त्रित करते रहते हैं। अधिकाँश

वैयक्तिक सङ्घर्ष अत्यधिक सम्बन्ध के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं और इसीलिये बड़े कटु होते हैं।

वैयक्तिक सङ्घर्ष का सुन्दर पक्ष भी है। कई बार मित्रों, प्रेमियों, हिस्सेदारों, सहयोगियों एवं विवाहित जोड़ियों में वाक्य सङ्घर्ष (Verbal Conflict) एक दूसरे के प्रति बुरे विचारों को निकाल देता है और गलत फहमियाँ दूर हो जाती हैं, जिसके फलस्वरूप उनके सम्बन्ध फिर से मधुर हो जाते हैं। इसमें एक ही शर्त है कि वे मारपीट पर न उतर आयें।

(ब) सामूहिक सङ्घर्ष (Corporate Conflict)—सामूहिक सङ्घर्ष वह सङ्घर्ष है जो समूहों के बीच या समाजों के बीच होता है। एक समाज के विभिन्न समूह अपने अपने स्वार्थों के लिए सङ्घर्ष करते हैं। इसी प्रकार एक समाज दूसरे समाज से सङ्घर्ष करता है और धन, शक्ति एवं मान को बढ़ाता है।

एक समाज के अन्दर रहने वाले समूहों में सङ्घर्ष होता रहता है। उदाहरण के लिये जातियों के बीच सङ्घर्ष, विशिष्ट समितियों के बीच सङ्घर्ष, श्रमिकों एवं प्रबन्धकर्त्ताओं के बीच सङ्घर्ष इत्यादि। इसी प्रकार समुदायों के बीच भी सङ्घर्ष होते रहते हैं। राष्ट्रीय समुदायों के बीच होने वाले सङ्घर्ष से हम भली प्रकार परिचित हैं। इसे युद्ध (war) कहते हैं। प्रथम और द्वितीय महायुद्धों का नग्न चित्र अभी भी संसार के सम्मुख है। तृतीय महायुद्धों के विकराल रूप के भय से लोग इसे प्रारम्भ नहीं करते फिर भी उसकी आशंका सदैव बनी रहती है। अणु बमों के परीक्षण आजकल हो रहे हैं। नेवादा (Nevada) में किये जाने वाले परीक्षणों के विरोध में जापान ने विशेष रूप से विरोध प्रकट किया है, यद्यपि संसार के अधिकाँश राष्ट्र इसके पक्ष में नहीं हैं। पंडित नेहरू और श्री भंडारनायके ने भी संयुक्त प्रार्थना निकाली है कि इन परीक्षणों को नहीं करना चाहिए। आधुनिक युग में युद्ध का रूप बड़ा विकराल हो गया है।

सामूहिक सङ्घर्ष का भी लाभदायक पक्ष है, यद्यपि इससे हानि अधिक है। बीसंज और बीसंज ने भी लिखा है, "फिर भी अधिक सङ्घर्ष विनाशकारी होता है और जितनी समस्याओं को सुलझाता है उससे कहीं अधिक समस्याओं को जन्म देता है"* सङ्घर्ष का रूप विनाशकारी तो होता ही है परन्तु समूह के

* "Much conflict, however, is destructive and breeds more problems that it solves". Biesanz, and Biesanz, 'Modern Society', p. 93.

अन्दर अधिक चेतनता एवं सङ्गठन उत्पन्न करता है। ग्रीन ने उचित लिखा है, "युद्ध सामूहिक चेतना और सामूहिक समानता को बढ़ाता है।† ग्रीन के इस कथन में बड़ी सत्यता है। पाकिस्तान सरकार रचनात्मक कार्यों के द्वारा पाकिस्तान के निवासियों में एकता स्थापित करने में असफल रही है। इसीलिये आन्तरिक कलह एवं फूट को एकता में परिवर्तित करने के लिये 'काश्मीर समस्या' को लेकर भारत के विरूद्ध जिहाद का नारा बुलन्द कर देती है। इस युक्ति के द्वारा पाकिस्तान के आन्तरिक समूह में एकता एवं शान्ति बनाये रखती है, यद्यपि युद्ध न होने के कारण वे पूर्णतया अपने इस उद्देश्य में सफल नहीं होती। किंग्सले डेविस ने ठीक ही लिखा है, "इसलिये आन्तरिक एकता और बाह्य सङ्घर्ष एक ही ढाल के प्रतिकूल पक्ष हैं।¶

अप्रत्यक्ष तथा प्रत्यक्ष संघर्ष
(Latent or Covert and Overt Conflict)

सङ्घर्ष की प्रक्रिया के दो रूप होते हैं। वास्तविक सङ्घर्ष जो प्रत्यक्ष रूप में दिखता है उसके उत्पन्न होने के पूर्व सङ्घर्ष प्रारम्भ हो चुका होता है। प्रत्यक्ष सङ्घर्ष (Over Conflict) बाह्य रूप में प्रकट होता है। पहले सङ्घर्ष मस्तिष्क में प्रारम्भ होता है और स्पष्ट रूप से प्रकट नहीं होता। इसे अप्रत्यक्ष सङ्घर्ष (Latent Conflict) कहते हैं। अप्रत्यक्ष सङ्घर्ष को तनाव (Tension) भी कहते हैं। यही अप्रत्यक्ष सङ्घर्ष अवसर पाकर प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त हो जाता है।

संघर्ष और प्रतिस्पर्द्धा (Conflict and Competition)

सङ्घर्ष और प्रतिस्पर्द्धा के अर्थों को अब तक के विवेचन से समझ लिया होगा। सङ्घर्ष और प्रतिस्पर्द्धा दोनों ही असहयोग एवं विरोध के रूप हैं परन्तु उनमें मौलिक अन्तर पाये जाते हैं। पार्क और बरगस ने उनमें अन्तर बताते हुये लिखा है, "कुछ भी हो, प्रतिस्पर्द्धा निरन्तर और अवैयक्तिक होती है और

---

† "War heightens group awareness and group identity", Green, 'Sociology', p. 54.

¶ "Internal harmony and external conflict are therefore opposite sides of the same shield." K. Davis, 'Human Society', p. 160.

सङ्घर्ष अनिरन्तर और वैयक्तिक होता है।"§ इसके अतिरिक्त भी अनेक अन्तर पाये जाते हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं :—

संघर्ष (Conflict)	प्रतिस्पर्द्धा (Competition)
१. सङ्घर्ष चेतन होता है।	१. प्रतिस्पर्द्धा अचेतन होती है।
२. यह वैयक्तिक होता है।	२. यह अवैयक्तिक होती है।
३. यह अनिरन्तर होता है।	३. यह निरन्तर होती है।
४. इसका उद्देश्य स्वार्थ की प्राप्ति के साथ साथ विरोधी को हानि पहुंचाने या समाप्त करने का भी होता है।	४. इसका उद्देश्य केवल स्वार्थ की प्राप्ति होता है और विरोध के प्रति द्वेष की भावना नहीं होती।
५. सङ्घर्ष में विरोधी को हानि पहुँचाना प्राथमिक होता है और उद्देश्य की प्राप्ति द्वैतियक।	५. प्रतिस्पर्द्धा में उद्देश्य की प्राप्ति प्राथमिक होती है।
६. सङ्घर्ष सामाजिक नियमों का पालन नहीं करता। कहावत प्रसिद्ध है 'युद्ध और प्रेम में सब उचित है'।	६ प्रतिस्पर्द्धा सामाजिक नियमों का कठोरता से पालना करती है।
७. सङ्घर्ष में हिंसा का प्रयोग होता है।	७. प्रतिस्पर्द्धा अहिंसा के सिद्धांत पर आधारित है।
८. सङ्घर्ष में प्रायः दोनों विरोधियों को हानि होती है।	८ प्रतिस्पर्द्धा में दोनों विरोधियों को प्रायः लाभ होता है।
९. सङ्घर्ष अत्यधिक मात्रा में पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रिया है।	९. प्रतिस्पर्द्धा अति न्यून मात्रा में पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रिया है।
१०. सङ्घर्ष परिश्रम को प्रोत्साहित नहीं करता है क्योंकि विरोधियों की शक्ति एक दूसरे को नष्ट करने में लग जाती है।	१०. प्रतिस्पर्द्धा परिश्रम को प्रोत्साहित करती है क्योंकि परिश्रम ही वास्तविक निर्णायक एवं सहायक होता है।
११. सङ्घर्ष उत्पादन को नहीं बढ़ा पाता है।	११. प्रतिस्पर्द्धा उत्पादन को बढ़ाती है।

§ "Competition, however, is continuous and impersonal, conflict is intermittent, and personal." Park and Burgess, 'Introduction to the Science of Sociology' (1924), p. 574.

संघर्ष का समाजशास्त्रीय महत्व
(Sociological Significance of Conflict)

संघर्ष एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में व्यक्तित्व एवं सामाजिक सङ्गठन दोनों के ही लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सङ्घर्ष चेतनता उत्पन्न करता है और परिश्रम करने के लिये बाध्य करता है। सङ्घर्ष कठिनाई के रूप में सामने आता है और सहयोग करने के लिये बाध्य करता है। मनुष्यों में इसके कारण अपनी शक्ति का अनुभव होता है।

रयूटर और हार्ट ने उचित लिखा है, "यह (सङ्घर्ष) समस्त चेतन जीवन के आधार एवं उत्पत्ति की जड़ है, आत्म चेतना और सामूहिक चेतना दोनों सङ्घर्ष के परिणाम हैं।"§

संघर्ष मनुष्य के जीवन को संगठित करने का कार्य करता है। प्रत्येक समस्या एक प्रकार का संघर्ष होता है। इन समस्याओं या संघर्षों से लड़ना मनुष्य में निर्णय करने की शक्ति को विकसित करता है। इसी प्रक्रिया के द्वारा उसके विचार एवं कार्य संगठित होते हैं और उसका जीवन एक निश्चित दिशा की ओर बढ़ने लगता है। बिना संघर्ष के चरित्र का निर्माण नहीं हो पाता है। वह व्यक्ति सदैव बच्चा बना रहता है जिसके जीवन में संघर्ष नहीं आता और जो पूर्ण रक्षा में जीवन बिताता है। इसलिए आधुनिक देशों में इस बात पर बल दिया जा रहा है कि विद्यार्थियों को केवल कुछ तत्व या ज्ञान समझना या स्मरण करना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु उन्हें समस्याओं का समाधान भी करना चाहिए जिससे उनके चरित्र का निर्माण हो सके। शिक्षण संस्थाओं में खेल-कूद एवं अन्य कार्य-क्रम इसी उद्देश्य के हेतु रखे जाते हैं।

व्यक्तियों के ही समान सामूहिक संगठन को बढ़ाने में भी संघर्ष महत्वपूर्ण स्थान रखता है। युद्ध का उदाहरण हम पहले दे ही चुके हैं।

संघर्ष के स्वरूप (Forms of Conflict)

संघर्ष के अनेक स्वरूप होते हैं। इनके वर्गीकरण कई प्रकार से हो सकते हैं। यहाँ पर हम विस्तार में उनका विवरण न देकर कुछ महत्वपूर्ण स्वरूपों की

---

§ "It is at the base and origin of all conscious life both self-consciousness and group-consciousness are the result of conflict." Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology' (1933), p. 311.

ओर संकेत करेंगे। उद्देश्यों के आधार पर इसके प्रमुख स्वरूप युद्ध, चिरस्थायी कलह (Feud), व्यापारिक प्रतिद्वंद्विता और मुकदमेबाजी इत्यादि हैं। समूह, जो कि संघर्ष में भाग लेते हैं, के आधार पर इसके प्रमुख स्वरूप राष्ट्रों के बीच संघर्ष, राजनैतिक संघर्ष, धार्मिक संघर्ष, जातीय संघर्ष, प्रजातीय संघर्ष सामुदायिक संघर्ष, वर्ग संघर्ष, पारिवारिक संघर्ष इत्यादि हैं। वर्ग संघर्ष (Class Conflict) के विषय में आधुनिक युग में बड़ी चर्चा रही है। इस पर हम संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

वर्ग संघर्ष (Class Conflict)

वर्ग संघर्ष अति प्राचीन काल से चला आ रहा है, परन्तु इसका महत्व साम्यवादी विचार-धारा ने और भी बढ़ा दिया है। कार्लमार्क्स, एंजिल्स इत्यादि साम्यवादी विचारकों का मत है कि संसार में दो वर्ग पाये जाते हैं, एक पूंजीवादियों का और दूसरा श्रमिकों का। सम्पूर्ण इतिहास इन्हीं दो वर्गों के संघर्ष पर आधारित है। वर्ग संघर्ष अनेक रूपों में होता रहा है। प्रत्येक काल में सदैव किसी न किसी प्रकार के वर्ग अवश्य पाये जाते हैं उनका आधार चाहे कुछ भी रहा हो। आधुनिक युग में द्रव्य के आधार पर वर्गों का निर्माण अधिक हो रहा है। भारतवर्ष में जन्म के आधार पर वर्ग-जातियों का संघर्ष तीव्र गति से हो रहा है। किसान और जमींदार, श्रमिक और पूंजीपति, नागरिक और सैनिक, उच्च वर्ग और निम्न वर्ग इत्यादि वर्ग सदैव पाये जाते रहे हैं और उनमें संघर्ष होता रहा है। प्रत्येक समय में नवीन वर्गों की रचना होती रही है। धर्म, राजनीति तथा अन्य आधारों पर भी वर्गों का निर्माण होता रहा है।

वर्ग संघर्ष का प्रमुख कारण अन्य संघर्षों की भांति स्वार्थों पर आधारित होता है। एक वर्ग दूसरे वर्ग को समाप्त कर देना चाहता है और समस्त लाभ स्वयं लेना चाहता है।

वर्ग संघर्ष यद्यपि स्वार्थों पर आधारित होता है परन्तु प्रत्येक वर्ग इस सङ्घर्ष को बड़े महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित होने की घोषणा करता है। अपने सदस्यों में यह भावना उत्पन्न करता है कि सम्पूर्ण वर्ग खतरे में है और यदि संघर्ष न किया गया तो वर्ग का अस्तित्व ही नष्ट हो जायेगा। एक वर्ग दूसरे वर्ग को संदिग्ध दृष्टि से देखता है और उसे लुटेरा एवं हत्यारा समझता है। पक्षपात की भावना अत्यधिक मात्रा में विकसित हो जाती है।

संघर्ष का नियन्त्रण (Control of Conflict)

समाज सङ्घर्ष को नियंत्रित करने का प्रत्येक प्रयत्न करता है। कचहरियाँ, पुलिस, विधियाँ, सामाजिक नियम इत्यादि इसके उदाहरण हैं। इनके अतिरिक्त भी अन्य पद्धतियों का प्रयोग व्यवस्थान (Accommodation) स्थापित करने के लिए किया जाता है। इनका वर्णन हम अगले अध्याय में करेंगे।

प्रतिस्पर्द्धा और सङ्घर्ष दो भिन्न मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं का वर्णन हमने किया। पृथक् करने वाली प्रक्रियाओं में एक और प्रमुख सामाजिक प्रक्रिया है, जिसे हम प्रतिकूलता (Contravention) कहते हैं।

प्रतिकूलता (Contravention)

प्रतिकूलता (Contravention) न तो पूर्ण रूप से सङ्घर्ष (Conflict) होती है और न प्रतिस्पर्द्धा (Competition), बल्कि प्रतिस्पर्द्धा और सङ्घर्ष के मध्य की स्थिति होती है। यह एक विशेष प्रकार का विरोध होता है।

प्रतिकूलता के दो प्रमुख लक्षण हैं—

(अ) किसी व्यक्ति, कार्य-क्रम या समूह के विषय में अनिश्चित मत होना। इसका अभिप्राय यह है कि दुविधा की स्थिति में रहना। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति आपसे मिलता है और आप उसके विषय में यह निर्णय नहीं कर पाते कि वह अच्छा है या बुरा, परन्तु आप उसे पसन्द नहीं करते।

(ब) दूसरा लक्षण यह है कि अप्रत्यक्ष घृणा (Covert Hatred) प्रारम्भ हो जाती है। यदि कोई कार्य-क्रम होता है तो उसके विषय में शंका हो जाती है कि इसमें कोई तथ्य भी है या नहीं। साथ ही साथ यह भावना विकसित हो जाती है कि कार्यक्रम सफल नहीं होगा और उसका कोई लाभ नहीं है।

इस दुविधा की स्थिति में विरोध न तो सङ्घर्ष का रूप धारण कर पाता है और न प्रतिस्पर्द्धा का। इसीलिये इसे कुछ समाजशास्त्रियों ने एक मौलिक सामाजिक प्रक्रिया कहा है। वास्तव में यह सङ्घर्ष का ही एक रूप है जो अप्रत्यक्ष सङ्घर्ष से बहुत कुछ मिलता जुलता है।

प्रतिकूलता के प्रकार (Types of Contravention)

वीसे और बेकार ¶ ने सामान्य रूप से इसके निम्न तीन प्रकार बताये हैं:—

¶ "Leopold Wiese and Howard Becker, 'Systematic Sociology', John R. Wiley and Sons, New York (1932), pp. 263-268.

१. पीढ़ियों की प्रतिकूलता (Contravention of Generations)– दो पीढ़ियों में प्रतिकूलता पायी जाती है। माता पिता और बच्चों के बीच निषेधात्मक (Negative) प्रतिक्रिया (Reaction) पायी जाती है। युवक वृद्धों की योग्यता एवं विचारों को शंका की दृष्टि से देखते हैं और उन्हें असामयिक (Out of date) समझते हैं। वृद्ध भी युवकों को पथभ्रष्ट एवं निकम्मा समझते हैं।

२. लिंगों की प्रतिकूलता (Contravention of Sexes)— स्त्रियों और पुरुषों में भी लिंग के अधार पर प्रतिकूलता पायी जाती है। वे एक दूसरे को दुविधा की दृष्टि से देखते हैं। स्त्रियों में पुरुषों के लिये और पुरुषों में स्त्रियों के लिये उनकी प्रकृति के बारे में अनेक अफवाहें प्रचलित रहती हैं।

३. संसदीय प्रतिकूलता (Parliamentary Contravention)— यह उस प्रतिकूलता या विरोध को कहते हैं जो बहुमत और अल्प मत में पाया जाता है। उदाहरण के लिये भारत की लोक सभा में कांग्रेस बहुमत दल है तथा समाजवादी, प्रजा समाजवादी, साम्यवादी, जनसङ्घी इत्यादि अल्प मत दल हैं। जो कुछ भी कांग्रेस करती है उसके विषय में अन्य दल दुविधा में रहते हैं। वे संसद में बहुमत का विरोध करते हैं।

प्रतिकूलता (Contravention) भी एक प्रकार की पृथक् करने वाली सामाजिक प्रक्रिया है, परन्तु इसके लक्षण सङ्घर्ष के समान स्पष्ट नहीं हैं और प्रतिस्पर्द्धा के समान अस्पष्ट भी नहीं हैं।

प्रश्न

१. समाज में सङ्घर्ष कैसे उत्पन्न होता है ? विभिन्न प्रकार के सङ्घर्षों की विवेचना कीजिये और वर्ग सङ्घर्ष का विश्लेषण करिये। (राजपूताना १९५७)
(What gives rise to conflicts in Society ? Explain various types of conflicts and analyse class conflict.)

२. प्रतिस्पर्द्धा और सङ्घर्ष में अन्तर बताइये। (राजपूताना १९५६)
(Distinguish between Competition and Conflict.)

३. यह बताइये कि प्रतिस्पर्द्धा, प्रतिकूलता और सङ्घर्ष की सामाजिक प्रक्रियाओं में सामाजिक एकीकरण की अपेक्षा सामाजिक विघटन के अधिक लक्षण हैं। उदाहरण दीजिये। (राजपूताना १९५५)

(Show that competition, Contravention and Conflict are processes more characteristics of social disorganisation than of social adjustment. Give examples.)

४. सामूहिक सङ्घर्ष के सामाजिक कारण क्या होते हैं ? समान शक्ति वाले दो समूहों के सङ्घर्ष का वर्णन करिये। (आगरा १९५४)

(What are the social causes of group conflicts ? Illustrate a conflict between two groups of similar strength.)

SELECTED READINGS

1. Gillin and Gillin, 'Cultural Sociology' Chapters XXIV and XXV.
2. Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology' Chapters XI, XII.
3. Ogburn and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' Chapter XII.

अध्याय २१

एकीकरण करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं सहयोग, व्यवस्थान और आत्मसात

(Integrative Social Processes: Co-operation, Accommodation and Assmilation)

सङ्घर्ष का विवरण हमने पिछले अध्याय में दिया था। सङ्घर्ष का एक प्रमुख लक्षण था – अनिरन्तरता। अनिरन्तरता से स्पष्ट है कि सङ्घर्ष सदैव नहीं चलता रहता है और थोड़े समय के बाद ऐसी अवस्था उत्पन्न होती है जिसके कारण व्यवस्थान (Accommodation) स्थापित हो जाता है, विरोधी एक दूसरे से सहयोग करने लगते हैं। मानव जीवन के लिए सहयोग और सङ्घर्ष दोनों ही आवश्यक हैं। इस अध्याय में हम उन मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं पर प्रकाश डालेंगे जो समाज में एकीकरण करती हैं। ऐसी प्रमुख समाजिक प्रक्रियाएं, सहयोग, व्यवस्थान और आत्मसात हैं।

सहयोग (Co-operation)

सहयोग किसी समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए किए गए प्रयत्न को कहते हैं। ग्रीन ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "सहयोग दो या अधिक व्यक्तियों के किसी कार्य को करने या किसी उद्देश्य, जो कि समान रूप से इच्छित होता है, पर पहुंचने के निरन्तर एवं सार्वजनिक प्रयत्न को कहते हैं।"† फेअरचाइल्ड ने लिखा है, "सहयोग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति और समूह अपने प्रयत्नों को करीब-करीब संगठित रूप में सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संयुक्त कर देते हैं।* सहयोग किसी न किसी रूप एवं मात्रा

---

† "Co-operation is the continuous and common endavour of two or more persons to perform a task or to reach a goal that is commonly cherished." A.W. Green, 'Sociology', p. 59.

* "Co-operation is the process by which individuals or groups combine their efforts, in a more or less organixed way, for the attainment of common objectives." H. P. Fairchild (Ed.), 'Dictionary of Sociology' (1944), article 'Co-operation', p. 68.

में संगठित अवश्य होता है। इसमें प्रेम एवं सद्भावना पाई जाती है। सङ्घर्ष में व्यक्ति एक दूसरे का विरोध करते हैं परन्तु सहयोग में व्यक्ति एक दूसरे का साथ देते हैं और कार्य में हाथ बंटाते हैं।

सहयोग की प्रकृति (Nature of Co-operation)

सहयोग में अत्यधिक निरन्तरता पाई जाती है, प्रतिस्पर्द्धा में सहयोग से कम और सङ्घर्ष में सबसे कम। सहयोग प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्येक समय पाया जाता है। हमारा सम्पूर्ण जीवन ही सहयोग पर आधारित है।

सहयोग की प्रवृति मनुष्य में होने का प्रथम कारण मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है। बच्चा परिवार में जन्म लेता है। परिवार के सदस्य न केवल उसका पालन पोषण करते हैं अपितु सहयोग का पाठ भी उसे पढ़ाते हैं। अकेले रहना बच्चे को दुष्कर प्रतीत होता है क्योंकि वह अन्य लोगों के साथ रहता है। परिवार के सदस्य बच्चे के मस्तिष्क एवं हृदय पर छाप डाल देते हैं। इन कारणों के फलस्वरूप सहयोग बच्चे की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता हो जाती है।

इसका दूसरा कारण सामाजिक आवश्यकता है। समाज का कोई भी कार्य बिना सहयोग के नहीं हो सकता। यहां तक कि प्रतिस्पर्द्धा और सङ्घर्ष भी बिना सहयोग के नहीं हो सकते। प्रतिस्पर्द्धा में तो स्पष्ट सहयोग झलकता है। सङ्घर्ष तो सहयोग के बिना घटित हो ही नहीं सकता। उस समय तक सङ्घर्ष प्रारम्भ नहीं होता जब तक कि संघर्ष करने वाले एक दूसरे को अपना शत्रु न स्वीकार कर लें। एक दूसरे को शत्रु स्वीकार करने का कार्य सहयोग है। इसको एक उदाहरण के द्वारा भी समझाया जा सकता है। मान लिजिए दो पहलवान सङ्घर्ष के लिए अखाड़े में उतरते हैं। यदि एक पहलवान कुश्ती लड़ने के लिए तैयार न हो या आह्वान स्वीकार न करे (अर्थात् सहयोग न करे) तो कुश्ती (सङ्घर्ष) किस प्रकार सम्भव हो सकती है ?

इस प्रकार सहयोग हमारे प्रत्येक कार्य में पाया जाता है। श्रम-विभाजन और विशेषीकरण की प्रतिक्रियाओं का आधार सहयोग है। यदि किसी समाज के विभिन्न अंग एक दूसरे से सहयोग न करें तो श्रम-विभाजन कभी भी सफल नहीं हो सकता। हम इस विषय में चेतन भले ही न हों कि सहयोग कर रहे हैं परन्तु प्रत्येक क्षण हमारा जीवन सहयोग की प्रक्रिया से सहयोग करता रहता है। कक्षा में उस समय आना जबकि अन्य विद्यार्थी और अध्यापक आते हैं, समय सारिणी के अनुसार कक्षाओं में जाना, बाँई ओर मोटर गाड़ी चलाना,

लाल रोशनी देख कर रुक जाना, गार्ड तथा इंजिन की सीटियाँ बजते ही डिब्बे में चढ़ जाना, जब कोई बात कहे उसे सुनना इत्यादि सभी सहयोग के रूप हैं।

सहयोग के प्रकार (Types of Co-operation)

ग्रीन ने सहयोग को तीन प्रमुख वर्गों में बांटा है। वे निम्न हैं:—

१. प्राथमिक सहयोग (Primary Co-operation)—प्राथमिक सहयोग में व्यक्ति और समूह में कोई अन्तर नहीं पाया जाता। व्यक्ति अपने उद्देश्यों एवं स्वार्थों को समूह के उद्देश्य एवं स्वार्थ समझता है। उद्देश्य और साधन समान होते हैं। माता अपने बच्चे की संतुष्टि के लिये कार्य करती है। उसमें उसका यही स्वार्थ है कि बच्चे की संतुष्टि हो जाये, उसी से उसकी भी सन्तुष्टि हो जाती है। सहयोग करने को ही अत्यन्त महत्व दिया जाता है और व्यक्तिगत स्वार्थों का कोई महत्व नहीं होता। इस प्रकार का सहयोग अधिकांशतः प्राथमिक समूहों में पाया जाता है।

२. द्वैतियक सहयोग (Secondary Co-operation)—द्वैतियक सहयोग वह सहयोग होता है जिसमें व्यक्ति समूह के साथ अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये सहयोग करता है। उदाहरण के लिये श्रम-विभाजन एवं विशेषीकरण की प्रक्रियाएं। प्रत्येक व्यक्ति अपना कार्य करता है और इस प्रकार दूसरों को उनके कार्य करने में सहयोग देता है जिससे इस सहयोग के बल वह व्यक्तिगत आनन्द लूट सके। आधुनिक समाज में इसी प्रकार का सहयोग पाया जाता है।

३. तृतियक सहयोग (Tertiary Co-opration)—तृतियक सहयोग का दूसरा नाम व्यवस्थान (Accommodation) है। इस पर हम आगे प्रकाश डालेंगे।

ऑग्बर्न* ने सहयोग को तीन प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया है। यह वर्गीकरण अर्थशास्त्रियों के द्वारा प्रयोग किया जाता रहा है। जब लोग एक दूसरे के साथ सहयोग करते हैं और एक सा ही कार्य करते हैं, जैसे पत्थरों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाना, दल दल में फंसी हुई मोटर को बाहर निकालना इत्यादि, तो इसे सामान्य सहयोग (Common Co-opration) कहते हैं। जब इसी प्रकार का सहयोग केवल आनन्द प्राप्ति के लिए किया जाता है तो उसे मित्रवत् सहयोग (Companionable) कहते हैं। उदाहरण के

---

* See Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology', p. 233.

लिए इराकास वन्य जाति में स्त्रियाँ खेतों की अकेले रक्षा एवं पालन कर सकती हैं परन्तु पुरुष केवल इसलिए सहयोग करते हैं कि दोनों के लिए कार्य आनन्दप्रद हो जाता है।† स्त्रियां भोजन बनाती हैं फिर भी कुछ पुरुष छुट्टी इत्यादि के दिन रसोई में स्त्रियों का हाथ बंटाने लगते हैं। सामान्य सहयोग का दूसरा प्रकार सहायक श्रम (Supplementary Labour) होता है। उदाहरण के लिए दल दल से मोटर निकालना। सामान्य सहयोग का तीसरा प्रकार विभिन्न श्रमों का एकीकरण (Integration of Differentiated Labour) होता है। इसमें सबका उद्देश्य एक होता है परन्तु उस उद्देश्य की पूर्ति के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार का श्रम भिन्न-भिन्न व्यक्ति करते हैं। उदाहरण के लिए बढ़ई, लौहार, राज, मजदूर, प्लम्बर (Plumber) इत्यादि एक भवन के निर्माण में सहयोग करते हैं।

मैकाइवर ने सहयोग को दो भागों में वर्गीकृत किया है। प्रथम प्रत्यक्ष (Direct) सहयोग और द्वितीय अप्रत्यक्ष (Indirect) सहयोग। प्रत्यक्ष सहयोग उस सहयोग को कहते हैं जिसमें दो या अधिक व्यक्ति एक साथ समान या मिलते जुलते कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए किसान एक दूसरे के कार्य में सहयोग करते हैं। अप्रत्यक्ष सहयोग वह सहयोग है जिसमें दो या अधिक व्यक्ति समान उद्देश्य की पूर्ति के लिये साथ साथ कार्य करते हैं परन्तु कार्य भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिये एक विश्वविद्यालय में प्राध्यापक, विद्यार्थी, प्रशासक, टाइपिस्ट, चपरासी इत्यादि कार्य करते हैं।

पारस्परिक सहयोग (Mutual Aid)

पारस्परिक सहयोग वह सहयोग है जिसमें मनुष्य एक दूसरे के लाभ के लिए सहयोग करते हैं। क्राप्टकिन * (Kropotkin) ने इसे बड़ा महत्व दिया है। वास्तव में पारस्परिक सहयोग, सहयोग से भिन्न नहीं है। बोगर्डस ने लिखा है, "पारस्परिक सहयोग, सहयोग का एक विशिष्ट नाम है।"§

---

† See Mark A May and Leonard W. Doob, 'Competition and Co-operation', p. 99.

* See P. Kroptkin, 'Mutual Aid; a Factor in Evolution,' Doubleday, Page and Company, New York (1902).

§ "Mutual aid is a special name for co operation." E. S. Bogardus, 'Sociology', p. 351.

व्यवस्थान (Accommodation)

सङ्घर्ष से सहयोग की ओर बढ़ने के प्रथम चरण को व्यवस्थान कहते हैं। व्यवस्थान का साधारण अर्थ वर्तमान अवस्थाओं से अनुकूलन होता है। मनुष्य का समूह चाहे वर्तमान अवस्थाओं से प्रेम करे या घृणा परन्तु अस्तित्व बनाये रखने के लिये बाह्य रूप से इन अवस्थाओं के अनुसार बनना पड़ता है क्योंकि मनुष्य निरन्तर सङ्घर्ष की अवस्था में नहीं रह सकता। सङ्घर्ष को टालने के लिये जो समझौता किया जाता है उसे व्यवस्थान कहते हैं। व्यवस्थान को समनर (Summer) ने विरोधी (Antagonistic) सहयोग कह कर पुकारा है। जोन्स ने भी लिखा है, "एक अर्थ में व्यवस्थान असहमत रहने के लिये समझौता कहा जा सकता है।"* इसका अभिप्राय यह है कि विभिन्नता होते हुये भी सङ्घर्ष न होने की अवस्था व्यवस्थान के कारण होती है।

व्यवस्थान एक अवस्था (Condition) और एक प्रक्रिया (Process) दोनों ही हैं। रयूटर और हार्ट ने व्यवस्थान की प्रक्रिया की परिभाषा करते हुए लिखा है, "एक प्रक्रिया के रूप में, व्यवस्थान प्रयत्नों का वह अनुक्रम है जिसके द्वारा मनुष्य परिवर्तित अवस्थाओं द्वारा आवश्यक बनाई गई आदतों एवं दृष्टिकोणों का निर्माण करके जीवन की परिवर्तित अवस्थाओं से एकता स्थापित कर लेते हैं।"† जीवन के प्रत्येक क्षण में व्यवस्थान की प्रक्रिया कार्य करती रहती है। जीवित रहने की कला व्यवस्थान की निरन्तर प्रक्रिया कही जा सकती है। व्यवस्थान एक अचेतन प्रक्रिया है और सदैव होती रहती है। उदाहरण के लिए एक नव-विवाहित वधु अपने पति के कुटुम्ब में जाती है। वहाँ पर उसे नवीन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। शनैः शनैः उसकी आदतें और दृष्टिकोण नवीन परिस्थितियों के अनुसार बन जाते हैं। इसके फलस्वरूप उसका पति के कुटुम्ब से व्यवस्थान हो जाता है। इसी प्रकार ग्राम से आये हुए मनुष्य भी नगर में व्यवस्थान की प्रक्रिया का सहारा लेते हैं।

---

* "In one sense, accommodation may be said to be an agreement to disagree." M. E. Jones, 'Basic Sociological Principles', p. 383.

† "As a process, accommodation is the sequence of steps by which persons are reconciled to changed conditions of life through the formation of habits and attitudes made necessary by the changed conditions themselves." Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology.' p. 322.

व्यवस्थान एक अवस्था भी है। एक अवस्था के रूप में इसकी परिभाषा करते हुए रयूटर और हार्ट ने लिखा है, "एक अवस्था के रूप में, व्यवस्थान सम्बन्धों की एक व्यवस्था, जो कि समूह में व्यक्ति की स्थिति या सम्पूर्ण सामाजिक सङ्गठन में समूह की स्थिति को परिभाषित करती है, का मानना एवं स्वीकार करना होता है।"* सापेक्षिक दृष्टिकोण से व्यवस्थान की अवस्था में मानसिक एवं सामाजिक शान्ति की अवस्था पाई जाती है। प्रत्येक किसी न किसी समूह में उत्पन्न होता है और उसे उस समूह के अनुसार आदतें, विश्वास एवं व्यवहार विकसित करने पड़ते हैं। उन अवस्थाओं से वह प्रसन्न रहे या अप्रसन्न परन्तु जीवित रहने के लिए उन्हें स्वीकार करना पड़ता है। उदाहरण के लिये हिन्दू समाज की जाति व्यवस्था को ही ले लीजिये। मेहतर भी अपनी स्थिति को स्वीकार करता है, चाहे वह स्थिति उसके लिए कितनी ही दुख-प्रद क्यों न हो। मनुष्य की प्रकृतिक इच्छाएं व्यवस्था के विरोध में उठती हैं परन्तु व्यवस्थान के द्वारा सामाजिक इच्छाओं के अनुसार मनुष्य को चलना पड़ता है। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "एक अर्थ में व्यवस्थान समस्त औपचारिक सामाजिक संगठन का आधार है।" † पार्क और बरगस ने भी इसी विचार को व्यक्त करते हुये लिखा है, "सम्पत्ति के अधिकार, प्रत्येक प्रकार के निहित स्वार्थ, पारिवारिक सङ्गठन, दासत्व, जातियाँ, वर्ग, वास्तव में सम्पूर्ण सामाजिक सङ्गठन व्यवस्थान को प्रदर्शित करता है जिसका अभिप्राय यह है कि व्यक्ति को प्राकृतिक इच्छाओं पर सीमाओं का निर्धारण किया जाता है।"§ व्यवस्थान प्रत्येक व्यक्ति एवं समूह

---

* "As a condition, accommodation is the recognition and acceptance of a set of relationships that defines the status of person in the group or of the group in the more inclusive social organization" E. B. Reuter and C. W. Hart, 'Introduction to Sociology', p. 320.

† "In one sense, accommodation is the basis of all formal social organisation." Biesanz and Biesanz, 'Modern Society,' p. 93.

§ "The rights of property, vested interests of every sort, the family organisation, slavery, castes and classes, the whole social organisation, in fact, represents accommodations, that is to say, limitations on the natural wishes of the individual." R. E. Park and E. W. Burgess, 'Introduction to the Science of Sociology,' p. 510.

के लिए एक मान्य एवं स्वीकृत स्थिति को प्रस्तुत करता है जिसके फलस्वरूप सङ्घर्ष उत्पन्न नहीं होता।

व्यवस्थान से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि पूर्ण अनुरूपता या शान्ति की अवस्था होती है। व्यवस्थान में केवल सङ्घर्ष को टालने के लिए जितनी अनुरूपता और शान्ति की जरूरत होती है वही पाई जाती हैं।

व्यवस्थान की प्रकृति (Nature of Accommodation)

व्यवस्थान की प्रक्रिया की प्रकृति के निम्न प्रमुख लक्षण हैं:—

(अ) अधिकांश अचेतन प्रक्रिया (Mostly Unconscious Process)—व्यवस्थान की प्रक्रिया अधिकांशतः अचेतन प्रक्रिया है। प्रत्येक सामाजिक सम्बन्ध हमारे दृष्टिकोण एवं मूल्य पर प्रभाव डालता रहता है जिसका हमें कोई ज्ञान नहीं होता। शनैः शनैः किसी विशिष्ट दिशा में हम बहते रहते हैं और हमें इसका ज्ञान बहुत बाद को होता है।

(ब) निरन्तर प्रक्रिया (Continuous Process)—व्यवस्थान एक निरन्तर प्रक्रिया है। जिस प्रकार श्वास की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है उसी प्रकार व्यवस्थान की प्रक्रिया भी मनुष्य को सदैव प्रभावित करती रहती है। हम लिख ही चुके हैं कि समस्त जीवन की कला ही व्यवस्थान का फल है।

(स) सार्वभौमिक प्रक्रिया (Universal Process)—व्यवस्थान प्रत्येक समाज में हर क्षण होता रहता है। व्यवस्थान मनुष्यों का प्रमुख लक्षण है।

(द) प्रेम और घृणा का मिश्रण (Ambivalence)—सहयोग प्रेम पर आधारित है और सङ्घर्ष घृणा पर। इसके विपरीत व्यवस्थान की प्रक्रिया में घृणा और प्रेम दोनों ही सन्निहित होते हैं। ऑग्बर्न तथा निमकॉफ ने लिखा है, "व्यवस्थान में प्रेम और घृणा की प्रवृतियाँ साथ साथ पायी जाती हैं।"†

(य) संघर्ष का परिणाम (Outcome of Conflict)—व्यवस्थान संघर्ष का परिणाम होता है। संघर्ष की प्रकृति अनिरन्तरता की है। इसके कारण संघर्ष कुछ समय के उपरान्त समाप्त हो जाता है और उसे समाप्त करने के लिये

---

† "In accommodation,... ..... love and hate attitudes coexist." Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology,' p. 252.

व्यवस्थान की आवश्यकता पड़ती है। यदि संघर्ष न हो तो व्यवस्थान की प्रक्रिया का भी लोप हो जायेगा।

व्यवस्थान के यंत्र (Mechanisms of Accommodation)—व्यक्तियों और समूहों के बीच व्यवस्थान स्थापित करने के अनेक यंत्र हैं। उनमें से कुछ प्रमुख यन्त्र निम्न हैं:—

१. स्थानापन्नता (Substitution)—व्यवस्थापन का एक यन्त्र स्थानापन्नता है। इस यन्त्र का यह अभिप्राय है कि मनुष्य या समूह उन उद्देश्यों को छोड़ देते हैं जिन्हें वे प्राप्त नहीं कर सके और उनके स्थान पर नवीन उद्देश्यों को बना लेते हैं। नवीन उद्देश्य नवीन परिस्थितियों के अनुसार होते हैं।

२. समझौता (Compromise)—जब व्यक्तियों और समूहों के बीच संघर्ष अधिक महत्वपूर्ण होता है और उसके बढ़ने की अधिक आशंका होती है परन्तु जब संघर्ष से दोनों ही दलों को हानि दिखाई पड़ती है तो दोनों दलों के लाभ के लिये संघर्ष समाप्त कर दिया जाता है। संघर्ष को समाप्त करने के लिये समझौते के यन्त्र का प्रयोग किया जाता है दोनों दल अपने स्वार्थों को कुछ कम कर देते हैं और ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाती है कि वे बिना संघर्ष के कार्य कर सके। कई बार दोनों दल एक दूसरे के विषय में अच्छे दृष्टिकोण से सोचने लगते हैं और इसके फलस्वरूप समझौता हो जाता है।

३. स्थिति परिवर्तन (Conversion)—कई बार मनुष्य अपनी स्थिति को ही परिवर्तित कर देता है। जीवन की जिस स्थिति से उसे संतुष्टि नहीं मिलती वह उसे परिवर्तित करके नवीन स्थिति को प्राप्त कर लेता है। साधारणतया स्थिति परिवर्तन को धर्म के ही क्षेत्र में समझा जाता है परन्तु वास्तव में यह सिद्धान्त प्रत्येक क्षेत्र में लागू होता है।

४. युक्तिकरण (Rationalisation)—कई बार संघर्ष को समाप्त करने के लिए युक्तिकरण का यन्त्र प्रयोग किया जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने कार्यों, विचारों या स्थिति को किसी न किसी युक्ति द्वारा उचित समझता है। इसके फलस्वरूप किसी प्रकार का संघर्ष नहीं होता क्योंकि वह नवीन परिस्थिति को उचित मान लेता है। कई बार जब मनुष्यों पर आपत्ति आती है उसके कारण उनकी स्थिति खराब हो जाती है तो उस स्थिति को ईश्वर-इच्छा मानकर उचित समझते हैं। वे कहते हैं कि ईश्वर की ऐसी ही इच्छा रही होगी। इसका अति सुन्दर उदाहरण जाति व्यवस्था है। प्रत्येक जाति का

व्यक्ति अपनी स्थिति को उचित समझता है और अन्य जातियों से किसी प्रकार का संघर्ष नहीं करता। इसका प्रमुख कारण कर्म के सिद्धान्त के अनुसार जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है उसी के अनुसार उसे जन्म मिलता है। कर्मों का ब्यौरा ईश्वर के कार्यालय में रखा जाता है और ईश्वर उन्हीं कर्मों के अनुसार दूसरा जन्म देता है। इस तर्क के द्वारा निम्न से निम्न जाति का भी व्यक्ति अपनी स्थिति को उचित समझता है और उसे समाप्त नहीं करना चाहता। जो अनेक जातीय संघर्ष चले आ रहे हैं वे अत्याचारों के विरुद्ध हैं न कि स्थिति के विरुद्ध। एक हरिजन ब्राह्मण नहीं बनना चाहता। निम्न जातियों में भी अनेक उप-जातियाँ पाई जाती हैं और सब ही बड़ी दृढ़ता से अपनी स्थिति की रक्षा करते हैं।

५. सहिष्णुता (Tolerance)- व्यवस्थान सहिष्णुता के द्वारा शीघ्र स्थापित हो जाता है क्योंकि भिन्नता होते हुए भी वे सहिष्णुता के कारण संघर्ष नहीं करते और एक दूसरे को समझने का प्रयत्न करते हैं।

६. बल का प्रयोग (Coercion)—व्यवस्थान कई बार बल के प्रयोग द्वारा भी स्थापित किया जाता है। संघर्ष में विजित दल, विजयी दल के बल प्रयोग के भय से संघर्ष समाप्त कर देता है और नवीन परिस्थितियों से व्यवस्थान कर लेता है। बल शारीरिक, आर्थिक इत्यादि किसी भी प्रकार का हो सकता है।

व्यवस्थान की पद्धतियाँ (Techniques of Accommodation)

संघर्ष या विवाद जो संघर्ष करने वाले दलों के द्वारा समाप्त नहीं हो पाते उन्हें अन्य तटस्थ व्यक्तियों या दलों द्वारा समाप्त किया जाता है। इसकी प्रमुख पद्धतियाँ निम्न हैं:—

१. मध्यस्थता (Mediation)—मध्यस्थता उस पद्धति को कहते हैं जिसमें विवाद करने वाले दलों के निमंत्रण पर एक निस्वार्थी दल उनका समझौता कराता है। मध्यस्थ केवल दोनों दलों के बीच संदेशवाहक का कार्य करता है। वह न तो अपनी इच्छा प्रकट करता है और न निर्णय।

२. अनुरंजन (Conciliation)—अनुरंजन भी एक प्रकार की मध्यस्थता होती है परन्तु इनमें अनुरंजक सुझाव देता है और निर्णय की ओर संकेत करता है। अनुरंजक का कार्य अधिकतर सुझाव देने का होता है पर उन्हें स्वीकार करना या न करना विवाद युक्त दलों पर निर्भर करता है। किसी प्रकार का बल प्रयोग में नहीं लाया जाता।

३. पंचायत (Arbitration)—पंचायत भी एक प्रकार की मध्यस्थता होती है परन्तु इसमें मध्यस्थ या पंच का निर्णय विवाद को मानना ही पड़ता है। कई बार पंच विवाद युक्त दलों की अनुमति के बिना ही न्यायिक या प्रशासकीय सत्ता द्वारा भी नियुक्त कर दिये जाते हैं।

व्यवस्थान और सामाजिक यन्त्र (Accommodation and Social Instruments)

आधुनिक समाज में सामाजिक संगठन की जटिलता के फलस्वरूप अनेक नवीन परिस्थितियाँ उत्पन्न होती रहती हैं जिनसे मनुष्य को संघर्ष करना पड़ता है। परिस्थितियों की विविधता एवं नवीनता के फलस्वरूप आधुनिक मनुष्य इनसे व्यवस्थान नहीं कर पाते हैं। फल होता है संघर्ष, कलह और विघटन।

आधुनिक युग में व्यवस्थान करने में सहायता करने के लिए अनेक सामाजिक यन्त्र स्थापित हो गए हैं। मानसिक चिकित्सक और मानस विश्लेषज्ञ व्यक्ति के मानसिक संङ्घर्षों को समाप्त करने में सहायता करते हैं। आधुनिक युग में सामाजिक सेवा-कार्य (Social Work) की अनेक समितियाँ विकसित हो गई हैं। विशिष्ट क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार के सामाजिक सेवा सङ्गठन (Social Work Organizations) कार्य कर रहे हैं।

सरकार भी एक प्रकार से व्यस्वथापन का कार्य करती है। वह कचहरियों, विधान सभाओं, पुलिस सङ्गठन और प्रशासन द्वारा मानव सम्बन्धों के प्रत्येक क्षेत्र में व्यवस्थान करती है। संयुक्त-राष्ट्र संघ (United Nations Organization) भी प्रमुखतया राष्ट्रों के बीच व्यवस्थान का कार्य करता है।

व्यवस्थान और सामंजस्य (Accommodation and Adjustment)

व्यवस्थान और सामंजस्य में एक महान अन्तर है। सामंजस्य एक चेतन प्रक्रिया है। मनुष्य प्रयत्न करके किसी परिस्थति से सामंजस्य स्थापित करते हैं। व्यवस्थान एक अचेतन प्रक्रिया है और शनैः शनैः होती रहती है। सामंजस व्यवस्थान का पहला चरण कहा जा सकता है।

उदाहरण के लिए एक सेना हार जाती है। वह उन परिस्थितियों से सामंजस्य करती है जिन पर उसका कोई नियन्त्रण नहीं होता। इसी प्रकार श्रमिकों द्वारा की गई हड़ताल के असफल हो जाने पर श्रमिकों को उत्पन्न परिस्थिति से सामंजस्य करना पड़ता है। सामंजस्य विचार करने के उपरान्त किया जाता है।

व्यवस्थान केवल बाह्य अवस्था से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि आन्तरिक अवस्था से भी सम्बन्धित होता है जब कि सामंजस्य केवल बाह्य अवस्था से सम्बन्धित होता है। सामंजस्य होने के बाद शनैः शनैः व्यवस्थान की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है और कुछ समय के उपरान्त नवीन परिस्थिति से सामंजस्य के स्थान पर व्यवस्थान हो जाता है।

व्यवस्थान और अनुकूलन (Accommodation and Adaptation)

व्यवस्थान और अनुकूलन में भी अन्तर है। व्यवस्थान की उत्पत्ति संघर्ष से होती है जबकि अनुकूलन प्रतिस्पर्द्धा का प्राकृतिक फल होता है।

अनुकूलन प्राणीशास्त्रीय विकास की प्रक्रिया का अन्तिम परिणाम होता है। प्राणीशास्त्रीय संरूप में नवीन लक्षण उत्पन्न होते रहते हैं और वही लक्षण रह पाते हैं जो सबसे अधिक अनुकूलन करते हैं। प्राकृतिक प्रवरण (Natural Selection) के सिद्धान्त से अनुकूलन सम्बन्धित है।

अनुकूलन के विपरीत व्यवस्थान एक सीखने की प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी आदतें, भावनायें एवं विचार परिवर्तित करके नवीन सामाजिक पर्यावरण के योग्य बना पाता है।

व्यवस्थान और अनुकूलन को एक उदाहरण के द्वारा भली प्रकार समझाया जा सकता है। पशुओं का पालना (Taming) एक व्यवस्थान का स्वरूप है। इसके द्वारा पशु के स्वभाव में इस प्रकार का परिवर्तन हो जाता है कि वह मनुष्यों के बीच रह सकता है। इसके द्वारा पशु के प्राणीशास्त्रीय स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आता। अनुकूलन का उदाहरण पशुओं के घरेलू बनाने की क्रिया (Domestication) है। कुत्ता प्रारम्भ में भेड़िये के समान पशु था। प्रवरण के द्वारा अनेक पीढ़ियों में अनुकूलन करते करते उसका वर्तमान प्राणीशास्त्रीय स्वरूप हो गया है। व्यवस्थान एक सामाजिक प्रक्रिया है और अनुकूलन एक प्राणीशास्त्रीय प्रक्रिया।

संघर्ष से सहयोग की ओर बढ़ने में प्रथम चरण सामाजिक सामंजस्य और द्वितीय चरण व्यवस्थान का होता है। इन दोनों प्रक्रियाओं पर हम संक्षेप में प्रकाश डाल चुके हैं। इसकी अन्तिम प्रक्रिया आत्मसात (Assimilation) होती है। आत्मसात (Assimilation)की सासाजिक प्रक्रिया पूर्ण एकीकरण स्थापित कर देती है।

आत्मसात (Assimilation)

आत्मसात की प्रक्रिया जटिल समाजों में अधिक पायी जाती है। आत्मसात की परिभाषा करते हुए ऑग्बर्न और निमकॉफ ने लिखा है, "आत्मसात वह प्रक्रिया है जिससे किसी समय असमान व्यक्ति या समूह समान हो जाते हैं अर्थात् वे अपने स्वार्थों एवं दृष्टिकोणों में समान हो जाते हैं।"† पार्क और बरगस ने लिखा है कि आत्मसात, "अन्तर प्रदेश और एकता की वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति और समूह दूसरे व्यक्तियों या समूहों की धारणाओं, भावनाओं और दृष्टिकोणों को अर्जन कर लेते हैं और उनके अनुभव और इतिहास के भागीदार बनकर उनके साथ एक सामान्य सांस्कृतिक जीवन में समाविष्ट हो जाते हैं।"§ बीसंज और बीसंज ने इसकी परिभाषा इन शब्दों में की है, "आत्मसात वह सामाजिक प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति और समूह समान भावनाओं मूल्यों और उद्देश्यों को स्वीकार कर लेते हैं।"* बोगर्डस ने लिखा है, "आत्मसात वह प्रक्रिया है जिससे अनेक व्यक्तियों के दृष्टिकोण एकीकृत हो जाते हैं और इसके फलस्वरूप वे एक संयुक्त समूह में विकसित हो जाते हैं।" इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि आत्मसात की प्रक्रिया विभिन्न दृष्टिकोणों एवं विचारों को रखने वाले व्यक्तियों और समूहों को समान दृष्टिकोण एवं विचार रखने के लिए प्रेरित करती है। आत्मसात की प्रक्रिया एकीकरण करने की प्रक्रीया है।

आत्मसात एक सांस्कृतिक प्रक्रिया भी है। विभिन्न संस्कृतियों के एक संस्कृति में संयुक्त हो जाने की प्रक्रिया को आत्मसात कहते हैं। डासन और

† "Assimilation is the process whereby individuals or groups once dissimilar become similar; that is become identified in their interests and outlook." Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology', p. 261

§ "Assimilation is a process of interpenetration and fusion in which persons and groups acquire the memories, sentiments, and attitudes of other persons or groups, and, by sharing their experience and history, are incorporated with them in a Common cultural life." R. E. Park and E. W. Burgess, 'Introduction to the Science of Sociology', p 735.

* "Assimilation is the social process whereby individuals and groups come to share the same sentiments, values and goals." Biesanz and Biesanz, 'Modern Society', p. 93.

गेटिस ने लिखा है, "सांस्कृतिक रूप से समान एवं अभिन्न होना आत्मसात कहलाता है।"*

बच्चे जैसे जैसे बड़े होते जाते हैं और व्यवहार करना भी सीखते जाते हैं वैसे वैसे वे वयस्क समाज में आत्मसात होते जाते हैं। पति और पत्नी प्रारम्भ में व्यवस्थान करते हैं परन्तु शनैः शनैः उनके विचार एवं दृष्टिकोण समान हो जाते हैं और आत्मसात कर लेते हैं। व्यक्ति एक समाज से दूसरे समाज में बसने के लिये चला जाता है। पहले वह उस समाज से सामंजस्य (Adjustment) स्थापित करता है फिर धीरे धीरे आन्तरिक दृष्टि से भी उस समाज के दृष्टिकोण एवं मूल्यों का आदर करने लगता है। इस अवस्था को व्यवस्थान (Accommodation) कहते हैं। समय की गति के साथ २ वह उसी समाज में घुल मिल जाता है और उसके दृष्टिकोण एवं मूल्य उस समाज के ही समान हो जाते हैं। इस एकीकरण की प्रक्रिया को आत्मसात (Assimilation) कहते हैं।

आत्मसात भी व्यवस्थान के समान एक प्रक्रिया (Process) और अवस्था (State) दोनों ही है।

आत्मसात और व्यवस्थान (Assimilation and Accommodation)

आत्मसात वह प्रक्रिया होती है जिसमें एक व्यक्ति या समूह किसी अन्य संस्कृति के मूल्यों, विश्वासों, भावनाओं और आदतों को ग्रहण करता है व्यवस्थान वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपनी ही संस्कृति या पर्यावरण में अन्य व्यक्तियों या समूहों से मानसिक एवं सामाजिक एकता स्थापित करता है या किसी सामाजिक परिस्थिति के अनुसार अपने को योग्य बनाता है। आत्मसात के द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व एवं जीवन के दृष्टिकोण में मौलिक अन्तर हो जाता है। आत्मसात की प्रक्रिया तभी कार्य करती है जब कि विभिन्न संस्कृतियाँ सम्बन्ध में आती हैं। आत्मसात और व्यवस्थान की प्रक्रियाओं में एकीकरण की अवस्था भी विभिन्न अंशों में पायी जाती है।

आत्मसात और मिश्रण (Assimilation and Amalgamation)

आत्मसात का अभिप्राय संस्कृतियों के मिलने से है और मिश्रण का रक्तों के मिलने से। आत्मसात सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है, जब कि

* "Assimilation is a process whereby attitudes of many persons are united and thus develop into a unified group." Bogardus, 'Sociology', p. 533.

मिश्रण शारीरिक और प्राणीशास्त्रीय। आत्मसात का परिणाम होता है सांस्कृतिक एकता और मिश्रण का वर्णशंकर (Hybrid)

इन अन्तरों के होते हुए भी इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जहाँ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं वहाँ पर शारीरिक और लिंग सम्बन्ध भी।

आत्मसात और समाजीकरण (Assimilation and Socialization)

आत्मसात और समाजीकरण में अन्तर होता है। प्रत्येक व्यक्ति जन्म के समय पशु होता है। शनैः शनैः उसके शारीरिक एवं मानसिक विकास के साथ साथ उसे मानव बनने के लिए संस्कृति भी सीखनी पड़ती है। सीखने की इस प्रक्रिया को समाजीकरण कहते हैं। जहाँ तक सीखने की प्रक्रिया का सम्बन्ध है आत्मसात और समाजीकरण दोनों की समान है। आत्मसात की प्रक्रिया उस समय प्रारम्भ होती है जब कि बच्चा परिवार के बाहर या अन्य संस्कृतियों में जाता है परन्तु समाजीकरण की प्रक्रिया अधिकाँशतः परिवार, विद्यालय इत्यादि तक सीमित होती है। समाजीकरण मानव बनाने की प्रक्रिया है और आत्मसात मानव को परिवर्तित करने की प्रक्रिया है।

आत्मसात के सहायक कारक (Factors Conducive to Assimilation)

आत्मसात की प्रक्रिया के प्रमुख सहायक कारकों में से कुछ पर हम यहाँ पर प्रकाश डालेंगे।

१. **सहिष्णुता** (Toleration)—सहिष्णुता आत्मसात की प्रक्रिया को बड़ा सहयोग देती है। सहिष्णुता के फलस्वरूप विभिन्न संस्कृतियों के लोग सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं और इन सामाजिक सम्बन्धों से सङ्घर्ष उत्पन्न नहीं होता। यदि सहिष्णुता न हो तो सङ्घर्ष प्रारम्भ हो जायेगा और सामाजिक सम्बन्ध सीमित रहेंगे। आत्मसात की प्रक्रिया के लिए घनिष्ट सामाजिक सम्बन्ध होने आवश्यक हैं।

२. **समान आर्थिक अवसर** (Same Economic Opportunity)—समान आर्थिक अवसर भी समाजिक सम्बन्धों को प्रोत्साहित करते हैं। यदि आर्थिक अवसर असमान होते हैं तो सांस्कृतिक दीवार भी खड़ी हो जाती है और आत्मसात की प्रक्रिया की गति कम हो जाती है।

३. **सांस्कृतिक समानतायें** (Cultural Similarities)—जब दो संस्कृतियों के लक्षणों में कुछ-कुछ समानता पायी जाती है तो आत्मसात

शीघ्र होता है क्योंकि वे इन समानताओं के कारण एक दूसरे से घृणा नहीं करते।

४. मिश्रण (Amalgamation)—मिश्रण भी आत्मसात की प्रक्रिया की बड़ी सहायता करता है। वैवाहिक सम्बन्ध उन्हें एक दूसरे के निकट लाता है और सामाजिक सम्बन्ध की पृष्ठ भूमि निर्मित करता है।

५. अधिक सामाजिक सम्बन्ध (More Social Contracts)—दोनों संस्कृतियों के सदस्यों में जितना अधिक सामाजिक सम्बन्ध होता है उतनी ही आत्मसात की गति बढ़ जाती है।

आत्मसात के विरोधी कारक (Factors Against Assimilation)

कुछ ऐसे कारक हैं जो आत्मसात की प्रतिक्रया का विरोध करते हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं :—

१. पृथक्ता (Isolation)—पृथक्ता आत्मसात की प्रक्रिया को बढ़ने नहीं देता। पृथक्ता के कारण सामाजिक सम्बन्ध अधिक स्थापित नहीं हो पाते. जिसके फलस्वरूप परस्पर-सम्बन्धी क्रिया (Interaction) ही प्रारम्भ नहीं हो पाती।

२. वर्ण एवं शारीरिक लक्षणों की भिन्नता (Difference of Colour and Physical Traits)—रंग और शारीरिक लक्षणों की भिन्नता के फलस्वरूप वे अपने को एक दूसरे से भिन्न समझते हैं। कई बार तो यह भावना विकसित हो जाती है कि ईश्वर ने ही भिन्न बनाया है। इन भिन्नताओं के कारण आत्मसात होने में कठिनाई पड़ती है :

३. उच्चता की भावना (Attitude of Superiority)—जब बहुमत दल में उच्चता की भावना विकसित हो जाती है तब अल्पमत को ठेस लगती है और वे उन्हें घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं। दोनों ओर घृणा उत्पन्न होने के कारण सामाजिक सम्बन्ध स्थापित नहीं होते।

४. संपीड़न (Persecution)—जब बहुमत संस्कृति वाले अल्पमत को पीड़ा एवं कष्ट पहुँचाते हैं तो दोनों में घृणा उत्पन्न हो जाती है और सङ्घर्ष प्रारम्भ हो जाता है। अल्पमत बहुमत वालों की संस्कृति से भी घृणा करने लगते हैं।

प्रश्न

१. व्यवस्थान और आत्मसात् पर टिप्पणी लिखिये।
(आगरा १९५५, राजस्थान १९५६)
(Write notes on Accommodation and Assimilation.)

२. व्यवस्थान और आत्मसात् की प्रक्रियाओं से आप क्या समझते हैं? अपने उत्तर को समझाने के लिये उदाहरण दीजिये। (राजस्थान १९५४)
(What do you understand by the process of accommodation and assimilation? Give examples to illustrate your answer.)

३. व्यवस्थान और एकीकरण में अन्तर बताइये। (राजस्थान १९५६)
(Distinguish between Accommodation and Integration.)

SELECTED READINGS

1. Reuter and Hart, 'Introduction to Sociology' Chapter XIII and XIV.
2. Biesanz and Biesanz, 'Modern Society', Chapter VII.
3 Bogardus, E. S. 'Sociology' Chapter XV.
4 Green, 'Sociology' Chapter IV.

सप्तम खण्ड

सामाजिक परिवर्तन
(Social Change)

अध्याय २२ : सामाजिक परिवर्तन
(Social Change)

अध्याय २३ : सामाजिक परिवर्तन के जन-संख्यात्मक कारक
(Demographic factors of Social Change)

अध्याय २४ : सामाजिक परिवर्तन के प्राणीशास्त्रीय कारक
(Biological factors of Social Change)

अध्याय २५ : सामाजिक परिवर्तन के सांस्कृतिक कारक
(Cultural factors of Social Change)

अध्याय २६ : सामाजिक परिवर्तन के प्रौद्योगिक कारक
(Technological factors of Social Change)

अध्याय २७ : सामाजिक उद्विकास
(Social Evolution)

अध्याय २८ : सामाजिक प्रगति
(Social Progress)

अध्याय २२

सामाजिक परिवर्तन
(Social Change)

परिवर्तन सदैव होता रहता है और परिवर्तन की प्रक्रिया एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं करती। मनुष्य बच्चे के रूप में जन्म लेता है और शिशु, किशोर, युवा, एवं वृद्ध अवस्थाओं को प्राप्त करते हुए मृत्यु का आलिंगन करता है। प्रत्येक क्षण उसमें परिवर्तन होता रहता है। इसी प्रकार हर क्षेत्र में परिवर्तन होता रहता है। समाज भी इस परिवर्तन की प्रक्रिया से बच नहीं पाता। उसमें भी अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। समाज में होने वाले परिवर्तनों को सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। परिवर्तन की ही भांति सामाजिक परिवर्तन भी सतत् होता रहता है।

सामाजिक परिवर्तन का अर्थ (Meaning of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण करने के पूर्व हमें उसके अर्थ को भली प्रकार समझ लेना चाहिये। गिलिन ने सामाजिक परिवर्तन की परिभाषा करते हुए लिखा है, "सामाजिक परिवर्तन जीवन की स्वीकृत रीतियों में परिवर्तन या अन्तर को कहते हैं, चाहे ये परिवर्तन भौगोलिक दशाओं के परिवर्तन से हुए हों या सांस्कृतिक साधनों, जन-संख्या की रचना या सिद्धान्तों के परिवर्तन से, और चाहे प्रसार के द्वारा सम्भव हो सके हों या समूह के ही अन्दर हुये आविष्कारों के परिणाम स्वरूप हुए हों।"* इस परिभाषा से स्पष्ट है कि स्वीकृत जीवन की रीतियों से भिन्न जो कुछ भी हो सामाजिक परिवर्तन है। यह परिभाषा अत्यधिक विस्तृत है। इसके आधार पर सामाजिक परिवर्तन तथा परिवर्तन में कोई अन्तर नहीं रह जाता। गिलिन और गिलिन का मत है कि हमारा सम्पूर्ण जीवन ही

---

* "Social changes as variations from the accepted modes of life, whether due to alteration in geographic conditions, in cultural equipment, composition of the population, or ideologies and whether brought about by diffusion or invention within the group." Gillin, and Gillin, 'Cultural Sociology' p. 561-562.

सामाजिक है इसलिये जीवन में किसी प्रकार का भी परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन कहलायेगा। डासन और गेटिस ने भी लिखा है, "सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन है क्योंकि समस्त संस्कृति अपनी उत्पत्ति, अर्थ और प्रयोग में सामाजिक है।"* इस प्रकार के विचार की अनेक समाजशास्त्रियों ने आलोचना की है। उनका कहना है कि जीवन की स्वीकृत रीतियों के परिवर्तन को सांस्कृतिक परिवर्तन (Cultural Change) कहना उचित होगा और सामाजिक परिवर्तन केवल उसी परिवर्तन को कहना चाहिये जो सामाजिक सम्बन्धों को प्रभावित करता हो और उसमें परिवर्तन लाता हो। सामाजिक परिवर्तन की इस दृष्टिकोण से परिभाषा करते हुए डेविस ने लिखा है। 'सामाजिक परिवर्तन से केवल वे ही परिवर्तन समझे जाते हैं जो कि सामाजिक सङ्गठन अर्थात् समाज के ढांचे और कार्यों में घटित होते हैं।"† जोन्स ने भी लिखा है, "सामाजिक परिवर्तन वह शब्द है जो सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक परस्पर-सम्बन्धी क्रिया या सामाजिक सङ्गठन के किसी अंग में अन्तर या रूपान्तर को वर्णित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।"§ मैकाइवर और पेज ने भी लिखा है, "उस परिवर्तन को ही केवल सामाजिक परिवर्तन मानेंगे जो कि इनमें (सामाजिक सम्बन्धों में) हो।"¶ सामाजिक परिवर्तन वह परिवर्तन है जो सामाजिक सम्बन्धों में होता है। समाज की परिभाषा हम पुस्तक के प्रारम्भ में कर ही चुके हैं, यहां पर इतना स्मरण रखना पर्याप्त होगा कि समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। समाज में परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन कहते हैं या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन कहते हैं।

---

* "Cultural change is social change, since all culture is social in its origin, meaning and usage." Dawson and Gettys, 'Introduction to Sociology' p. 580.

† "By 'Social change' is meant only such alterations as occur in social organization—that is, the structure and functions of society." K. Davis, 'Human Society' p. 622.

§ 'Social change is a term used to describe variations in, or modifications of, any aspect of social processes, social patterns, social interaction, or social organisation." Jones, 'Basic Sociological Principles' p. 96.

¶ "It is the change in these which alone we shall regard as social change," MacIver and Page, 'Society,' p. 511.

सामाजिक परिवर्तन की इस परिभाषा से स्पष्ट है कि जीवन के प्रत्येक परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन नहीं कहा जा सकता। सामाजिक परिवर्तन और जीवन के प्रत्येक परिवर्तन या सांस्कृतिक परिवर्तन में बड़ा अन्तर है। अब हम इन दोनों के अन्तरों पर प्रकाश डालेंगे।

सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक परिवर्तन में अन्तर (Difference between Social Change and Cultural Change

सामाजिक परिवर्तन केवल जीवन की रीतियों में उन परिवर्तनों से सम्बन्ध रखता है जो कि समाजिक सम्बन्धों में होते हैं। सामाजिक परिवर्तन (Social Change), सांस्कृतिक परिवर्तन (Cultural Change) का केवल एक भाग है। सांस्कृतिक परिवर्तन के अन्तर्गत संस्कृति के किसी भी भाग में होने वाले परिवर्तन आते हैं। यहाँ तक कि कला, विज्ञान, प्रौद्योगिकी दर्शनशास्त्र इत्यादि में होने वाले परिवर्तन भी इसके अन्तर्गत आते हैं। सामाजिक सङ्गठन में होने वाले परिवर्तन तो इसके अन्तर्गत आते ही हैं। इस प्रकार सांस्कृतिक परिवर्तन का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है। डेविस ने उचित लिखा है, 'अतः सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा अधिक विस्तृत है।"* उदाहरण के लिए प्रत्येक वर्ष मोटरकार के नये मॉडल (Model) निकलते हैं। यह परिवर्तन है परन्तु सामाजिक परिवर्तन नहीं। यह सांस्कृतिक परिवर्तन है और यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन होता हो या सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करता हो। यह सत्य है कि सांस्कृतिक परिवर्तन का सामाजिक परिवर्तन से घनिष्ट सम्बन्ध है फिर भी अनेक सांस्कृतिक परिवर्तन सामाजिक व्यवस्था पर कोई प्रभाव नहीं डालते। इसलिए समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से हम उन्हीं सांस्कृतिक परिवर्तनों में रुचि रखते हैं जो सामाजिक सङ्गठन से उत्पन्न होते हैं या उसे प्रभावित करते हैं।

मैकाइवर और पेज ने सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन में भेद करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने समाज की परिभाषा में सामाजिक सम्बन्धों पर बड़ा जोर दिया है। सामाजिक सम्बन्ध उसी समय तक जीवित रहते हैं जब तक समाज जीवित रहता है। सामाजिक ढांचे को अजायबघर में नहीं रखा जा सकता जब कि सांस्कृतिक वस्तुओं को सुरक्षित रखा जा सकता है। संस्कृति और

---

* "Cultural change is thus much broader than social change." K. Davis, 'Human Society' p. 622.

समाज में महान अन्तर है। जब इन दोनों में अन्तर है तो इनमें होने वाले परिवर्तन समान कैसे हो सकते हैं। मैकाइवर और पेज ने उचित लिखा है, "इसलिए सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक या सभ्यता सम्बन्धी परिवर्तन से पृथक् वस्तु है।....."§

सामाजिक परिवर्तन के कारक (Causes of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन अनेक कारणों से उत्पन्न होता है। उन कारणों में से निम्न प्रमुख हैं:—

१. मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological factor)—सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख कारण मनोवैज्ञानिक है। परिवर्तन मनुष्य की प्रकृति में ही निहित है। वह नवीनता का रसास्वादन करना चाहता है। यद्यपि मनुष्य रूढ़िवादी होता है तथापि उसमें नवीन खोज की लगन होती है। वर्तमान सामाजिक सङ्गठन से भिन्न किसी नवीन व्यवस्था को प्राप्त करने की इच्छा मनुष्य में बनी रहती है। मनोवैज्ञानिकों ने इसे जिज्ञासा की मूल प्रवृति (Inquisitive Instinct) का नाम दिया है। इस प्रवृति के कारण मनुष्य सदैव नवीन खोज एवं अन्वेषण करता रहता है और इसके फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन होता रहता है।

२. भौतिक पर्यावरण (Physical Environment)—भौतिक पर्यावरण सदैव परिवर्तित होता रहता हैं। ऋतुयें परिवर्तित होती रहती हैं और तूफान, बाढ़ और भूचाल आते रहते हैं। इसी प्रकार के अन्य परिवर्तन भी होते रहते हैं। भौतिक पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन सामाजिक सङ्गठन एवं व्यवस्था में भी परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। भौतिक पर्यावरण से अनुकूलन करना मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। भौतिक पर्यावरण और सामाजिक जीवन के सम्बन्धों पर हम पंचम खंड में विस्तृत रूप में प्रकाश डाल चुके हैं।

३. जन-संख्यात्मक कारक (Demographic factor)—सामाजिक परिवर्तन जन-संख्या के घटने बढ़ने एवं घनत्व पर भी आधारित है। ग्रामों और नगरों के जीवन में महान अन्तर पाया जाता है। इस अन्तर का प्रमुख कारण जन-संख्या का घनत्व है। और भी अनेक प्रकार से जन-संख्या की मात्रा

---

§ "Social change is therefore a distinct thing from cultural or civilizational change,....." MacIver and page, 'Society' p. 511.

सामाजिक परिवर्तन के लिए भूमि निर्मित करती है। इस कारक पर विस्तार में हम अध्याय २३ में प्रकाश डालेंगे।

४. प्राणीशास्त्रीय कारक (Biological factor)—प्राणीशास्त्रीय कारक भी सामाजिक परिवर्तन को चालित करता है। प्राणीशास्त्रीय कारक का अर्थ है जन-संख्या के गुणात्मक पक्ष जो कि वंशानुसंक्रमण के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। वंशानुसंक्रमण और सामाजिक जीवन पर हम चतुर्थ खंड में प्रकाश डाल ही चुके हैं। यहाँ पर इतना स्मरण रखना पर्याप्त होगा कि प्रत्येक नई पीढ़ी एक नवीन वस्तु होती है क्योंकि वह माता और पिता के वाहकाणुओं का नवीन जोड़ होता है। नई पीढ़ी के अनुभव भी नवीन होते हैं। इन परिवर्तनों के कारण सामाजिक परिवर्तन भी होता है। अध्याय २४ में हम इस पर और अधिक प्रकाश डालेंगे।

५. सांस्कृतिक कारक (Cultural factor)–सांस्कृतिक कारक भी सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करता है। प्रत्येक नवीन मूल्य एवं धारणा सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था को प्रभावित करता है। मूल्यों एवं धारणाओं पर ही कार्य आधारित होते हैं और उनके परिवर्तित होते ही कार्य की दिशा भी परिवर्तित हो जाती है। सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन में घनिष्ट सम्बन्ध है और वे एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। इनका विस्तृत विश्लेषण हम अध्याय २५ में करेंगे।

६. प्रौद्योगिकीय कारक (Technological factor)—प्रौद्योगिकीय कारक सांस्कृतिक कारक का एक अङ्ग है परन्तु उसके महत्व के कारण उसे एक पृथक् कारक के रूप में मान लिया गया है। प्रौद्योगिकीय कारक सामाजिक परिवर्तन को अत्यधिक प्रभावित करता है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप भीषण सामाजिक परिवर्तन हुये हैं। इस कारक का अध्याय २६ में हम विस्तृत विवेचन करेंगे।

इन कारकों के अतिरिक्त और भी अनेक कारक हैं जो सामाजिक परिवर्तन को जन्म देते हैं। स्वयं एक सामाजिक परिवर्तन दूसरे सामाजिक परिवर्तन को जन्म देता है। इसके अतिरिक्त ये कारक एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं और एक दूसरे पर आधारित हैं।

सामाजिक परिवर्तन के कारकों का पारस्परिक सम्बंध (Inter-relationship of the factors of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन के कारक एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। यदि एक कारक में कोई परिवर्तन होता है तो वह केवल उसी कारक तक सीमित नहीं रहता अपितु अन्य कारकों पर भी प्रभाव डालता है। मनुष्य के पर्यावरण में होने वाला प्रत्येक परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों में भी परिवर्तन उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिये भौतिक पर्यावरण के किसी परिवर्तन से अनुकूलन करने के लिये मनुष्य किसी नवीन यन्त्र की खोज करता है। इस यन्त्र की खोज का प्रभाव प्रौद्योगिक क्षेत्र में ही नहीं रहता बल्कि मनुष्य के रहन सहन एवं धारणाओं को भी प्रभावित करता है। कई बार इसका प्रभाव जन-संख्यात्मक और प्राणीशास्त्रीय क्षेत्रों में भी पड़ता है। सामाजिक परिवर्तन भी इसके फलस्वरूप होता है। अगले अध्यायों के अध्ययन से इन कारकों का पारस्परिक सम्बन्ध और अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिकता (Universality of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया निरन्तर रूप से प्रत्येक समय हर स्थान पर होती रहती है। परिवर्तन अवश्यंभावी (Inevitable) है। डासन और गेटिस ने लिखा है, "क्रिया और परिवर्तन सदैव उपस्थित रहने वाले सार्वभौमिक तथ्य हैं।"* लम्ले ने भी लिखा है, "कई कारणों से सामाजिक परिवर्तन अवश्यंभावी-जिसे टाला नहीं जा सकता-रहा है और है।"†

सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिक प्रकृति को सिद्ध करने के लिये अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं परन्तु समस्त संसार में होने वाला एक परिवर्तन ग्रामीण जीवन से नागरिक जीवन-अत्यन्त सरल है जिसे साधारण व्यक्ति भी समझ सकते हैं। औद्योगिक क्रांति के उपरान्त यह प्रक्रिया संसार के प्रत्येक भाग में शनैः शनैः प्रारम्भ हुई और आजकल प्रत्येक स्थान पर यह प्रक्रिया कार्य कर रही है। यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में तो

---

* "Activity and change are ever-present, universal facts." Dawson and Gettys, 'An Introduction to Sociology' p. 553.

† "Social change has been and is inevitable-unevadable-for many reasons," Lumley, 'Principles of Sociology' p. 355.

नागरीकरण तीव्रता से हो रहा है। एशिया और अफ्रिका में भी यह प्रक्रिया कार्य कर ही रही है। भारतवर्ष जैसे ग्रामीण देश में भी यह परिवर्तन प्रारम्भ हो गया है और १७·३ प्रतिशत जन-संख्या, १९५१ की गणना के अनुसार नगरों में रहती है।

मानवशास्त्रीयों के द्वारा वन्य जातियों पर जो प्रकाश पड़ा है उससे भी यही ज्ञात होता है कि सामाजिक परिवर्तन सदैव होता रहता है।

किसी भी देश को सामाजिक व्यवस्था का विश्लेपण करने पर हमें ज्ञात होता है कि वह बिल्कुल वही नहीं है जो २५, ५० या १०० वर्ष पूर्व थी। साधारण परिवर्तन तो प्रत्येक अवस्था में होते रहते हैं परन्तु यातायात एवं आवागमन के साधनों की वृद्धि के फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन की गति बढ़ जाती है। उदाहरण के लिये आधुनिक युग को लीजिये। इतने अधिक सामाजिक परिवर्तन अति अल्प समय में हो जाते हैं कि मनुष्य अपनी स्थिति और कार्यों को जीवन भर निश्चित नहीं कर पाता है। आधुनिक जीवन सामाजिक परिवर्तनों से पूर्ण है और मनुष्य इन्हें जीवन का एक भाग समझने लगा है। ग्रीन ने उचित लिखा है, "परिवर्तन का उत्साहपूर्ण स्वागत प्रायः जीवन का एक ढंग हो गया है।"* आधुनिक जीवन में अधिक रूढ़िवादिता से कार्य नहीं चल सकता। आधुनिक युग में मनुष्य के व्यक्तित्व का सबसे बड़ा गुण यही है कि वह परिवर्तित अवस्थाओं से सामंजस्य स्थापित कर ले। सामाजिक सहिष्णुता वर्तमान सभ्यता का मूल्यवान आभूषण है। कहने का तात्पर्य यह है कि आधुनिक युग की सफलता की कुंजी सामाजिक परिवर्तनों के साथ साथ पग बढ़ाने में हैं। आधुनिक संसार और सामाजिक परिवर्तन का घनिष्ट सम्बन्ध है। वेनबर्ग और शाबत ने ठीक ही लिखा है, "सामाजिक परिवर्तन आधुनिक संसार के हृदय में निवास करता है।"¶

अगले अध्यायों २३, २४, २५ और २६ में हम सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख कारकों का विश्लेषण करेंगे और अध्याय २७ और २८ में सामाजिक परिवर्तन के परिणाम एवं दिशाओं पर प्रकाश डालेंगे। इन अध्यायों के अध्ययन से सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिकता और भी स्पष्ट हो जायेगी।

---

* "The enthusiastic reception of change has become almost a way of life." Green, 'Sociology', p. 520.

¶ "Social change lies at the heart of the modern world,' Weinberg and Shabat, 'Society and Man' p. 172.

प्रश्न

१. सामाजिक परिवर्तन के कारकों का विश्लेषण करिए और उनके परस्पर सम्बन्ध को समझाइये। (आगरा, १९५७)

(Analyse the factors of social change and explain their inter-relationship.)

२. सामाजिक परिवर्तन का क्या अभिप्राय है ? सामाजिक परिवर्तन के कारण और परिणाम लिखिए। (आगरा, १९५५)

(What is meant by social chang? Mention the causes and results of social change.)

३. सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते हैं ? सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों में भेद बताइये। सामाजिक परिवर्तन की कसौटियों का विश्लेषण कीजिए। (राजस्थान, १९५४)

(What do you understand by Social Change ? Differentiate between social and cultural change. Analyse the criteria of social change.

४. क्या सामाजिक परिवर्तन मानव समाज में एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है ? उदाहरण देकर समझाइये। (राजस्थान, १९५५)

(Is social chang a universal phenomenon in human society ? Illustrate your answer with examples.)

५. सामाजिक परिवर्तन के प्रमुख कारकों पर प्रकाश डालिए। भारतीय उदाहरण दीजिए। (लखनऊ, १९४९)

(Indicate the major factors that account for social change. Illustrate by Indian examples.)

SELECTED READINGS

1. MacIver and Page, 'Society' chapters XXII, XXIII.
2. Lumley, 'Principles of Sociology' chapter XX
3. K. Davis, 'Human Society' chapter XXII.
4. Gillin and Gillin, 'Cultural Sociology' chapter XXIII

अध्याय २३

सामाजिक परिवर्तन के जन-संख्यात्मक कारक
(Demographic factors of Social Change)

जन-संख्या की मात्रा सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था पर कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य डालती है। जन-संख्या कई कारणों से घटती रहती है और इस घटोतरी एवं वृद्धि का प्रभाव सामाजिक ढांचे पर पड़ता है। इस प्रभाव के फलस्वरूप समाजिक परिवर्तन होते हैं। अब हम समाजिक परिवर्तन के जन संख्यात्मक कारक पर प्रकाश डालेंगे।

जन-संख्या के आकार का प्रभाव
(Effect of the Size of the Population)

जन-संख्या के आकार का समाज पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। जिन प्रदेशों में जन-संख्या कम होती है प्रायः वहाँ पर जीवन का स्तर अपेक्षाकृत ऊंचा पाया जाता है। उदाहरण के लिए आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कनाडा और संयुक्त-राज्य अमेरिका में जन-संख्या कम पायी जाती है और जीवन का स्तर उच्च पाया जाता है। इसके विपरीत घने आबाद देश जैसे भारतवर्ष, चीन जापान इत्यादि का जीवन स्तर निम्न पाया जाता है। जीवन का स्तर मनुष्य की धारणाओं, मूल्यों, एवं जीविकोपार्जन की रीतियों को प्रभावित करता है। इनके द्वारा सामाजिक सङ्गठन एवं व्यवस्था का भी निश्चत होता है। जन-संख्या के आकार के परिवर्तन के साथ-साथ सामाजिक सङ्गठन के स्वरूप में भी सामाजिक परिवर्तन होता रहता है।

जन-संख्या का आकार राजनैतिक एवं सैनिक दृष्टिकोण से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्मिथ ने उचित लिखा है, "सिद्धान्तन एक बड़ी जन-संख्या का अर्थ एक शक्तिशाली राष्ट्र होता है, जब कि एक छोटी जन संख्या अपेक्षाकृत निर्बल राष्ट्र में परिणित होती है।"*

* "A large population as a rule means a powerful nation, whereas a small population results, in a relatively weak nation." T. Lynn Smith, 'Population Analysis' McGraw-Hill Book Co., Inc. New York (1948), p. 5.

जिन स्थानों में जन संख्या अधिक होती है वहाँ पर इस प्रकार के रीति-रिवाज प्रचलित होते हैं जिनके द्वारा जन्म दर को कम किया जा सके और वृद्धों एवं अपंगों को आत्महत्या तथा अन्य साधनों के द्वारा कम किया जा सके। ऐसी प्रथाएं समाज की अभिमति प्राप्त होती हैं। उदाहरण के लिए वर्तमान युग में भारतवर्ष में जन्म-निरोध (Birth control) का अत्यधिक प्रचार किया जा रहा है और साधारण धारणा इसके पक्ष में है। धार्मिक विचारों के अनुसार जन्म-निरोध को पाप समझते हैं और ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध कार्य समझा जाता है। जन्म-निरोध का स्वाभाविक परिणाम छोटे परिवार हैं और छोटे परिवार होने के कारण सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन हो जाता है। जिन देशों में जन-संख्या अपेक्षाकृत कम होती है, वहाँ पर सामाजिक सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के होते हैं। स्त्रियों की सामाजिक स्थित उच्च होती है और जन्म निरोध एवं गर्भपात (Abortion) के विरुद्ध धारणाएं पाई जाती हैं। रूस के प्रमुख दैनिक पत्र प्रवदा (Pravada) ने लिखा है, "वह स्त्री, जिसके सन्ताने नहीं हैं, हमारी दया की पात्र है। वह अपने जीवन के सम्पूर्ण सुख का अभाव अनुभव करती है।"† रूस में जन्म दर बढ़ाने के लिए कई प्रकार के आकर्षण रखे गये हैं। सात बच्चों की माँ को २००० रूबल (Rubles) प्रतिवर्ष का इनाम पाँच वर्ष तक प्रदान किया जाता है। ११ वें बच्चे के पैदा होने पर प्रथम वर्ष ५००० रूबल और चार वर्षों तक ३००० रूबल प्रति वर्ष पारितोषिक दिया जाता है। २७ जून १९३६ को गर्भपात को रोकने के लिये विधि पारित की गई। जन्म दर को उत्साहित करने के लिये अत्यधिक प्रचार किया गया। गोरकी का प्रसिद्ध कथन विभिन्न पत्रों में अवतरित किया गया जो इस प्रकार है, "सूर्य की किरणों के बिना पुष्प नहीं होते। प्रेम के बिना सुख नहीं होता। स्त्री के बिना प्रेम नहीं होता। माता

---

† "The woman who has no children deserves our pity; she misses the full joy of her life." Pravda, Quoted by Stephen Fuchs in his a article 'Changes in Soviet Mariage and Family Law' published in 'Sociological Bulletin' March 1953, Vol. II No. I. P. 39, pubished by Indian Sociological Society, Bombay.

के बिना न तो कवि होता है और न वीर।† इजवस्तिया (Izvestia) ने लिखा है, 'मानव भाषा में माता शब्द से कोई भी शब्द अधिक शुद्ध एवं उच्च नहीं है और न ही कोई वस्तु अधिक वात्सल्यपूर्ण या अधिक पवित्र है।"§

जन-संख्या के आकार का प्रभाव अन्य सामाजिक परिवर्तन भी उत्पन्न करता है। आधुनिक युग में से एक प्रमुख सामाजिक परिवर्तन घनी बस्तियों का आबाद होना है जिन्होंने नगरों का रूप धारण कर लिया है। नागरिक जीवन ग्रामीण जीवन से बिल्कुल भिन्न है। इस भिन्नता का एक प्रमुख कारण जन-संख्या का घनत्व है। ग्रामीण एवं नागरिक जीवन के भेदों पर हम पंचम खंड के अंतिम अध्याय में प्रकाश डाल ही चुके हैं। उससे हमें ज्ञात हो ही चुका है कि इतने अधिक सामाजिक परिवर्तन हुये हैं। सम्पूर्ण सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था का स्वरूप ही परिवर्तित हो जाता है। नागरिक जीवन में जन संख्या के आकार का इतना महत्व है कि राज्य, नगर और ग्राम का भेद जन संख्या के आधार पर किया जाता।

जन-संख्या के आकार और घनत्व का घटना बढ़ना निम्न दो कारकों पर निर्भर है:—

१. जन्म दर और मृत्यु दर का संतुलन

२. देशागमन और देशान्तरगमन का सन्तुलन

जब जन्म दर मृत्यु दर से अधिक होती है तो जन-संख्या में वृद्धि होती है। जन्म दर और मृत्यु दर के सन्तुलन से उत्पन्न जन-संख्या की वृद्धि को प्राकृतिक वृद्धि कहते हैं। जब मृत्यु दर जन्म दर से अधिक होती है तो जन संख्या का ह्रास होता है। इससे उत्पन्न ह्रास को प्रकृतिक ह्रास (Natural Decrease) कहते हैं। भारतवर्ष की प्राकृतिक वृद्धि की दर निम्न तालिका से स्पष्ट समझ में आ जायेगी।

---

† "Without sunshine, there are no flowers. Without love, there is no happiness. Without woman there is no love. Without the mother there is neither poet nor hero." Maxim Gorki's famous tribute, quoted from Ibid, p. 40.

§ "In human speech there is nothing more pure and exalted, nothing more tender and more holy, than the word mother." Izvestia, a daily newspeper, quoted from Ibid, p. 40.

दशक (Decade)	अनुमानित (Estimate)		
	जन्म दर (Birth rate)	मृत्यु दर (Death rate)	प्राकृतिक वृद्धि की दर Rate of Natural Increase
१८८१-९०	४८·९	४१·३	७·६
१८९१-००	४५·८	४४·४	१·४
१९०१-१०	४८·१	४२·६	५·५
१९११ २०	४९·२	४८·६	०·६
१९२१-३०	४६·४	३६·३	१०·१
१९३१-४०	४५·२	३१·२	१४·०
१९४१-५०	३९·९	२७·४	१२·५

कुछ समाजशास्त्रीयों का यह भी मत है कि राज्य के विभिन्न स्वरूप एक तन्त्र, प्रजातन्त्र, गणतन्त्र, राजतन्त्र इत्यादि जन-संख्या के आकार पर आधारित होते हैं। अन्य प्रकार से भी जन-संख्या राजनैतिक क्षेत्र में प्रभाव डालती है। जब जन संख्या अत्यधिक बढ़ जाती है तो लोग 'निवास स्थान' के लिए आन्दोलन प्रारम्भ कर देते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि वे रहने के लिए भूमि माँगते हैं। जर्मनी और इटली में जन-संख्या वृद्धि का ही फल था कि नाजी और फासिस्ट विचारधायें प्रबल हो सकीं। युद्ध प्रियता भी बढ़ी और उसका परिणाम हुआ प्रथम और द्वितीय महायुद्ध। प्रथम और द्वितीय महायुद्धों के फलस्वरूप अनेक सामाजिक परिवर्तन हुए।

जन-संख्या की गतिशीलता (Population Mobility)

जन-संख्या की गतिशीलता के फलस्वरूप भी अनेक सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न होते हैं। डासन और गेटिस ने उचित लिखा है, "सामाजिक परिवर्तन की तब तक कल्पना ही नहीं की जा सकती जब तक कि मनुष्य की

इच्छा स्थान परिवर्तन करने और एक सामाजिक-आर्थिक स्तर से दूसरे स्तर पर परिवर्तन करने की न हो।" * एक स्थान से दूसरे स्थान पर जन-संख्या की गतिशीलता अनेक प्रकार से होती है। लोग नित्यप्रति अपने निवास स्थान से कार्य स्थान, बाजार, मनोविनोद के लिए पार्कों तथा अन्य मनोरंजन के केन्द्रों इत्यादि को जाते हैं। इसके अतिरिक्त यात्रा भी विभिन्न मन्तव्यों से करते हैं। आधुनिक युग में जन संख्या की गतिशीलता अत्यधिक बढ़ गई है और इसके फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन की भी दर अत्यधिक बढ़ गई है क्योंकि जन संख्या की गतिशीलता के कारण नवीन सम्बन्ध स्थापित होते हैं और विभिन्न सामाजिक प्रक्रियायें अपना कार्य प्रारम्भ कर देती हैं। डासन और गेटिस ने लिखा है, "आधुनिक संसार की अत्यधिक गतिशीलता भी सामाजिक विघटन की दिशा में सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करती है" * जन संख्या की गतिशीलता का एक अत्यधिक प्रमुख स्वरूप स्थानान्तरण (Migration) है। यह एक विशिष्ट प्रकार का स्थान परिवर्तन है क्योंकि इसमें लोग एक पर्यावरण को छोड़कर दूसरे पर्यावरण में चले जाते हैं। यह दो प्रकार का होता है—प्रथम देशागमन (Immigration) उसे कहते हैं जब कि लोग देश में आकर बसते हैं और द्वितीय परदेशागमन (Emigration) जब कि देश छोड़ कर जाते हैं।

देशागमन और परदेशागमन के संतुलन पर भी जन संख्या का आकार निर्भर करता है। यदि देशागमन की दर परदेशागमन की दर से अधिक होती है तो जन-संख्या बढ़ती है और यदि परदेशागमन की दर देशागमन की दर से अधिक होती है तो जन संख्या का ह्रास होता है। स्थानान्तरण के इन स्वरूपों का सामाजिक परिवर्तन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इस प्रक्रिया के द्वारा दो नवीन भिन्न संस्कृतियों का सङ्घर्ष होता है। इस सङ्घर्ष के फलस्वरूप नवीन धारणायें निर्मित होती हैं। स्मिथ ने लिखा है, स्थानान्तरण प्रत्यक्ष

* "Social Change is unthinkable without man's desire to move about in space and from one socio-economic level to another." Dawson and Gettys, 'An Introduction to Sociology' p. 560.

* "The great mobility of the modern world also contributes to social change in the direction of social disorganisation." Ibid, p. 561.

रूप से न केवल जन संख्या की शारीरिक बनावट और स्वास्थ्य को प्रभावित करता है बल्कि समाज के सामाजिक ढ़ांचों और प्रक्रियाओं को भी और यह व्यक्तियों के व्यक्तित्व पर भी अत्यधिक प्रभाव डालता है।"¶ सन् १९५१ की जन-गणना के अनुसार भारतवर्ष में ७२ लाख व्यक्ति पाकिस्तान से आकर बसे और पाकिस्तान की जन गणना के अनुसार ७१·५ लाख व्यक्ति पाकिस्तान में भारत से जाकर बसे। साधारणतया देशागमन और परदेशागन में ०·५ लाख का अन्तर है अर्थात् भारतवर्ष की जन-संख्या ०·५ लाख देशागमन के कारण बढ़ गई। यद्यपि जन सख्या की वृद्धि कोई विशेष नहीं है * फिर भी सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन में भेद होने के कारण जीवन के अनेक क्षेत्रों में अत्यधिक परिवर्तन हुये हैं। १९४१ की दिल्ली और १९५१ की दिल्ली में महान अन्तर है।

जन-संख्या की बनावट और वितरण
(Composition and distribution of Population)

जन संख्या की बनावट एव वितरण का भी प्रभाव सामाजिक परिवर्तन पर पड़ता है। प्रजाति, राष्ट्रीयता, लिंग, आयु, विवाह सम्बन्धी, व्यवसाय इत्यादि पर बनावट निर्भर करती है। इनमें से कुछ पर हम प्रकाश डालेंगे।

आयु (Age)—सामाजिक परिवर्तन के लिये जन संख्या की आयु की संरचना भी महत्वपूर्ण है। जिस जन-संख्या में युवक बच्चों और बूढ़ों की अपेक्षा अधिक होते हैं वह परिवर्तन को शीघ्र स्वीकार करती है और उत्साह एवं शक्ति का प्रदर्शन करती है। लेंडिस ने लिखा है, "अत्यधिक मात्रा में आयु संरचना जन-संख्या के सामाजिक कार्यों को निश्चित करती है....."§ १९५१ की

¶ "Migration affects directly not only the physical consittution and health of the population but also the social structures and processes of society, and it exerts tremendous influences upon the presonalities of individuals" T. L. Smith, 'Population Analysis' p. 291.

* "Census of India, Paper No. 6., 1954, p. 12.

§ "Age composition determines in large measure the social roles of the population....." Landis, 'Population Problems' p. 299.

जन-गणना के अनुसार (१० प्रतिशत व्यक्तियों के आधार पर) भारतवर्ष की जन-संख्या की आयु संरचना निम्न थी :—

भारत की जन-संख्या की आयु संरचना
(Age Composition of the population of India)

आयु समूह	जन-संख्या का प्रतिशत
०	३·३
१ –४	१०·३
५ –१४	२४·८
१५–२४	१७·४
२५–३४	१५·६
३५–४४	११·८
४५–५४	८·५
५५–६४	५·०
६५–७४	२·२
७५ से अधिक	१·०
अकथित	०·०७
	१००·०

इस तालिका से यह पता चलता है कि २५ से ५४ वर्ष के बीच के व्यक्तियों की जन-संख्या ३५·६ प्रतिशत है और ५५ वर्ष से अधिक व्यक्तियों की जन-संख्या ८·२ प्रतिशत है। १४ वर्ष से कम जन-संख्या का प्रतिशत ३८·४ है। इससे स्पष्ट है कि बच्चों की जन-संख्या भारतवर्ष में बहुत अधिक है और परिपक्व आयु के व्यक्तियों का अभाव है।

लिंग (Sex)—लिंग का अनुपात भी सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करता है। इन दोनों के सम्बन्धों पर सामाजिक ढांचा आश्रित रहता है।

भारतवर्ष में हजार पुरुषों पर केवल ९४७ स्त्रियां ही हैं। विभिन्न प्रदेशों का पारस्परिक अनुपात निम्न है:—

पुरुषों और स्त्रियों का पारस्परिक अनुपात

संख्या	प्राकृतिक प्रदेश	हजारों पुरुषों पर स्त्रियाँ (१९५१ में)
१.	हिमालय प्रदेश	८९७
२.	उत्तरी मैदानी प्रदेश	९०९
३.	प्रायद्वीपीय पहाड़ी तथा पठारी प्रदेश	९७१
४.	पश्चिमी घाट तथा समुद्री प्रदेश	९६०
५.	पूर्वी घाट तथा समुद्रीतटीय प्रदेश	१००९
६.	अंडमान तथा निकोबार द्वीप	६२५

इसी प्रकार जन-संख्या में विवाहित एवं अविवाहित, जन-संख्या का घनत्व एवं जन्म दर और मृत्यु दर इत्यादि का भी सामाजिक परिवर्तन से घनिष्ट संबंध है।

प्रश्न

१. जन-संख्यात्मक कारकों का सामाजिक परिवर्तन पर क्या प्रभाव पड़ता है? उदाहरण देकर समझाइये।
(What is the influence of demographic factors on social change? Explain by giving illustrations.)

SELECTED READINGS

1. T. Lynn Smith, 'Population Analysis' chapters I & X,
2. Dawson and Gettys, 'An Introduction to Sociology' Chapter XXI.

अध्याय २४

सामाजिक परिवर्तन के प्राणीशास्त्रीय कारक

(Biological factor of Social Change)

अनेक समाजशास्त्रीयों ने परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन में घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया है। उनका मत है कि प्राणीशास्त्रीय कारक पर्यावरण से अनुकूलन करने की प्रक्रिया में परिवर्तित होते रहते हैं। इस परिवर्तन का प्रभाव समाज पर भी पड़ता है। एक प्रकार से वर्तमान प्राणीशास्त्रीय कारक अनुकूलन करने के लिए पर्यावरण से सदैव संघर्ष करते रहते हैं। यह संघर्ष सदैव चलता रहता है।

संघर्ष को इन समाजशास्त्रीयों ने अत्यधिक महत्व दिया है। उन्होंने संघर्ष की प्रक्रिया को ही मौलिक माना है। सामाजिक परिवर्तनों की व्याख्या इन विद्वानों ने इसी सिद्धान्त के आधार पर की है। वैसे तो यह सिद्धान्त अति प्राचीन काल से सामाजिक विश्लेषण के लिए प्रयोग किया जाता रहा है परन्तु १९ वीं शताब्दी में स्पेंसर और डारविन ने वैज्ञानिक आवरण पहना दिया है। उस समय से अनेक समाजशास्त्रियों ने इस सिद्धान्त का प्रयोग समाजशास्त्र में करना प्रारम्भ कर दिया है। डारविन ने पशुओं और पौधों में "अस्तित्व के लिए संघर्ष"(Struggle for Existance) के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। अनेक विद्वानों ने मानव समाज में भी इस सिद्धान्त को घटित किया है। इसी सिद्धान्त पर आधारित 'प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त' (Principle of Natural Selection) है। इस सिद्धान्त का प्रयोग प्रत्येक क्षेत्र में किया गया है चाहे वह जीवों से सम्बन्धित हो या निर्जिवों से।

प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त
(The Principle of Natural Selection)

प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त अत्यन्त स्पष्ट एवं सरल है और इसे कुछ शब्दों में ही व्यक्त किया जा सकता है। उत्पत्ति के सिद्धान्तों के अनुसार वंशानुसंक्रमण के तत्वों में अन्तर होता रहता है। कई बार वाहकाणु एकदम परिवर्तित हो जाते हैं, जिसे हम उत्परिवर्तन की प्रक्रिया (Process of

Mutation) कहते हैं। वे परिवर्तन जो पर्यावरण से अनुकूलन कर लेते हैं अधिक समय तक स्थिर रहते हैं और जो ऐसा नहीं कर पाते, शीघ्र समाप्त हो जाते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार पर्यावरण और प्राणीशास्त्रीय कारकों में सदैव संघर्ष होता रहता है। पशुओं और पौधों में आपस में भी अस्तित्व के लिए संघर्ष होता रहता है। प्रकृति उन्हें जीवित रहने देती है जो अधिक योग्य होते हैं या अधिक अनुकूलन करते हैं और उनका निरसन (Elimination) कर देती है जो निर्बल होते हैं या अनुकूलन नहीं कर पाते। यही प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त है।

अस्तित्व के लिए संघर्ष (Struggle for Existence) के अनेक स्वरूप हैं। इसके अन्तर्गत प्रकृति, जलवायु एवं ऋतुओं की कठोरता एवं खाद्य-सामग्री की पूर्ति के अभाव एवं अन्तरों से अनुकूलन आते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य संघर्ष जो भी अस्तित्व को बनाये रखने के लिए किए जाते हैं इसके अन्तर्गत आते हैं। प्रारम्भ में डारविन के सिद्धान्त को स्वीकार करने वाले प्रकृति को इस खूनी रूप में चित्रित करते थे। शनैः शनैः सामाजिक विचारकों ने व्यक्तियों के संघर्ष के स्थान पर समूहों के बीच संघर्ष के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

इस क्षेत्र में नोविको (Novicow) का सिद्धान्त बड़ा प्रमुख है उसके अनुसार संघर्ष सार्वभौमिक और शाश्वत है। इस प्रकार का संघर्ष अणुओं, परमाणुओं, प्राणियों मनुष्यों, समाजों एवं अन्य इकाइयों में सदैव चलता रहता है। पशुओं में अस्तित्व के लिए संघर्ष के दो प्रमुख स्वरूप होते हैं:—निरसन (Elimination) और विलियन (Absorption)। प्रतिस्पर्द्धा भी पाई जाती है। नोविको के अनुसार शनैः शनैः संघर्ष के कठोर रूपों के स्थान पर सरल रूप विकसित हो जाते हैं।

प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of the principle of Natural Selection)

प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त अनेक दृष्टिकोणों से उचित नहीं है। उसमें से कुछ प्रमुख निम्न हैं—

१. प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त संघर्ष पर आधारित है। इसके अनुसार प्रकृति में संघर्ष ही होता है परन्तु ऐसा सत्य नहीं। पशुओं में भी सहयोग किसी न किसी रूप में पाया ही जाता है। यदि जननि नवीन उत्पन्न प्राणियों से सहयोग न करे तो सृष्टि की निरन्तरता ही समाप्त हो जाय। संघर्ष के लिए कोई रह ही न जाय।

२. पौधों तथा पशुओं में एक दूसरे को निरसन करने की ही प्रवृति नहीं पाई जाती।

३. इस सिद्धान्त के अनुसार केवल वे ही जातियाँ (Species) जीवित रहती हैं जो सबसे अधिक शक्तिशाली होती हैं परन्तु ऐसा कोई सामन्य सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता कि जीवित जातियाँ (Species) सबसे अधिक शक्तिशाली हैं।

४. किसी भी जाति की संख्या जन्म दर की आयु दर से अधिकता पर आधारित होती है। वे जातियाँ (Species) अपना अस्तित्व बनाये रख सकती हैं जिनकी सन्तानोत्पत्ति की दर अधिक होती है।

५. टॉनिज ने उचित लिखा है कि शिकारी पशु किस प्रकार जीवित रहेंगे यदि वे पशु जिनका वे शिकार करते हैं (अर्थात् उनका भोजन) बिल्कुल समाप्त हो जाय।

६. जीवित रहने की योग्यता का अधिकार अविकसित एक कोष्टक के प्राणी (Amoeba) को भी उतना ही है जितना अत्यधिक विकसित एवं ईश्वर की विशिष्ट एवं विचित्र रचना मनुष्य को है।

इससे स्पष्ट है कि प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त पशुओं के भी जगत में पूर्णतया खरा नहीं उतरता। कुछ विद्वानों ने इस पर भी इस सिद्धान्त को मानव समाज के लिए भी प्रयोग किया।

प्राकृतिक प्रवरण और मानव समाज
(Natural Selection and Human Society)

मानव समाज में प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त और भी अधिक अनुपयुक्त है। इसके प्रमुख कारण निम्न हैं—

१. मानव समाज में सन्तानोत्पत्ति तथा जीवित रहने की परिस्थितियाँ पशु जगत के समान एकदम प्रकृति पर आधारित नहीं होती बल्कि समाज द्वारा अत्यधिक मात्रा में प्रभावित होती है। समाज विभिन्न सामाजिक परिस्थितियाँ निर्माण करता है जिनके कारण अस्तित्व सरलता से बना रहता है।

२. समाज में संघर्ष वैयक्तिक रूप के स्थान पर सामूहिक रूप धारण कर लेता है।

३. मानव समाज में सामूहिक एकता के फलस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण की शक्ति कम हो जाती है।

४. मानव समाज में संघर्ष जीवन मरण के प्रकार का नहीं होता जब कि प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त का प्रमुख आधार निरसन (Elimination) है।

५. प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त के अनुसार प्रकृति निर्बलों का प्रवरण करके समाप्त कर देती है, परन्तु मानव समाज में इसके विपरीत प्रक्रिया घटित होती है। जीवन मरण का संघर्ष मानव समाज में युद्ध (War) होता है। युद्ध में लड़ने वाले प्रायः समाज के अति उत्तम एवं योग्य सदस्य होते हैं और निर्बल सदस्य युद्ध में भाग नहीं लेते। परिणाम स्पष्ट है कि युद्ध के कारण योग्य व्यक्ति मारे जाते हैं। यह परिणाम प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त के विपरीत है क्योंकि निर्बल के स्थान पर सबल का निरसन होता है।

६. मानव समाज में सहयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया है। सहयोग संघर्ष के विपरीत है जब कि संघर्ष प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त की आत्मा है।

७. मानव समाज में मृत्यु के कारण सामाजिक पर्यावरण द्वारा परिवर्तित कर दिये जाते हैं। प्राकृतिक प्रवरण के सिद्धान्त के अनुसार जितनी मृत्यु होती हैं प्राकृतिक कारणों के फलस्वरूप होती हैं। मानव समाज में मृत्यु के सामाजिक कारण भी होते हैं। उदाहरण के लिये नगरों की घनी आबादियाँ, मिलों की विषैली गैसें, कल कारखानों का असुरक्षित जीवन इत्यादि सामाजिक कारण मृत्यु को बढ़ाते हैं। इसके विपरीत मानव समाज में ऐसे भी सामाजिक कारण हैं जो मृत्यु दर को कम करते हैं या प्राकृतिक प्रवरण के प्रभाव को निर्बल कर देते हैं जैसे निरोधात्मक औषधियाँ, पौष्टिक पदार्थ और स्वास्थ्य विज्ञान (Hygiene) इत्यादि।

८. मानव समाज में ऐसी सामाजिक परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं कि जीवित रहने की दर (Survival Rate) और उत्पादन की दर (Reproduction Rate) समान हो जाती हैं जिसका तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक प्रवरण निर्बल हो गया है।

९. प्रवरण का संदैव पर्यावरण से सापेक्ष सम्बन्ध है। मनुष्य का पर्यावरण एकदम प्राकृतिक नहीं है बल्कि मनुष्य ने उसे परिवर्तित एवं नियंत्रत कर लिया है अर्थात् सामाजिक पर्यावरण में परिवर्तित कर दिया है। जब मनुष्य

का पर्यावरण ही प्राकृतिक नहीं है तो प्रवरण किस प्रकार प्राकृतिक हो सकता है ?

१०. मानव समाज ने अपनी संस्कृति एवं सभ्यता (सामाजिक पर्यावरण) को इतना विकसित कर लिया है कि प्रकृतिक प्रवरण का प्रभाव प्रायः समाप्त सा हो गया है।

११. मोरगन ने इस सम्बन्ध में उचित लिखा है, "सभ्य मनुष्य के उद्विकास में प्राकृतिक प्रवरण एक सदैव निर्बल होने वाला कारक है।"§

इससे स्पष्ट है कि प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त मानव समाज के लिये अनुपयुक्त है, परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि मानव समाज में प्रवरण होता नहीं है। लापौज (Lapouge) का मत है कि मानव समाज में प्रवरण प्राकृतिक प्रवरण की अपेक्षा सामाजिक प्रवरण के कारण होता है। सामाजिक प्रवरण (Social Selection) सामाजिक पर्यावरण के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। अब हम सामाजिक प्रवरण (Social Selection) पर प्रकाश डालेंगे।

सामाजिक प्रवरण (Social Selection)

मानव समाज में उत्पन्न शक्तियाँ जिस सीमा तक सामाजिक सम्बन्धों के द्वारा ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करती हैं जो कि सम्पूर्ण जन-संख्या और उसके विभिन्न समूहों के उत्पादन तथा जीवित रहने की दरों को प्रभावित करती हैं, इस प्रक्रिया को हम सामाजिक प्रवरण कह सकते हैं।*

सामाजिक प्रवरण कई प्रकार से मानव समाज में प्रवरण करता है। आर्थिक परिस्थितियाँ विवाह की दरों (Marriage Rate) को प्रभावित करती हैं। मंदी के समय लोग विवाह करना पसन्द नहीं करते। रहन-सहन का स्तर भी जन्म दर को प्रभावित करता है। जितना ही रहन-सहन का स्तर उच्च

---

§ "...Natural selection is a constantly diminishing factor in the eveolution of civilized man." Lloyd Morgan, 'Habit and Instinct' p 334.

* "In so for as forces generated within human society and operating through social relationships create conditions which affect the reproduction and survival rates of the population as a whole and differentially with the various groups within it, we can term the process Social Selection," MacIver and Page, 'Society' p. 543.

होता है उतनी ही जन्म दर कम होती है। जन्म दर व्यवसायों के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। इसी प्रकार अन्य सामाजिक कारक भी जन्म दर एवं मृत्यु दर को प्रभावित करते रहते हैं। रूढ़ियों (Mores) के द्वारा सामाजिक प्रवरण होता है।

सामाजिक प्रवरण के प्रकार (Modes of Social Selection)

सामाजिक प्रवरण दो प्रकार से कार्य करता है—अप्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण (Indirect Social Selection) और प्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण (Direct Social Selection)। ये दोनों प्रकार एक दूसरे से परस्पर सम्बन्धित है।

१. अप्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण (Indirect Social Selection)—जब समाज का संगठन उत्पत्ति और जीवित रहने के सन्तुलन को परिवर्तित करता है, परन्तु उसके सदस्य प्रत्यक्ष रूप से ऐसा कोई प्रयत्न नहीं करते, तब इसे अप्रत्यक्ष समाजिक प्रवरण कहते हैं। उदाहरण के लिए व्यवसाय की दशायें या नगर की गन्दगी मृत्यु दर को बढ़ाती है। यह अप्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण है क्योंकि यह उन सामाजिक कार्यों का परिणाम है जिन्हें मनुष्यों ने अन्य उद्देश्यों से उत्पन्न किया था।

२. प्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण (Direct Social Selection)—प्रत्यक्ष सामाजिक प्रवरण वह है जिसमें मनुष्य जान बूझ कर उन समाजिक परिस्थितियों को उत्पन्न करता है जो कि जन्म दर और मृत्यु दर इत्यादि को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए स्वच्छता, स्वास्थ्य विज्ञान के नियमों का प्रचार, अस्पतालों एवं औषधालयों की व्यवस्था, निरोधात्मक औषधियों एवं उपायों का प्रयोग, आत्महत्या, भ्रूणहत्या, (Infanticide) इत्यादि के विरुद्ध नियम पारित करके मृत्यु दर को कम किया जाता है। कई बार जन्म दर का भी नियन्त्रण किया जाता है। जैसे परिवार नियोजन (Family Planning) के आन्दोलन के द्वारा।

सामाजिक प्रवरण के स्वरूप (Forms of Social Selection)

सामाजिक प्रवरण के अनेक स्वरूप होते हैं, उनमें से प्रमुख निम्न हैं:—

१. सैनिक प्रवरण या युद्ध (Military Social Selection)—सामाजिक प्रवरण का प्रथम मौलिक स्वरूप सैनिक है। लापौज (Lapouge) का मत है कि सभ्यता की प्रगति के साथ २ युद्ध बढ़ते हैं, घटते नहीं। मनुष्य पशुओं से अधिक प्रिय होता होता है। युद्ध जन-संख्या के सबसे अधिक

स्वस्थ, शक्तिशाली और वीर व्यक्तियों का प्रवरण करता है जिसके फलस्वरूप समाज को हानि होती है।

२. राजनैतिक स्वरूप (Political Form)—राजनैतिक कारक और संघर्ष भी सामाजिक प्रवरण करते हैं। क्रांति एवं गृह युद्ध के द्वारा यह कार्य करता है। इसका भी परिणाम अच्छा नहीं होता, प्रायः बुद्धिमान एवं ईमानदार व्यक्ति मारे जाते हैं और तिकड़मबाज एवं चालाक व्यक्ति जीवित रहते हैं।

३. धार्मिक स्वरूप (Religious form)—धार्मिक परिस्थितियों से उत्पन्न सामाजिक प्रवरण को उसका धार्मिक स्वरूप कहते हैं अनेक धर्म ब्रह्मचर्य पर बल देते हैं। धार्मिक नेता जीवन पर्यन्त विवाह नहीं करते। प्रायः धार्मिक नेता शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक दृष्टिकोण से साधारण व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक उच्च होते हैं। इनके अविवाहित रहने के फलस्वरूप समाज को उच्च सन्तानें प्राप्त नहीं होती। अन्य धार्मिक प्रतिबन्धों के द्वारा भी इस प्रकार का सामाजिक प्रवरण होता है।

४. नैतिक स्वरूप (Moral Form)—सामाजिक प्रवरण का एक स्वरूप नैतिक भी होता है। इसका धार्मिक स्वरूप से घनिष्ट सम्बन्ध है। नैतिक रूढ़ियाँ अनेक प्रकार से सामाजिक प्रवरण करती हैं। उदाहरण के लिए नैतिक रूढ़ि के अनुसार हमें अपने शरीर को कपड़ों से ढ़कना पड़ता है परन्तु ये कपड़े स्वच्छ वायु और सूर्य के प्रभाव को शरीर तक नहीं पहुँचने देते। इसके फलस्वरूप तपैदिक तथा अन्य बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। नैतिक रूढ़ियों के कारण हम निर्बल को जीवित रहने देते हैं। इसका फल यह होता है कि निर्बल सन्तानें उत्पन्न होती हैं।

५. वैधानिक स्वरूप (Juridical Form)—राज्य की विधियों के कारण जो सामाजिक प्रवरण होता है उसे इसका वैधानिक स्वरूप कहते हैं। विधियाँ वैश्यावृति इत्यादि संस्थाओं की रक्षा करती हैं।

६. आर्थिक स्वरूप (Economic Form)—सामाजिक प्रवरण का आर्थिक स्वरूप वह है जो आर्थिक आवश्यकताओं के लिए किए जाने वाले संघर्ष के कारण होता है। धनिक होना भाग्य, बेइमानी, चालाकी तथा अन्य बेइमानियों पर आधारित होता है। मानसिक और नैतिक दृष्टि से उच्च व्यक्तियों के पास अधिक धन नहीं होता। लक्ष्मी और विद्या का सदैव संघर्ष रहा है।

७. व्यवसायिक स्वरूप (Occupational Form)—कुशल व्यवसायों में लगे हुये व्यक्तियों के सन्तानें कम होती हैं जब कि अकुशल व्यवसायों के लोगों के अधिक सन्तानें होती हैं।

८. नागरिक एवं ग्रामीण स्वरूप (Urban and Rural Forms)—नागरिक एवं ग्रामीण जीवन के अन्तरों से भी सामाजिक प्रवरण होता है। साधारणतया नगरों में बच्चे कम उत्पन्न होते हैं और ग्रामों में अधिक।

प्राकृतिक और सामाजिक प्रवरणों में भेद
(Difference between Natural and Social Selections)

प्राकृतिक और सामाजिक प्रवरणों में अनेक भेद हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं :—

प्रकृतिक प्रवरण (Natural Selection)	सामाजिक प्रवरण (Social Selection)
१. प्राकृतिक प्रवरण केवल मृत्यु दर के द्वारा ही कार्य करता है। इसका प्रमुख उद्देश्य अनुपयुक्त प्राणियों का निरसन (Elimination) करना है। वह केवल उत्पन्न प्राणियों का ही प्रवरण करता है।	१. सामाजिक प्रवरण भी मृत्यु दर को प्रभावित करता है परन्तु अधिकतर उसका प्रत्यक्ष प्रभाव जन्म दर पर पड़ता है।
२. प्राकृतिक प्रवरण केवल एक मार्ग ही प्रदान करता है या तो मृत्यु या सफल अनुकूलन।	२. सामाजिक प्रवरण अनेक मार्ग प्रदान करता है। वह केवल निरसन ही नहीं करता बल्कि यह निश्चित करता है कि कौन जन्म लेगा। यह निरोधात्मक और रचनात्मक दोनों ही प्रकार का होता है।
३. प्राकृतिक प्रवरण एक विशिष्ट पर्यावरण से अनुकूलन करने के लिये बाध्य करता है।	३. सामाजिक प्रवरण के विभिन्न पर्यावरण होते हैं।
४. प्राकृतिक प्रवरण मानव विकास की सीमाओं को निश्चित करता है।	४. सामाजिक प्रवरण इन सीमाओं के अन्तर्गत रहते हुये दिशा निर्धारण करता है।

५. प्राकृतिक प्रवरण में मनुष्य असहाय होता है और तनिक भी विरोध नहीं कर पाता।	५. सामाजिक प्रवरण मनुष्य की इच्छा का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष फल होता है।
६. प्राकृतिक प्रवरण प्राकृतिक दशाओं पर आधारित होता है।	६. सामाजिक प्रवरण सामाजिक दशाओं पर आधारित होता है।

इससे स्पष्ट है कि प्राकृतिक प्रवरण एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। मानव समाज के लिये प्राकृतिक प्रवरण का सिद्धान्त बिलकुल अनुपयुक्त हैं। मानव समाज में सामाजिक प्रवरण कार्य करता है।

प्राणीशास्त्रीय परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन (Biological Change and Social Change)

प्राणीशास्त्रीय परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन में प्रत्यक्ष रूप से घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है। यद्यपि अप्रत्यक्ष सम्बन्ध अवश्य प्रतीत होता है। ग्रीन ने भी लिखा है, "वास्तव में प्राणीशास्त्रीय परिवर्तन के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता।"† सामाजिक परिवर्तन कुछ अत्यन्त योग्य व्यक्तियों के फलस्वरूप उत्पन्न होता हैं। क्योंकि वे अविष्कार करते हैं या नवीन विचारों का प्रतिपादन करते हैं। ऐसा करने की योग्यता वंशानुसंक्रमण द्वारा प्राप्त होती है। इसलिए प्राणीशास्त्रीय कारक सामाजिक परिवर्तन को उत्पन्न करते हैं। वास्तव में यह प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है और प्रत्यक्ष रूप से ऐसा सम्बन्ध स्थापित करना अत्यन्त कठिन है। इस कथन को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता कि प्राणीशास्त्रीय परिवर्तन का कुछ न कुछ प्रभाव सामाजिक परिवर्तन पर पड़ता है।

प्रश्न

१. 'प्राकृतिक प्रवरण' या 'अस्तित्व के लिये संघर्ष' की स्पष्ट व्याख्या कीजिये। (आगरा, १९५२)

(Explain either Natural Selection or the stuggle for existence.)

† "Certainly no direct relationship can be traced between biological change and Social change." Green, 'Sociology' p 516.

२. प्राकृतिक प्रवरण क्या होता है ? मानव समाज में वह किस प्रकार कार्य करता है ? (राजस्थान, १९५७)

(What is natrul selection ? How does it operate in human society ?)

३, "प्राकृतिक प्रवरण केवल मृत्यु दर द्वारा ही प्रभावशाली होता है।" व्याख्या कीजिये। (आगरा, १९५७)

(Natural selection acts solely through the death rate.' Explain.)

४. सामाजिक प्रवरण से आप क्या समझते हैं ? प्राकृतिक प्रवरण और सामाजिक प्रवरण में भेद बताइये।

(What do you understand by Social Selection ? Differentiate between natural and socialselections.)

SELECTED READINGS

1. Gisbert, 'Fundamentals of Sociology.' chapter XIV.
2. MacIver and Page, 'Sceity' chapter XXIV.

अध्याय २५

सामाजिक परिवर्तन के सांस्कृतिक कारक

(Cultural factors of Social Change)

अभी तक हमने सामाजिक परिवर्तन के उन कारकों का अध्ययन किया जो साधारणतया मनुष्य की शक्ति से परे हैं। अब हम सामाजिक परिवर्तन के उन कारकों पर प्रकाश डालेंगे जो मनुष्य की कृति के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं।

हम सभी जानते हैं कि मनुष्य जन्म के समय एक पशु होता है। पशु होने के नाते उसकी कुछ आवश्यकतायें होती हैं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति मनुष्य किसी न किसी प्रकार अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिये करता है। शनैः शनैः ये कार्य व्यवस्थित हो जाते हैं और इनकी एक व्यवस्था बन जाती है। यह तो रहा पशु के नाते आवश्यकताओं की पूर्ति करना। मनुष्य पशु से मानव बनने के लिये समाजीकरण की प्रक्रिया से गुजरता है। मानव बनने के लिये भी अनेक आवश्यकतायें होती है। मनुष्य इनकी पूर्ति भी अपने सामाजिक अस्तित्व को बनाये रखने के लिये करता है। यहाँ भी एक संगठन उत्पन्न हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य अपने जीवन को चलाने के लिये किसी न किसी व्यवस्था को विकसित एवं स्थापित करता है। इस सम्पूर्ण व्यवस्था को संस्कृति * (Culture) कहते हैं। संस्कृति के अन्तर्गत रीति-रिवाज, सामाजिक संगठन, आर्थिक एवं राजनैतिक व्यवस्था, विज्ञान कला, धर्म, विश्वास, परम्परायें नैतिकता, मशीनें, उपकरण इत्यादि सब आते हैं। संक्षेप मे संस्कृति का अर्थ है किसी समुदाय के जीवन का ढंग (Way of Living)।

अधिकांश मानवशास्त्री एवं समाजशास्त्री संस्कृति की उपरोक्त परिभाषा से सहमत हैं परन्तु कुछ समाजशास्त्रियों ने कुछ अन्तर करने के प्रयत्न किये हैं। उनमें से प्रमुख ऑगबर्न और मैकाइवर हैं।

---

* "See chapters on 'Culture' for details.

भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति
(Material and non-material Culture)

ऑग्बर्न ने संस्कृति की उपरोक्त परिभाषा को माना है परन्तु उसे दो भागों में विभाजित किया है—भौतिक संस्कृति (Material Culture) और अभौतिक संस्कृति (Non-Material Culture)।

भौतिक संस्कृति, संस्कृति का वह भाग है जो उपकरणों (Tools), मशीनों, मकानों तथा अन्य मूर्त (Tangible) वस्तुओं का होता है। भौतिक संस्कृति के अन्तर्गत मनुष्य कृत समस्त भौतिक वस्तुयें आती हैं जैसे साइकिल, मोटर, वायुयान, मशीनें, टाइपराइटर, भवन, सड़कें, समस्त प्रकार के इंजिन घड़ी, चश्मा, फाउन्टेनपेन इत्यादि इत्यादि।

अभौतिक संस्कृति (Non-Material Culture) के अन्तर्गत संस्कृति का वह भाग आता है जो भौतिक एवं मूर्त नहीं है, बल्कि अमूर्त (Intangible) है जैसे धर्म, जन-रीतियाँ, रूढ़ियाँ, आचार विचार इत्यादि।

ऑग्बर्न ने स्पष्ट लिखा है कि यह वर्गीकरण केवल अध्ययन की सुविधा के लिये है। ऑग्बर्न के शब्दों को अवतरित करना अनुपयुक्त न होगा, "जब कि विश्लेषण के लिये भौतिक और अभौतिक संस्कृति में अन्तर करना आवश्यक है, पर यह ध्यान देना भी आवश्यक है कि वे विस्तृत साँस्कृतिक इकाई-सामाजिक संस्थाओं—के परस्पर सम्बन्धित भाग हैं।"* साधारणतया इस प्रकार का वर्गीकरण अत्यन्त कठिन होता है।

सांस्कृतिक विलम्बना (Cultural Lag)

सांस्कृतिक विलम्बना शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम प्रमुख समाजशास्त्री ऑग्बर्न ने अपनी पुस्तक (Social Change) में किया है।† अब इस शब्द का प्रयोग समाजशास्त्रियों द्वारा अत्यधिक किया जाता है। बिलम्बना का साधारण अर्थ आगे बढ़ने में विलम्ब करना होता है। 'लेग' (Lag) शब्द का शाब्दिक अर्थ लंगड़ाना होता है। आग्बर्न ने संस्कृति को दो भागों में वर्गीकृत किया है, जिसके

---

* "While for certain purposes of analysis it is desirable to make a distinction between the material and non-material culture, it is also important to note that they are interrelated parts of a larger cultural unit, social institutions." Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology' p. 24.

† See W. F. Ogburn, 'Social Change' Part IV.

विषय में हम लिख ही चुके हैं। भौतिक संस्कृति और अभौतिक संस्कृति मानव जीवन के दो अंग हैं और परस्पर अत्यधिक सम्बन्धित है। यदि इन दोनों में से एक की आगे बढ़ने की गति दूसरे से अधिक हो तो एक आगे बढ़ जायेगी और दूसरी पीछे रह जायगी। भौतिक संस्कृति अभौतिक संस्कृति की अपेक्षा शीघ्रता से आगे बढ़ती है।

ऑग्बर्न ने इसी प्रक्रिया की ओर संकेत किया है। उन्होंने लिखा है, "वह तनाव जो संस्कृति के दो परस्पर सम्बन्धित भागों, जो कि असमान गति की दर से परिवर्तित होते हैं, में रहता है, उस भाग में विलम्बना समझी जा सकती है जो कि अत्यधिक मन्द दर से परिवर्तित हो रहा है क्योंकि एक वस्तु दूसरी के पीछे रह जाती है ('विलम्ब करती है')।"* एक स्थान पर उदाहरण देते हुए ऑग्बर्न ने लिखा है कि संयुक्त-राज्य अमेरिका में उन नगरों में, जिनमें जन-संख्या बढ़ रही है, पुलिस की संख्या प्रति १०,००० निवासियों पर उन नगरों की अपेक्षा कम है जिनकी आबादी घट रही है।† इसके और भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। उत्पादन के साधन जो कि भौतिक संस्कृति के अङ्ग हैं औद्योगिक क्रांति के उपरान्त तीव्रता से परिवर्तित होते गए परन्तु श्रमिक कानून बहुत अधिक समय तक अपरिवर्तित ही रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि श्रमिक कानून (Labour Laws) उत्पादन के साधन (Means and Methods of Production) से पीछे रह गए जब कि दोनों परस्पर सम्बन्धित हैं। इसे सांस्कृतिक विलम्बना कहेंगे। इसका अति उत्तम उदाहरण भारतीय समाज से मिल सकता है। भारत में हम मशीनों, ट्रैक्टरों, मोटर गाड़ियों, रेलगाड़ियों तथा अन्य वस्तुओं का प्रयोग करने लगे। ये भौतिक संस्कृति के तत्व हैं। इन्हें हमने स्वीकार कर लिया परन्तु हमारी धारणाएं, रीति-रिवाज, धर्म तथा अन्य अभौतिक संस्कृति के तत्व परिवर्तित नहीं हुए हैं। यहाँ पर भौतिक संस्कृति और अभौतिक संस्कृति के परिवर्तन की दरें भिन्न हैं। इसे सांस्कृतिक विलम्बना कहते हैं। हम किसी नवीन सांस्कृतिक लक्षण (Culture

---

* "The strain that exists between two correlated parts of culture that change at unequal rates of speed may be interpreted as a lag in the part that is changing at the slowest rate, for the one lags behind the other." Ogburn and Nimkoff, 'Handbook of Sociology' p. 592.

† See W. F. Ogburn, 'Social eharactoristics of Cities' (Chicago, 1937.)

Trait) को दूसरी संस्कृति से उधार ले सकते हैं या आविष्कार कर सकते हैं परन्तु अपने सामाजिक संगठन में उचित स्थान पर जमाने में असफल हो सकते हैं। हमने मोटरों का प्रयोग बहुत पहले प्रारम्भ कर दिया था पन्तु मार्ग के नियम बहुत बाद को विकसित हुये। हमारे नगर बेढ़ंगे तरीके से विकसित होने प्रारम्भ हो गये थे परन्तु नागरिक नियम और नगर आयोजन बहुत बाद को प्रारम्भ हुआ। आजकल अणुशक्ति का आविष्कार हो गया है परन्तु हमारी अभौतिक संस्कृति उसके बहुत पीछे है। यदि यह अन्तर बना रहा और राजनैतिक विचार-धाराओं में परिवर्तन न हुआ तो संसार की समस्त जन-संख्या नष्ट हो सकती है। ये सब सांस्कृतिक बिलम्बना (Cultural Lag) के उदाहरण हैं।

सांस्कृतिक विलम्बना के सिद्धान्त की आलोचना
(Criticism of the theory of Cultural Lag)

ऑगबर्न के इस सिद्धान्त की अनेक समाजशास्त्रियों ने आलोचना की है। म्यूलर ने इस प्रकार की विलम्बना को कृत्रिम एवं कल्पित (Spurious) बताया है। अन्य विद्वानों का मत है कि सामाजिक परिवर्तन को समझाने के लिये वह अति सरल भूमिका है। यह सिद्धान्त प्रौद्योगिक अग्रसरता (Technological lead) और अप्रौद्योगिक विलम्बना (Non-Technological lag) पर आधारित है। इसके अनुसार प्रौद्योगिक-तत्व पहले अग्रसर हो जाते हैं और अप्रौद्योगिक तत्व धीरे-धीरे इनका अनुसरण करते हैं और सन्तुलन स्थापित कर लेते हैं। प्रौद्योगिकी (Technology) धर्म, वर्ग संरचना, पारिवारिक सम्बन्ध तथा अन्य अभौतिक तत्वों को प्रभावित करती है और उसमें होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है।* वास्तव में यह कथन सत्य नहीं है कि सदैव प्रौद्योगिक-तत्व ही अग्रसर होते हैं। यहाँ पर वही पुराना विवाद खड़ा हो जाता है कि 'प्रथम क्या होता है, मुर्गी या अण्डा'।

मैकाइवर और पेज ने विशेष रूप से इस सिद्धान्त की आलोचना की है और कुछ रचनात्मक सुझाव भी दिये हैं। उनके अनुसार सांस्कृतिक विलम्बना (Cultural lag) शब्द आज के युग में बड़ा सर्वप्रिय एवं उपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि नवीन आविष्कार नित्य-प्रति रहन-सहन के पुराने ढंगों को प्रभावित करते रहते हैं। इस सर्व-प्रियता के कारण इस शब्द का मनमाना प्रयोग हुआ है। ऑगबर्न के सिद्धान्त की आलोचना करते हुये उन्होंने लिखा है कि यह आवश्यक

---

* इसके प्रभावों को विस्तार से अगले अध्याय में पढ़िये।

नहीं है कि सदैव अभौतिक संस्कृति (Non-Material Culture) भौतिक संस्कृति के पीछे रह जाती है। इसके अतिरिक्त ऑग्बर्न ने जो भौतिक संस्कृति और अभौतिक संस्कृति का भेद किया है वह भी स्पष्ट नहीं है। अनेक विद्वानों ने इस भेद की आलोचना की है।

साँस्कृतिक विलम्बना के अनुसार एक वस्तु अग्रसर रहती है और दूसरी विलम्ब करती है। अग्रसर और विलम्ब करने वाली वस्तुएं एक ही प्रकार की होनी चाहिए और उनका मापदण्ड (Standard of Mesurement) समान होना चाहिये। जहाँ पर इस प्रकार का समान मापदण्ड सम्भव न हो वहाँ पर विलम्बना शब्द का प्रयोग उचित नहीं है। साँस्कृतिक विलम्बना शब्द का प्रयोग सामाजिक परिवर्तन के अन्तर्गत उत्पन्न होने वाले किसी भी प्रकार के असामंजस्य या असंतुलन के लिये प्रयोग किया जाता है। वास्तव में इसे एक ही व्यवस्था के अन्तर्गत उत्पन्न होने वाले असंतुलन के लिये प्रयोग करना चाहिए।

मैकाइवर और पेज ने विभिन्न व्यवस्थाओं में उत्पन्न होने वाले असंतुलन के विभिन्न शब्दों का सुझाव दिया है।

(१) प्रौद्योगिक विलम्बना (Technological lag)

प्रौद्योगिक विलम्बना शब्द का प्रयोग उस असंतुलन के लिये करना चाहिये जो प्रौद्योगिक प्रक्रिया के किसी परस्पर सम्बन्धी भाग से उत्पन्न हो और उसके कारण सम्पूर्ण उत्पादन-प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न हो। उदाहरण के लिये औद्योगिक रुकावट (Industrial bottle-Neck)। ऑग्बर्न द्वारा प्रस्तुत उदाहरण में हम जंगलों के पदार्थों का प्रयोग करते जाते हैं परन्तु उतनी ही कुशलता से उनकी रक्षा नहीं करते। यह भी प्रौद्योगिक विलम्बना का एक उदाहरण है।

(२) प्रौद्योगिक प्रतिरोध (Technological Restraint)

कई बार अधिक कुशल यन्त्रों, पद्धतियों एवं अन्य वस्तुओं का प्रयोग निहित स्वार्थों के कारण लोग नहीं करते या किये जाने का विरोध करते हैं। इस प्रकार के विरोध द्वारा औद्योगिक क्षेत्र में उत्पन्न प्रतिरोध को प्रौद्योगिक प्रतिरोध कहते हैं।

प्रौद्योगिक प्रतिरोध के निम्न भेद मैकाइवर और पेज ने किये हैं—

(अ) नौकरशाही द्वारा निश्चित प्रतिरोध (Restraint Determined by Bureau Cratic interest)- नौकरशाही और कुलीन वर्ग वर्तमान अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं चाहते क्योंकि इससे उनके अस्तित्व का भय रहता

है। सरकारी कार्यालयों में लाल फीता पद्धति (Red tapism) और कार्यों को अकुशलता से करना एक लम्बी कहानी है। इस प्रकार का प्रतिरोध कानूनी व्यवसाय में भी पाया जाता है। जो विवाद एक दिन में समाप्त हो सकता है वह वर्षों में भी समाप्त नहीं होता है। इस प्रकार का प्रतिरोध सभी वृहद्-स्तर के संगठनों में पाया जाता है। निहित स्वार्थ (Vested Interest) सदैव कुशल पद्धतियों का विरोध करते हैं।

(ब) आर्थिक स्वार्थ द्वारा निश्चित प्रतिरोध (Restraint determind by economic interest)—कई बार आर्थिक स्वार्थ के कारण कुशल पद्धतियों का प्रतिरोध किया जाता है। यह एक प्रकार से नौकरशाही द्वारा निश्चित प्रतिरोध का एक स्वरूप है। कई बार आर्थिक स्वार्थ के कारण नवीन आविष्कार आविष्कर्त्ता द्वारा ही दबा दिया जाता है। श्रमिक संघ श्रम बचाने वाली युक्तियों का विरोध करते हैं। अभिनवीकरण (Rationalisation) का विरोध इसका एक उदाहरण है।

(स) साँस्कृतिक स्वार्थ द्वारा निश्चित प्रतिशोध (Restraint determined by cultural interest)—कभी कभी प्रौद्योगिक विकास का विरोध परम्पराओं, रूढ़ियों एवं सिद्धान्तों द्वारा होता है। इस प्रकार के प्रतिरोध को संस्कृति द्वारा निश्चित प्रतिरोध कहते हैं। यह प्रतिरोध भी कई प्रकार का होता है, उनमें से दो प्रकारों का हम विश्लेषण करेंगे।

(i) कभी कभी नवीन प्रौद्योगिकी समुदाय के बाहर से प्रविष्ट होती है। उस समुदाय की संस्कृति की व्यवस्था एकदम भिन्न होती है। ऐसी दशा में नवीन प्रौद्योगिकी का विरोध स्वाभाविक है। वन्य जातियों में नवीन प्रौद्योगिकी का प्रसार उन्हें समाप्त कर देता है क्योंकि उनकी संस्कृति और सभ्यता अन्योन्याश्रित और अपृथकनीय है। उनके जीवन का संतुलन नवीन प्रौद्योगिकी द्वारा नष्ट हो जाता है। अनेक स्थानों पर इस प्रकार के दृष्टान्त पाये जाते हैं।

जब नवीन प्रौद्योगिकी अपेक्षाकृत उच्च संस्कृति के समुदायों पर लादी जानी है तो एक विचित्र स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरण के लिए भारतवर्ष और चीन पर नवीन प्रौद्योगिकी वाह्य शक्ति द्वारा लादी गई है। इसका परिणाम दो संस्कृतियों का संघर्ष हुआ।§ महात्मा गांधी और उनके अनुयायियों ने मशीनों एवं नवीन प्रौद्योगिकी का विरोध किया।

§ See Kuo-Heng-Shih, 'China Entering the Machine Age' (Cambridge, 1944.), and Margaret Read, 'The Indian Peasant Uprooted' (London, 1931.)

(ii) पश्चिमी देशों में इसी नवीन प्रौद्योगिकी का स्वागत हुआ क्योंकि लोगों ने इसे बाह्य शक्ति द्वारा लादा हुआ नहीं समझा। वहाँ पर केवल उन्हीं वस्तुओं का विरोध हुआ जो वर्तमान प्रचलित धार्मिक परम्पराओं के विरुद्ध प्रतीत हुये।

३. सांस्कृतिक संघर्ष (Culture Clash)

जब एक समुदाय में दो संस्कृतियाँ होती हैं तो सांस्कृतिक संघर्ष उत्पन्न होता है। इस प्रकार का संघर्ष अति प्राचीन काल से चला आ रहा है।

सांस्कृतिक विसंयुजता (Cultural Ambivalence)

सांस्कृतिक विसंयुजता में दूसरी संस्कृति के लिए प्रेम और घृणा दोनों ही पाये जाते हैं। जब एक व्यक्ति किसी अन्य संस्कृति में पला होता है और बाद को एकदम नवीन संस्कृति में जाकर रहता है तो उसे नवीन संस्कृति के अनुसार वैयक्तिक व्यवस्थान करना पड़ता है। वैयक्तिक व्यवस्थान तो हो जाता है परन्तु व्यक्ति अपनी पुरानी संस्कृति के मूल्यों के अनुसार बनने की इच्छा रखता है। इस प्रकार की विरोधी मनः सामाजिक प्रक्रिया को सांस्कृति विसंयुजता (Ambivalence) कहते हैं। यह सांस्कृतिक संघर्ष की वृहद् प्रक्रिया से भिन्न होती है।

संस्कृति सामाजिक परिवर्तन की निश्चायक (Culture as determinant of Social Change)

संस्कृति सामाजिक परिवर्तन की निश्चायक होती है। हमारे विश्वासों और संस्थाओं, हमारे मूल्यों और सामाजिक सम्बन्धों में घनिष्ट सम्बन्ध है। इसे सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं। वास्तव में समस्त सांस्कृतिक परिवर्तन (Cultural Change) सामाजिक परिवर्तन को चलित करता है क्योंकि सामाजिक और सांस्कृतिक अत्यधिक सम्बन्धित और अपृथक्नीय हैं।

मैक्सवेबर § (Max Weber) ने इस दृष्टि से अध्ययन किया है और यह सिद्ध किया है कि सामाजिक परिवर्तन के लिए संस्कृति सभ्यता की अपेक्षा किसी भी प्रकार कम महत्वपूर्ण कारक नहीं है। संस्कृति न केवल प्रत्यक्ष रूप से

§ 'The Protestant Ethic and the spirit of capitalism' (Translation, T. Parsons.)

सभ्यता पर अपनी छाप लगाकर भी सामाजिक परिवर्तन को प्रेरित करती है। मैक्सवेबर ने पूंजीवाद और प्रोटेस्टेंट (Protestant) धर्म का सम्बन्ध स्थापित किया है।

सामाजिक व्यवस्थायें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा रची जाती हैं। सामाजिक मूल्यों में उत्पन्न प्रत्येक परिवर्तन संस्थाओं में भी परिरर्तन उत्पन्न करता है। इससे स्पष्ट है कि मैक्सवेबर का कथन उचित है। सामाजिक ढाचा समूह की धारणाओं एवं हितों का प्रतिफल होता है। हॉबहाउस× (Hobhouse) ने उचित लिखा है कि संस्थाओं की व्यवस्था और उनके पीछे की धारणा में घनिष्ट सम्बन्ध है।

संस्कृति परिवर्तन की दिशा (Direction) को भी निश्चित करती है। सांस्कृतिक कारक प्रौद्योगिक परिवर्तन की दिशा एवं प्रकृति को प्रभावित करता है। प्रौद्योगिकी का प्रयोग किस प्रकार होगा, इस सम्बन्ध में वह स्वयं तटस्थ है। संस्कृति इसे निश्चित करती है। मैकाइवर और पेज ने इस प्रक्रिया को बड़े सुन्दर ढङ्ग से व्यक्त किया है। उन्होंने लिखा है कि सभ्यता के साधन या प्रौद्योगिकी को एक जहाज मान लिया जाय। जहाज अनेक बन्दरगाहों को जा सकता है, परन्तु जहाज स्वयं यह निश्चित नहीं करता कि वह किन बन्दरगाहों को जायेगा। उन्होंने उचित ही लिखा है, "वह बन्दरगाह, जहाँ की हम यात्रा करते हैं, एक सांस्कृतिक चुनाव होता है।"* जहाज के बिना हम बिल्कुल भी यात्रा नहीं कर सकते थे, जहाज की प्रकृति के अनुसार हमारी यात्रा तीव्र या मध्यम गति से होगी और जहाज की परिस्थितियों से व्यवस्थान करना पड़ेगा परन्तु हमारी यात्रा किस दिशा में होगी इसका पूर्व निश्चय जहाज के आकार (Design) द्वारा नहीं होता है। जहाज जितना अच्छा होगा उतने ही अधिक बन्दरगाह चुने जाने के लिये उसकी सीमा में आयेंगे, परन्तु कौन सा बन्दरगाह चुना जायेगा यह संस्कृति पर आधारित है।†

× L. Hobhouse, 'Social Development', chap. XII.

* "The port we sail to remains a cultural choice." MacIver and Page, 'Society' p. 581.

† Ibid p. 581.

संस्कृति का इतिहास भी इस तथ्य को सिद्ध करता है। मूल्यों ने सदैव हमारे कार्यों को प्रभावित किया है। प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पन्न परिवर्तन इतने भयानक एवं कुरूप थे कि लोगों ने इसे पुराने मूल्यों के विरुद्ध समझा। मशीन के कारण कल कारखानों के नगरों की गंदगी एवं अन्य प्रकार की नीचता, ग्रामों का ह्रास., नवीन संकट, नवीन रोग, औद्योगिक थकावट इत्यादि उत्पन्न हुए। यह मशीन का दोष नहीं था बल्कि उन लोगों का दोष था जिन्होंने मशीनों पर स्वामित्व स्थापित कर लिया था। इस पर भी मानव मूल्यों ने इस आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई और शनैः शनैः संस्कृति ने नवीन सभ्यता को पुनः निर्देशित करना प्रारम्भ कर दिया है। इससे स्पष्ट है कि साँस्कृतिक कारक न केवल सामाजिक परिवर्तन को उत्पन्न करता है बल्कि प्रौद्योगिकी की दिशा एवं प्रकृति को भी प्रभावित करता है। डासन और गेटिस ने उचित लिखा है, "अतः संस्कृति सामाजिक परिवर्तन की दिशा निश्चित करती है और गति प्रदान करती है और उन सीमाओं को निर्धारि करती हैं जिनके बाहर सामाजिक परिवर्तन नहीं जा सकते।"§

प्रश्न

१. सांस्कृतिक विलम्बना पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये। (आगरा, १९५७)
(Write a short essay on Cultural Lage.)

२. ऑगबर्न के सांस्कृतिक विलम्बना के सिद्धान्त की विवेचना कीजिये। इस सिद्धान्त के विरुद्ध कौनसी अपत्तियाँ उठाई गई हैं? (राजस्थान, १९५६)
(Explain Ogburn's theory of Cultural Lag. What objections have been raised against the theory?)

३. यह स्पष्ट रूप से समझाइये कि कैसे—

(अ) प्रौद्योगिक परिवर्तन सांस्कृतिक परिवर्तन उत्पन्न करते हैं।

(ब) सांस्कृतिक दशा प्रौद्योगिक परिवर्तन की दिशा एवं प्रकृति को प्रभावित करती हैं। (आगरा, १९५६)

---

§ "Thus, culture tends to give direction and momentum to social change to set limits beyond which social change may not go." Dawson and Gettys, 'Introduction to Sociology' p. 580.

(Explain clearly how—

(a) Technological changes* bring about cultural changes.

(b) Cultural situation influences the direction and character of technological changes.)

४. संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिये—

(अ) प्रौद्योगिक विलम्बना (आगरा, १९५६)

(ब) सांस्कृतिक विलम्बना (आगरा, १९५१)

(Write short notes on—

(a) Techonological Lag,
(b) Cultural Lag,)

SELECTED READINGS

1. Ogbwrn and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' chapte XXIV, XXV.

2. MacIver and Page, 'Society' chapter XXVI.

3. Weinberg and shabat, 'Society and Man' chapter VIII.

अध्याय २६

सामाजिक परिवर्तन के प्रौद्योगिकीय कारक

(Technological factors of Social Change)

पिछले अध्यायों में हमने सामाजिक परिवर्तन के जन-संख्यात्मक (Demographic), प्राणी शास्त्रीय (Biological) और साँस्कृतिक (Cultural) कारकों पर प्रकाश डाला। प्रमुखतया साँस्कृतिक कारक के अध्याय में हमने अभौतिक साँस्कृतिक कारक का ही विश्लेषण किया था। उससे भी अधिक महत्वपूर्ण कारक भौतिक संस्कृति का है। विशेषतया आधुनिक जगत में भौतिक तत्व अत्यन्त आवश्यक है। विशेषतया आधुनिक यन्त्र एवं उनकी। विद्या-प्रौद्योगिकी (Technology) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह युग ही मशीन का युग है और चारों तरफ मशीन ही मशीन का प्रभाव दिखाई पड़ता है। साधारण बुद्धि के भी व्यक्ति समस्त सामाजिक परिवर्तनों को प्रौद्योगिकी (Technology) का परिणाम बतलाते हैं। वास्तव में आज के युग में उसने हलचल भी मचा दी है। सामाजिक परिवर्तन पर भी प्रौद्योगिकीय कारक के प्रभाव का विस्तृत विश्लेषण करने के पूर्व हमें प्रौद्योगिकी (Technology) का अर्थ समझ लेना चाहिये।

प्रौद्योगिकी का अर्थ (Concept of Technology)

प्रौद्योगिकी को साधारणतया लोगों ने उपकरण (Tool) या यन्त्र (Machine) के रूप में समझा है वास्तव में ऐसा नहीं है। उपकरण (Tool) वह वस्तु होती है जिसका प्रयोग मनुष्य अपनी शक्ति के द्वारा करता है। उदाहरण के लिये हथौड़ा, हाथ की आरी या कारीगरों के अन्य औजार। यन्त्र (Machine) कई उपकरणों से मिल कर बनता है और अधिकतर पशु-शक्ति, जल-शक्ति, विद्युत-शक्ति या किसी अन्य शक्ति के द्वारा कार्य करता है। उदाहरण के लिये हल या कल कारखानों की कोई भी मशीन। प्रौद्योगिकी एक यन्त्र या उपकरण नहीं होती बल्कि वह व्यवस्थित ज्ञान होता है जिसके द्वारा इन यन्त्रों एवं उपकरणों का प्रयोग सम्भव हो पाता है। उदाहरण के लिये एक

टाइपराइटर है । टाइपराइटर एक यन्त्र है परन्तु टाइपराइटिंग (Type Writing) प्रौद्योगिकी है । मार्क्स ने भी प्रौद्योगिकी की परिभाषा इन्हीं अर्थों में की है । उसने लिखा है कि प्रौद्योगिकी प्रकृति के साथ मनुष्य के व्यवहार करने एवं उत्पादन करने की प्रक्रिया को व्यक्त करती है जिसके द्वारा वे अपने जीवन को पालते हैं। इसके द्वारा वे अपने सामाजिक सम्बन्धों के प्रकारों तथा उनसे उत्पन्न होने वाली मानसिक धारणाओं को व्यक्त करते हैं।* अब हम प्रौद्योगिकी को समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का विवरण देंगे ।

सामाजिक परिवर्तन और प्रौद्योगिकी
(Social Change and Technology)

प्रौद्योगिकी और सामाजिक परिवर्तन में घनिष्ट संबंध है । प्रौद्योगिकी में परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों में भी परिवर्तन उत्पन्न करता रहता है । आधुनिक युग में प्रौद्योगिकी में असाधारण परिवर्तन हुये हैं । इन परिवर्तनों के फलस्वरूप सामाजिक सम्बन्धों में भी महान परिवर्तन हुए हैं ।

प्रौद्योगिकी में परिवर्तन तुरन्त किसी न किसी रीति-रिवाज या सामाजिक संस्था में परिवर्तन उत्पन्न कर देता है । स्वयं-चालक यन्त्र (Self Starter) का आविष्कार हुआ । मोटर गाड़ियों में इसका प्रयोग होने लगा । प्रौद्योगिकी में इस परिवर्तन के फलस्वरूप अधिकाधिक स्त्रियाँ मोटर चलाने लगी क्योंकि स्वयं-चालक यन्त्र (Self Starter) के कारण वे सरलता से मोटर चला सकती है । इसके पूर्व मोटर को प्रारम्भ करने में बड़ा कष्ट होता था जो स्त्रियाँ पसन्द नहीं करती थीं । स्त्रियाँ इस आविष्कार के फलस्वरूप केवल मोटर ही नहीं चलाने लगी बल्कि सामाजिक सम्बन्धों में और भी अनेक परिवर्तन हुये । स्त्रियों की गतिशीलता, आदतों, गृह जीवन, बच्चों का पालन पोषण, होटलों का प्रयोग, अवकाश मनाने के ढंग इत्यादि पर भी प्रभाव पड़ा । भौतिक आविष्कार का प्रभाव अत्यन्त विस्तृत होता है । ऑग्बर्न और निमकॉफ ने उचित लिखा है, "कभी कभी यह (भौतिक आविष्कार) अनेक प्रभाव डालता है । जो विभिन्न दिशाओं

---

* "Technology discloses man's mode of dealing with nature the process of production by which he sustains his life, and thereby also lays bare the mode of formation of social relations, and of the mental conceptions that flow from them." Karl Marx-Capital. Vol. I. p. 372 (Ed. 1954.)

में एक पहिये की तीलियों के समान फैल जाते हैं।"† रेडियो का आविष्कार हुआ। इससे संयुक्त-राज्य अमेरिका के समाज पर १५० प्रभाव लिखे गये हैं।§ वास्तव में यह सत्य है कि प्रौद्योगिकीय कारक का प्रभाव सामाजिक जीवन पर अत्यधिक होता है।

आधुनिक युग में प्रौद्योगिक परिवर्तन (Technological Changes) अत्यधिक मात्रा में हुये हैं। उनमें से प्रमुख उद्योगों में मशीनों का उपयोग, संदेशवाहन तथा आवागमन के साधनों का विकास तथा नवीन कृषि सम्बन्धी प्रविधियों का विकास है। विगत अर्द्ध शताब्दी में प्रौद्योगिकी ने जो आश्चर्यजनक प्रगति की है उसे देख कर मानव मस्तिष्क के कौशल पर मुग्ध हुये बिना नहीं रहा जा सकता। आज से ५० वर्ष पूर्व कठिनाई से ही कुछ गिने चुने घरों में बिजली देखी जा सकती थी जब कि आज वही हमारे दैनिक जीवन का एक अङ्ग बन चुकी है। उस समय रेडियो ब्राडकास्ट की बात तक नहीं सुनी गई थी, टेलीविजन (Television) का तो कहना ही क्या, वह किसी की कल्पना में भी नहीं था। किन्तु आज रेडियो ब्राडकास्ट एक सामान्य सी बात मानी जाने लगी है। यहाँ तक कि भारत जैसे निर्धन देश में भी लाखों लोग रेडियो के ब्राडकास्ट का आनन्द ले रहे हैं। टेलीविजन अवश्य ही हमारे लिये नया है। कई लोग तो अब भी उसकी सामर्थ्य पर सन्देह ही करते हैं लेकिन वह दिन अधिक दूर नहीं जब कि भारत में भी टेलीविजन एक सामान्य प्रकार का मनोरंजन का यन्त्र माना जाने लगेगा जैसा कि काफी हद तक वह पश्चिम के कुछ देशों में माना जाने लगा है।

उद्योगों में नवीन मशीनों का प्रयोग होने लगा और उत्पादन वृहद् स्तर पर होना अनिवार्य हो गया। व्यापार अत्यधिक बढ़ गया। पारस्परिक सम्बन्ध आधुनिक टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र इत्यादि की सहायता से अत्यधिक बढ़ गये हैं। आवागमन के साधनों जैसे जहाज, वायुयान, मोटर, रेल इत्यादि के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी बहुत कम हो गई है और

---

† "Sometimes it exerts many influences which spread out in different directions like the spokes of a wheel." Ogburn and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' p. 564.

§ President's Research Committee on Recent Social Trends, 'Recent Social Tredns' New York, (1933), pp. 153-6.

समस्त संसार अपनी पहुँच के अन्दर प्रतीत होता है। कृषि में भी नवीन प्रविधियाँ उत्पन्न हो गई हैं और इनके फलस्वरूप अन्न उत्पादन की समस्या एकदम सरल हो गई है। ऐसे ही अगणित आविष्कार हुए हैं जिनका विवरण देना असम्भव सा प्रतीत होता है। इन प्रौद्योगिक आविष्कारों का प्रभाव सामाजिक सम्बन्धों पर इतना अधिक हुआ कि महान सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप समस्त सामाजिक जीवन ही परिवर्तित हो गया है। अब हम कुछ प्रमुख सामाजिक संस्थाओं पर प्रौद्योगिकी के प्रभाव का विश्लेषण करेंगे:—

१. परिवार—आधुनिक प्रौद्योगिकी ने परिवार से उत्पादन के समस्त कार्य ले लिये हैं और इन कार्यों को अन्य संस्थायें करती हैं। इसके फलस्वरूप पारिवारिक संगठन का स्वरूप ही बदल गया है। नवीन प्रकार के छोटे परिवार संयुक्त परिवार के स्थान पर विकसित हो गये हैं। पुरुषों को परिवार के बाहर उत्पादन के लिये जाना पड़ता है और स्त्रियाँ भी उत्पादन में भाग लेने लगी हैं। इसके फलस्वरूप पिता की शक्ति एवं अधिकार शनैः शनैः घटते जा रहे हैं।

२. विवाह— विवाह की संस्था में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं। चुनाव का क्षेत्र बढ़ गया है। विवाह विच्छेद इत्यादि की संख्या बढ़ती जा रही है।

३. धार्मिक संस्थायें—धर्म पर भी प्रौद्योगिकों का बड़ा प्रभाव पड़ा है। वैज्ञानिक अनुसंधानों के कारण धर्म में विश्वास कम होता जा रहा है।

४. राज्य—राज्य पर भी आधुनिक प्रौद्योगिकी का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। राज्य की सत्ता दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। आवागमन के साधनों के विकास के कारण राज्य का क्षेत्र बढ़ता जा रहा है और राज्य अधिक स्थिर होते जा रहे हैं। राष्ट्रवादी राज्यों की नीवें भी हिलने लगीं हैं और विश्व राज्य की कल्पना विकसित होने लगी है। राज्य को अनेक कल्याणकारी कार्यों का उत्तरदायित्व सम्भालना पड़ रहा है।

५. सामाजिक मूल्य—प्रौद्योगिकी का प्रभाव न केवल सामाजिक संस्थाओं पर पड़ता है बल्कि सामाजिक मूल्यों पर भी पड़ता है। सामाजिक मूल्य ही हमारे सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार प्रौद्योगिकी अप्रत्यक्ष रूप से भी सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करती है। उदाहरण के लिए आधुनिक युग में सफलता धन के रूप में ही पाई जाती है। इस सामाजिक मूल्य का प्रभाव हमारे सामाजिक सम्बन्धों पर पड़ता है। इसी प्रकार आजकल मशीनों

के बीच में रहते रहते मनुष्य की मनोवृत्ति ही मशीन जैसी हो गई है और वह मनुष्य को भी मशीन समझने लगा है। इसके फलस्वरूप आजकल लोगों को कुर्सी से वास्ता रहता है न कि व्यक्ति से। संबंध अवैयक्तिक एवं द्वैतियक हो गये हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रौद्योगिकी सामाजिक मूल्य को प्रभावित करती है। ग्रीन ने उचित लिखा है, "प्रौद्योगिकीय परिवर्तन सामाजिक मूल्यों और आचार संबंधी नियमों को प्रभावित करता है।"*

निकट भविष्य में विकसित होने वाली प्रौद्योगिकी†
(Technology to be developed in near future)

आगामी २५ वर्षों को यदि परिमाणु युग (Atomic Age) की संज्ञा दी जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। यह वह युग होगा जिसमें कम खर्चीले पदार्थों द्वारा उत्पादित अणु-ईंधन (Atomic fuel) का प्रचुर मात्रा में उपयोग होने लगेगा। न केवल उद्योग बल्कि यातायात के वाहन भी इसी के द्वारा चालित होने लगेंगे और इसकी शक्ति सरलता से बिजली के रूप में परिवर्तित हो सकेगी। अणु की एकमात्र बेटरी ही घर की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की वर्षों तक पूर्ति कर सकेगी और अन्त में ऐसी अणु-बेटरी भी आविष्कृत हो जायेगी जो कि आपके जीवन पर्यन्त चल सके। सूर्य की किरणों को भी एकत्रित करके उनका ईंधन के रूप में प्रयोग किया जा सकेगा, विशेषकर गर्म देशों में जहां वर्ष के अधिकांश महिनों में सूर्य देव की कृपा बनी ही रहती है और जहाँ अन्य प्रकार के ईंधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं। अब भी कई छोटे रेडियो सूर्य शक्ति के द्वारा ही बजाये जाते हैं। दिन के समय एकत्र की गई शक्ति रात्रिकाल में रेडियो बजाने के काम आती है।

राकेट चालित तीव्रगामी वायुयान

वैसे तो आज भी संसार में एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी घटती जा रही है, यहां तक कि एक महाद्वीप के किसी स्थान से दूसरे महाद्वीप के किसी स्थान तक यात्रा करने वाले को यही लगता है कि वह अपने पास के ही किसी नगर की यात्रा कर रहा है। किन्तु निकट भविष्य में यह स्थान की दूरी और भी कम हो जायगी। संसार के प्रमुखतम नगरों को कुछ ही घंटों में पहुँचा जा

---

* "Technological change affects social values and moral norms." Green, 'Sociology' p. 522-23.

† 'आगामी २५ वर्ष' धर्मयुग साप्ताहिक, जून २३, १९५७, पृष्ठ ६-७।

सकेगा। जेट तथा राकेट द्वारा चालित वाहन प्रति घंटे २००० मी० तक की गति से चल सकेंगे और खूबी यह होगी कि उनमें की गई यात्रा आज की यात्रा की अपेक्षा अधिक आरामदेय और सुखकर होगी। आकाश में व्यक्तिगत वायुयान उसी तरह उड़ने लगेंगे जैसे कि सड़कों पर कारें चलती हैं। डाक भी चालकरहित वायुयानों द्वारा निर्दिष्ट स्थानों को पहुंचाई जा सकेगी, इसमें सन्देह नहीं।

संदेशवाहन के साधन

संदेशवाहन एवं मनोरंजन के आधुनिक यंत्रों में जिस यन्त्र का विस्तार अभी पश्चिम में भी सर्व साधारण तक नहीं हो सका है वह है, टेलीविजन यन्त्र। निकट भविष्य में यह यन्त्र बहुत लोकप्रिय हो जायगा। इस पर न केवल सादी बल्कि रंगीन तस्वीरों को भी देखा जा सकेगा। न केवल देश के ही बल्कि संसार के किसी भी भाग के दृश्य और ध्वनियाँ टेलीविजन पर प्रसारित की जा सकेंगी। यही बात रेडियो, तार और टेलीफोन द्वारा संदेशों के प्रसारण में भी लागू होगी।

ध्वनि प्रसारण की कार्य प्रणाली और उनके यन्त्रों में भी महान् परिवर्तन हो जाने की आशा है। मोटे मोटे तारों का स्थान पतले काडों ने ले लिया है। फलस्वरूप रेडियो का आकार बहुत छोटा हो गया है। आगामी कुछ ही वर्षों में रेडियो इंजिनियर सिगरेट के पेकिट के आकार का दुतरबा रेडियो बनाने लगेंगे जिसमें विशेष रेडियो की सहायता से राह चलता व्यक्ति सैंकड़ों मील दूर घुड़सवार से भी आसानी से बातचीत कर सकेगा। यही नहीं, ऐसे रेडियो सेट में छोटा टेलीविजन पर्दा भी लगाया जा सकेगा जिससे बात करने के साथ साथ आप उस व्यक्ति को भी देख सकेंगे जिससे कि आप बात कर रहे हैं।

आज आप संगीत को टेप पर रिकार्ड करके उसका जब चाहे तब आनन्द ले सकते हैं। ठीक यही बात टेलीविजन के लिये भी लागू हो सकेगी। टेलीविजन के दर्शक अपने मन चाहे कार्यक्रम को चाहे वह सादा हो अथवा रंगीन, चुम्बकीय टेप पर अंकित कर सकेंगे। इस काम के लिए प्रयोग में आने वाला यन्त्र टेलीविजन सेट के जितने बड़े आकार का ही होगा। घर में ही समूचे परिवार की फोटो फिल्म लेने वाला टेलीविजन केमरा भी सामान्य प्रयोग में आने लगेगा और उसे घरेलू टेलीविजन सेट पर ही देखा भी जा सकेगा।

ठण्डा विद्युत प्रकाश

विद्युत प्रकाश की दिशा में भी आश्चर्यजनक और लाभकारी परिवर्तन होंगे। आज तक विद्युत प्रकाश का प्रभाव गर्म रहा है किन्तु निकट भविष्य में ठंडा प्रकाश आविष्कृत हो सकेगा जिससे बिजली का प्रकाश पहले की अपेक्षा अधिक सुन्दर दिखेगा। यह होगा प्रकाश को कुछ रासायनिक पदार्थों में से ही होकर गुजरने पर। इस प्रकार के विद्युत प्रकाश में एक खूबी यह भी होगी कि वह छाया रहित होगी। यह प्रकाश कारखानों, दूकानों, सड़कों और घरों की काया पलट कर देगा। इसके प्रकाश में चकाचौंध न रहने से दुर्घटनायें भी कम हो जायेंगी।

निकट भविष्य में विज्ञान उग्र गर्मी तथा कड़ी सर्दी की समस्या को भी वायु-अनुकूलन के द्वारा हल कर सकेगा। हमारे घर और दफ्तर इस प्रणाली के प्रयोग द्वारा मनचाही डिग्री तक गरम अथवा ठंडे किये जा सकेंगे और इस प्रकार हम धूल तथा धुंए से बच कर घर में सुख की नींद ले सकेंगे अथवा यदि दफ्तर में हुये तो आराम से कार्य कर सकेंगे। इसके लिये किसी विशाल आकार के यंत्र की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, एक पम्प ही पर्याप्त होगा। साधारण रेफ्रीजेरेटर के समान ही यह पम्प भीतर की गर्मी को खींचकर बाहर पहुँचा सकेगा और ठीक इसी तरह बाहर से गर्मी एकत्र कर भीतरी भाग को गर्म कर सकेगा।

भाषा की सरलता

किसी न किसी दिन और वह दिन अधिक दूर नहीं—ऐसे यन्त्रों का आविष्कार हो जायेगा जो कि एक भाषा का दूसरी भाषा में अनुवाद तुरन्त ही और वगैर किसी त्रुटि के कर सकेंगे। अमेरिका की मेसाच्यूहैस्ट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेकनालॉजी में इस दिशा में काफी कुछ सफल प्रयोग हो चुके हैं। इसकी कार्य प्रणाली कुछ इस प्रकार की होगी। संदेश अंग्रेजी में टाइप कर लिया जायगा। तत्पश्चात ऑपरेटर उस भाषा की ओर इङ्गित करने वाला बटन दबायेगा जिस भाषा में अनुवाद की आवश्यकता होगी। दूसरी मशीन अपने आप ही ठीक ठीक अनुवाद कर देगी।

प्रौद्योगिकी में इन परिवर्तनों के कारण सामाजिक जीवन का स्वरूप बिल्कुल बदल जायेगा। निकट भविष्य में उत्पन्न होने वाले सामाजिक सम्बन्ध कैसे होंगे यह एक चिन्ता का विषय है। इतना निश्चित है कि भयंकर सामाजिक परिवर्तन होंगे परन्तु इन परिवर्तनों की दिशा क्या होगी यह निश्चित नहीं है। अणु शक्ति

से उपरोक्त वर्णित सुख कर जीवन प्राप्त हो सकता है और समस्त संसार हिरोशिया सरीखा दृश्य भी देख सकता है। इनमें से क्या होगा यह हमारे सामाजिक मूल्य एवं उद्देश्य निश्चित करेंगे। यदि रूस और अमेरिका ने अपनी वर्तमान नीति चालू रखी और पंडित नेहरू द्वारा प्रस्तावित पंचशील का सिद्धान्त न अपनाया तो कोई आशा सुख कर जीवन की नहीं दिखाई पड़ती। इन्हीं कारणों से आधुनिक युग में सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन समाजशास्त्रियों के लिये अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो गया होगा कि प्रौद्योगिक कारक सामाजिक परिवर्तन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कुछ विद्वानों ने इसके महत्व को इतना अधिक बढ़ा दिया है कि प्रौद्योगिकी को ही सामाजिक परिवर्तन का निश्चायक बतलाया है। उसमें से प्रमुख कार्ल मार्क्स (Karl Marx) एवं एंजिल्स (Engels) और वेबलन (Veblen) हैं। कार्ल मार्क्स एंजिल्स ने आर्थिक-प्रौद्योगिकीय सिद्धान्त के आधार पर समाज का विश्लेषण किया है और वेबलन ने केवल प्रौद्योगिकी को ही सामाजिक परिवर्तन का निश्चायक बताया है। इन दोनों ही प्रकार के सिद्धान्तों का हम विस्तार में विश्लेषण करेंगे और प्रमुखतया यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि कहां तक यह सिद्धान्त सम्पूर्णतया सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या करने में सफल होते हैं।

सामाजिक परिवर्तन की मार्क्स के अनुसार व्याख्या (The Marxist Explanation of Social Change)

मार्क्स और एंजिल्स ने समस्त सामाजिक परिवर्तनों का आधार प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पन्न आर्थिक व्यवस्था को बताया है। प्रथम हम इनके सिद्धान्त का अवलोकन करेंगे।

मार्क्स का सिद्धान्त (The Theory of Marx)

मार्क्स के सिद्धान्त का प्रमुख आधार आर्थिक व्यवस्था है। यह उपयुक्त होगा कि उसके शब्दों को ही अवतरित कर दिया जाय। "मनुष्य सामाजिक उत्पादन में कुछ निश्चित सम्बन्ध कायम करते हैं जो कि अनिवार्य होते हैं और उनकी इच्छाओं से स्वतंत्र होते हैं। उत्पादन के ये सम्बन्ध उत्पादन की भौतिक शक्ति के विकास के एक निश्चित स्तर के समान होते हैं। उत्पादन के इन सम्बन्धों का योग समाज की आर्थिक संरचना (Economic Structure) को निर्मित करता है, जो कि वास्तविक नींव है जिस पर वैधानिक और राजनैतिक अधिसंरचनाएं

(Super Structure) विकसित होती हैं, और जिसके अनुसार निश्चित प्रकार की सामाजिक चेतना (Social Consciousness) होती है। भौतिक जीवन में उत्पादन का प्रकार सामाजिक राजनैतिक और अध्यात्मिक जीवन की प्रक्रियाओं की सामान्य प्रकृति को निश्चित करता है।"† कार्ल मार्क्स ने इस सिद्धान्त का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि मनुष्यों की चेतना उनके अस्तित्व को निश्चित नहीं करती है बल्कि इसके विपरीत उनका सामाजिक अस्तित्व उनकी चेतना को निश्चित करता है। उनके विकास के एक निश्चित स्तर पर, समाज में उत्पादन की भौतिक शक्तियाँ वर्तमान उत्पादन के सम्बन्धों से संघर्ष करने लगती हैं या जो कि केवल उसी वस्तु का वैधानिक स्वरूप है—वे सम्पत्ति के सम्बन्धों से संघर्ष करने लगती हैं जिसमें वे पहले कार्य करती थीं। कहने का तात्पर्य यह है कि उत्पादन की भौतिक शक्तियाँ सम्पत्ति के सम्बन्धों (Property Relations) से संघर्ष करने लगतीं हैं। ये सम्बन्ध, उत्पादन की शक्तियों के विकास के स्वरूपों से उनकी बेड़ियों में परिवर्तित हो जाते हैं। तब सामाजिक क्रान्ति का समय आता है। वह लिखता है, "आर्थिक आधार के परिवर्तन के साथ सम्पूर्ण विशाल अधिसंरचना तीव्र या मध्यम गति से परिवर्तित हो जाती है।"* इस परिवर्तन पर विचार करते समय उन उत्पादन की आर्थिक दशाओं के परिवर्तन जो प्राकृतिक विज्ञानों की सूक्ष्मता से निश्चित होते हैं और वैधानिक, राजनैतिक,

† "In the social production which men carry on they enter into difinite relation that are indispensable and independent of their will; these relations of production correspond to a definite stage of development of their material power of production. The sum total of these relations of production constitutes the economic structure of society—the real foundation, on which rise legal and political superstructures and to which correspond definite forms of social consciousness. The mode of production in material life determines the general character of the social, polistical spiritual and processes of life." K. Marx, 'Zur Kritik der politischen Oekonomie' (1859) pp. IV-V; Translation by Stone, 'A contribution to the Critique of Political Economy' (1904) pp. 11-12

* "With the change of the economic foundation the entire immense superstructure is more or less rapidly transformed." Ibid, p. 13.

धार्मिक, दार्शनिक, संक्षेप में विचार सम्बन्धी स्वरूप जिसमें मनुष्य इस संघर्ष के प्रति चेतन हो जाता है और इनसे संघर्ष करता है, में भेद जान लेना चाहिए। जिस प्रकार एक व्यक्ति के सम्बन्ध में हमारा मत इस बात पर निर्भर नहीं करता है कि वह अपने बारे में क्या सोचता है उसी प्रकार हम परिवर्तन के इस काल के विषय में निर्णय उस काल की चेतना से नहीं कर सकते। इसके विपरीत इस चेतना की व्याख्या हमें भौतिक जीवन के पारस्परिक विरोध एवं उत्पादन की सामाजिक शक्तियों और उत्पादन के सम्बन्धों के बीच उत्पन्न वर्तमान संघर्ष से करना चाहिए। कोई भी सामाजिक व्यवस्था तब तक लुप्त नहीं होती जब तक कि समस्त उत्पादन की शक्तियां जिनके लिये उसमें स्थान होता है पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो जातीं और उत्पादन के नये उच्च सम्बन्ध तब तक प्रकट नहीं होते जब तक कि उनके अस्तित्व की भौतिक दशाएं प्राचीन समाज के गर्भ में परिपक्व नहीं हो जाती। इस लिये मनुष्य ऐसी समस्याओं को लेते हैं जिन्हें वे सुलझा सकते हैं। चूंकि विषय पर अधिक ध्यान देने पर हमको हमेशा यह ज्ञात होगा कि समस्या तभी उत्पन्न होती है जब कि इसके सुलझाने की आवश्यक भौतिक दशाएं पहले से ही उपस्थित होती हैं या कम से कम उत्पन्न होने की प्रक्रिया में होती हैं।†

कार्ल मार्क्स के सिद्धान्त को उसके ही शब्दों में हमने प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। अब हम संक्षेप में इसे समझाने का प्रयत्न करेंगे। समाज एक पूर्व रचित वस्तु नहीं है बल्कि इसमें सदैव परिवर्तन होते हैं। सामाजिक उत्पादन मनुष्य की इच्छा से स्वतन्त्र होता है। प्रौद्योगिकी के फलस्वरूप कुछ आर्थिक सम्बन्ध उत्पन्न होते हैं जिनके योग को आर्थिक संरचना कहते हैं। इसी आर्थिक संरचना पर अन्य सामाजिक संरचना के स्वरूप आधारित होते हैं। इसीलिए आर्थिक संरचना को आधार और अन्य सामाजिक संरचना को ऊपरी संरचना या अधिसंरचना (Superstructure) कह कर पुकारा है। प्रौद्योगिकी या उत्पादन के साधनों में परिवर्तन उत्पन्न करता है और आर्थिक संरचना में परिवर्तन अन्य सामाजिक अधिसंरचना में परिवर्तन उत्पन्न करता है। इस प्रकार कार्ल मार्क्स ने सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को आर्थिक सम्बन्धों के कारण बताया है। आर्थिक सम्बन्ध प्रौद्योगिकी द्वारा प्रभावित होते हैं। इस प्रकार प्रौद्योगिकी प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक सम्बन्धों को प्रभावित

† Ibid, p. 11-13.

करती है और आर्थिक सम्बन्धों के द्वारा सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करती है। इसीलिये कार्ल मार्क्स के सिद्धान्त को आर्थिक-प्रौद्योगिकीय व्याख्या (Economic-Technological Explanation) के नाम से विभूषित किया गया है।

मार्क्स के सिद्धान्त की आलोचना
(Criticism of the Theory of Marx)

मार्क्स के सिद्धान्त का एक समय बड़ा स्वागत हुआ और आज भी अनेक मार्क्सवादी उसके सिद्धान्त की पूजा करते हैं। इस पर भी मार्क्स का सिद्धान्त एक धर्म के रूप में अधिक सफल हुआ है परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसमें अनेक दोष पाये जाते हैं। कुछ विशिष्ट आलोचनायें निम्न हैं:—

१. निश्चायक सिद्धान्त (Principle of Determinism)

इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा दोष यह है कि आर्थिक व्यवस्था को समस्त सामाजिक परिवर्तनों का निश्चायक मानता है। ऐसा करना केवल एक पक्ष की ओर ही ध्यान देना है। सामाजिक क्षेत्र में समस्त कारक परस्पर सम्बन्धित हैं। दो कारकों का सापेक्ष सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है, परन्तु एक कारक को अन्य कारकों का आधार नहीं कहा जा सकता।

२. आर्थिक तत्व के पूर्व से ही प्राकृतिक, भौगोलिक एवं प्राणीशास्त्रीय चालक मनुष्य में निहित हैं और वे सदैव मनुष्य को प्रभावित करते रहते हैं। अन्य सामाजिक कारक जैसे बुद्धि, अनुभव, धार्मिक विचार, रूढ़ियाँ इत्यादि प्राचीन मानव समाजों में पायी जाती हैं। आदिम मनुष्य को केवल पेट के ही रूप में चित्रित नहीं किया जा सकता।* हम यह भी नहीं कह सकते कि मनुष्य में केवल भोजन की मूल प्रवृत्ति पायी जाती है या सबसे अधिक शक्तिशाली है।† हम यह भी दावा नहीं कर सकते कि मनुष्य एक आर्थिक प्राणी है और केवल आर्थिक दृष्टिकोण से कार्य करता है।§

---

* See W. D. Wallis, 'An Introduction to Anthropology'; R. H. Lowie 'Primitive Society.'

† See E. L. Thorndike, 'Educational Sociology'; Sorokin, 'Sociology of Revolution'; C. Wallas, 'Human Nature in Politics.'

§ See T. Veblen, 'The Instinct of Workmanship', F. Taussig, 'Inventors and Money-Makers.'

३. वन्य जातियों की सामाजिक व्यवस्था में आर्थिक तथा अन्य कारक धार्मिक, जादू, विज्ञान एवं अन्य सामाजिक विज्ञान इत्यादि एक दूसरे से पृथक् नहीं किये जा सकते।

४. मेक्सवेबर ने सिद्ध किया है कि धर्म आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित करता है। भारतवर्ष और चीन इसके अभी भी ज्वलन्त उदाहरण हैं। मेक्सवेबर के विचारों पर हम पिछले अध्याय में विस्तार में प्रकाश डाल चुके हैं।

५. वैधानिक तथा राजनैतिक कारक सदैव आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित करते रहते हैं। वर्तमान समय में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। इससे स्पष्ट है कि आर्थिक कारक ही सामाजिक परिवर्तन का निश्चायक नहीं है।

६. मान लीजिये कि प्रौद्योगिकीय परिवर्तन सामाजिक परिवर्तनों को निश्चित करता है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि प्रौद्योगिकीय परिवर्तन कैसे और कहां से होता है? मार्क्स ने इन प्रश्नों का कोई भी संतोषजनक उत्तर नहीं दिया, इसके फलस्वरूप यह सिद्धान्त व्यवहारिक होने की अपेक्षा रहस्यमय हो गया है।

७. मार्क्स का कथन है कि समस्त सामाजिक परिवर्तन प्रौद्योगिकी के ही कारण होते हैं। सारोकिन ने इसकी आलोचना करते हुए बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से सामग्री प्रस्तुत की है। उनका मत है कि मार्क्स का सिद्धान्त अवैज्ञानिक है। मान लिजिये प्रौद्योगिकी या आर्थिक कारक इ है और यह अ और अ विरोधी दोनों ही तत्वों को जन्म देता है। तो इसका समीकरण निम्न हुआः—

अ और अ विरोधी =फ (इ)

कहने का तात्पर्य यह है कि यह समीकरण बताता है कि अत्यधिक विरोधी घटनायें एक ही कारक की फल हैं। ऐसा कैसे हो सकता है। सारोकिन ने उचित लिखा है, "ऐसा समीकरण तार्किक दृष्टि से असंगत है। यह विज्ञान के मौलिक सिद्धान्त—कार्य कारण के बीच समान सम्बन्ध का विरोध करता है।"* इसी प्रक्रिया को निम्न समीकरण द्वारा भी व्यक्त किया जा सकता है: —

---

* "Such an equation is logical nonsense;, it contradicts the fundamental principle of science,—the uniform connection of cause and effect." Sorokin, 'Contemporary Sociological Theories' p. 534.

इ (आर्थिक कारक) कारण है—	अ और अ विरोधी ब और ब विरोधी स और स विरोधी द और द विरोधी फ और फ विरोधी ..... न और न विरोधी	अर्थात-समस्त प्रकार के व्यवहार, सामाजिक प्रक्रियाएं इत्यादि का कारण

इस परिणाम को कोई भी वैज्ञानिक, तर्कशास्त्री एवं गणितज्ञ स्वीकार नहीं करेगा। इसका अभिप्राय यह हुआ कि आर्थिक कारक युद्ध को जन्म देता है और शान्ति को भी, प्रचुरता को और दरिद्रता को भी, क्रान्ति को और प्रतिक्रिया को भी अर्थात विरोधी तत्वों को।

८. मार्क्स द्वारा प्रयोग किये गये शब्द जैसे आर्थिक कारक (Economic factor), उत्पादन के सम्बन्ध एवं शक्तियाँ (Forces ond Relations of production) और आर्थिक आधार (Economic Basis) इत्यादि स्पष्ट अर्थों में नहीं प्रयोग किये गये हैं। इसके फलस्वरूप इनके सिद्धान्त की अनेक व्याख्याएँ की गई हैं और उनमें अत्यधिक विरोध पाया जाता है।

९. मार्क्स के सिद्धान्त के अनुसार एक प्रकार की प्रौद्योगिकी उसी के अनुसार समान आर्थिक व्यवस्था को जन्म देती है। वास्तविक तथ्य इसके विपरीत पाये जाते हैं। पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था विभिन्न स्तर की प्रौद्योगिकी वाले समाजों में पायी जाती है। इसी प्रकार विभिन्न अर्थ व्यवस्थाओं में एक ही प्रौद्योगिकी पायी जाती है।

१०. अन्य निश्चायक सिद्धान्तों के समान मार्क्स के सिद्धान्त ने भी समस्त प्रस्थितियों को इतना सरल बना दिया है कि वह सामाजिक परिवर्तनों की वास्तविक स्थिति का चित्रण नहीं करता।

११. मार्क्स ने लिखा है कि समाज में केवल दो ही वर्ग हैं—श्रमिक वर्ग और पूंजीवादी। श्रमिक वर्ग को छोड़कर अन्य सभी वर्ग प्रतिक्रियावादी है। उसके अनुसार समस्त इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। इन व्याख्याओं से स्पष्ट है कि मार्क्स ने अत्यधिक जटिल सामाजिक प्रक्रिया की अति सरल व्याख्या द्वारा समझाने का प्रयत्न किया है। जिस प्रकार अनेक धर्मार्थ

औषधालयों में जुखाम, इनफ्ल्यूएंजा, बुखार, आँख का दर्द, पेट का दर्द, कान का दर्द इत्यादि सब के लिये मिक्श्चर नम्बर ६ चलता है उसी प्रकार मार्क्स के सिद्धान्त की भी दशा है। प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन को आर्थिक परिवर्तनों में देख लीजिए और अन्य किसी विश्लेषण की आवश्यकता नहीं है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मार्क्स का सिद्धान्त अवैज्ञानिक है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। इस सिद्धान्त को स्वीकार न करने से हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि आर्थिक कारक सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रमुख नहीं है बल्कि हम केवल उसे ही एक कारक निश्चायक के रूप में स्वीकार नहीं करते। आर्थिक व्यवस्था सामाजिक परिवर्तन के कारक के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस पर हम आगे चलकर प्रकाश डालेंगे। मार्क्स के सिद्धान्त में कुछ सत्यता भी है।

मार्क्स के सिद्धान्त की वास्तविक शक्ति
(True Strength of Marxian Principle)

मार्क्स के सिद्धान्त में अनेक बातें सत्य भी हैं। उसने केवल आर्थिक कारक का बढ़ा चढ़ा कर विवेचन किया है। उसके सिद्धान्त का सबसे महत्व-पूर्ण यह भाग है कि समाज पर्यावरण पर आधारित है और वह भी सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण। समाज ईश्वर द्वारा रचित नहीं है बल्कि मनुष्य सदैव उसमें परिवर्तन कर सकता है। मूल्य और धारणायें मनुष्य के कार्यों से प्रभावित होते हैं।

मार्क्स के सिद्धान्त का व्यवहारिक जीवन में और भी अधिक मूल्य है। उसके सिद्धान्त के कारण संसार के शोषित वर्गों में जीवन का संचार हो गया। इस आत्मविश्वास के फलस्वरूप उन्होंने अपना भाग्य ईश्वर पर न छोड़ कर स्वयं निर्मित्त करना प्रारम्भ कर दिया। इसका फल हुआ है संसार में जागृति। साम्यवादी विचारधारा मार्क्स के ही सिद्धांत पर आधारित है रूस की स्वतंत्रता में भी मार्क्स के सिद्धान्त ने बड़ा योग दिया है। मार्क्सवादी विचार-धारा अत्यधिक तीव्रगति से शोषित वर्गों में फैलती जा रही है। भारतवर्ष भी इसके प्रभाव से नहीं बच सका है। केरल (Kerala) में साम्यवादी सरकार बनना इसका ज्वलंत उदाहरण है। मार्क्स का सिद्धान्त तार्किक भौतिकवाद (Dialectical Materialism) के नाम से प्रसिद्ध है। समय की गति ने

मार्क्स के सिद्धान्त के अनेक दोषों को सासने प्रस्तुत कर दिया है, जिसे साम्यवादी देशों ने भी स्वीकार किया है।

मार्क्स और एंजिल्स के निश्चायक सिद्धान्त पर विचार करने के उपरान्त वेबलन के सिद्धान्त पर विचार करना आवश्यक है। वेबकन केवल प्रौद्योगिकी को ही सामाजिक परिवर्तन का निश्चायक मानता है।

वेबलन का सिद्धान्त (Theory of Veblen)

वेबलन का सिद्धान्त सामाजिक परिवर्तन को केवल प्रौद्योगिकी के कारण बताता है। वेबलन को प्रौद्योगिकी निश्चायक कहा जा सकता है। उसका सिद्धान्त निम्न है:—

काम करने का तरीका एवं उसके पीछे निहित प्रविधि का प्रभाव मनुष्य के विचारों एवं स्वभाव पर पड़ता है। आदत मनुष्य के मस्तिष्क एवं शरीर को प्रभावित एवं परिवर्तित करती है। आदतें भौतिक पर्यावरण पर आधारित होती हैं। अतः पर्यावरण की भिन्नता सामाजिक ढांचे की भिन्नता की व्याख्या करती है। मनुष्य वैसा ही होता है जैसा कार्य वह करता है। वेबलन ने लिखा है, "जैसा वह कार्य करता है, वैसा ही वह अनुभव और विचार करता है।"†

सामाजिक ढांचे में परिवर्तन विचार करने की आदतों के फलस्वरूप होते हैं। विचार करने की आदतें प्रौद्योगिकी द्वारा प्रभावित होती हैं। कोई भी समुदाय एक प्रकार से अपनी प्रौद्योगिकी पर आधारित होता है। सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन जिन शक्तियों के कारण होता है वे अंत में आर्थिक प्रकृति की होती हैं। अतः प्रौद्योगिकी ही सामाजिक परिवर्तन को निश्चित करती है।§

उसका सरल सा सिद्धान्त है कि प्रथम काम की प्रविधि में परिवर्तन होता है, इसके फलस्वरूप भौतिक पर्यावरण परिवर्तित हो जाता है। भौतिक पर्यावरण के अनुसार आदतें परिवर्तित हो जाती हैं और आदतें हमारे विचारों को परिवर्तित कर देती हैं। विचारों के परिवर्तन के फलस्वरूप सामाजिक संरचना में परिवर्तन हो जाता है।

---

† "As he acts, so he feels and thinks." Veblen, 'The Instinct of Workmanship' p, 192.

§ See Vablen's masterpiece work, 'The Theory of the Leisure Class' The Viking Press Inc., New York, chapter VIII.

वेबलान के सिद्धान्त की आलोचना
(Criticism of Veblen's Theory)

१. वेबलान ने प्रौद्योगिकी आदतों में कार्य कारण सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की। क्या उसकी व्याख्या पर्याप्त है? विभिन्न आदिम जातियों में सांस्कृतिक अन्तर पाये जाते हैं यद्यपि उनका प्रौद्योगिक स्तर समान होता है। अन्तर का आधार बाह्य दशाओं की अपेक्षा सामाजिक ढांचे में निहित होता है।

२. समान प्रौद्योगिक स्तर पर रहने वाले व्यक्तियों में परस्पर विरोधी विचारधाराएं पाई जातीं हैं। मनुष्य आदतों का पुतला भी है और उनका आलोचक भी। आलोचना यद्यपि पर्यावरण से सापेक्ष सम्बन्ध रखती है तथापि उसे निश्चित रूप से आदतों की अभिव्यक्ति नहीं कहा जा सकता। एक ही कार्य विभिन्न व्यक्तियों पर विभिन्न प्रभाव डालता है।

३. वेबलन का भी सिद्धान्त अन्य निश्चायक सिद्धान्तों की भांति सामाजिक दशाओं को अत्यन्त सरल मानता है। वास्तविकता इस प्रकार की नहीं है सामाजिक व्यवस्था अत्यन्त जटिल है।

वेबलन और मार्क्स के सिद्धान्तों में अन्तर
(Contrast of Marx and Veblen Theories)

मार्क्स और वेबलन के सिद्धान्तों में निम्न अन्तर हैं:—

१. मार्क्स का सिद्धान्त यद्यपि समाजवाद की वैज्ञानिक प्रकृति की दुहाई देता है तथापि इस सिद्धान्त का झुकाव आचारों की ओर है। उसके सिद्धान्त में एक आदर्श पाया जाता है। यह आदर्श है वर्गहीन समाज की स्थापना। यह एक प्रकार का नवीन मत है। इसी के फलस्वरूप मार्क्स के सिद्धान्त ने शोषित वर्ग को प्रभावित किया है। वेबलन ने किसी प्रकार के आदर्श को प्रस्तुत नहीं किया है। उसने एक वैज्ञानिक की भांति सामाजिक परिवर्तन एवं उद्विकास के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।

२. वेबलान ने वर्तमान समस्याओं का विश्लेषण किया है परन्तु मार्क्स ने इतिहास की व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

३. मार्क्स प्रौद्योगिकी को अप्रत्यक्ष रूप में सामाजिक परिवर्तन का कारक मानता है। वेबलन उसे प्रत्यक्ष कारक मानता है।

अभी तक हमने प्रौद्योगिकी के प्रभाव का विश्लेषण किया है। अब हम आर्थिक दशाओं और सामाजिक परिवर्तनों के सम्बन्धों का संक्षेप में विश्लेषण करेंगे।

आर्थिक दशायें और सामाजिक प्रक्रियायें
(Economic Conditions and Social Processes)

अनेक विद्वानों ने आर्थिक दशाओं एवं अन्य सामाजिक घटनाओं के सापेक्ष सम्बन्धों का अध्ययन किया है।

१. आर्थिक दशायें और जन-संख्या के शारीरिक एवं मानसिक लक्षण (Economic conditions and Bodily and Mental characteristics of Population)

अनेक अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि आर्थिक स्थिति (प्रचुरता या दरिद्रता का स्तर) और शारीरिक एवं मानसिक लक्षणों में सम्बन्ध पाया जाता है। दरिद्र वर्ग धनिक वर्ग की तुलना में (उसी समाज के) कद में छोटे होते हैं, वजन कम होता है, अधिक बीमारियां घेरती हैं, आयु कम होती है और बुद्धि भी कम होती है।

ऐसा वास्तविक सम्बन्ध पाया जाता है परन्तु निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा आर्थिक स्थिति के ही कारण होता है। दरिद्र वर्ग के लोगों की बुद्धि कम होती है क्योंकि वे दरिद्र हैं और इसके कारण उन्हें बुद्धि विकास के अवसर प्राप्त नहीं होते या वे दरिद्र हैं क्योंकि उनकी बुद्धि निम्न स्तर की है, इन्हें निश्चित प्रकार से नहीं कहा सकता। सामाजिक कारक भी जो कि आर्थिक दशाओं से जुड़े हुये हैं अपना प्रभाव डालते हैं।

२. आर्थिक दशायें और जन्म एवं मृत्यु दरें
(Economic Conditions and Birth and Death Rates)

आर्थिक दशाओं और जन्म एवं मृत्यु दर में भी सम्बन्ध पाया जाता है। साधारणतया एक ही समाज के समान आयु के उच्च वर्ग की अपेक्षा दरिद्र वर्ग की जन्म दर और मृत्यु दर अधिक होती है।

इन्हें भी केवल आर्थिक दशाओं के कारण नहीं कहा जा सकता।

३. आर्थिक दशायें और आत्महत्यायें (Economic Conditions and Suicide)

अनेक विद्वानों ने आर्थिक दशाओं एवं आत्महत्याओं में भी सम्बन्ध बताया है। उनका मत है कि दरिद्रता आत्महत्या को प्रोत्साहित करती है और प्रचुरता उसे कम करती है। दुर्खिम (Durkheim) का अध्ययन इस मत का समर्थन नहीं करता है। दुर्खिम का कहना है कि दरिद्रता या प्रचुरता जितनी मात्रा में सामाजिक पृथक्ता (Social Isolation) को उत्पन्न करती है केवल उतना ही इनका आत्महत्या से सम्बन्ध है। कई स्थानों पर आत्महत्या प्रचुर वर्ग में अधिक पायी जाती है।

४. आर्थिक दशायें और अपराध (Economic Conditions and Crimes)

आर्थिक दशाओं और अपराधों में घनिष्ट सम्बन्ध है। विशेषतया सम्पत्ति के विरुद्ध अपराधों से। अपराधी अधिकाँशतया दरिद्र वर्ग में से होते हैं।

यह सम्बन्ध भी केवल आर्थिक दशाओं के कारण नहीं कहा जा सकता। अनेक सम्पति के विरुद्ध अपराध धनिक वर्गों द्वारा किया जाता है परन्तु उन्हें कोई पकड़ नहीं पाता। अनेक दरिद्र देशों में अपराधों की संख्या धनी देशों की तुलना में कम पायी जाती है। अपराध के अन्य कारक भी हैं।

५. आर्थिक दशायें और स्थानान्तरण (Economic Conditions and Migration)

स्थानान्तरण और आर्थिक दशाओं में घनिष्ट सम्बन्ध है। जब किसी देश या भाग की आर्थिक दशा बहुत खराब हो जाती है तो वहाँ के लोग उस स्थान को छोड़कर अन्य स्थानों को चले जाते हैं जहाँ आर्थिक दशायें अच्छी होती हैं। ग्रामों से नगरों की ओर जन-संख्या की गतिशीलता का भी यही कारण है।

६. आर्थिक दशायें और सामाजिक संगठन के स्वरूप (Econodition and Forms of Social Organisation)

आर्थिक दशाओं और सामाजिक संगठन के स्वरूपों में सम्बन्ध के विषय में सबसे महत्वपूर्ण अध्ययन* हॉब हाउस, ह्वीलर और जिन्सवर्ग का है। इस

* L. T. Hobhouse, G. C. Wheeler and M. Ginsberg, 'The Material Culture and Social Institutions of the Simpler Peoples.'

अध्ययन के अनुसार आर्थिक दशाओं और सामाजिक संगठन के स्वरूपों में अधिक सम्बन्ध नहीं है। परिवार के स्वरूप और आर्थिक सम्बन्धों में भी अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है।

७. आर्थिक दशायें और राजनैतिक संगठन (Economic Conditions and Political Organisation)

आर्थिक दशाओं और राजनैतिक संगठन में भी घनिष्ट सम्बन्ध पाये जाते है। बियर्ड† ने लिखा है कि संविधान एक आर्थिक मसविदा है। राजनैतिक विचार धारायें आर्थिक आधार लिये हुये होती हैं इस पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि राजनैतिक संगठन बिल्कुल ही आर्थिक दशाओं पर आधारित होता है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आर्थिक दशाओं एवं सामाजिक परिवर्तन में सापेक्ष सम्बन्ध पाया जाता है परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि आर्थिक दशायें सामाजिक परिवर्तन की निश्चायक होती हैं।

प्रश्न

१. आर्थिक जीवन में उत्पादन का प्रकार कैसे एक समाज की सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं को प्रभावित करता है? (राजस्थान, १९५६)

(How does the mode of production in material life influence social and political intsitutions of a society?)

२. सामाजिक परिवर्तन कहाँ तक प्रौद्योगिक कारकों पर आधारित है? उदाहरण देकर लिखिये।

(To what extent do technological factors govern Social change? Give suitable illustrations.)

३. सामाजिक जीवन पर यांत्रिक (Technological) प्रगति के प्रभावों का संक्षेप में वर्णन कीजिए। भारतीय उदाहरण दीजिए। (लखनऊ, १९५६)

(Discuss briefly the effects of technological progress on social life. Give Indian examples.)

---

† See Charles A. Beard, 'An Enonomic Interpretation of the constitution of the United States' and 'Economic Basis of Politics'.

४. सामाजिक परिवर्तन किस सीमा तक आर्थिक शक्तियों द्वारा निर्धारित होता है ? (लखनऊ, १९५५)

(To what extent do economic factors account for social change ?)

SELECTED READINGS

1. Ogburn and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' chapter XXVI.

2. Sutherland, Woodward & Mexwell, 'Introductory Sociology' Chapter, XXIV, XXV.

3. Green, 'Sociology' Chapter XXV.

अध्याय २७

सामाजिक उद्विकास
(Social Evolution)

पिछले अध्यायों में हमने सामाजिक परिवर्तन के अर्थ एवं कारकों पर प्रकाश डाला। सामाजिक परिवर्तन अनिवार्य है इसमें सन्देह नहीं, परन्तु सामाजिक परिवर्तन किस दिशा में होता है, अच्छा होता है या बुरा, इन विषयों पर हमने कोई विचार नहीं किया। अब हम सामाजिक परिवर्तन के प्रकारों पर विचार करेंगे।

सामाजिक परिवर्तन केवल मात्र स्वीकृत सामाजिक रीतियों में अन्तर को कहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि सामाजिक सम्बन्धों में किसी भी प्रकार के अन्तर को सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। यह परिवर्तन निरन्तर होने वाला हो सकता है या अनिरन्तर, अच्छे के लिये हो सकता है या बुरे के लिये, समान दिशा में हो सकता है या असमान दिशा में, तात्पर्य यह है कि परिवर्तन बिल्कुल तटस्थ (neutral) प्रकृति का होता है। वह किसी भी ओर निर्देश नहीं करता है। मैकाइवर ने परिवर्तन की प्रकृति का विवरण देते हुए उचित लिखा है, "परिवर्तन शब्द स्वयं पूर्णतया तटस्थ है। केवल जिस वस्तु के लिये प्रयोग किया जाता है उसमें समय के द्वारा उत्पन्न अन्तर को सम्बोधित करता है और कोई अर्थ नहीं रखता है।"†

जब सामाजिक परिवर्तन निरन्तर होता रहता है तो इसे सामाजिक प्रक्रिया (Social Process) कहते हैं। सामाजिक प्रक्रिया को परिभाषा करते हुए मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "एक प्रक्रिया का अर्थ होता है कि अवस्थाओं में अन्तर्निहित शक्तियों की क्रियाओं के द्वारा उत्पन्न निरन्तर परिवर्तन जो कि

† "The term change itself is wholly neutral, implying nothing but difference through time in the object to which it is applied." R. MacIver, Society: Its Structure and Changes' p. 399.

निश्चित प्रकार से होता है।"¶ एक प्रक्रिया केवल निरन्तर परिवर्तन को कहते है। इसमें कोई भी गुणात्मक निर्देशन नहीं होता है और न ही किसी दिशा की ओर संकेत होता है। सामाजिक प्रक्रिया किसी सम्बन्ध को बिगाड़ सकती है या निर्माण कर सकती है, सामाजिक संगठन को शक्तिशाली बना सकती है या विघटन को उत्पन्न कर सकती है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी प्रकार के निरन्तर परिवर्तन को प्रक्रिया कहते हैं। प्रक्रिया के द्वारा एक स्थिति में परिवर्तन के चरणों (Steps) का ज्ञान होता है। इस थोड़े से अन्तर के कारण कुछ विद्वान सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक प्रक्रिया में कोई अन्तर नहीं करते परन्तु ऐसा उचित नहीं है। सामाजिक प्रक्रियाओं पर हम विस्तार में प्रकाश डाल चुके हैं।*

जब कोई परिवर्तन निरन्तर किस विशिष्ट दिशा में होता है तो इसके लिए दूसरे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जब निरन्तर परिवर्तन की दिशा दिशा मात्रा में संकेत करना होता है तो इसे वृद्धि (Growth) कहते हैं जब गुणात्मक (Qualitative) दिशा की ओर संकेत होता है तो इसे उद्विकास (Evolution) कहते हैं उद्विकास का अर्थ वृद्धि (Growth) से अधिक होता है उद्विकास केवल आकार में ही परिवर्तन को नहीं कहते हैं, बल्कि ढांचे (Structure) में भी विभाजन (Differentiation) वेशेषीकरण (Specialization) और समन्वय (Integration) को भी उत्पन्न करता है। ऑग्बर्न और निमकॉफ ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है "उद्विकास केवल मात्र, एक निश्चित दशा में परिवर्तन है।"† अतः सामाजिक उद्विकास (Social Evolution) वह प्रक्रिया है जो सामाजिक ढांचे में विशेषीकरण और विभाजन को उत्पन्न करती है। उद्विकास शनैः शनैः होता है।

जब सामाजिक परिवर्तन एक दम से होता है, और बाह्य शक्तियां भी अपना योग देती हैं तो उसे क्रान्ति (Revolution) कहते हैं। ऑग्बर्न और थिमकॉफ

¶ "A process means continous change taking place in a definite manner through the operation of force present from the first within the situation." MacIver and Page, 'Society : An Introductory Analysis' p. 521.

* देखिये खण्ड सप्तम।

† "Evolution is merely change in a given direction." Ogbern and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' p. 603.

ने "क्रान्ति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "क्रान्ति संस्कृति में महत्वपूर्ण प्रकार के तीव्र परिवर्तन को कहते हैं।"§

सामाजिक उद्विकास कम हुआ है या अधिक, इन शब्दों का प्रयोग किसी भी मूल्य (Values) पर आधारित नहीं है। सामाजिक उद्विकास केवल मात्र निरन्तर सम्बन्धित किस निश्चित दिशा में परिवर्तन को कहते हैं, परन्तु यह परिवर्तन उत्थान भी हो सकता है और पतन भी या दोनों। कहने का तात्पर्य यह है कि सामाजिक उद्विकास मूल्यों पर आधारित नहीं होता। जब यह इच्छित या मान्यता-प्राप्त दिशा में बढ़ता है तो इसे प्रगति (Progress) कहते हैं और जब इसके विपरीत होता है तो इसे पतन (Regress) कहते हैं। इसमें मूल्यों का प्रयोग होता है। इस पर और अधिक प्रकाश हम अगले अध्याय में डालेंगे।

जब परिवर्तन केवल वस्तु से सम्बन्धित न होकर दो या अधिक वस्तुओं के सापेक्ष सम्बन्धों में परिवर्तन की ओर संकेत करता है तो उसे अनुकूलन (Adaptation), सामंजस्य (Adjustment), व्यवस्थान (Accommodation) आत्मसात (Assimilation) इत्यादि कहते हैं। जब विपरीत दिशा में होता है तो इसके विपरीत शब्द प्रयोग किये जाते हैं।

इन शब्दों की व्याख्या से हमें सामाजिक परिवर्तन के प्रकारों का सुलभ ज्ञान हो गया होगा। सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन में इन शब्दों की स्पष्ट व्याख्या स्मरण रखना अत्यन्त आवश्यक है। मैकाइवर और पेज ने इन्हें एक चार्ट द्वारा व्यक्त किया है। उसी आधार पर निम्न चार्ट है।

सामाजिक परिवर्तन के प्रकार
(Modes of Social Change)

१. सम्बन्धों में अन्तर (Variation in relations)	परिवर्तन (Change)
२. निश्चित निरन्तर परिवर्तन (Determinate continuous change)	प्रक्रिया (Process)

§ "Revolution is a rapid change of some magnitude in culture." Ibid, p. 616.

३. निश्चित दिशा में निश्चित निरन्तर परिवर्तन (Determinate continuous change in a specific direction)	
(अ) मात्रा पर आधारित, आकार से सम्बन्धित (Quantitatively defined, with respect to size)	वृद्धि (Growth)
(ब) गुणात्मक आधार, ढांचे में या कार्यों में अन्तर (Qualitatively defined, with respect to structural or functional differentiation)	उद्विकास (Evolution) विकास (Development) प्रगति (Progress)
(स) गुणात्मक आधार, इच्छित या मान्य मूल्यों के अनुसार (Qualitatively defined, with respect to its conformity to a standard of Value.)	ह्रास (Regression) पतन (Decline)
(द) अन्य वस्तु या व्यवस्था के प्रसङ्ग में (By reference to some other object or system)	अनुकूलन (Adaptation) सामन्जस्य (Adjustment) व्यवस्थान (Accommodation) आत्मसात (Assimilation) और इनके विरोधी

अब हम सामाजिक उद्विकास (Social Evolution) का विस्तृत विश्लेषण करेंगे और अगले अध्याय में सामाजिक प्रगति (Social Progress) का विवेचन करेंगे।

सामाजिक उद्विकास (Social Evolution)

सामाजिक उद्विकास को अनेक समाजशास्त्रियों ने प्राणीशास्त्रीय उद्विकास (Biological Evolution) के आधार पर समझाने का प्रयत्न किया परन्तु इसमें अनेक समस्यायें खड़ी होती गईं। लोगों का विश्वास हो गया कि जो समाज जितना वर्तमान है उतना ही प्रगतिशील है। इसी प्रकार की अनेक भ्रांतियाँ उत्पन्न हो गई थीं।

ऑग्बर्न ने सामाजिक उद्विकास के निम्न चार कारक बतायें हैं:—

(१) आविष्कार (Invention)

(२) संचय (Accumulation)

(३) प्रसार (Diffusion)

(४) सामन्जस्य (Adjustment)

१. आविष्कार (Invention)

आविष्कार सामाजिक परिवर्तन को अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न करता है। आविष्कार मानसिक योग्यता, माँग और अन्य सांस्कृतिक तत्वों, जो कि आविष्कार के आधार होते हैं, के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। जितनी अधिक ये तीनों वस्तुएं किसी समाज में पाई जायेंगी उतनी ही अधिक आविष्कार होने की सम्भावनाएं रहेंगी।

२. संचय (Accumulation)

संचय भी सामाजिक उद्विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है। पुराने सांस्कृतिक तत्वों के संचय के ही फलस्वरूप नवीन आविष्कार सम्भव हो पाते हैं।

३. प्रसार (Diffusion)

प्रसार सामाजिक उद्विकास का तीसरा प्रमुख कारक है। अन्य समाजों द्वारा किये गये आविष्कार प्रसार के फलस्वरूप सब जगह फैल जाते हैं। इसके कारण समाज शीघ्र विकास कर लेता है।

४. सामन्जस्य (Adjustment)

सामन्जस्य सामाजिक उद्विकास का चतुर्थ प्रमुख कारक है। सामाजिक सम्बन्ध एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित और अपृथक्नीय हैं। इसके फलस्वरूप एक भाग में परिवर्तन दूसरे भाग को भी प्रभावित करता है।

ये चारों कारक यह स्पष्ट कर देते हैं कि मानव समाज का उद्विकास किस प्रकार हुआ और भविष्य में किस प्रकार होगा।

मैकाइवर द्वारा की गई सामाजिक उद्विकास की व्याख्या (Explanation of Social Evolution by MacIver)

मैकाइवर ने सामाजिक उद्विकास की व्याख्या एक प्रकार से की है। उसका मत है कि प्राणीशास्त्रीय उद्विकास के समान आर्थिक उद्विकास नहीं है। सामाजिक संबंधों के प्रकार या समाज प्राणी के समान जन्म नहीं लेता है। समाज का प्रारम्भ या उत्पत्ति (Origin) नहीं होती बल्कि वह दृष्टिगोचर (Emergence) होता है।

सामाजिक उद्विकास की ऐतिहासिक प्रक्रिया का विवरण देना अत्यन्त कठिन है, परन्तु समाज के उद्विकास की रूपरेखा अवश्य प्रस्तुत की जा सकती है। मैकाइवर और पेज ने निम्न रूपरेखा प्रस्तुत की है:—

जातिगत प्रथा से विशिष्ट समितियाँ (From Communal Custom to differentiated Associations)

संस्थाओं के पूर्व धारणाएं और स्वार्थ उत्पन्न होते हैं। जैसे जैसे ये धारणाएं स्पष्ट होती जाती हैं, वैसे वैसे इनका स्वरूप प्रथाओं (Customs) में परिवर्तित होता जाता है। शनैः शनैः प्रथायें और अधिक विकसित होती हैं और संस्थाओं का रूप धारण कर लेती हैं। जैसे जैसे आकार में ये विकसित होती जाती हैं और नई आवश्यकताएं खड़ी हो जाती हैं, इन आवश्यकताओं के फलस्वरूप विभिन्न विशिष्ट स्वार्थों के केन्द्र महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेते हैं और ऐसे अवसर आते हैं जब कि इन विशिष्ट कार्यों को विशेष व्यक्तियों या उपसमूहों को सौंपने पड़ते हैं। धीरे धीरे ये व्यक्ति अपने अधिकारों को जमा कर लेते हैं और नवीन संस्थाओं का निर्माण हो जाता है।

संस्थाओं के निर्माण के उपरान्त इन विशिष्ट स्वार्थों की पूर्ति के लिए समितियों (Associations) की आवश्यकता प्रतीत होती है। शनैः शनैः सामाजिक उद्विकास के फलस्वरूप विशिष्ट समितियों का निर्माण हो जाता है।

आदिम समाजों में प्रथाओं का बाहुल्य पाया जाता है और सम्पूर्ण जीवन इन पर ही आधारित होता है। आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक इत्यादि समस्त कार्य समान प्रथाओं में निहित रहते है और इन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता। जैसे जैसे सामाजिक उद्विकास होता है ये स्वार्थ एवं धारणाएं उपरोक्त वर्णित

मार्ग के अनुसार पृथक् संस्थाएं एवं समितियां निर्माण कर लेते हैं। इस सामाजिक उद्विकास की प्रक्रिया को निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:—

१. जातिगत प्रथाएँ (Communal Customs)

राजनैतिक, आर्थिक, पारिवारिक, धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यों का एक ही प्रथा में मिलाव रहता है, जो निम्न में हस्तान्तरित हो जाती है—

२. विशिष्ट जातिगत संस्थाएं (Differentiated Communal Institutions)—राजनैतिक, आर्थिक, पारिवारिक, धार्मिक और सांस्कृतिक कार्य प्रणालियों के स्पष्ट स्वरूप बन जाते हैं, जो निम्न में निहित हो जाते हैं—

३. विशिष्ट समितियाँ (Differentiated Associations)—

राज्य, आर्थिक संघ, परिवार, धार्मिक समिति, स्कूल इत्यादि।

इससे स्पष्ट है कि सामाजिक उद्विकास जातिगत संस्थाओं का रूप धारण करता है और बाद को शनैः शनैः विशिष्ट समितियों का रूप धारण कर लेता है।

समितियों की अवस्था का महत्व
(The significance of the associational stage)

समितियों के रूप में परिवर्तित होने पर सामाजिक ढांचे में अत्यधिक परिवर्तन हो जाता है। प्राचीन समाजों में कोई छोटी-मोटी, अस्थायी समितियां हो सकती हैं, परन्तु समिति के वृहद् स्थायी स्वरूप नहीं पाये जा सकते। उनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्राचीन जीवन सम्पूर्ण है। यदि आप वन्य जाति के सदस्य हैं तो रक्त सम्बन्धी भी हैं और यदि आप गोत्र के सदस्य हैं तो उसके देवताओं को भी मानना पड़ेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि समाज का विशेषीकरण नहीं हुआ है। वह सामाजिक उद्विकास के निम्न स्तर पर है। यद्यपि उद्विकास की शक्तियां उनमें निहित होती हैं फिर भी उन्हें विकसित होने में युग बीत जाते हैं।

कुछ विकसित अवस्था में सम्पूर्ण समुदाय के लिए एक ही प्रकार की राजनैतिक संस्थाएं पाई जाती हैं। तृतीय अवस्था में केवल एक राज्य रहता है, परन्तु अनेक राजनैतिक संगठन पाये जाते हैं। इस अवस्था में धार्मिक संस्था और राजनैतिक संस्था पृथक् हो जाती है। इसके उपरान्त विशिष्ट समितियां बन जाती

हैं। यह अवस्था सामाजिक उद्विकास की एक उच्च अवस्था होती है। इसी प्रकार सामाजिक उद्विकास होता है। इसे धर्म के संगठन के उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है।

धार्मिक समिति का उद्विकास
(The evolution of religious association)

प्रारम्भ में धार्मिक तत्व अन्य तत्वों के साथ इतना घुला मिला रहता है कि इन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता। प्रत्येक वर्ग धार्मिक एवं जातिगत होता है। आदिम जातियों के मनुष्य धर्म का अभिप्राय उन सारी वस्तुओं से समझते थे जो वे मस्तिष्क से सोचते थे। धारणाओं से धर्म की उत्पत्ति होती है। चूंकि प्राचीन मस्तिष्क प्राकृतिक और समाजोपरि। (Supernatural) में कोई अन्तर नहीं समझता है इसलिए वे धर्म और विज्ञान में कोई अन्तर नहीं कर पाते। वे भौतिक और आध्यात्मिक में भी कोई अन्तर नहीं समझते। माना (Mana) इसका उदाहरण है। मनुष्य और टोटम (Totem) को एक ही मानते हैं। प्रत्येक वस्तु एवं कार्य समाजोपरि शक्तियों के कारण समझते है।

प्राचीन मस्तिष्क की यह प्रतिक्रियाएं शनैः शनैः सामाजिक विरासत में परम्परागत हो जाती हैं और इनके विषय में कपोल कथाएं एवं विधियां निर्माण हो जाती हैं। धीरे धीरे ये समाज द्वारा मान्यता प्राप्त कर लेती हैं; पुजारी इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं और सम्प्रदाय (Cults) निर्माण हो जाते हैं। ये सम्प्रदाय पूर्णतया धार्मिक नहीं होते। इनमें सामाजिक और समाजोपरि दोनों कार्य मिले रहते हैं। धर्म और जादू (Magic) पृथक् नहीं हो पाते हैं।

इसके उपरान्त आचार और धर्म की व्याख्या स्पष्ट होने लगती है परन्तु दोनों एक दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित रहते हैं। इसके उपरान्त धर्म संस्था का रूप धारण करने लगता है और समुदाय की सम्पत्ति समझी जाती है। मृत वीर, मृत राजा, मृत पूर्वज देवता समझे जाने लगते हैं। जीवित राजा भी दैवी शक्ति वाले समझे जाते हैं जैसा जापान में अभी भी समझा जाता है।

धार्मिक संस्थाएं शनैः शनैः धार्मिक समितियों का रूप धारण कर लेती हैं। प्रारम्भ में ये समितियाँ धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्थाओं से मिली जुली थी। धीरे-धीरे इनका विरोध होने लगा। धार्मिक और सामाजिक व्यवस्थाओं के पृथक् होने का लम्बा इतिहास है, जिससे हम सभी परिचित हैं।

शनैः शनैः धर्म अन्य सामाजिक व्यवस्थाओं से बिल्कुल पृथक् हो गया। कुछ उच्च स्तर के समाजों में धर्म केवल विश्वास करने वालों का संगठित समूह है। राज्य किसी भी प्रकार धर्म में हस्तक्षेप नहीं करता। धर्म एक व्यक्तिगत विश्वास की बात हो गई है।

प्रश्न

१. सामाजिक उद्विकास की वास्तविकता क्या है? इस विषय को किसी एक उदाहरण के विशेष प्रसंग में समझाइए। (आगरा, १९५७)

(What is the reality about social evolution? Explain the concept with special reference to any one example.)

२. सामाजिक उद्विकास की वास्तविकता की मैकाइवर द्वारा की गई व्याख्या को लिखिए और विश्लेषण कीजिए। (राजस्थान, १९५७)

(State and examine MacIver's explanation of the reality of social evolution.)

३. प्रक्रिया, उद्विकास, प्रगति और अनुकूलन शब्दों के बीच स्पष्ट रूप से भेद बताइए। (राजस्थान, १९५७)

(Clearly differentiate among process, elvolution, progress and adaptation.)

४. सामाजिक उद्विकास की अवस्थाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए। (लखनऊ, १९५४)

(Describe briefly the stages of social evolution.)

SELECTED READINGS

1. Gisbert, 'Fundamentals of Sociology' Chapter XVI.

अध्याय २८

सामाजिक प्रगति

(Social Progress)

प्रगति शब्द की सूक्ष्म व्याख्या हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं। जब सामाजिक परिवर्तन इच्छित एवं मान्यता प्राप्त दिशा में होता है तो इसे साधारणतया प्रगति कहते हैं। प्रगति शब्द मूल्यों (Values) पर आधारित होता है। यहाँ पर सामाजिक उद्‌विकास और सामाजिक प्रगति का अन्तर समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है।

उद्‌विकास और प्रगति (Evolution and Progress)

उद्‌विकास और प्रगति में अनेक विद्वानों ने कोई भी भेद नहीं किया हैं। कॉम्टे और उसके अनुयायियों से भी यह भूल हुई है। स्पेन्सर के लेखों द्वारा यह भ्रम और भी अधिक बढ़ गया है। हॉब हाउस * सरीखा विद्वान भी इस भूल से न बच सका।

समाज ने उद्‌विकास किया है, यह एक निश्चित तथ्य है। परन्तु यह कहना कठिन है कि समाज ने प्रगति की है क्योंकि इस कथन में मूल्यों का समावेश है। उद्‌विकास निरन्तर संबंधित परिवर्तन है और यह परिवर्तन किसी भी दिशा में हो सकता है। प्रगति भी उद्‌विकास का एक प्रकार है। लम्ले ने उचित लिखा है, "प्रगति एक संकीर्ण शब्द है। वह परिवर्तन है, परन्तु वह परिवर्तन एक इच्छित या मान्यता प्राप्त दिशा में है, किसी भी दिशा में नहीं।"† हॉब हाउस ने भी यही विचार इन शब्दों में प्रकट किया है, "मैं उद्‌विकास से किसी भी प्रकार की वृद्धि समझता हूँ; सामाजिक प्रगति से सामाजिक जीवन के उन गुणों की वृद्धि समझता हूँ, जिन्हें मनुष्य मूल्यों से आँक सके या तर्कपूर्ण रीति से

---

* See L. T. Hobhouse, 'Social Development', 'Morals in Evolution' and 'Social Evolution and Political Theory.'

† "Progress is a narrower concept. It is change; but is change in a *desired or approved direction*—not any direction." Lumley, 'Principles of Sociology' p. 387.

मूल्य जोड़ सके।"§ ऑग्बर्न और निमकॉफ ने भी लिखा है, "इसके विपरीत, प्रगति का अर्थ होता है अच्छाई के लिए परिवर्तन, इसलिए प्रगति में मूल्य निर्णय निहित होता है।" * इससे स्पष्ट है कि प्रगति मूल्यों पर आधारित होती है।

मूल्यों की आत्मीयता (The subjectivity of values)

प्रगति मूल्यों पर आधारित है और मूल्य आत्मीयता पर आधारित होते हैं। विभिन्न व्यक्तियों के विभिन्न मूल्य हो सकते हैं। एक ही वस्तु एक व्यक्ति के लिए अच्छी हो सकती है और दूसरे व्यक्ति के लिये बुरी। मूल्यों का मापदण्ड निर्धारण करना अत्यन्त कठिन है। ऑग्बर्न और निमकॉफ ने उचित लिखा है, "मूल्य के लिए स्वाद के समान कोई मापदण्ड नहीं है।"†

मूल्य शब्द का प्रयोग समाजशास्त्र में एक विशिष्ट अर्थ रखता है। अपने इच्छित विचार हमारे मूल्य होते हैं। मूल्यों का निर्माण समूह की संस्कृति द्वारा होता है। इसे हम मनुष्यों के निर्णय के दृष्टिकोण भी कह सकते हैं। इन्हीं पर हम आधारित होते हैं। संसार में कोई भी वस्तु अपने आप में अच्छी या बुरी नहीं होती बल्कि संस्कृति के अनुसार वस्तुएं अच्छी या बुरी कही जाती हैं। एक समाज में जो वस्तु अच्छी समझी जाती है, दूसरे समाज में वही वस्तु बुरी समझी जाती है। इसलिये यह प्रश्न उठता है कि किस कार्य को सार्वभौमिक रूप से अच्छा कहा जाये और किसे बुरा कहा जाये। जब अच्छा और बुरा शब्दों का निर्णय नहीं किया जा सकता तो प्रगति के अर्थ की सार्वभौमिक व्याख्या किस आधार पर की जाये। मैकाइवर और पेज ने उचित लिखा है, "प्रगति का अर्थ

---

§ "By evolution I mean any sort of growth; by social progress, the growth of social life in respect of those qualities to which human being can attach or can rationally attach values." L. T. Hobhouse, 'Social Evolution and Political Theory' p 8.

* "Progress, on the contrary, means change for the better, and hence must imply a value judgment." Ogburn and Nimkoff, 'A Handbook of Sociology' p. 603.

† "For value, like taste, there is no measuring stick." Ibid, p. 603.

गिरगिट § के समान है जो पर्यावरण का रङ्ग ले लेता है, जब कि हम पर्यावरण से सामन्जस्य रखते हैं और कोई विपरीत रङ्ग में लेता है, जब कि हम पर्यावरण से अनुकूलन नहीं कर पाते।"*

मूल्यों का निर्धारण बहुमत के द्वारा भी नहीं किया जा सकता क्योंकि मत विचारों पर आधारित होते हैं और विचार संस्कृति द्वारा निर्धारित होते हैं। कुछ लोगों का मत है कि सार्वभौमिक मूल्य निश्चित करने का प्रयत्न करना चाहिये। किसी ने भी ऐसे मूल्यों की गणना करने का प्रयत्न नहीं किया है जो समस्त संस्कृतियों में हर काल में अच्छे समझे जाते रहे हों। उदाहरण के लिए 'चोरी न करना', 'हत्या न करना' इत्यादि मूल्य सार्वभौमिक हैं, परन्तु ये शब्द भी आक्षेप एवं अमूर्त हैं और इनकी व्याख्या भी भिन्न-भिन्न प्रकार से की जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि सार्वभौमिक मूल्य निश्चित करना बड़ा कठिन है।

कुछ विद्वानों ने प्रगति के कुछ आधार निश्चित करने का प्रयत्न किया है। उनमें से कुछ प्रमुख आधारों का हम विश्लेषण करेंगे।

कुछ अर्थशास्त्रियों ने प्रगति को आर्थिक आधार पर समझाने का प्रयत्न किया है, उदाहरण के लिए पीगू (Pigou) ने आर्थक कल्याण को सम्पूर्ण कल्याण का एक भाग माना है और आर्थिक प्रगति को सामाजिक प्रगति का मापदण्ड स्वीकार किया है, परन्तु ऐसा उचित नहीं है। उदाहरण के लिए भारतीय संस्कृति के अनुसार आर्थिक प्रगति प्रगति नहीं है। इसने आध्यात्मकवाद पर अधिक बल दिया है। पीगू † का कथन उचित नहीं है क्योंकि आर्थिक कल्याण सामाजिक कल्याण का भाग नहीं है अपितु एक दशा है। इससे स्पष्ट है कि प्रगति मूल्यों पर आधारित है।

---

§ गिरगिट एक इस प्रकार का पशु होता है जो पर्यावरण के अनुसार रङ्ग परिवर्तित करता रहता है, अर्थात् अस्थिर प्रकृति का होता है। प्रगति भी भिन्न-भिन्न पर्यावरणों में भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि इसकी प्रकृति अस्थिर है और इसका अर्थ पर्यावरण के परिवर्तन के साथ साथ परिवर्तित होता रहता है।

* "The concept of progress is a chameleon that takes on the colour of the environment when we are adjusted to that environment, and some contrasting colour when we feel mad-justed." MacIver and Page, 'Society' p. 911-12.

† A. C. Pigou, 'The Economics of Welfare' chapter I.

कुछ लोगों ने प्रगति के उद्देश्य की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'अधिक से अधिक लोगों के लिए अधिक से अधिक लाभ या सुख'§ का सिद्धान्त रखना चाहिए। यह उद्देश्य भी सार्वभौमिक नहीं है क्योंकि सुख का अर्थ लोगों के विचारों के साथ साथ परिवर्तित होता रहता है। इस विश्लेषण से हम समझ गए होंगे कि मूल्य सामाजिक प्रगति के अर्थ को कितना अधिक प्रभावित करते हैं।

प्रगति मूल्यों पर आधारित है और हमारे सामाजिक मूल्य ही उसे निश्चित करते हैं। लम्ले ने प्रगति की परिभाषा करते हुए उचित लिखा है, "प्रगति हमारे सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति है।" * इस पर भी प्रगति की कुछ कसौटियाँ निर्धारित की जा सकती हैं, वे कम से कम प्रगति का अर्थ समझने में हमारी सहायता कर सकती है।

प्रगति की दशायें (Conditions of Social Progress)

प्रगति की कुछ दशाओं का विवरण दिया जा सकता है जो सामाजिक प्रगति में सहायक होती हैं। ये दशायें आधुनिक विचारों के अनुसार हैं। विभिन्न समाजों में और भी अनेक दशाएँ हो सकती हैं:—

१. प्रगति की एक दशा यह है कि मनुष्य को ऐसा आश्वासन मिले कि वह कार्य करने के लिये स्वतन्त्र हैं।

२. दूसरे उन्हें ऐसा विश्वास होना चाहिए कि प्रगति संभव है। इससे उनका व्यवहार आशापूर्ण बनेगा।

३. उनकी ऐसी धारणा नहीं होनी चाहिये कि प्रगति अनिवार्य है क्योंकि ऐसी धारणा के कारण वे कार्य नहीं करेंगे और अन्य शक्तियों की ओर ताकते रहेंगे।

४. उनके अन्दर से भय समाप्त होना चाहिए और विशेषतया समाजोपरि शक्तियों का भय। उनमें परीक्षण और अवलोकन बिना भय के करने की सामर्थ्य होनी चाहिए।

५. भौतिक वस्तुओं का पर्याप्त संचय होना चाहिये जिससे कि अस्तित्व के लिये चिन्ता मिट सके। दरिद्रता का अधिक से अधिक लोप होना चाहिये।

---

§ "The greatest good or the greatest happiness for the greatest number."

* "Progress is the realixation of our social ideals." Lumley, 'Principles of Sociology' p. 403.

६. सार्वभौमिक शिक्षा के अवसर प्राप्त होने चाहिये।

७. स्वस्थ एवं वंशानुसंक्रमण के दोषों से रहित जन-संख्या होनी चाहिए। जितना संभव हो सके उतनी अच्छी सन्तानें भविष्य में उत्पन्न हों।

८. संसार के प्रत्येक भाग में मनुष्य को जाने की आज्ञा होनी चाहिए। राजनैतिक प्रतिबन्ध समाप्त होने चाहिये और आवागमन के साधन विकसित होने चाहिए।

९. लोगों की आयु बढ़ानी चाहिये और रोगग्रस्त जन-संख्या का समुचित उपचार होना चाहिये।

इसी प्रकार अनेक अन्य कारक भी जोड़े जा सकते हैं।

प्रगति की कसौटियाँ (Tests of Progress)

अनेक विद्वानों ने प्रगति की कुछ कसौटियाँ निर्धारित की हैं। अब हम उनमें से कुछ प्रमुख का विश्लेषण करेंगे।

१. जन-संख्या (Population)

कुछ विद्वानों का मत है कि जन-संख्या प्रगति की एक प्रमुख कसौटी है। सारांश में उनका मत है कि यदि जन-संख्या की वृद्धि होती है तो हम प्रगति कर रहे हैं और यदि जन-संख्या का ह्रास हो रहा है तो हम अवनति कर भी रहे हैं।

इस कथन से हम कहाँ तक सहमत हैं? कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति केवल बुद्धि को प्रगति नहीं कहेगा। कुछ लोगों का मत है कि जन-संख्या उतनी होनी चाहिये जो अधिक से अधिक उच्च स्तर पर रह सके। यह कसौटी कोई विशेष खरी नहीं उतरती।

२. स्वास्थ्य और लम्बी आयु (Health and Longevity)

कुछ विद्वानों का मत है कि स्वास्थ्य और जीवन की औसत आयु का बढ़ना प्रगति का एक प्रमुख तत्व है। एक डॉक्टर को अवतरित कहते हुए टॉड ने लिखा है, "जीवन की औसत लम्बाई एक, और केवल एक निश्चित कसौटी है कि संसार प्रगति कर रहा है।"*

---

* ".....the average length of life is the one and only sure index of whether the world is growing better;....." Quoted in A. J. Todd, 'Theories of Social Progress' p. 121.

यह तत्व भी अकेले प्रगति की व्याख्या नहीं कर सकता। क्या औसत आयु के बढ़ जाने से ही प्रगति हो जाती है ? मान लीजिये औसत आयु बढ़ जाये और लोग दुख में रहें तो क्या प्रगति हुई ?

३. सम्पत्ति (Wealth)

कुछ विद्वानों का मत है कि सम्पत्ति की वृद्धि से प्रगति होती है। सम्पत्ति की बुद्धि मात्र की प्रगति की कसौटी नहीं कहा जा सकता। मान लीजिये संसार की कुल सम्पत्ति में वृद्धि हो रही है परन्तु 'धनाढ्य और अधिक धनी हो रहे हैं और गरीब अधिक गरीब' * तो इसे कौन प्रगति कहेगा।

इसी प्रकार केवल सम्पत्ति और भौतिक संस्कृति के विकास को प्रगति नहीं कहा जा सकता जब तक कि वे सामाजिक मूल्यों के अनुसार न हों।

४. आचार (Morals)

आचारशास्त्रियों और धर्म के संरक्षकों का मत है कि शुद्ध जीवन और उसकी प्राप्ति के लिये किये जाने वाले कार्य प्रगति को बढ़ाने वाले हैं। वे प्रगति को इन्हीं मापदण्डों से मापते हैं।

इस कसौटी के भी अनेक दोष हैं। शुद्ध जीवन की क्या व्याख्या है ? इसकी व्याख्या भी मूल्यों पर आधारित है। इस प्रकार प्रगति की कसौटियों को निश्चित करना अत्यन्त कठिन है।

प्रगति की प्रकृति (Nature of Progress)

प्रगति के कुछ तत्वों के विवेचन के उपरान्त अब हम उसकी प्रकृति का वर्णन कर सकते हैं।

१. मूल्यों से निर्धारित—प्रगति मूल्यों से निर्धारित होती है और मूल्य समुदाय की संस्कृति द्वारा निश्चित होते हैं इसलिये प्रगति समुदाय के विचारों पर आधारित होती है।

२. अस्थिरता—प्रगति की दूसरी प्रमुख विशेषता अस्थिरता है। वह पर्यावरण के साथ साथ परिवर्तित होती रहती है। वह गिरगिट के समान अपना अर्थ परिवर्तित करती रहती है। इसका कोई भी सार्वभौमिक अर्थ निश्चित नहीं किया जा सकता।

---

* "The rich are growing richer and the poor poorer."

३. इच्छित परिवर्तन—प्रगति इच्छित परिवर्तन होता है । प्रगति की परिभाषा से ही स्पष्ट है कि जब निश्चित निरन्तर सम्बन्धित परिवर्तन (अर्थात् उद्विकास) इच्छित दिशा में होता है तो उसे प्रगति कहते हैं ।

४. परिवर्तन आवश्यक—प्रगति बिना परिवर्तन के सम्भव नहीं है । इसलिये परिवर्तनों से भय नहीं करना चाहिये बल्कि उनका स्वागत करना चाहिए परन्तु परिवर्तनों को अपनी इच्छित दिशा में निर्देशित करना अत्यन्त आवश्यक है ।

५. स्वचालित नहीं—प्रगति स्वचालित नहीं होती कहने का तात्पर्य यह है मनुष्यों को प्रगति के लिए प्रयत्न करना चाहिए और समाजोपरि शक्तियों या अन्य शक्तियों पर आश्रित नहीं रहना चाहिए । व्यक्तिगत प्रगति के लिए भी यही सिद्धान्त लागू होता है । भाग्य के सहारे हाथ पर हाथ रख कर नहीं बैठना चाहिए । सामुदाय की प्रगति के लिए भी संगठित कार्य की आवश्यकता होती है । इसलिए कुछ विद्वानों ने सहयोग को प्रगति का सूचक माना है । हॉब हाऊस ने इस पर बड़ा जोर दिया है । सामाजिक नियोजन (Social planning) इसी दिशा में एक कदम है । यदि हम भारत की प्रगति चाहते हैं तो निम्न तीन बातें विशेषतया ध्यान में रखनी होंगी:—

(अ) अत्यधिक परिश्रम की अवाश्यकता है ।

(ब) प्रगति के तत्वों को भारतीय समाज के अनुसार निर्धारित करना अत्यन्त आवश्यक है ।

(स) अन्त में, इन निर्धारित तत्वों के आधार पर सामाजिक नियोजन करना चाहिए ।

प्रश्न

१. प्रगति के विचार की व्याख्या कीजिए । सामाजिक मूल्य प्रगति को कैसे प्रभावित करते हैं ? (राजस्थान, १९५६)

(Explain the idea of progress. How do social values influence progress ?)

२. **सामाजिक प्रगति में कौनसी दशाएं सहायक होती हैं ? सामाजिक प्रगति की कौनसी कसौटियाँ आपकी राय में होती है ?** **(आगरा, १६५५)**

(What conditions are conducive to social progress ? What test of progress would you suggest ?)

SELECTED READINGS

1. Bogardus, 'Sociology' chapter XI.
2. Ross, 'Principles of Sociology' Part IX (chapters XLVIII to LIII)
3. Martindale and Monachesi, 'Element of sociology' chapter XXIV.

शब्दानुक्रमणिका (Word Index)

Abstract	अमूर्त
Accommodation	व्यवस्थान
Adaptation	अनुकूलन
Adult Education officer	वयस्क शिक्षा अधिकारी
Alicles	युग्म
Analysis	विश्लेषण
Anthropology	मानवशास्त्र
Anti-social	समाज विरोधी
Apparatus	यन्त्र या साधन
Aristrocracy	कुलीन तंत्र
Assimilation	एकी करण
Association	समितियां
Astronomy	नक्षत्र विद्या
Atom	अणु
Biological	प्राणी शास्त्रीय
Biological Delerminism	प्राणी शास्त्रीय निस्थापक सिद्धान्त
Biologist	जीवशास्त्री
Biology	प्राणीशास्त्र
Block Development officer	खण्ड विकास अधिकारी
Botany	वनस्पति शास्त्र
Caste	जाति
Cell	कोष्ठ
Civilization	सभ्यता
Chromosomes	वर्ण सूत्र
Class	वर्ग
Clasification	वर्गीकरण
Common Status	समान स्थिति
Community Sentiment	समुदाय की भावना
Communism	साम्यवाद
Community	समुदाय
Competition	प्रतिस्पर्द्धा
Concept	विचार
Conflict	संघर्ष
Constant	स्थिर
Consumption	उपभोग
Conscience	अन्तः करण
Conservative	रूढि वादी
Consciousness	जागरूकता
Consciousness of kind	जाति के प्रति जागरूकता
Contact	सम्पर्क
Content	अन्तर वस्तु
Continental Desert	महा द्वीपीय रेगिस्तान
Continuous Process	निरन्तर प्रक्रिया
Contract	प्रसविदा
Contravention	सङ्घर्ष,प्रतिकूलता
Criminology	अपराधशास्त्र
Cultural Competition	सांस्कृतिक प्रतिस्पर्द्धा
Culturai lag	सांस्कृति विलम्बना
Culture	संस्कृति
Curiosity	जिज्ञासा
Custom	प्रथायें
Cytoplasm	कोषारस
Data	स्वीकृत तत्व

Demographic	जन संख्यात्मक
Diffused	प्रसारित
Direct	प्रत्यक्ष
Division of labour	श्रम-विभाजन
Documents	प्रलेख
Dominant	प्रबल
Domination	प्रभुत्व
Drives	चालकों
Dynamic	गतिशील
Economics	अर्थशास्त्र
Egg cell	अंडकोष
Emotions	उद्वेग
Environment	पर्यावरण
Environmentalists	पर्यावरणवादी
Ethics	आचार शास्त्र
Equation	समीकरण
Exact Science	यथार्थ विज्ञान
Exception	अपवाद
Experimental Method	प्रयोगात्मक पद्धति
Facts	तथ्यों
Fatalism	भाग्यवादिता
Favourable	अनुकूल
Fertilization	उत्पत्ति की विधि
Fraternal or Dizy gotic Twins	भ्राताजुड़वें
Folk ways	जनरातियां
Form	स्वरूप
Formal School	यथार्थ वादी सम्प्रदाय
Generalization	सामान्यअनुमान
Gene	वाहकाणु
Genes	वाहकाणु
Genotype	मूलरूप
Geographical Environment	भौगोलिक पर्यावरण
Geographical Determinism	भौगोलिक निर्णायकवाद
Geographical Monism	भौगोलिक भ्रमवाद
Geographical School	भौगोलिक सम्प्रदाय
Geographist	भौगोलिकवादी
Geologist	भूतत्वशास्त्री
Geometry	रेखागणित
Germ cell	उत्पादक कोष्ठ
Germplasm	मूलजीवाणु
Glacial and Structural	रचनानात्मक
Glands	ग्रन्थियां
Group	समूह
Habit	आदत
Health Rates	स्वास्थ्य दर
Heredity	वंशानुसंक्रमण
Horizontal Moblity	अनुप्रस्थ गतिशीलता
Human Ecology	मानव पर्यावरण शास्त्र
Human geography	मानव भूगोल
Human geographists	मानव भौगोलिकवादी
Human relations officer	मानव सम्बन्ध अधिकारी

Humidity	आद्रता
Hypothesis	उप कल्पना
Identical or Monozygoticor Man-oval twins	समान जुड़वां
Imitation	अनुकरण
Impersonal competition	अवैयक्तिक प्रतिस्पर्द्धा
Inbreeding	लिंग सम्बन्धों का होना
Indirect	अप्रत्यक्ष
Inexactness	अयथार्थता
Instincts	मूल प्रवृत्तियां
Institutions	संस्थायें
Integrative	एकीकरण करनेवाली
Interaction	सम्बन्धित क्रिया
Interdependence	अन्योन्याश्रिता
Intelligence	बुद्धि
Interest	स्वार्थ
Interview	साक्षातकार
Isolation	अप्रत्यक्ष
Jupiter	बृहस्पति ग्रह
Laboratory	प्रयोगशाला
Laboratry Method	प्रयोग शाला पद्धति
Labour officer	श्रम अधिकारी
Labour welfare officer	श्रम कल्याण अधिकारी
Latitudes	अक्षांशो
Law of gravitation	आकर्षण शक्ति का सिद्धान्त
Licence	सनद
Marriage	विवाह
Mechanization	यंत्रिकरण
Meteorology	ऋतुशास्त्र
Mixture of blood	रक्त मिश्रण
Molecule	कण
Monarchy	राजतंत्र
Monogamy	एक विवाह
Mos	रूढ़ि
Mores	रूढ़ियाँ
Mutation	उत्परिवर्तन
Nation	राष्ट्र
Nationality	राष्ट्रीयता
Natural Selection	प्राकृतिक प्रवरण
Negative	निषेधात्म
Nucleus	नाभिक
Oasis	मरुद्यान
Objective	विषयात्मकता
Objectivity	कर्म विषयता
Observation	अवलोकन
Opitimum climate	अनुकूलतम जल वायु
Opposition	विरोध
Organisation	संगठन
Organism	प्राणी
Patience	धैर्य
Patriarchal	पितृ सत्ताक
Patterns	प्रतिमान
Perceptiveness	ग्राह्यता
Permanance	स्थिरता
Penology	दण्ड शास्त्र
Physicist	भौतिक शास्त्री
Phnenotype	प्रत्यक्षरूप
Planet	ग्रह

Plant life	वनस्पति जीवन
Planning Commission	योजना आयोग
Polar Regions	ध्रुवी क्षेत्रों
Polyandry	बहुपति विवाह
Polygamy	बहुपत्नि विवाह
Positive	असत्यात्मक
Probationers	परीक्षमार्णो
Prohibitive	निषेधात्मक
Prehistoric Archaelogy	प्राग एतिहासिक पुरातत्व
Profession	व्यवसाय
Progeny Test	वंश परीक्षण
Progress	प्रगति
Protoplasm	जीवरस
Psychology	मनोविज्ञान
Qualitative	गुणात्मक
Quantitative	परिभाषामक
Questionnaire	प्रश्नावली
Race	प्रजाति
Recessive	गौण
Reciprocity	पारस्परिकता
Red corpuscle	लाल जीवाणु
Reduction division	घटोतरी विभाजन
Reflex Arc	वृत खण्ड
Relation	सम्बन्ध
Reverification	पुनः प्रमाण
Roles	सन्बन्धित कार्य
Sanction	अभिमति
Science of law	विधि विज्ञान
Scientific Method	वैज्ञानिक पद्धति
Schedule	सूची
Secondary groups	द्वैतियक समूह
Selection	प्रवरण
Self Sufficiency	आत्म निर्भरता
Selt or ego	अहम
Sex cells	लिंगकोष्ठों
Sequence	अनुक्रम
Seive	छलनी
Sociable	मिलनसार
Social	सामाजिक
Social Anthropology	सामाजिक मानवशास्त्र
Social Behaviour	सामाजिक व्यवहार
Social Construction	सामाजिक निर्माण
Social Control	सामाजिक नियंत्रण
Social education officer	सामाजिक शिक्षा अधिकारी
Social engineer	सामाजिक अभियन्ता
Social evolution	सामाजिक उद्दिकास
Social equilibrium	सामाजिक सन्तुलन
Social heritage	सामाजिक सम्पति
Sociai mind	सामाजिक मस्तिष्क
Social Microscope	सामाजिक सूक्ष्म दर्शक यंत्र
Social Morphology	सामाजिक स्वनाकार

Social organism सामाजिक व्यवस्था

Social philosophy सामाजिक दर्शन

Social planning सामाजिक नियोजन

Social physiology सामाजिक दैहिकी

Social process सामाजिक प्रक्रियाओं

Social relationship सामाजिक सम्बन्ध

Social structure सामाजिक स्तरण

Social survey सामाजिक पर्यालोकन

Society समाज

Sociology समाजशास्त्र

Sociological समाजशास्त्रीय

Socio Metry समाजमिति

Spatial स्थान सम्बन्धी

Specialized विशेषोपयुक्त

Sperm cell शुक्र कोष्ट

Spiral चक्राकार

Spontaneous birth स्वतःजन्म

Statistics साँख्यकी

Subordination आधीनता

Sucide आत्म हत्या

Suggestion सुझाव

Survey पर्यालोकन

Sympathy सहानुभूति

Symbol प्रतीक

Taboo निषेधात्मक रूढ़िया

Technical Terms पारियाषिक शब्द

Technological lag प्रौद्योगिक-विलम्बना

Technological Restraint प्रौद्योगिक-प्रतिरोध

Technology प्रौद्योगिकी

Techniques प्रविधियां

Temperatezones शीतोष्ण कार्ट

Terrace चबूतरा

Territory भूभाग

Totality पूर्णता

Tribal Welfare Department वन्य जाति कल्याण-विभाग

Tropical आयन वृत्त

Tropical Regions आयन वृत्त के प्रवेश

Twin जुडवां बच्चे

Unconcious process अचेतन की प्रक्रिया

Universal process सार्व भॉम प्राक्रिय

Unfavourable प्रतिकूल

Unprejudice	पक्षपात रहित
Unsociable	अभिलनसार
Unsocial	असामाजिक
Vaccum	शून्य
Values	मूल्यों
Variable	अस्थिर
Variability	अस्थिरता
Variation	अन्तर
We feeling	हम की भावना
Welfare state	कल्याणकारी राज्य
We sentiment	हम की भावना
Zoology	प्राणी विज्ञान

समाजशास्त्र की रूपरेखा

भाग २

विषय-सूची

अध्याय

१ सामाजिक संगठन
२ सामाजिक समूह
३ परिवार : उत्पत्ति तथा संगठन
४ परिवार : विवाह
५ परिवार : पारिवारिक विघटन
६ आधुनिक परिवार
७ खानाबदोशी झुण्ड, गोत्र, वन्य जाति
८ वर्ग तथा जाति
९ प्रजाति : अर्थ तथा वर्गीकरण
१० प्रजाति : भारत में प्रजातियाँ
११ प्रजाति : प्रजातिवाद
१२ राष्ट्र तथा राष्ट्रीयता
१३ राजनैतिक संस्थायें तथा समितियां
१४ सांस्कृतिक संस्थायें तथा समितियाँ
१५ आर्थिक संस्थायें तथा समितियाँ
१६ सामाजिक नियन्त्रण
१७ सामाजिक संहितायें
१८ व्यक्ति और समाज
१९ सामाजिक विघटन
२० दरिद्रता
२१ बेकारी
२२ अपराध
२३ बाल अपराध
२४ मानव प्रकृति
२५ ट्रॉपिज्म और प्रतिक्षेप
२६ मूल-प्रवृतियों का सामान्य स्वरूप
२७ सुझाव, अनुकरण तथा सहानुभूति
२८ सामाजिक जीवन में मूल प्रवृत्तियां
२९ समाज में सुझाव, अनुकरण तथा सहानुभूति कार्य
३० सामूहिक व्यवहार
३१ भीड़ व्यवहार